इकाई–एक : उत्तराखण्ड की सामाजिक संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 इकाई के उद्देश्य

1.3 सामाजिक संरचना : अर्थ एवं परिभाषाऐं

1.3.1 सामाजिक संरचना की विशेषताऐं

1.3.2 सामाजिक संरचना के तत्व

1.4 उत्तराखण्ड : ऐतिहासिक परिचय

1.5 उत्तराखण्ड की सांस्कृतिक विशेषताऐं

1.6. उत्तराखण्ड : सामाजिक स्थिति और सामाजिक संगठन

1.6.1 जनजातियाँ

1.6.1.1 भोटिया

1.6.1.2 राजी या बनरौत

1.6.1.3 थारू

1.6.1.4 बुक्सा

1.6.1.5 जौनसारी

1.7. भाषा

1.8. परिधान , खानपान एवं आर्थिक स्थिति

1.8.1 परिधान

1.8.2 खानपान

1.8.3 पशुपालन

1.8.4 उद्योग – धन्धे

1.9 सारांश

1.10 तकनीकी शब्दावली

1.11 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

1.13 सहायक / उपयोगी

1.14 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

सामाजिक संरचना की अवधारणा का उल्लेख सर्वप्रथम स्पेन्सर ने अपनी पुस्तक 'प्रिन्सिपल्स ऑफ सोशियालॉजी में किया यद्यपि वह सामाजिक संरचना और सामाजिक व्यवस्था के बीच कोई स्पष्ट अन्तर नहीं बता सके। इसके बाद दुर्खीम, रेडक्लिफ ब्राउन, मानहीम, नैडेल मर्टन, पारसन्स डेविस तथा मैकाइवर ने सामाजिक संरचना की अवधारणाओं को अधिक व्यापक रूप में स्पष्ट किया। इन विद्वानों के सन्दर्भ में यह कहा जा सकता है कि सामाजिक संरचना अपेक्षाकृत एक स्थिर प्रतिमान है जो एक विशेष सामाजिक जीवन के बाहरी स्वरूप अथवा परस्पर सम्बन्धित सामाजिक इकाइयों की क्रमबद्धता को स्पष्ट करता है। सामाजिक संरचना की अवधारणा जैविकीय संरचना की अवधारणा के प्रभाव का फल है।

जीवनशास्त्र में संरचना का अर्थ किसी सावयव का निमार्ण करने वाले विभिन्न अंगों में पाई जाने वाली अपेक्षाकृत स्थायी व्यवस्था से होता है। समाज के अनेक अंग होते हैं। एक सम्पूर्णतः की भाँति इसका निर्माण विभिन्न व्यक्तियों, समूहों और संस्थाओं के व्यवस्थित संकलन से होता है। इस तरह समाज को निर्मित करने वाले विभिन्न अंग तथा इकाइयाँ व्यवस्थित ढंग से संयुक्त होकर एक ढाँचे का निर्माण करते हैं। इसे ही सामाजिक संरचना कहते है।

उत्तराखण्ड एक ऐसा क्षेत्र है जो अभी तक संस्कृति के प्राचीन शुद्ध रूप को धारण किए हुए है। पुराणों में उल्लेख है कि अनेक ऋषि मुनियों द्वारा उत्तराखण्ड में तपस्या किए जाने के कारण इस भूमि को तपोभूमि भी कहा जाता है। यहाँ की संस्कृति देश के अन्य भागों की तरह प्रभावित होती रही है।उत्तराखण्डीय समाज का विस्तार लगभग 11वीं–12वीं सदी के पश्चात हुआ। उससे पूर्व यहाँ कोल, किरात, एवं खश जैसी आदिवासी जातियों का वर्चस्व था। इन जातियों की सामाजिक संरचना सरल थी। इनमें कट्टरता भी कम थी। परन्तु 11वीं–12वीं सदी के पश्चात उत्तराखण्ड में बाहरी जातियों विशेषकर ब्राह्मणों एवं क्षत्रियों का आगमन आरम्भ हो गया जो अपने साथ जाति कट्टरता का बीज उत्तराँचल की भूमि पर बोने लगे। उत्तराखण्ड समाज में ब्राह्मणों की स्थिति सर्वोपरि है। अधिकांश उत्तराखण्डीय ब्राह्मण बाहर से आकर बसे हुये हैं। ब्राह्मणों के बाद उत्तर की सामाजिक स्थिति में क्षत्रियों का प्रमुख स्थान है। उत्तराखण्ड के समाज में सबसे निम्न सामाजिक स्थिति शूद्रों को प्राप्त है। शुद्रों को उत्तराखण्ड का मूल प्राचीन निवासी माना जा सकता है। कुछ इतिहासकारों ने इन्हें कोल प्रजाति माना है। उत्तराखण्ड मे मुख्य रूप से सात प्रकार की जनजातियाँ निवास करती है :भोटिया,थारू,बनरौत,राजी,जौनसारी,बुक्सा,जाड़ तथा हर की दून के खड़वाल। भारत के मानचित्र में कुमाँऊ और गढ़वाल का क्षेत्र बहुत बड़ा नहीं हैं। भौगोलिक, आर्थिक तथा ऐतिहासिक स्थितियाँ समान रहने के कारण यहाँ की संस्कृति भी लगभग एक सी रही है।कुमाउँनी और गढ़वाली, मनुष्य आम तौर पर सरल, सहज और सादगी पूर्ण प्रकृति के होते हैं। स्पष्ट है कि सामाजिक संरचना का सम्बन्ध सामाजिक संगठनों के प्रमुख स्वरूपों अर्थात् विभिन्न समूहों, समितियों तथा संस्थाओं और इन सबके संकुल से है।''

1.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य विभिन्न तथ्यों के माध्यम से उत्तराखण्ड की सामाजिक संरचना का परिचय कराना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप निम्नलिखित के संबंध में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

- सामाजिक संरचना : अर्थ एवं परिभाषाऐं
- सामाजिक संरचना के तत्व
- उत्तराखण्ड की सांस्कृतिक विशेषताऐं

- उत्तराखण्ड : सामाजिक स्थिति और सामाजिक संगठन
- उत्तराखण्ड की भाषाएं
- परिधान , खानपान एवं आर्थिक स्थिति

1.3 सामाजिक संरचना : अर्थ एवं परिभाषाऐं

विद्वानों ने सामाजिक संरचना की प्रकृति को निम्नांकित रूप से समझाया है:

कार्ल मानहीम ने सामाजिक संरचना को परिभाषित करते हुए लिखा है *''सामाजिक संरचना परस्पर क्रिया करती हुई सामाजिक शक्तियों का जाल है जिससे अवलोकन और चिन्तन के विभिन्न तरीकों का जन्म होता है।''*

जॉन्सन के अनुसार, *''किसी भी वस्तु की संरचना उसके अंगों में पाये जाने वाले अपेक्षाकृत स्थायी अन्तः सम्बन्धों को कहते हैं।''*

कोजर ने लिखा है, *''सामाजिक संरचना का तात्पर्य विभिन्न सामाजिक इकाइयों के तुलनात्मक रूप से स्थिर और प्रतिमानित सम्बन्धों से है।''*

पारसन्स का कथन है, *''सामाजिक संरचना का अर्थ एक दूसरे से सम्बन्धित संस्थाओं एवं ऐजेन्सियों, सामाजिक प्रतिमानों और समूहों में प्रत्येक व्यक्ति द्वारा ग्रहण की जाने वाली प्रस्थिति और भूमिकाओं की क्रमबद्धता से है।''*

रेडक्लिफ ब्राउन के शब्दों में, *''सामाजिक संरचना का निमार्ण करने वाले अंग स्वयं मनुष्य हैं तथा सामाजिक संरचना संस्थात्मक रूप से परिभाषित और नियमित व्यक्तियों के पारस्परिक सम्बन्धों की ही एक क्रमबद्धता है।''*

नैडेल का कथन है, *''सामाजिक संरचना अनेक अंगों की एक क्रमबद्धता की ओर संकेत करती है – ये संरचना तुलनात्मक रूप से स्थिर होती है यद्यपि इसका निर्माण करने वाले अंग स्वयं में परिर्वतनशील होते हैं।''*

गिन्सवर्ग के अनुसार, *''सामाजिक संरचना का सम्बन्ध सामाजिक संगठनों के प्रमुख स्वरूपों अर्थात् विभिन्न समूहों, समितियों तथा संस्थाओं और इन सबके संकुल से है।''*

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि सामाजिक संरचना अनेक सामाजिक समूहों, समितियों, संस्थाओं तथा व्यक्तियों की प्रस्थिति और भूमिकाओं को प्रभावित करने वाले नियमों तथा मूल्यों की एक क्रमबद्धता है। ये सच है कि आवश्यकता के अनुसार सामाजिक संरचना का निमार्ण करने वाले अंगों की प्रकृति में परिवर्तन होता रहता है किन्तु उससे सामाजिक संरचना में सामान्य रूप से कोई परिवर्तन नहीं होता है। यह स्थिति वैसी ही है जिस तरह स्वास्थ की दशा में शरीर का कोई अंग पहले की तुलना में कुछ बदल जाने के बाद भी स्वयं शरीर की सामान्य संरचना में कोई परिवर्तन नहीं होता।

1.3.1 सामाजिक संरचना की विशेषताऐं

सामाजिक संरचना समाज का एक बाह्य रूप है जिसके निर्माण में बहुत से समूहों, संस्थाओं, समितियों तथा सामाजिक मूल्यों का योगदान है। इन सभी इकाइयों की प्रकृति का निर्धारण ही सामाजिक संरचना को अक्सर सांस्कृतिक संरचना भी कह दिया जाता है। सामाजिक संरचना की कुछ प्रमुख विशेषताऐं बिंदुवार अग्रांकित हैं–

- सामाजिक संरचन एक क्रमबद्धता है।
- सामाजिक संरचना अपेक्षाकृत स्थायी होती है।
- सामाजिक संरचना की अनेक उप–संरचनाए होती है।

- सामाजिक संरचना के विभिन्न अंग परस्पर सम्बन्धित हैं।
- सामाजिक संरचना में मूल्यों का समावेश होता है।
- सामाजिक संरचना के प्रत्येक अंग के निर्धारण प्रकार्य होते हैं।
- सामाजिक संरचना अमूर्त होती है।
- सामाजिक संरचना का तात्पर्य सदैव संगठन से नहीं होता।
- सामाजिक संरचना स्थानीय आवश्यकताओं से प्रभावित होती है।

1.3.2 सामाजिक संरचना के तत्व

यह जानना आवश्यक है कि सामाजिक संरचना का निर्माण किन–किन तत्वों के द्वारा होता है। इस सम्बन्ध मे जॉन्सन ने पारसन्स की विवेचना के आधार पर यह बताया है कि विभिन्न प्रकार के सम्बन्धों से जुड़े हुए समूह तथा इन समूहों की भूमिकाओं के आधार पर सामाजिक संरचना का निर्माण होता है। सामाजिक संरचना के तत्वों में अग्रांकित तत्वों को शामिल किया गया है–सामाजिक आकारिकी,सामाजिक शारीरिकी,

प्रस्थिति तथा भूमिका,सामाजिक संस्थाऐं,सामाजिक प्रक्रियाऐं,सामाजिक मूल्य, एवं सामाजिक अन्तक्रियाऐं।

1.4 उत्तराखण्ड : ऐतिहासिक परिचय

उत्तराखण्ड अपने भौगोलिक तथा सांस्कृतिक विविधताओं के कारण अपनी विशिष्ठ पहचान बनाए हुए है। स्कन्द पुराण में हिमालय के कश्मीर, जालन्धर (हिमाँचल), कूर्मांचल, गढ़वाल और नेपाल – पाँच खण्ड बताए गए है। इन खण्डों में भी कूर्मांचल और केदारखण्ड (गढ़वाल) को देवभूमि, स्वर्गभूमि और तपोभूमि के नाम से जाना गया है, और इन दोनों क्षेत्रों को मिलकर ''उत्तराखण्ड'' के नाम से जाना गया है। (धार्मिक सांस्कृतिक एवं पौराणिक दृष्टि से गढ़वाल – कुमाँऊ अंचल को ही देवभूमि उत्तराखण्ड होने का गौरव प्राप्त हुआ है। युग–युगों से चले आए इस सम्मान वाले 'उत्तराखण्ड' की महिमा का हमें आदर करना चाहिए और इसकी महत्ता को बनाए रखने हेतु पूरा–पूरा प्रयास करना चाहिए। हरिद्वार (विष्णु क्षेत्र का द्वार), हरद्वार (शिव क्षेत्र का द्वार) से सम्पूर्ण उत्तराखण्ड की पावन भूमि विष्णु और शिव की भूमि है। शक्ति की प्रतीक पार्वती (नन्दा) का तो यह क्षेत्र अपना मायका ही है।

गंगाद्वार (हरिद्वार) के अन्तर में जो पवित्र भूमि है, उसे ऋषि–मुनियों ने ''स्वर्ग भूमि'' माना है और हरिद्वार को उस स्वर्गभूमि का स्वर्गद्वार मान कर पूजा की है। कुमाँऊ और गढ़वाल के दोनों मण्डल अपनी–अपनी सांस्कृतिक अस्मिता को सुरक्षित कर आगे बढ़ते रहे हैं ये दोनों मण्डल मध्य हिमालय के महत्वपूर्ण अंचल हैं जिनकी महत्ता वेद–पुराण काल से मानी जाती रही है। जलवायु तथा भौगोलिक बनावट की दृष्टि से भी दोनों अंचलों में पूर्ण समानता है। यहाँ तक कि रीति–रिवाजों में भी दोनों मण्डलों में पूर्ण समानता है परन्तु कुछ भिन्नताऐं भी जरूर हैं, खान–पान, रहन–सहन, बोली–भाषा में समानताऐं भी हैं और भिन्नताऐं भी। ज्ञात एवं उपलब्ध इतिहास के आधार पर यह बात सभी इतिहासकार मानते हैं कि उत्तराखण्ड के गढ़वाल, कुमाँऊ मण्डलों पर कत्यूरियों का राज्य था। कार्तिकेयपुर (जोशीमठ) उनकी राजधानी थी। इस कालखण्ड में गढ़वाल और कुमाँऊ अंचल एक ही राजतन्त्र के अधीन रहे। कत्यूरियों के अशक्त होने के बाद कुमाँऊ में चन्द्र वंश का राज्य स्थापित हुआ और गढ़वाल के पंवार (परमार) वंशीय राजाओं का शासन शुरू हुआ।

कत्यूरियों के शासन काल के बाद से उत्तराखण्ड के इन दोनों खण्डों में शासन व्यवस्था स्वतंत्र रूप से होने लगी। तभी से आपसी संघर्ष होना शुरू हुआ। चाहे मित्रता हो या शत्रुता–परन्तु दोनों का

चोली दामन का साथ रहा। मुसलमानों के आक्रमण को भी दोनों ने अपने–अपने ढंग से झेला, गोरखा शासन के असहनीय अत्याचारों को भी गढ़वालियों और कुमाँऊनियों ने समान रूप से भोगा। कहने का तात्पर्य यह है कि युगों–युगों से गढ़वाल और कुमाँऊ ने भाइयों की तरह एक ही भौगोलिक वातावरण में रहकर एक सा जीवन जीया है। प्रारंभ में यह उत्तर प्रदेश का एक भाग रहा, लेकिन 9 नवम्बर 2000 को उत्तराखण्ड भारत का एक राज्य बन गया।

विद्वानों ने बड़ी लगन एवं परिश्रम से अन्वेषण कर उत्तराखण्ड के इतिहास को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है। इसको हम पुरातात्विक स्त्रोत और साहित्यिक स्त्रोत में विभाजिक कर के समझ सकते हैं। उत्तराखण्ड मे अनेक स्थानों में बड़ी मात्रा में मानव कंकाल समाधियाँ, शवाधान, गुफाऐं, शैलाश्रय चित्र, अभिलेख, एवं मुद्रायें प्राप्त हुई हैं जो हमारे प्राचीन इतिहास एवं संस्कृति पर व्यापक प्रकाश डालती हैं। उत्तराखण्ड का इतिहास जानने में सर्वधिक प्रमाणिक एवं विस्तृत सूचना प्रदान करने में यहाँ विभिन्न स्थानों से विभिन्न राजवंशों के काल में उत्कीर्ण शिला एवं ताम्र अभिलेख हैं। यहाँ से प्राप्त अभिलेख ई0 पू0 द्वितीय–तृतीय शताब्दी से 14वीं – 15वीं शताब्दी के मध्य के हैं। ये अभिलेख संस्कृत एवं प्राकृत में उत्कीर्ण हैं, इनमें से अधिकांश अभिलेख ब्राह्मी लिपि में है, इन अभिलेखों से राजवंशों की वंशावली के साथ–साथ समकालीन राजनैतिक–प्रशासनिक स्थिति का भी ज्ञान प्राप्त होता है। अल्मोड़ा, बागेश्वर, चम्पावत, उत्तरकाशी, केदारनाथ, गोपेश्वर, द्रोणगिरि, माणा, देवप्रयाग, अम्बरीगाँव, पलेठा इत्यादि स्थानों से अभिलेख प्राप्त हुए हैं। उत्तराखण्ड से प्राप्त मुद्रायें कुणिन्द एवं यौधेय वंश से सम्बन्धित हैं।

स्कन्दपुराण जैसे हिन्दू धर्म ग्रंथों में उत्तराखण्ड से सम्बन्धित अत्यधिक मात्रा में सूचनाऐं प्राप्त होती हैं। इनके अतिरिक्त ऋग्वेद, अथर्ववेद, शतपथ, ब्राह्मण, छान्दोग्य एवं वृहदारण्यक उपनिषद, शिव, पदम, मत्स्य, विष्णु पुराणों से भी अनेक सूचनाऐं प्राप्त होती हैं। धार्मिक ग्रन्थों के अतिरिक्त अनेक ऐसे ग्रन्थ भी हैं जो उत्तराखण्ड के इतिहास के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण सूचनाऐं प्रदान करते हैं। ये ग्रन्थ लोक साहित्य, जीवन चरित्र, विदेशी विद्वानों एवं यात्रियों के यात्रा विवरण के रूप में हैं।

1.5 उत्तराखण्ड की सांस्कृतिक विशेषताऐं

हिमालय भारतीय संस्कृति का ही नहीं अपितु आदिम मानव की संस्कृति का प्रसार केन्द्र रहा है। प्रत्येक क्षेत्र की अपनी विशेष संस्कृति होती है, जो वहाँ के मनुष्यों के लिए विशेष महत्व रखती है। उत्तराखण्ड एक ऐसा क्षेत्र है जो अभी तक संस्कृति के प्राचीन शुद्ध रूप को धारण किए हुए है। वैदिक कालीन परम्पराओं के अनुसार इस क्षेत्र में पशुधन भी परिवार का मुख्य अंग है। अनेक वैदिक मंत्र उत्तराखण्ड के लोकजीवन में हजारों वर्ष बाद भी उसी रूप में उच्चारित होते है। ऋग्वेद मे अग्नि आह्वान को यहाँ के मंगल गीत में इस प्रकार गाया जाता है–

'ऐजा अगनी! मेरा मातुलोक,
त्वे बिना अगनी ब्रह्मा भूको रैगे।
कनकैक औलो तै मातुलोक
तै मातु लोक छोन्द अत्याचार

हे मेघ मण्डल में निवास करने वाली अग्नि तुम भूमि पर उतरो, तुम्हारे अभाव में ब्रह्मा भी भूखा रह जाएगा। किन्तु धरती उत्तर देती है कि मै धरती पर कैसे उतरूँ? वहाँ तो अनेक अत्याचार होते हैं। वेदों, वैदिक साहित्य और पुराणों तथा महाभारत एवं रामायण आदि ग्रंथों में सर्वत्र आर्यों के इस आदि देश की भूरि–भूरि प्रशस्ति की गयी है। यही कारण है कि प्रायः सभी प्रसिद्ध ऋषियों ने इस भूमि को सेवित किया तथा विभिन्न मठों, तीर्थों, स्मारकों और आश्रमों के रूप में उनके नाम से वे स्थान आज भी है। अतः

स्पष्ट है कि उत्तराखण्ड का यह क्षेत्र आर्य संस्कृति का केन्द्र रहा है। पुराणों में उल्लेख है कि अनेक ऋषि–मुनियों द्वारा उत्तराखण्ड में तपस्या किए जाने के कारण इस भूमि को तपोभूमि भी कहा जाता है। यहाँ की संस्कृति देश के अन्य भागों की तरह प्रभावित होती रही है। इस गंगापथ के अध्यात्म व रम्य आकर्षण ने किसी भी युग में इस सांस्कृतिक प्रवाह को स्थिर रहने नहीं दिया। तीर्थ–यात्रियों की अजेय प्राणधारा भी अवाध गति से दौड़ती रही है। इनमें से अनेक धर्म और जाति के लोग स्थायी रूप से यहीं बस गए। इस संस्कृति की आधारशिला, देवभूमि उत्तराखण्ड के तीर्थस्थलों, गंगा के पावन तट तथा हिमालय की गुफाओं मे रखी गई। उत्तराखण्ड की संस्कृति का अर्थ भारतीय संस्कृति ही है। यहाँ की ऐतिहासिक परम्परा में सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसने भारत की सभी संस्कृतियों का समन्वय किया है। उत्तराखण्ड की संस्कृति अत्यन्त प्राचीन, व्यापक और समृद्ध है। इसको समृद्ध बनाने में जहाँ एक ओर वैदिक ऋषियों का योगदान रहा है, वहीं अनेक सिद्धों, नाथों, धर्मों तथा सम्प्रदायों का समन्वयात्मक गुण भी निहित है। उत्तराखण्ड की सांस्कृतिक विशेषताओं को हम निम्नलिखित विवेचना से समझ सकते हैः

1.6.0 उत्तराखण्ड : सामाजिक स्थिति और सामाजिक संगठन

उत्तराखण्डीय समाज का विस्तार लगभग 11वीं–12वीं सदी के पश्चात हुआ। उससे पूर्व यहाँ कोल, किरात, एवं खश जैसी आदिवासी जातियों का वर्चस्व था। इन जातियों की सामाजिक संरचना सरल थी। इनमें कट्टरता भी कम थी। परन्तु 11 वीं–12वीं सदी के पश्चात उत्तराखण्ड में बाहरी जातियों विशेषकर ब्राह्मणों एवं क्षत्रियों का आगमन आरम्भ हो गया। जो अपने साथ जातीय कट्टरता का बीज उत्तराँचल की भूमि पर बोने लगे। चंद वंश एवं पंवार वंश के शासकों ने इन नवागंतुक जातियों को प्रश्रय देने में कोई कंजूसी नहीं दिखायी। ये दोनों वंश भी स्थानीय वंश के शासकों का अंत कर अपना शासन स्थापित करने में सफल हुये थे। बाहर से आकर बसी जातियों में जातीय श्रेष्ठता की भावना पहले ही से विद्यमान थी। यहाँ आकर इसमें और अधिक वृद्धि हुयी। स्थानीय जातियों पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने के लिये यह जातीय भेद उन्हें आवश्यक जान पड़ा। स्थानीय जातियाँ सरल एवं शान्तिप्रय थीं साथ ही वाह्य नवागंतुक जातियाँ स्थानीय जातियों से कुछ शिक्षित एवं सभ्य अवश्य थीं। वर्तमान में अनेक स्थानीय जातियों व नवागंतुक जातियों में आचार–व्यवहार में समानता को देखते हुये उनके बीच भेद कर पाना कठिन है। नई जातियों का आवागमन 18वीं–19वीं सदी तक निरन्तर बना रहा। उत्तराँचल में बाहर से आयी जातियों ने स्थानीय जातियों की अपेक्षा अधिक विकास किया। उनकी आर्थिक स्थिति स्थानीय जातियों से अच्छी रही है। वर्तमान उत्तराखण्ड के समाज में जातीय भेद भाव पूर्व काल की अपेक्षा कम है परन्तु है अवश्य।

उत्तराखण्ड समाज में ब्राह्मणों की स्थिति सर्वोपरि है। अधिकांश उत्तराखण्डीय ब्राह्मण बाहर से आकर बसे हुये हैं। ब्राह्मणों को उत्तराँचल के सभी वंशों के शासकों ने संरक्षण दिया। विशेषकर चंद एवं पंवार शासकों ने उन्हें जीविकोपार्जन हेतु अग्रहार भूमि भी दान दी। अनेक ब्राह्मणों ने राजपुरोहित, सैन्य अधिकारी तथा ज्योतिषी के रूप में ख्याति प्राप्त की। राजाओं द्वारा अपने अनेक महत्वपूर्ण अधिकारियों एवं कर्मचारियों के पद भी ब्राह्मणों में से निश्चित किये थे। बाहर से आने वाले ब्राह्मणों ने उत्तराँचल में अपने जीविकोपार्जन हेतु कृषि एवं पशुपालन को भी अपनाया। जिन ब्राह्मणों को राजाओं द्वारा राजदरबार में स्थान दिया गया तथा जिन्होंने समृद्धि प्राप्त कर ली, उन्होंने व उनके वंशजों ने अपना एक अलग वर्ग बना लिया तथा अपने को अन्य ब्राह्मणों से श्रेष्ठ समझने लगे। ग्रामीण क्षेत्रों में विवाह तो ब्राह्मणो का ब्राह्मण परिवार में ही होता है साथ ही खान–पान के मामले में वे केवल ब्राह्मण के हाथ से बने भोजन को ही ग्रहण करते हैं। उत्तराखण्ड में ब्राह्मण अन्य जातियों या वर्गो से समृद्ध एवं विकसित हैं उनमें शिक्षा का प्रचार–प्रसार भी अन्यों की अपेक्षा अधिक है। कृषि पशुपालन के अतिरिक्त वर्तमान उत्तराँचल के ब्राह्मण, व्यापार, राजनीति, सेना, प्रशासन आदि सभी क्षेत्रों में अपनी श्रेष्ठता बनाये हुये हैं।

ब्राह्मणों के बाद उत्तराखण्ड की सामाजिक स्थिति में क्षत्रियों का प्रमुख स्थान है। प्रारम्भिक क्षत्रिय जातियाँ युद्धजीवीं थीं परन्तु युद्धों की कमी के कारण या समाप्ति के कारण क्षत्रियों ने कृषि एवं पशुपालन को अपना प्रमुख व्यवसाय बना लिया। उत्तराँचल के क्षत्रिय दो प्रकार के हैं – राजपूत एवं खशिया। राजपूत क्षत्रिय वे हैं जो उत्तराँचल में बाहर से आये थे उन्हें राजाओं ने उच्च सैनिक पदों पर आसीन किया तथा जागींरे दी। खशिया क्षत्रिय उत्तराँचल में पूर्वकाल से ही निवास करते आये हैं। इनका मुख्य व्यवसाय कृषि एवं पशुपालन करना था। ये खायकर तथा सिरतान के रूप में या थोकदार के रूप में कृषि कार्य करते थे। खशिया क्षत्रियों ने अपने सम्पूर्ण क्रियाकलाप राजपूतों के समान बना लिये तथा वे भी अपने को राजपूत कहने लगे। वर्तमान में दोनों मिश्रित हो चुके हैं।

उत्तराखण्ड के समाज में सबसे निम्न सामाजिक स्थिति शूद्रों को प्राप्त है। शूद्रों को उत्तराखण्ड का मूल निवासी माना जा सकता है। कुछ इतिहासकारों ने इन्हें कोल प्रजाति माना है। प्रारम्भ में उत्तराँचल में कोलों का ही साम्राज्य था। परन्तु बाद में किरात एवं खशों ने कोलों को पराजित कर अपना दास बनाया। उत्तराँचल में निवास करने वाले शूद्र भी अनेक उपजातियों में विभाजित हैं। यथा, टमटा, ओड़(मिस्त्री), लोहार, पहरी, आगरी, चमार, मोची, हनकिया(कुम्हार) बादी, हुड़किया दर्जी, ढोली, भौड़, हलिया इत्यादि जो कि स्वयं आपस में भेद–भाव रखते हैं। शिक्षा, सेवा तथा राजनीति में विशेष प्रोत्साहन मिलने से इनकी स्थिति में अच्छा सुधार हुआ है। शहरी क्षेत्रों में खान–पान सम्बन्धी भेदीभाव कम ही है। परन्तु ग्रामीण उत्तरांचल में शूद्रों की स्थिति में अभी सुधार होना बाकी है। ग्रामीण शूद्र आज भी पुरातन जजमानी प्रथा के अनुसार जीवन व्यतीत कर रहे हैं। वे उच्च जातियों को स्पर्श नहीं कर सकते, उनके मंदिरों एवं नौलों से जल का उपयोग नहीं कर सकते।

1.6.1 जनजातियाँ

आधुनिकता की दृष्टि से असंस्कृत माने जाने वाले तथा आदिम और प्राचीन मानव सभ्यता का प्रतिनिधित्व करने वाले, जंगलों–पहाड़ों व पठारों के निवासी ,मानव समुदाय को आदिवासी या जनजाति कहा जाता है। उत्तराखण्ड मे मुख्य रूप से सात प्रकार की जनजातियाँ निवास करती है–

1–भोटिया
2–थारू
3–बनरौत या राजी
4–जौनसारी
5–बोक्सा / बुक्सा
6–जाड़
7–हर की दून के खड़वाल

1.6.1.1 भोटिया

अधिकांश इतिहासकारों ने भोटिया जाति को तिब्बत से सम्बद्ध माना है, अर्थात् भोट में रहने वाले लोग भोटिया कहलाए गए। इनमें कुछ लोग तो वास्तव में शक या मुगल जाति के है, पर कुछ लोग आर्य या खस–जाति के वहाँ जाकर बसे, और उन्हीं में मिल गए। इनके रहन–सहन, खान–पान इत्यादि पर भारत के उत्तराखण्ड तथा तिब्बती जीवन पद्धति एवं लोक विश्वासों का अदभुत सम्मिश्रण दिखाई देता है। जोहार के शौकाओं के अधिकांश रीति–रिवाज कुमाँऊ के खश राजपूतों की सांस्कृतिक परम्पराओं से मेल खाते हैं, जबकि दारमा के निवासियों की सांस्कृतिक संरचना एकदम भिन्न है, साथ ही जोहार के शौकाओं और दारमा के भोटियों का मूल उदगम भी एक नहीं है, लेकिन ये हिन्दू धर्म के प्रति आस्थावान हैं, हिन्दू देव – देवियों पर विश्वास करते और उनकी पूजा इत्यादि करते है, 'गावल' तथा 'बंग रंग चिम' आदि

इनके लोक देवता होते हैं। भोटिया समाज में स्त्रियों को समानता का दर्जा मिलता है। पिथौ़रागढ़ जिले के जौहार तथा दारमा, चमोली जिले के तल्ला तथा मल्ला पिनखण्डा, एवं उत्तरकाशी जिले के भटवाड़ी क्षेत्र में बसी हुई भोटान्तिक जाति की संस्कृति पर आज भी किन्नर, किरात, शक, यवन, तिब्बती तथा बौद्ध आदि संस्कृतियों के कोई न कोई चिन्ह देखे जा सकते हैं।

1.6.1.2 राजी या बनरौत

पिथौरागढ़ जिले के अस्कोट के आसपास के जंगलों में रहने वाली राजी जाति को किरातों का वंशज माना जाता है। राजी लोग स्वयं को अस्कोट के रजवार के बड़े भाई के वंशज बताते हुए कहते हैं कि प्राचीन समय में अस्कोट के राजी के बडे बेटे को जंगल का राज मिला इसलिए उसका वंशज बनरौत कहलाया, भलैनाथ, छुरमुल, मलिकार्जुन सैम आदि इनके इष्ट देवता हैं। इनकी अपनी विशिष्ट बोली है। मछली तथा जंगली पशु–पक्षियों का मांस तथा कन्दमूल, फल आदि इनकी मुख्य खुराक हैं। बनरौत जनजाति के सर्वांगीण विकास को ध्यान में रखकर शासन द्वारा इसे राजी जनजाति के नाम पर सर्वप्रथम 1965 में आदिम जनजाति का दर्जा दिया गया और फिर लगभग 1967 में इसे उत्तर प्रदेश के चार अन्य जनजातिय समूहों के साथ अनुसूचित जनजाति का दर्जा दिया गया। वे आज आंशिक रूप से कृषक हैं लेकिन फिर भी आदिम अर्थव्यवस्था से जुड़े हैं।

1.6.1.3 थारू

एटकिन्सन ने लिखा है ''कोसी नदी के पूर्व में कुमाँऊ पहाड़ियों की तलहटी से लगे भू–प्रदेश में एक जनजाति जो थारू नाम से जानी जाती है के हमें दर्शन होते हैं, यह सुदुर पूर्व में बागमती नदी के तटीय क्षेत्र तक देखी जाती है। ये दलदल अर्थात् तराई क्षेत्र के निवासी हैं और धान की खेती करने वाले कृषक हैं, मलेरिया से इन पर कोई असर नहीं होता।'' जनगणना प्रतिवेदन (1867) में थारू शब्द की उत्पत्ति ''तरूवा'' शब्द से मानी गयी है, जिसका अर्थ ''भीगना'' होता है, जो थारू के निवास स्थान अर्थात् तराई क्षेत्र में होने वाली अत्यधिक वर्षा की प्रवृत्ति के लिए प्रयुक्त किया है। नेसफील्ड ने थारू शब्द ''थार'' शब्द से माना है जिसका अर्थ ''जंगलवासी'' होता है। विद्वानों के विचार एक मत नहीं हैं लेकिन यह कहा जा सकता है कि थारूओं की राजपूत उत्पति अधिक प्रमाणित प्रतीत होगी है। थारू कला प्रेमी होते है और इनके परिवारों में स्त्रियाँ अधिक प्रभावशाली होती हैं। इनके मनोरंजन का मुख्य साधन संगीत व नृत्य हैं झुगड़ा, जनीव लहचारी इनके प्रमुख नृत्यगीत हैं। वर्तमान में शिक्षा का प्रभाव इन पर पड़ रहा है और इसी कारण कुछ परिर्वतन आए हैं।

1.6.1.4 बुक्सा

बुक्सा जनजाति नैनीताल, उधमसिंह नगर, पौड़ी एवं देहरादून के क्षेत्रों मे पायी जाती है। जनसंख्या की दृष्टि से थारू और शौकाओं के बाद तीसरा स्थान बोक्साओं का है। ये स्वयं को धारानगर के पवार वंशी राजपूतों के वंशज मानते है। इनकी शारीरिक बनावट थारू जनजाति से मिलती जुलती है। परिवार पितृसत्तात्मक होते हैं लेकिन स्त्रियों का स्थान ऊँचा होता है। विवाह पद्धति हिन्दू–पद्धति से प्रभावित है। इस समाज में साली–विवाह, भाभी–विवाह तथा बैठाड़–विवाह और तलाक सर्व स्वीकृत माने जाते हैं। छोटे–बडे झगड़ों को निपटाने के लिए इनकी अपनी पंचायत होती है। ये राम, कृष्ण, शिव, गणेश, दुर्गा, काली तथा बाला सुन्दरी आदि हिन्दू देवी–देवताओं की पूजा करते हैं और उल्का, मनसा, शीतला, ग्राम देवता, वन देवता, कुल देवता, पीर और प्रधान आदि लोक–देवताओं को भी पूजते हैं।

1.6.1.5 जौनसारी

यह जनजाति पश्चिमी उत्तराखण्ड के कालसी, चकराता, लाखामण्डल, जौनसार–भाबर, जौनपुर (टिहरी) इत्यादि क्षेत्रों के पहाडियों में निवास करती हैं। ये जादू –टोने, तन्त्र –मन्त्र पर विश्वास करते हैं। 'हनोल' नामक तीर्थ में 'महासू' देवता की पूजा की जाती है। वही इनका प्रमुख देवता है। स्त्रियों का स्थान काफी सम्मानपूर्ण होता है और पुत्री जन्म को शुभ माना जाता है। ये पाण्डवों को अपना पूर्वज तथा प्रमुख देवता मानते हैं।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

1. उत्तराखण्ड की सामाजिक स्थिति का उल्लेख करें।
2. उत्तराखण्ड की मुख्य जनजातियों के बारे में लिखें।

1.7.0 भाषा

भाषा वैज्ञानिकों ने पश्चिमी हिन्दी की उप–बोलियों के वर्गीकरण में कुमाँऊनी और गढ़वाली को मध्य पहाड़ी भाषा के अन्तर्गत माना है। सर्वप्रथम जॉर्ज ग्रियर्सन ने यह वर्गीकरण किया था।यह वर्गीकरण मुख्यतः भौगोलिक आधार पर किया गया था। कुमाँऊनी और गढ़वाली के अपने अनेक उपभेद हैं। गढ़वाली के सन्दर्भ में रतूड़ी (1928) ने लिखा है कि '' समस्त गढ़वाल में एक ही प्रकार की भाषा नहीं बोली जाती है, प्रत्येक प्रान्त की भाषा में आपस में अनेक शब्दों में भेद है, यद्यपि प्रत्येक प्रान्त के लोग एक–दूसरे की भाषा समझ लेते हैं परन्तु एक दूसरे की भाषा बोल नहीं सकते। नगर कस्बों में जो भाषा बोली जाती है उसको सभी समझ लेते हैं। कुमाँऊनी भाषा और गढ़वाली भाषा में इतना अन्तर नहीं है कि एक दूसरे की बातचीत एक दूसरा न समझ सकें, ''रूवाली (1982) के अनुसार कुमाँऊनी की ही कम से कम निम्न उपबोलियाँ है : खस–पुर्जिया, चौगर्खिया, गंगोई, दन पुरिया, पछाई, रौचौबेंसी, कुमाई, सोर्याली, सीर्याली तथा अस्कोटी, गढ़वाली के ग्रियर्सन ने आठ भेद किये थे। परन्तु बहुगुणा ने उच्चारण के आधार पर इसके छः भेद किये हैं, जिनको नौटियाल ने भी अधिक व्यवस्थित माना है : बधाणी, सलाणी, जौनसारी, खाल्टी, वजारी, श्रीनगरी, टिहरियाली तथा रागसी। गढ़वाली और कुमाँऊनी में हिन्दी की सभी ध्वनियों के साथ कुछ अपनी ध्वनियाँ भी हैं, जैसे – अ, आ, ए, ऐ, औ, ल तथा ड़ आदि वर्णो की एक से अधिक ध्वनियाँ पाई गई हैं।

1.8.0 परिधान , खानपान एवं आर्थिक स्थिति

उत्तराखण्ड में परिधान , खानपान एवं आर्थिक स्थिति की जानकारी निम्नलिखित बिन्दुओं के अध्ययन से प्राप्त की जा सकती है–

1.8.1 परिधान

इस पूरे क्षेत्र में स्थान तथा जाति के अनुसार वेश–भूषा भी भिम्न–भिन्न रही है। प्राचीन काल से यहाँ पर ऊन के चादरनुमा कपड़े को शरीर में लपेट कर गाँठ देकर पहना जाने वाला 'गाता' आदि अभी भी सीमान्त क्षेत्रों में दिखाई देते हैं। पुरूष भी नीचे ऊनी पैजामा और ऊपर लम्बा कोटनुमा वस्त्र पहनते रहे हैं। मध्यकाल से स्त्रियाँ सिला हुआ घाघरा, कुर्ता और वास्कट पहन कर एक कपड़ा सिर पर बाँधती थीं। पुरूष चूड़ीदार पैजामा, धोती और अचकन पहनते थे। फिर सादा–कुर्ता पैजामा या धोती और टोपी पहनी जाने लगी। अभी भी अनेक बुजुर्ग यही पोशाक पहनते हैं। नई पीढ़ियाँ पैंट, कमीज, कोट पहनती हैं। टोपी, पगड़ी की प्रथा समाप्त प्रायः हो चुकी है। अधिकांश स्त्रियाँ साड़ी, लड़कियाँ सलवार ,कमीज–फ्रौक आदि पहनती हैं। अब पोशाक के आधार पर जाति की पहचान नहीं हो सकती।

आभूषण–प्रेमी स्त्रियाँ प्राचीनकाल से ही मूंगा, मोती तथा अनेक प्रकार के रंग–बिरंगे पत्थरों की मालाएँ, चांदी की बड़ी–बड़ी जंजीरें, बालियाँ, गलोबन्द, हंसुली, रूपयों के सिक्कों की माला, धागुले, पहौंची, पावों में बजने वाले झाँवर, पायल आदि पहनती थीं। उनमें सुहाग के लिए गले में काले बारीक मोतियों की 'चरेऊ' माला पहनना आज भी अनिवार्य माना जाता है। कान में ऊपर नीचे अनेक बालियाँ पहनी जाती थीं। नाक में सोने की छोटी बड़ी कील, नथ, बुल्ला, बुलाँक आदि पहनी जाती हैं। ये आभूषण यहीं पर बनाये जाते थे। आजकल ये चीजें बाहर से बनकर भी आती हैं और बाहर के नमूने तथा तकनीकें लेकर यहाँ भी बनाई जाती हैं। सूती, टेरीन तथा नाइलॉन आदि के सिले हुए वस्त्र भी बाहर से आते हैं। आज अधिकांश वस्त्राभूषणों में एकरूपता दृष्टिगोचर होती हैं।

1.8.2 खानपान

ग्रामीण समाज में खान–पान के मामले में काफी भेदभाव रहा है। ब्राह्मणों का बनाया हुआ भोजन सभी खा लेते हैं, परन्तु अन्य जातियों का स्पर्श किया हुआ भोजन ब्राह्मण नहीं खाते। ब्राह्मणों में भी भोजन के सन्दर्भ में स्पृश्य–अस्पृश्य के अनेक भेद हैं। सवर्ण शूद्रों का स्पर्श किया हुआ नहीं खाते। अछूतों को छूने पर गोमूत्र या जल के छींटे डालकर शुद्धिकरण किया जाता था। इस तरह के रिवाज मध्यकाल से लेकर आधुनिक काल तक विद्यमान रहे हैं। शहरी और शिक्षित लोगों में यह भेदभाव धीरे–धीरे कम होता जा रहा है। शीत प्रदेश होने के कारण इस पूरे क्षेत्र में प्राचीन काल से ही मांस भक्षण की प्रथा रही है। पशुओं की खाल पहनना, बिछाना, ऊन के वस्त्र पहनना–ओढ़ना और मांस खाना इत्यादि प्राचीन कालीन प्रथा जनजातियों में अभी भी दिखायी देती है। मध्यकाल मे आये वैष्णव ब्राह्मण तथा आधुनिक काल के आर्यसमाजी मांस भक्षण नहीं करते। इनमें प्याज–लहसुन भी वर्जित है। यहाँ गोवध और गोमांस का सेवन पाप समझा जाता है।उत्तराखण्ड के निवासियों का मुख्य व्यवसाय कृषि एवं पशुपालन है। प्राचीन काल से ही कृषि एवं पशुपालन का यहाँ सर्वाधिक महत्व रहा है। उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि की दुर्दशा के लिये अनेक कारण सम्मिलित हैं। यहाँ अति छोटी–छोटी जोते हैं, सिंचाई की पर्याप्त सुविधा नहीं है, कृषक रासायनिक खाद का न के बराबर प्रयोग करते हैं। नये बीज, प्रौद्योगिकी को अब अपनाया जाने लगा है।

1.8.3 पशुपालन

उत्तराखण्ड के निवासियों का मुख्य व्यवसाय कृषि एवं पशुपालन है। प्राचीन काल से ही कृषि एवं पशुपालन का यहाँ सर्वाधिक महत्व रहा है। उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि की दुर्दशा के लिये अनेक कारण सम्मिलित हैं। यहाँ अति छोटी–छोटी जोते हैं, सिंचाई की पर्याप्त सुविधा नहीं है, कृषक रासायनिक खाद का न के बराबर प्रयोग करते हैं।यहाँ कृषकों द्वारा अधिकतर दुधारू पशु ही पाले जाते हैं। जिनमें गाय–भैंस प्रमुख हैं। इन दुधारू पशुओं की नस्ल उच्च कोटि की नहीं होती है। यहाँ की पालतू गायें बहुत कम मात्रा मे दूध देती हैं। यद्यपि तराई क्षेत्र में अच्छी नस्ल के दुधारू पशु पाले जाते हैं तथा वे अपने पालकों की आर्थिक स्थिति में सुधार करने में सक्षम भी हैं। दुधारू पशुओं के अतिरिक्त भेड़–बकरियाँ, घोडे, खच्चर इत्यादि पशुओं को भी पाला जाता है। भेड़–बकरियाँ ऊन एवं माँस के लिये प्रयुक्त होती हैं। जबकि घोड़े एवं खच्चर सामान ढोने के लिये ।

1.8.4 उद्योग – धन्धे

उत्तराखण्ड में वर्तमान में अग्रांकित उद्योग–धंधे ,फल–फूल रहे हैं–

- ऊन उद्योग।

- जल–विद्युत उद्योग।
- पर्यटन उद्योग, फल एवं सब्जी उद्योग।
- खनिज उद्योग।
- रेजिन उद्योग।
- चाय उद्योग।
- जड़ी–बूटी उद्योग।
- बर्तन उद्योग।
- काष्ठ–कला उद्योग।
- चीनी–गुड़ उद्योग।

1.

1.9 सारांश

भारत के मानचित्र में कुमाँऊ और गढ़वाल का क्षेत्र बहुत बड़ा नहीं हैं। भौगोलिक, आर्थिक तथा ऐतिहासिक स्थितियाँ समान रहने के कारण यहाँ की संस्कृति भी लगभग एक सी रही है, किन्तु दुर्गम पहाड़ियों के कठिन भागों के कारण प्रायः एक क्षेत्र के लोगों का दूसरे क्षेत्र वालों के साथ बहुत कम सम्पर्क हो पाता है।यहाँ के निवासियों में परम्परा–प्रेम, धार्मिक विश्वास और शुभाशुभ विषयक रूढ़िवादिता की भावनाएँ अत्यधिक मात्रा में पाई जाती हैं। तांत्रिक साधना का क्षेत्र रहने के कारण लोग अभी भी मंत्र–तंत्र, भूत–प्रेत, झाड़–फूंक, जादू–टोने आदि में विश्वास करते हैं।

समग्र उत्तराखण्ड मे रीति–रिवाजों की दृष्टि से काफी वैविध्य है, इसलिए प्रायः किसी भी प्रथा को सम्पूर्ण क्षेत्र के सन्दर्भ में लेने पर विवाद भी हो सकते हैं। कई रीति रिवाजों की चर्चा अन्य अध्यायों में अन्य विषयों के सन्दर्भ में हो चुकी है। कुमाउँनी और गढ़वाली, मनुष्य आम तौर पर सरल, सहज और सादगी पूर्ण प्रकृति के होते हैं।

सामाजिक संरचना का तात्पर्य विभिन्न सामाजिक इकाइयों के तुलनात्मक रूप से स्थिर और प्रतिमानित सम्बन्धों से है।'' सामाजिक संरचना अनेक सामाजिक समूहों, समितियों, संस्थाओं तथा व्यक्तियों की प्रस्थिति और भूमिकाओं को प्रभावित करने वाले नियमों तथा मूल्यों की एक क्रमबद्धता है। सामाजिक संरचना की विशेषताएं अग्रांकित हैं–

- सामाजिक संरचन एक क्रमबद्धता है।
- सामाजिक संरचना अपेक्षाकृत स्थायी होती है।
- सामाजिक संरचना की अनेक उप – संरचनाए होती है।
- सामाजिक संरचना के विभिन्न अंग परस्पर सम्बन्धित हैं।
- सामाजिक संरचना में मूल्यों का समावेश होता है।
- सामाजिक संरचना के प्रत्येक अंग के निर्धारण प्रकार्य होते है।
- सामाजिक संरचना अमूर्त होती है।
- सामाजिक संरचना का तात्पर्य सदैव संगठन से नही होता।
- सामजिक संरचना स्थानीय आवश्यकताओं से प्रभावित होती है।

1.10 तकनीकी शब्दावली

1. **संरचना–** किसी भी वस्तु की संरचना उसके अंगों में पाये जाने वाले अपेक्षाकृत स्थायी अन्तः सम्बन्धों को कहते हैं।

2. **पुराण काल**–वह काल जब पुराणों की रचना हुयी थी।
3. **नवागंतुक**– नये आये हुए लोग।
4. **जनजातियाँ**–आधुनिकता की दृष्टि से असंस्कृत माने जाने वाले तथा आदिम और प्राचीन मानव सभ्यता का प्रतिनिधित्व करने वाले, जंगलों–पहाड़ों व पठारों के निवासी ,मानव समुदाय को आदिवासी या जनजाति कहा जाता है।
5. **परिधान** –वस्त्र

1.11 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

खण्ड 1.6.0 के प्रश्न संख्या 1 के लिए देखिये इकाई 1.6.0
खण्ड 1.6.0 के प्रश्न संख्या 2 के लिए देखिये इकाई 1.6.1.5

1.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

1.बलुनी, दिनेशचन्द्र, *उत्तरांचलः संस्कृति, लोक जीवन, इतिहास एंव पुरातत्व*, प्रकाश बुक डिपो, बरेली, 2006
2.अग्रवाल,सी,एम,*मैन,कलचर एण्ड सोसाइटी इन कुमाँऊ हिमालया* , अल्मोड़ा,1998
3.जोशी, एम.पी., *उत्तरांचल हिमालया*, श्री अल्मोड़ा बुक डिपो, 1990
4.जोशी, घनश्याम, *उत्तरांचल का राजनीतिक, सामाजिक एंव सांस्कृतिक इतिहास*, प्रकाश बुक डिपो, बरेली, 2003

1.13 सहायक/उपयोगी ग्रंथ सूची

1.देसाई, ए.आर., *रूरल, सोश्योलॉजी इन इण्डिया,* पॉपुलर प्रकाशन, बम्बई, 1969
2.शर्मा,के.एल, *भारतीय सामाजिक संरचना एवं परिवर्तन*, रावत पब्लिकेशन,2006
3.पण्डेय,बी.डी., *कुमाँऊ का इतिहास*, शक्ति प्रैस,अल्मोड़ा,1937
4.रतूड़ी,हरिकृष्ण,*गढ़वाल का इतिहास*, भागीरथी प्रकाशन, पौड़ी,वि,1954

1.14 निबंधात्मक प्रश्न

1. सामाजिक संरचना को परिभाषित करते हुए, उसकी विशेषताओं का विवरण कीजिए।
2. उत्तराखण्ड का ऐतिहासिक परिचय दीजिए।

इकाई –दो : उत्तराखण्ड में विवाह, परिवार, नातेदारी और स्त्रियों की प्रस्थिति

2.1 प्रस्तावना
2.2 इकाई के उद्देश्य
2.3 संस्कार
2.3.1 संस्कार की परिभाषाऐं
2.3.2 विवाह की अवधारणा
2.3.3 हिन्दू विवाह
2.3.4 हिन्दू विवाह के उददे्श्य
2.3.4.1 धार्मिक कर्त्तव्यों की पूर्ति
2.3.4.2 रति
2.3.4.3 व्यक्तित्व का विकास
2.3.4.4 सामाजिक कर्त्तव्यों का पालन
2.3.4.5 पारिवारिक कर्त्तव्यों का पालन
2.3.5 हिन्दू विवाह के प्रमुख संस्कार
2.3.5.1 विवाह का आधार धर्म है
2.3.5.2 हिन्दू विवाह अनेक धार्मिक विधियों द्वारा सम्पन्न होता है
2.3.5.3 हिन्दू विवाहः एक पवित्र संघ
2.3.6 मुस्लिम विवाह
2.3.6.1 मुस्लिम विवाह की शर्तें
2.3.6.2 मुस्लिम विवाह में 'मेहर'
2.3.6.3 मुसलमानों में 'तलाक'
2.4 परिवारः अर्थ एंव परिभाषाऐं
2.4.1 परिवार की प्रमुख विशेषताऐं
2.4.2 परिवार के कार्य
2.5 नातेदारी अर्थ एंव परिभाषाऐं
2.5.1 नातेदारी की प्रमुख श्रेणियाँ
2.5.2 नातेदार की प्रमुख रीतियाँ
2.5.3 स्त्रियों की प्रस्थिति
2.6 सारांश
2.7 तकनीकी शब्दावली
2.8 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर
2.9 संदर्भ ग्रंथ सूची
2.10 सहायक/उपयोगी ग्रंथ सूची
2.11 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

पर्वतीय लोग प्रकृति के निकट रहते हुए प्रकृतिमय जीवन जीते हैं और प्रकृति की विविध शक्तियों को पूजते हैं। प्राचीन काल में उत्तराखण्ड का समाज छोटे–छोटे कबीलों में बटाँ था, तब उनके अपने–अपने विभिन्न रीति रिवाज थे। सांस्कृतिक विकास और राजनैतिक परिवर्तनों के साथ धीरे–धीरे अनेक रीति–रिवाजों में परिवर्तन होने लगे। प्राचीन काल से ही उत्तराखण्ड में अधिकांश जातियों में मनुष्य के जन्म से मृत्यु तक के संस्कारों को मनुस्मृति में वर्णित संस्कार के अनुसार सम्पन्न किया जाता था परन्तु चारों वर्णों के संस्कार सम्बन्धी प्रथाओं में कुछ भिन्नता भी पाई गयी है। हिन्दू समाज में विवाह को एक धार्मिक कृत्य के रूप में स्वीकार किया गया है लेकिन मुस्लिम विवाह एक धार्मिक संस्कार के रुप में न होकर सामाजिक समझौते के रुप में समझा जाता है।

परिवार स्वाभाविक और महत्वपूर्ण सामाजिक संगठनों में सबसे प्राचीनतम और पूरे विश्व में पाया जाने वाला प्रमुख संगठन है। यह सबसे महत्वपूर्ण प्राथमिक समूह है जो प्रत्येक समाज में पाया जाता है। अन्य प्राणियों के समान मनुष्य में भी जाति–सृजन तथा वंश–संरक्षण की नैसर्गिक प्रेरणाऐं हेाती हैं, इन प्रेरणाओं से ही परिवार तथा घर का जन्म हुआ।

मानव का जन्म परिवार में होता है, यहीं से उसका पालन–पोषण प्रारम्भ होता है। सामाजीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से व्यक्ति परिवार से निरन्तर कुछ ना कुछ सीखता ही रहता है। परिवार में ही उसे अपने रीति–रिवाज, परम्पराओं एंव रूढ़ियों की शिक्षा मिलती है। परिवार के सदस्य ही मानव के विचारों, मूल्यों, जीवन के ढगों ,भावनाओं आदि को विकसित करते हैं। प्रत्येक बालक या बालिका को माता–पिता, भाई–बहन, चाचा–चाची, मामा–मामी, दादा–दादी, नाना–नानी अनेक प्रकार के रिश्तेदारों का पता परिवार से ही चलता है। नातेदारी व्यवस्था रिश्तेदारी की ही व्यवस्था है।

2.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य विभिन्न तथ्यों के माध्यम से उत्तराखण्ड में विवाह, परिवार, नातेदारी और स्त्रियों की प्रस्थिति का परिचय कराना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप निम्नलिखित के संबंध में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

- संस्कार
- विवाह की अवधारणाः हिन्दू विवाह एवं मुस्लिम विवाह
- परिवारः अर्थ एंव परिभाषाऐं, प्रमुख विशेषताऐं तथा परिवार के कार्य
- नातेदारी अर्थ एंव परिभाषाऐं
- स्त्रियों की प्रस्थिति
-

2.3 संस्कार

हिन्दू समाज में व्यक्तिगत एंव सामाजिक जीवन को सुव्यवस्था प्रदान करने हेतु जिन संस्थागत आधारों को विकसित किया गया है उनमें संस्कार भी एक हैं। संस्कारों का परम्परागत रूप से हिन्दू सामाजिक संगठन में विशेष महत्व रहा है। मानव जीवन को संस्कारित करने के उद्देश्य से,जन्म से मृत्यु तक 16 संस्कारों का विधान किया गया है। ये संस्कार इस प्रकार हैः1.गर्भाधान 2. पुंसवन 3. सीमंतोनयन

4. जातकर्म 5. षष्ठी महोत्सव 6. नामकरण 7. अन्नप्राशन 8. चूड़ाकर्म 9. कर्णवेध 10. अक्षरारम्भ 11. उपनयन 12. विवाह 13. समापवर्तन 14. वानप्रस्थ 15. सन्यास 16. अंत्येष्टि। '

ग्रहसूत्र' में हमें इन सोलह प्रमुख संस्कारों का उल्लेख मिलता हैं। संस्कारों के प्रमुख उद्देश्य निम्नांकित हैं– संस्कार

- व्यक्तित्व का विकास करते हैं।
- आध्यात्मिक प्रगति की दिशा की ओर उन्मुख करते हैं।
- .संस्कार व्यक्तियों में आत्मविश्वास की वृद्धि करते हैं अथवा आत्म–अभिव्यक्ति का माध्यम हैं।
- भौतिक समृद्धि प्राप्त करने हेतु सक्षम बनाते हैं।
- अनुशासित जीवन जीना सिखाते हैं।
- संस्कार नातेदार व्यवस्था को सुदृढ़ करते हैं तथा सामूहिक एकता को बनाए रखने में सहायता प्रदान करते हैं।

संस्कार को अंग्रेजी में "sacrament"कहा जाता है। यद्यपि "ceremony" अथवा "rite" शब्दों का अर्थ भी संस्कार है।

2.3.1 संस्कार की परिभाषाऐं

राजबली पाण्डेय के अनुसार *''धार्मिक विधि–विधान अथवा वह कृत्य हैं, जो आन्तरिक तथा आध्यात्मिक सौन्दर्य का दृश्य प्रतीक माना जाता है।'***पी.ए.के.अय्यर** के अनुसार *''संस्कारों के लिये निकटतम अंग्रेजी शब्द "sacrament" है ये वह संस्कार हैं जिनका पूरा करने से हिन्दू का जीवन उच्चतर पवित्रता को प्राप्त करता है। ये उनके समस्त जीवन पर छाए हैं, जिस क्षण से वह माँ के गर्भ में आता है, यह मृत्यु तक उसके अंतिम संस्कार (दाह कर्म) को शामिल करते हुए और आगे भी उसकी आत्मा के अन्य विश्व में प्रवेश को सुगम करने के लिये हैं।* ''**राजबली पाण्डेय** ने यह भी कहा की *''संस्कार का अर्थ शुद्धि की धार्मिक क्रियाओं तथा व्यक्ति के दैहिक, मानसिक और बौद्धिक परिष्कार के लिये किये जाने वाले अनुष्ठानों से है। इन्हीं अनुष्ठानों से एक हिन्दू समाज का पूर्ण विकसित सदस्य बन पाता है।''* इस प्रकार संस्कार का अर्थ जीवन को परिशुद्ध करने हेतु अपनाई गई कार्य–पद्धति है।

2.3.2 विवाह की अवधारणा

साधारण तौर पर यह कहा जा सकता है कि विवाह, समाज द्वारा मान्यता प्राप्त एक सामाजिक संस्था है। इसके द्वारा दो भिन्न लिंग के लोगो को एक साथ रहने, यौन संबंध स्थापित करने, बच्चों को जन्म देने तथा उनका लालन–पोषण करने का अधिकार प्राप्त हो जाता है। एक अन्य दृष्टिकोण के आधार पर यह कह सकते है कि विवाह पारिवारिक जीवन का आधार है दो भिन्न लोग बिना विवाह किये पारिवारिक जीवन व्यतीत नहीं कर सकते हैं। समाज द्वारा अनुमोदित स्त्री–पुरूष के संयोग को विवाह कहते हैं, जिससे स्त्री– पुरूष को काम– इच्छा की सन्तुष्टि के लिए समाज द्वारा स्वीकृति प्रदान की जाती है । समाज की यह स्वीकृति कुछ संस्कारों को पूरा करने के पश्चात् ही प्राप्त होती है । इस अर्थ में विवाह यौन सम्बधों के नियंत्रण एवं नियमन का साघन है । क्योंकि विवाह का एक रूप नहीं है इसलिए विद्वान भी इसकी परिभाषा के बारे में एक मत नही हैं ।

बोर्गाडस के अनुसार, *''विवाह स्त्री–पुरूष को पारिवारिक जीवन में प्रवेश कराने की एक संस्था है।''* **वेस्टरमार्क** ने अपनी पुस्तक **हिस्ट्री ऑफ हयूमन मैरज** में कहा है, *'' विवाह एक या अधिक पुरूषों का, एक या अधिक स्त्रियों के साथ होने वाला वह संम्बन्ध हैं जिसे प्रथा या कानून स्वीकार करता है और*

विवाह करने वाले व्यक्तियों में और उनसे उत्पन्न सम्भावित बच्चों के बीच में एक–दूसरे के प्रति होने वाले अधिकारों और कर्तव्यों का समावेश होता है।''

मजुमदार तथा मदन के अनुसार, *''विवाह साधारणतः एक बन्धन अथवा धार्मिक संस्कार के रूप में स्पष्ट होने वाली वह सामाजिक मान्यता हैं जो दो विषम लिंगी व्यक्तियों को यौन संम्बध और उससे सम्बंधित सामाजिक– आर्थिक सम्बन्धों में सम्मिलित होने का अधिकार प्रदान करती हैं।''*

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता हैं कि स्त्री–पुरूष दोनों ही मिलकर एक परिवार का निर्माण करते हैं। उनका यह मिलन सामाजिक स्वीकृति है और इसे ही विवाह कहा जाता है, जिसमें एक–दूसरे के प्रति अधिकारों तथा कर्त्तव्यों की एक व्यवस्था पाई जाती है।

2.3.3 हिन्दू विवाह

भारतीय संस्कृति में व्यक्ति के चार पुरूषार्थों को चार कर्त्तव्यों के रूप में स्वीकार किया गया है। इसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष कहा गया है। गृहस्थ आश्रम में विवाह द्वारा व्यक्ति प्रवेश करता है। इसलिए विवाह को धार्मिक संस्कार के रूप में देखा गया है। यह एक पवित्र बंधन है एंव जन्म–जन्मान्तर का संबंध है। ' प्रजा ' अर्थात् सन्तानोत्पति करके व्यक्ति समाज की निरन्तरता को बनाये रखने में अपना सहयोग प्रदान करता है। यही उसका समाज के प्रति दायित्व भी है। कुछ विद्वानों ने इसे निम्नलिखित परिभाषाओं के द्वारा समझाया है :**पी.एच.प्रभु :** *'' एक हिन्दू के लिए विवाह एक संस्कार है तथा इस कारण विवाह संबंध में जुड़ने वाले पक्षों का संबंध संस्कार रूपों से है ना कि समझौते की प्रकृति का।''***रामनाथ शर्मा** *''हिन्दू विवाह की परिभाषा एक धार्मिक संस्कार के रूप में की जा सकती है जिसमें धर्म, प्रजोत्पत्ति आदि के भौतिक, सामाजिक व आध्यात्मिक प्रयोजनों में एक स्त्री–पुरूष परस्पर स्थायी संबंध मे बँध जाते हैं।''***के.ए.कपाड़िया** के अनुसार,*''हिन्दू विवाह एक संस्कार है।''*यह स्पष्ट है कि हिन्दू विवाह एक संस्कार है, जिससे एक व्यक्ति गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करता है। हिन्दुओं में विवाह, धार्मिक कर्त्तव्य की पूर्ति, पुत्र प्राप्ति, पारिवारिक सुख, सामाजिक एकता, पितृ ऋण से मुक्ति, पुरूषार्थों की पूर्ति आदि उददे्श्यों की पूर्ति के लिए किया जाता है। सामान्य अर्थों में हिन्दू विवाह से तात्पर्य कुछ धार्मिक संस्कारों के द्वारा समाज में मान्यता प्राप्त स्त्री–पुरूष के विधिवत् मिलन से है जिसका उददे्श्य धर्म,प्रजा और रति के प्रयोजन को पूरा करना है।

2.3.4हिन्दू विवाह के उददे्श्य

हिन्दू विवाह के धार्मिक रूप से कुछ उद्देश्य हैं। विवाह द्वारा ही एक व्यक्ति उन दायित्वों को पूरा करता है जिन्हें भारतीय सामाजिक व्यवस्था का अनिवार्य अंग माना जाता है,यथा–

2.3.4.1 धार्मिक कर्त्तव्यों की पूर्ति

हिन्दू विवाह का सर्वप्रथम उददे्श्य धर्म अर्थात कर्त्तव्यों को पूरा करना है। इस सम्बन्ध में धर्म का अर्थ दूसरे व्यक्ति के प्रति कर्त्तव्यों को पूरा करने से है, जिन्हें यज्ञ कहा जाता है। अतः पंच महायज्ञों–देवयज्ञ, ऋषियज्ञ,पितृयज्ञ, अतिथियज्ञ और भूतयज्ञ को पूरा करना हिन्दू विवाह का प्रमुख उददे्श्य है। हिन्दू संस्कृति में पुत्र का महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि पुत्र को बिना जन्म दिये पितृ ऋण चुकता नहीं है। पुत्र अपने पूर्वजों को पिण्डदान देता है। बिना श्राद्ध के पूर्वजों की आत्मा को शान्ति नहीं मिलती है।

2.3.4.2 रति

रति का अर्थ समाज के मान्यता प्राप्त नियमों के अनुसार यौन सम्बन्धों की स्थापना करना है। वैसे यौन सम्बन्धों की स्थापना प्रत्येक समाज का मुख्य उद्देश्य है किन्तु हिन्दू विवाह में इसे मान्यता देते हुए भी अन्तिम स्थान दिया गया हैं। रति (यौन सम्बन्ध) पुत्र जन्म के लिए आवश्यक होता है।अतः इसे भी धार्मिक उददेश्य माना गया है।

2.3.4.3 व्यक्तित्व का विकास

विवाह, स्त्री–पुरूष के जीवन को संगठित बनाने तथा व्यक्तित्व के विकास के लिए आवश्यक है। दोनों विवाह के द्वारा मिलकर ही पूर्णता को प्राप्त करते हैं।

2.3.4.4 सामाजिक कर्त्तव्यों का पालन

विवाह के द्वारा व्यक्ति को अपने सामाजिक कर्त्तव्यों का ज्ञान होता है और व्यक्ति उन्हें पूरा करने का प्रयत्न करता है। विवाह के द्वारा ही व्यक्ति संतान उत्पन्न करके समाज की निरन्तरता को बनाये रखता है। विवाह के पश्चात् ही उसको आत्मनिर्भर एवम् स्वतंत्र व्यक्तित्व प्राप्त होता है ।

2.3.4.5 पारिवारिक कर्त्तव्यों का पालन

व्यक्ति को पारिवारिक कर्त्तव्यों का बोध विवाह कराता है और कर्त्तव्यों के पालन की शिक्षा देता है। परिवार की संस्कृति क्या है ? परिवार की आय में वृद्धि कैसे की जाय ? माता पिता के प्रति क्या कर्तव्य हैं ? इन सभी बातों का ज्ञान व्यक्ति को विवाह के बाद ही होता है और साथ ही वह उनका पालन करने का प्रयास करता है।

2.3.5 हिन्दू विवाह के प्रमुख संस्कार

हिन्दू विवाह एक धार्मिक कृत्य है। इसमें अनेक संस्कार करने होते हैं। मुस्लिम तथा ईसाई समाज में विवाह एक सामाजिक समझौता माना जाता है परन्तु हिन्दुओं में विवाह एक पवित्र संस्कार माना जाता है। इसका कारण यह है कि हिन्दू–विवाह में धर्म को प्राथमिकता दी गयी है। हिन्दू विवाह धार्मिक उद्देश्यों पर आधारित हैं। इसी कारण कहा जाता है कि 'हिन्दू विवाह एक धार्मिक संस्कार है।

निम्नलिखित पंत्तियों में यह स्पष्ट किया गया है कि हिन्दू विवाह क्यों धार्मिक संस्कार माना जाता है।

2.3.5.1 विवाह का आधार धर्म है

हिन्दू विवाह के कुछ धार्मिक उद्देश्य होते हैं। इसमें धर्म को सबसे उच्च स्थान दिया गया है। यौन सुख को सबसे निम्न स्थान प्रदान किया गया है। इसमें धर्म और 'काम' साथ–साथ चलते हैं काम को भी कर्त्तव्य माना गया है। कामवासना की पूर्ति भी पुत्र की प्राप्ति के लिए ही की जाती है। इस प्रकार हिन्दू विवाह को एक धार्मिक कृत्य माना गया । यही कारण है कि इसे धार्मिक संस्कार कहा जाता है।

2.3.5.2 हिन्दू विवाह अनेक धार्मिक विधियों द्वारा सम्पन्न होता है

हिन्दू विवाह अनेक धार्मिक विधियों तथा अनुष्ठानों के पश्चात् ही सम्पन्न होता है। इसी आधार पर हिन्दू विवाह एक धार्मिक संस्कार कहा जाता है, यथा –

- ***शुभ मुहूर्त*** – विवाह सम्पन्न होने से पूर्व एक शुभ मुहूर्त निकाला जाता है। बालक – बालिका के जन्म के समय को ध्यान में रखकर एक शुभ मुहर्त निकाला जाता है। इसी शुभ दिन विवाह सम्पन्न किया जाता है।
- ***कन्या के घर जाना*** – विवाह सम्पन्न कराने के लिए वर पक्ष, कन्या पक्ष के घर जाता है। वर पक्ष अपने साथ कुछ अन्य व्यक्तियों को भी ले जाता है। ये व्यक्ति वर के सगे सम्बन्धी तथा मित्र होते हैं। इन्हें 'बाराती' कहा जाता है और ये सब मिलकर बारात (Bridegroom's Party) कहलाते हैं यही बारात कन्या पक्ष के यहाँ जाती है।
- ***कन्यादान*** – कन्यादान, हिन्दू विवाह का प्रमुख संस्कार हैं। हिन्दू धर्मग्रन्थों में कन्यादान को महादान माना है। कन्यादान देने वाले को मोक्ष मिलता है, ऐसा विश्वास किया जाता है। पिता अपनी कन्या वर को दान में दे देता है।
- ***यज्ञ वेदी*** – यज्ञ वेदी में अग्नि जलाई जाती है अग्नि को साक्षी मानकर वर तथा वधू को सदैव के लिए एक सूत्र में बाँध दिया जाता है। वर तथा वधू से अग्नि में आहूतियाँ दिलाई जाती हैं।
- ***पाणिग्रहण संस्कार*** – पाणिग्रहण संस्कार में वर तथा वधू एक दूसरे का हाथ पकड़ते हैं। इस समय वर तथा वधू कुछ प्रतिज्ञाऐं करते हैं। कुछ मन्त्रों का उच्चारण किया जाता है। वर तथा वधू जीवनपर्यन्त साथ रहने की प्रतिज्ञा करते हैं।
- ***अष्मारोहण*** – इस कार्य के लिए कन्या का भाई कन्या के पैर को पत्थर पर रखवाता हैं। इस अवसर पर वर अपनी हाने वाली पत्नी से पत्थर की तरह दृढ़ रहने को कहता है।
- ***लाजाहोम*** – इस अनुष्ठान में वधू अग्नि में खीलें डालती है। इस विधि से वधू, वर की दीर्घ आयु होने की कामना करती है।
- ***अग्नि – परिण्यत***– इसमें वर–वधू अग्नि की परिक्रमा करते हुए विवाह के सम्बन्ध को दृढ़ करते हैं।
- ***सप्तपदी*** – सप्तपदी संस्कार में वर–वधू से निश्चित कर्त्तव्यों को पूर्ण कराने की प्रतिज्ञा कराता है। इस संस्कार में वर–वधू गाँठ बाँधे हुए सात कदम चलते हैं।

2.3.5.3 हिन्दू विवाहः एक पवित्र संघ

हिन्दू विवाह एक धार्मिक कृत्य है। हिन्दू विवाह के अनेक उदेश्य होते हैं। हिन्दू विवाह पवित्र अग्नि के समक्ष ही सम्पन्न किया जा सकता है। विवाह के समय वर–वधू को कुछ प्रतिज्ञाएँ करनी होती हैं। उन्हें कुछ मन्त्रों का उच्चारण भी करना होता है।हिन्दू विवाह, वर–वधू को सदैव के लिए बाँधता है ं– हिन्दू विवाह एक स्थायी बन्धन होता है। इस बन्धन को तोड़ा नही जा सकता। पति–पत्नी एक–दूसरे के जन्म–जन्मातर के साथी होते हैं। हिन्दू विवाह को ईश्वरीय विधान कहा जाता है। इसमें हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता। यही कारण है कि हिन्दू सामाजिक व्यवस्था में विवाह विच्छेदन की अनुमति नही है।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि हिन्दू विवाह एक धार्मिक संस्कार है। विवाह के अवसर पर भगवान को साक्षी मानकर कन्यादान करना, उस दान को वर द्वारा ग्रहण करना, अग्नि के चारों ओर फेरे

लगाना आदि ऐसे कृत्य हैं जो विवाह को धार्मिक संस्कार बनाते हैं।विवाह हर्ष और उल्लास का अवसर समझा जाता है। उत्तराखण्ड में भी विवाह संस्कार सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्कार माना जाता है। यहाँ हिन्दुओं में प्रचलित ब्रह्म विवाह का प्रचलन सर्वाधिक है तथा इसे सबसे श्रेष्ठ माना जाता है। अब गांन्धव विवाह का प्रचलन चल रहा है और इसमें माता–पिता व परिवार की रजामन्दी भी कहीं–कहीं देखी जाती है। क्षत्रिय और जनजातियों में राक्षस इत्यादि विवाह प्रकार के प्रचलन का ऐतिहासिक उल्लेख भी पाये गये हैं। यहाँ विधवा विवाह पर कोई प्रतिबन्ध नही हैं यद्यपि विधवा विवाह कम ही होते हैं।

बाल विवाह का प्रचलन दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्रों में ही देखने को मिलता है। प्रत्येक माता–पिता अपनी सन्तान का विवाह कराना अपना कर्तव्य समझते हैं। उत्तराखण्ड के कुमाँऊ और गढ़वाल मण्डलों में विवाह संस्कार वैदिक मंत्रों के साथ वैदिक रीति से देश के अन्य भागों की भाँति धूम–धाम से सम्पन्न होता है। इसमें कुछ विशिष्टता भी देखने को मिलती है।कुछ समय पहले कृषि और पशुपालन आदि कार्य में अधिकता के कारण माता–पिता नौकरी में गये पुत्र की अनुपस्थिति में ही उसका विवाह करा लेते थे, उसे घट विवाह कहा जाता था। इस प्रकार के विवाह में लड़के की पूर्ण स्वीकृति होती थी, यह काफी समय तक चर्चे का विषय था।प्राप्त सूचनाओं के आधार पर आज से लगभग 50 वर्ष पूर्व तक ग्राम में बाल विवाह की प्रथा प्रचलित थी। विशुद्ध कन्यादान को सामाजिक एंव धार्मिक दृष्टि से उचित माना जाता था। लेकिन वर्तमान समय में बाल विवाह प्रथा समाप्त हो चुकी है।

2.3.6 मुस्लिम विवाह

मुस्लिम सामाजिक संस्थाऐं इस्लाम धर्म पर आधारित हैं। मुस्लिम विवाह ''कुरान'' से शासित होते हैं। ''कुरान'' मुहम्मद साहब के कलामों का संग्रह है। समस्त मुस्लिम सामाजिक व्यवस्था कुरान के अनुसार ही है। मुस्लिम विवाह एक धार्मिक संस्कार के रुप में न होकर सामाजिक समझौते के रुप में समझा जाता है। मुस्लिम विवाह कुछ उद्देश्यों की पूर्ति के लिये किया गया एक समझौता है। किसी भी समझौते में कम से कम दो पक्ष होते हैं – इसमें एक पक्ष से प्रस्ताव आता है तो दूसरा पक्ष इस प्रस्ताव पर अपनी स्वीकृति प्रदान करता है। दोनों पक्षों की स्वीकृति हो जाने पर प्रमाण के रुप में कुछ धन का भुगतान करना होता है। मुस्लिम विवाह की भी यही प्रकिया जिसमें विवाह का प्रस्ताव वर पक्ष से आता है, यदि कन्या पक्ष इस प्रस्ताव के पक्ष में अपनी स्वीकृति दे देता है तो वर पक्ष की ओर से प्रमाण के रुप में कुछ धन दिया जाता है। इस धन को मुस्लिम विवाह में 'मेहर' कहते हैं। इस प्रकार से संपन्न विवाह, मुस्लिम बच्चों को जन्म देना और उन्हें कानूनी मान्यता प्रदान करता है। उत्तराखण्ड में भी मुस्लिम समाज में इसी प्रकार विवाह सम्पन्न किए जाते हैं।

2.3.6.1 मुस्लिम विवाह की शर्तें

मुस्लिम विवाह की प्रमुख शर्तें निम्न प्रकार से हैं –

- प्रत्येक मुसलमान जो बालिग (15 वर्ष की आयु का) हो, पागल न हो और स्वस्थ मस्तिष्क का हो, निकाह कर सकता है।
- नाबालिग बच्चों का विवाह उनके संरक्षकों की स्वीकृति द्वारा किया जा सकता है। किन्तु ऐसे विवाह को वर–वधू को बालिग होने पर समाप्त करने का अधिकार है।
- विवाह की स्वीकृति दोनों पक्षों की स्वतन्त्र इच्छा से होनी चाहिए।
- विवाह की स्वीकृति के अवसर पर गवाह के रुप में दो पुरुष अथवा एक पुरुष और दो स्त्रियों का होना आवश्यक है।

➢ एक मुसलमान पुरुष एक समय में चार स्त्रियों तक से विवाह कर सकता है। किन्तु मुसलमान स्त्री एक समय में केवल एक ही पुरुष से विवाह कर सकती है।

➢ तीर्थ यात्रा के समय वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित नहीं किये जा सकते।

➢ विवाह की स्वीकृति काजी के सम्मुख होनी चाहिए।

➢ जो स्त्री इद्दत की अवधि (तीन या चार मासिक धर्मों के बीच की अवधि) में हो, उसके साथ विवाह अनियमित है।

➢ विवाह की एक आवश्यक शर्त 'मेहर' अर्थात् स्त्री धन है जो विवाह के समय पुरुष द्वारा स्त्री को चुका दिया जाना चाहिए या तय कर लिया जाना चाहिए।

1. विवाह में किसी प्रकार की बाधाऐं नही होनी चाहिए।

2.3.6.2 मुस्लिम विवाह में 'मेहर'

मेहर वह धन या सम्पत्ति है जो पति द्वारा पत्नी को विवाह के प्रतिफल के रुप में प्रदान की जाती है। मेहर निम्नलिखित चार प्रकार के होता है–

1. **मेहरे–मुसम्मा या निश्चित मेहर**

यह वह मेहर है जो विवाह के समय इकरारनामे में स्पष्ट कर दी जाती है। इसे पत्नी को पति से विवाह के समय या बाद में पाने का अधिकार होता है।

2. **मेहे–मिस्ल या उचित मेहर** – यदि विवाह के समय कोई मेहर तय न हुआ हो तो अदालत उचित मेहर तय करती है। प्रायः यह लड़की, माँ या बहन के विवाह में मिलने वाली मेहर की धनराशि के आधार पर निश्चित की जाती है।

3. **मेहरे–मुअज्जल या तुरन्त मेहर** – यह वह धनराशि है जो कि पति को अपनी पत्नी को विवाह के तुरन्त बाद देनी पड़ती है। यदि पति मेहर माँगने पर न दे तो स्त्री पति को वैवाहिक अधिकार देने से इंकार कर सकती है।

4. **मेहरे–मुवज्जल या स्थगित मेहर** – यह वह मेहर है जो पति के मरने पर या स्त्री को तलाक देने पर मिलता है। इसे स्थगित मेहर इसलिये कहा जाता है क्योंकि ये पति के मरने या तलाक से पहले नहीं मिलता है।

2.3.6.3 मुसलमानों में 'तलाक'

मुसलमान समाज में तलाक की प्रक्रिया अत्यन्त ही सरल है। इसके लिये न्यायालय जाने की आवश्यकता नहीं। तलाक के संबंध में मुस्लिम पुरुष को असीम अधिकार प्राप्त हैं। और वह सामाजिक रुप से अपनी पत्नी को छोड़ सकता है। इनके यहाँ तलाक मुख्यतया दो प्रकार का होता है–

(i) तलाक के प्रथागत रुप – मुस्लिम समाज में प्रथागत तलाक मुख्यतयाः छः प्रकार के होते हैं–

1. कोई भी स्वस्थ दिमाग वाला मुसलमान अपनी पत्नी को बिना कारण बताये ही छोड़ सकता है। वह केवल मौखिक रुप से ही निम्न तीन प्रकार से तलाक दे सकता है –

(i) तलाके अहसन – इसके अनुसार पति अपनी पत्नी को किसी तुहर (मासिक धर्म) के समय तलाक की घोषणा करता है तथा इद्दत की अवधी तक पत्नी के साथ सहवास नहीं करता है।

(ii) तलाके हसन – इनमें पति लगातार तीन तुहरों के समय तक तलाक की घोषणा को दुहराता है और इसे पूरा मान लिया जाता है।

2. **इला** – इला तलाक के अर्न्तगत एक मुसलमान पुरूष कसम लेकर 4 महीने तक अपनी पत्नी से सहवास नहीं करता तो इसे तलाक मान लेते हैं।

3. **खुला** – यह तलाक पति तथा पत्नी की सहमति से होता है। इस तलाक में पति को मेहर की राशि देना आवश्यक नहीं होता है।

4. **मुर्बरत** – यह तलाक भी पति–पत्नी की पारस्परिक स्वीकृति का परिणाम है। पर इसमें तलाक का प्रस्ताव पति द्वारा रखा जाता है, जबकि खुला में तलाक का प्रस्ताव पत्नी द्वारा रखा जाता है। इसमें भी किसी पक्ष को कोई हर्जाना नहीं देना पड़ता है।

5. **जिहर** – यदि पति अपनी पत्नी की तुलना किसी ऐसे संबंन्धी के साथ कर देता है जिसके साथ मुस्लिम कानून के अनुसार विवाह नहीं हो सकता तो पत्नी 'जिहर' तलाक का प्रस्ताव रख सकती है।

मुस्लिम विवाह की पद्धति एवं स्वरूपों का अध्ययन करने से विदित होता है कि मुस्लिम विवाह यौनेच्छा की तृप्ति एंव उत्पन्न सन्तान को सिद्ध करने हेते एक शिष्ट समझौता स्थायी और अस्थायी दोनों प्रकार होता है। इसमें वर, वधू को 'मेहर' देने का वचन देता है। इस समझौते को तोड़ा भी जा सकता है। मुस्लिम विवाह में पुरूषों को असीमित अधिकार दिये गये हैं। पुरूष एक साथ चार स्त्रियों से विवाह कर सकता है। इसमें विवाह–विच्छेद का भी प्रावधान है। कुमाऊँ और गढ़वाल क्षेत्र में यह मुसलमानों में बहुविवाह सामान्यतः कम प्रचलित है।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

1. 'हिन्दू विवाह एक धार्मिक संस्कार है।' स्पष्ट कीजिए।
2. विवाह की अवधारणा की विवेचना कीजिए।
3. मुस्लिम विवाह पर एक लेख लिखिए।

2.4 परिवारः अर्थ एंव परिभाषाऐं

परिवार स्वाभाविक और महत्वपूर्ण सामाजिक संगठनों में सबसे प्राचीनतम और पूरे विश्व में पाया जाने वाला प्रमुख संगठन है। यह सबसे महत्वपूर्ण प्राथमिक समूह है जो प्रत्येक समाज में पाया जाता है। अन्य प्राणियों के समान मनुष्य में भी जाति–सृजन तथा वंश संरक्षण की नैसर्गिक प्रेरणाऐं हेाती हैं, इन प्रेरणाओं से ही परिवार तथा घर का जन्म हुआ। प्रमुख विद्वानों ने परिवार को अग्रलिखित परिभाषित किया है–

मैकाइवर तथा पेज – *'' परिवार पर्याप्त निश्चित यौन – संम्बन्धों द्वारा परिभाषित एक ऐसा समूह है जो बच्चों को पैदा करने (प्रजनन) तथा लालन–पालन करने की व्यवस्था करता है।*

किंग्स्ले डेविस – *'' परिवार ऐसे व्यक्तियों का समूह है जिसमें सगोत्रता के सम्बन्ध होते हैं और जो इस प्रकार एक दूसरे के सम्बन्धी होते हैं।'* **इलियट तथा मैरिल** – *'' परिवार को पति–पत्नी तथा बच्चों की एक जैविक सामाजिक इकाई के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।'' इनके अनुसार यह एक सामाजिक संस्था भी है और एक सामाजिक संगठन भी है जिसके द्वारा कुछ मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है।*

जुकरमैन – *'' एक परिवार समूह पुरूष स्वामी, उसकी समस्त स्त्रियों और उनके बच्चों को मिलाकर बनता है। कभी–कभी एक या अधिक अविवाहित अथवा पत्नी – विहीन पुरूषों को भी सम्मिलित किया जाता है।'*

बोगार्डस – *'' परिवार एक छोटा सामाजिक समूह है जिसमें साधारणतः माता – पिता एंव एक या अधिक बच्चे होते हैं, जिसमें स्नेह एंव उत्तरदायित्व का समान हिस्सा होता है तथा जिसमें बच्चों का पालन – पोषण उन्हे स्वनियंन्त्रित एंव सामाजिक व्यक्ति बनाने के लिए होता है।''*

संक्षेप में यह कह सकते हैं कि परिवार एक लगभग स्थायी सामाजिक संगठन हैं। बच्चों का जन्म, लालन – पोषण एंव समाजीकरण आदि इसके प्रमुख कार्य होते हैं।

2.4.1 परिवार की प्रमुख विशेषताऐं

परिवार की कुछ मुलभूत विषषेताऐं हैं जो सामान्य रूप से विश्व के समस्त परिवारों में पायी जाती है। ये विशेषताऐं निम्नलिखित हैं–

1.पति – पत्नी का संम्बन्ध – परिवार का विकास पति–पत्नी के यौन संबंध द्वारा होता है। बिना पति – पत्नी के संबंधों के परिवार की कल्पना नहीं की जा सकती । यह संबंध अनेक रूपों में हो सकता है। कुछ स्थानों पर यह संबंध एक विवाह प्रथा के रूप में पाया जाता है तो कुछ में बहु–विवाह प्रथा के रूप में हो सकता है। स्त्री–पुरूष के संबंधों को नियमित करने वाली संस्था को 'विवाह' कहा जाता है।

2.यौन सम्बन्ध – यौन संबंध की प्रवृति प्रत्येक प्राणी में पाई जाती है। वास्तव में, सृष्टि का अस्तित्व ही इस पर निर्भर करता है। मनुष्य में भी काम–वासना प्रबल रूप से पाई जाती है। इस भावना की सन्तुष्टि के लिए ही स्त्री – पुरूष एक–दूसरे के निकट आते हैं। यह एक स्वाभाविक प्रवृति है जो स्त्री और पुरूष दोनों में पाई जाती है।

3. रक्त–सम्बन्ध – परिवार की अन्य विशेषता है उसके विभिन्न सदस्यों का एक–दूसरे से परस्पर रक्त–सम्बन्धों द्वारा जुड़ा होना । माता – पिता द्वारा जो सन्तान उत्पन्न होती है वह पूर्णतया उनके रक्त से सम्बन्धित होती है।

4. निवास स्थान – परिवार की चौथी महत्वपूर्ण विशेषता स्थायी निवास स्थान है। परिवार के समस्त सदस्य अपनी शारीरिक सुरक्षा तथा विभिन्न सुविधाओं के लिए एक ही घर या निवास स्थान में रहते हैं। आवश्यकता पड़ने पर या नौकरी के लिए परिवार का कोई सदस्य किसी स्थान पर चला जाए तो इससे परिवार की समाप्ति नहीं होती, क्योंकि इस प्रकार का जाना अस्थायी होता है।

5. आर्थिक सुरक्षा – प्रत्येक परिवार अपने सदस्यों को शारीरिक सुरक्षा प्रदान करता है तथा अस्वस्थ होने पर उपचार की व्यवस्था करता है। प्रत्येक सदस्य की भोजन की व्यवस्था करना भी परिवार का कार्य हैं। परिवार में श्रम– विभाजन के नियमों का अनुसरण होता है, जिसका आधार लिंग तथा आयु है। स्त्रियाँ घर के खाने–पीने की व्यवस्था करती हैं तो पुरूष घर के बाहर अर्थोपार्जन में लगे रहते हैं।

6. सामाजिक सुरक्षा – परिवार के प्रत्येक सदस्य का परिवार में विशेष स्थान या पद होता है जैसे– माता–पिता, चाचा–चाची, भाई–बहन इत्यादि। परिवार के सदस्य अपना ही नहीं अपितु परिवार की सामाजिक सुरक्षा के लिए भी जागरूक रहते हैं और इस बात का प्रयास करते हैं कि सामाजिक अपमान तथा दिवालियेपन आदि की नौबत ना आ सके।

7. सभ्यता और संस्कृति का ज्ञान – परिवार, बालक को सर्वप्रथम सामाजिक प्राणी बनने का पाठ पढ़ाता है। सामाजीकरण के अभिकरण के रूप में परिवार का योगदान अद्वितीय है। माता–पिता द्वारा बालक सामाजिक संस्कृति का ज्ञान प्राप्त करता है तथा विभिन्न शिष्टाचारों से परिचित होता है। सामाजिकता की जो शिक्षा बालक को परिवार से प्राप्त होती है यह अन्य किसी संस्था से प्राप्त नहीं होती । परिवार बच्चे की प्रथम पाठशाला है।

8. सार्वभौमिकता – परिवार एक ऐसा संघ है जो विश्व के समस्त समाजों में पाया जाता है यदि हम अतीत का अध्ययन करें तो हमें ज्ञात होगा की आदि काल से ही परिवार का अस्तित्व चला आ रहा है। इसके स्वरूप में अवश्य परिवर्तन आया है, परन्तु ये सभी समाजों में आज भी पाया जाता है। इसलिए यह कहा जाता है कि परिवार विश्व में पाई जाने वाली सार्वभौमिक इकाई है।

9. भावात्मक आधार – परिवार की अन्य विशेषता उसका भावात्मक आधार है। यह मनुष्य की अनेक स्वाभाविक प्रवृतियों एंव भावनाओं पर आधारित होता है, जैसे वात्सल्य, प्रेम, यौन सम्बन्ध, दया तथा ममता आदि। अन्य संस्थाओं या संघों में इस प्रकार की प्रवृतियाँ नहीं पाई जाती हैं।

10. सीमित आकार – परिवार प्राणिशास्त्रीय दशाओं पर आधारित होता है। परिवार का सदस्य वही व्यक्ति बन पाता है जो कि उसमें जन्म लेता है। व्यक्ति, विवाह द्वारा उसका सदस्य बनता है। प्रत्येक व्यक्ति किसी अन्य परिवार का सदस्य नहीं बन सकता । इन कारणों से परिवार का आकार सीमित होता है।

2.4.2 परिवार के कार्य

मनुष्य परिवार में ही जन्म लेता है और परिवार में पलकर ही बड़ा होता है। सामाजिकता का प्रथम पाठ मनुष्य परिवार में ही पढ़ता हैं। अतः सबसे पहली सामाजिक संस्था परिवार ही है, जो शिक्षा प्रदान करने का कार्य करती है और बच्चे को समाज में रहने के योग्य बनाती है। व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास में परिवार का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। निम्नलिखित कार्यों से हम यह समझ सकते हैं–

1. प्राणिशात्रीय कार्य निम्न प्रकार के है।

(i) यौन–इच्छा की पूर्ति

(ii) सन्तानोत्पत्ति

(iii) सन्तान का लालन–पालन

(iv) भोजन की व्यवस्था

(v) जीवन की सुरक्षा

2. परिवार के निम्न सामाजिक कार्य हैं–

(i) बालक का सामाजीकरण।

(ii) सामाजिक विरासत का हस्तान्तरण व प्रसार करना।

(iii) सदस्यों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना।

(iv) सदस्यों को सामाजिक स्थिति प्रदान करना।

(v) सामाजिक नियन्त्रण में सहायक ।

3. **धार्मिक कार्य–** परिवार वह स्थल है जहाँ अनेक धार्मिक एंव आध्यात्मिक बातों की पृष्ठभूमि तैयार होती है। परिवार के समस्त सदस्य सामान्य रीति से ईश्वर की उपासना करते हैं। परिवार में आयोजित होने वाले धार्मिक उत्सवों द्वारा भी व्यक्ति को धर्म का ज्ञान प्राप्त होता है।

4. आर्थिक कार्य

1 श्रम–विभाजन।

2. व्यावसायिक प्रशिक्षण।

3. उत्पादन की प्रेरणा।

4. आर्थिक क्रियाओं का केन्द्र।

5. उत्तराधिकार का निश्चय।

4. मनोवैज्ञानिक कार्य

1. परिवार बालकों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करता है।

2. परिवार बालकों का संवेगात्मक विकास उचित दिशा में करता है।

3. परिवार में अनेक मूलप्रवृतियों की संतुष्टि होती है।

4. अनेक मानसिक क्रियाओं का विकास परिवार में ही होता है।

6. नागरिकता का प्रशिक्षण

1. स्नेह की शिक्षा।
2. सहानुभूति की शिक्षा।
3. सहयोग की शिक्षा।
4. निःस्वार्थता की शिक्षा।
5. आज्ञापालन व कर्तव्यपालन की शिक्षा।

7. **शैक्षिक कार्य –** परिवार को बच्चे की प्रथम पाठशाला कहा गया है। परिवार सामाजिक जीवन की अमर पाठशाला है। परिवार में बालक अपने माता–पिता तथा बड़ों का अनुकरण करके अनेक बातें सीखता है तथा अपना बौद्धिक विकास करता है। अनौपचारिक शिक्षा प्रदान करने में परिवार महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि परिवार समाज की एक आधारभूत इकाई है। परिवारों का वर्गीकरण आधारों पर किया गया है। परिवार प्राणिशास्त्रीय आवश्यताओं को पूरा करके तथा अन्य सभी कार्यों के कारण सामाजीकरण का एक प्रमुख अभिकरण माना जाता है। परिवार को इसलिए बच्चे की प्रथम पाठशाला भी कहा जाता है।

2.5 नातेदारी अर्थ एंव परिभाषाऐं

मानव का जन्म परिवार में होता है, यहीं से उसका पालन–पोषण प्रारम्भ होता है। सामाजीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से व्यक्ति परिवार से निरन्तर कुछ ना कुछ सीखता ही रहता है। परिवार में ही उसे अपने रीति–रिवाज, परम्पराओं एंव रूढ़ियों की शिक्षा मिलती है। परिवार के सदस्य ही मानव के विचारों, मूल्यों, जीवन के ढंगों ,भावनाओं आदि को विकसित करते हैं। प्रत्येक बालक या बालिका को माता–पिता, भाई–बहन, चाचा–चाची, मामा–मामी, दादा–दादी, नाना–नानी अनेक प्रकार के रिश्तेदारों का पता परिवार से ही चलता है। नातेदारी व्यवस्था रिश्तेदारी की ही व्यवस्था है।

इसे निम्नलिखित प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है–

रेडक्लिफ ब्राउनः *"नातेदारी" सामाजिक उद्देश्यों के लिए स्वीकृत वंश संबन्ध है जो कि सामाजिक संबंधों के परम्परागत संबंधों का आधार है।*''**चार्ल्स विनिक** – *''नातेदारी व्यवस्था में समाज द्वारा मान्यता प्राप्त वे संबंध होते हैं जो कि अनुमानित और वास्तविक वंशावली संबंधों पर आधारित होते हैं।''*

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर यह कह सकते हैं कि नातेदारी का अर्थ रिश्तेदारों अथवा नातेदारी से है नातेदारी में सभी वास्तविक व्यक्तियों को सम्मिलित किया जाता है।

2.5.1 नातेदारी की प्रमुख श्रेणियाँ

प्राथमिक नातेदार – जिन रिश्तेदारों के साथ हमारा प्रत्यक्ष वैवाहिक या रक्त संबंध होता है, उन्हें हम प्राथमिक नातेदार कहते हैं। प्राथमिक नातेदारों में आठ संबंधियों को सम्मिलित किया जाता है। जैसे पति–पत्नी, पिता–पुत्र, माता–पुत्री, माता–पुत्र, छोटे–बड़े भाई, छोटी–बड़ी बहन तथा भाई–बहन ये वे संबंधी हैं जिनके साथ हमारा घनिष्ट संबंध होता है।

द्वितीयक नातेदार – द्वितीयक नातेदार वह नातेदार होते हैं जो हमारे प्राथमिक नातेदारों के संबंधी होते हैं ये हमारे प्राथमिक नातेदारों के कारण जुड़े होते हैं क्योंकि ये हमारे संबंधियों के प्राथमिक नातेदार होते हैं, जैसे चाचा – भतीजे में संबंध, दादा – पोते में संबंध, देवर – भाभी का संबंध। एक बेटे का पिता उसका

प्राथमिक नातेदार और पिता का भाई उसका प्राथमिक नातेदार है परन्तु वह बेटे का द्वितीय नातेदार है क्योंकि वह उसका चाचा है।

तृतीयक नातेदार – इस श्रेणी में उन नातेदारों को सम्मिलित किया जाता है जो हमारे द्वितीयक नातेदारों के प्राथमिक नातेदार हैं व हमारे प्राथमिक नातेदारों के द्वितीयक नातेदार जैसे साले की पत्नी, साले का लड़का, परदादा हमारा तृतीयक नातेदार है। किसी व्यक्ति के भाई का साला उसका तृतीयक नातेदार है। भाई तो प्राथमिक नातेदार है और साला, भाई का द्वितीयक नातेदार है।मरडोक ने 33 प्रकार के द्वितीयक नातेदार और 151 प्रकार के तृतीयक नातेदार बताऐ हैं।

2.5.2 नातेदार की प्रमुख रीतियाँ

नातेदारी की रीतियाँ विभिन्न नातेदारों से हमारे संबंधों को व्यक्त करती हैं, तथा इनसे हमें उनके साथ होने वाले व्यवहार का पता लगता है। अन्य शब्दों में नातेदारी की रीतियों का संबंध दो संबंधियों के बीच व्यवहार से है।

नातेदार की प्रमुख रीतियाँ हैं–

परिहार सम्बन्ध – प्रत्येक समाज में चाहे वह उत्तराखण्ड राज्य का हो या किसी और राज्य का या देश का, हर समाज में ''परिहार'' का पालन किया जाता है यह दो नातेदारों को दूरी बनाये रखने तथा प्रत्यक्ष या आमने सामने के सम्बन्ध स्थापित न करने पर बल देती है। जैसे ससुर को बहु से परिहार।

परिहास सम्बन्ध– नातेदारी की यह रीति परिहार के विपरीत है, अर्थात इसमें दो नातेदारों के बीच मधुर एंव हँसी–मजाक के सम्बन्धों पर बल दिया जाता है। इसमें दुसरे पक्ष को छेड़ना, तंग करना तथा हँसी–मजाक सम्मिलित होता है। देवर–भाभी, जीजा–साली, साले–बहनोई में सम्बन्ध इस श्रेणी के सम्बन्धों के मुख्य उदाहरण हैं।

माध्यमिक सम्बोधन– इस रीति में किसी नातेदार को सम्बोधित करने के लिए किसी अन्य को माध्यम बनाया जाता है। जिन सम्बन्धों में नाम पुकारना अच्छा नहीं समझा जाता, उनमें यह रीति प्रचलित है। गाँव में, और शहरों में यह देखा गया है कि पत्नी अपने पति का नाम न लेकर उसे पुकारने के लिए बच्चे को माध्यम बनाती है। इसका सभ्य–असभ्य समाज,शैक्षिक–अशैक्षिक, वर्ग,से कोई सम्बन्ध नहीं। एक पत्नी अपने पति को 'दीपू के पापा' या 'बीना के पापा' से सम्बोधित करती है ।

मातुलेय –यह रीति मातृसत्तात्मक समाजों में प्रचलित है तथा इसमें बच्चों के 'मामा' का अधिकार अधिक होता है और 'मामा' का स्थान नातेदारों में प्रमुख होता है। पिता से भी अधिक अधिकार मामा का होता है। अतः इस रीति में मामा का स्थान सर्वोपरि होता है।

पितृश्वसा– इस रीति में पितृश्वसा अर्थात पिता की बहन(बुआ) का महत्वपूर्ण स्थान होता है । बुआ को माता से अधिक सम्मान दिया जाता है। बच्चों का विवाह भी बुआ कराती है।

सहकष्टी – इसे सहप्रसविता भी कहते है क्योंकि इसका सम्बन्ध प्रसव काल से होता है । इसमें पति से प्रसवा स्त्री के समान व्यवहार करने अर्थात् कष्ट प्रदर्शित करने की आशा की जाती है। जिस प्रकार का भोजन प्रसवा को मिलता है वैसा ही पति को भी दिया जाता है। उसे भी अलग कमरे में रखा जाता है तथा प्रसवा अवधि के लिये अछूत माना जाता है।

2.5.3 स्त्रियों की प्रस्थिति

प्रत्येक समाज में वह आदिम हो या उन्नत, स्त्रियों की स्थिति और प्रस्थिति का एक अमूर्त स्थान है। समाज में प्रचलित आदर्शों, विश्वासों और मूल्यों के आधार पर उन्हें सौपे गए कार्यों के अनुसार चिन्हित होती है। हमारे देश में प्राचीन समय से ही नारी का स्थान पूज्यनीय रहा है। वैदिक परिवार में पत्नी को कुलभूषण मानकर श्रेष्ठ स्थान दिया गया था। श्वसुर कुल में वह घर के लोगों पर राज्य करती थी । पति के जीवन के प्रत्येक पहलू में पत्नी का महत्व था। अपत्नीक यज्ञ का अधिकार पति को नही था। इसलिए पति – पत्नी दोनों संयुक्त रूप से यज्ञ सम्पन्न करते थे। आज भी पत्नी बिना कोई भी पूजा अधूरी मानी जाती है।

उत्तराखण्ड की संस्कृति के अनुसार यहाँ की महिलाओं को देवी के रूप में पूज्य माना जाता है। नारी के प्रतिरुपों में कन्या, बहन, माता और पत्नी की छवि अंकित है। कुमाँऊ और गढ़वाल मण्डल में महिलाऐं ही समाज की रीढ़ हैं। उसे प्रातः काल से सांय के समय तक घर और बाहर के अनेक कार्य करने होते हैं। सवेरे दूध दोहकर गौशाले की सफाई करती हैं, गाँव के जलस्त्रोत से पानी भरकर लाती हैं, खाना बनाकर परिवार के वृद्धों तथा बच्चों को खिलाती हैं। घर में बंधे गाय–बछड़ों के लिये घास–पात की व्यवस्था करती व खेतों में खुदाई, रोपाई के कार्य भी करती हैं। कार्य जाति पर आधारित नहीं होते, किसी भी जाति की महिला को गाँव में यह काम करने ही पड़ते हैं।उत्तराखण्ड में स्त्रियों की भूमिका महत्वपूर्ण है। यहाँ अधिकांश पारिवारिक कार्य महिलाऐं ही करती हैं चाहे वह कृषि से संबंधित हो या पशुओं, बच्चों इत्यादि समस्त कार्य स्त्रियों को ही करने पडते हैं। स्त्रियों को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है ,स्वतंत्रता से पूर्व के समय में स्त्रियों की स्थिति अच्छी नहीं थी। उनका जीवन संघर्षपूर्ण था। समस्त घरेलू कार्य करने के बाद भी उनकी अवश्यकता की पूर्ति नहीं की जाती थी, स्त्रियों की स्थिति दास के समान थी, भरपेट भोजन नहीं मिलता था। भोजन के रुप में मोटा अनाज खाने को दिया जाता था। रात दिन उन्हें गृहकार्य करने पड़ते थे। विवाह के समय इनके कार्य करने की क्षमता को विशेष योग्यता माना जाता था। बहुविवाह प्रचलित थे।

स्वातंत्रोत्तर काल में स्त्रियों की स्थिति में अंतर आया। उनकी शिक्षा में ध्यान दिया जाने लगा व संपत्ति पर भी समान अधिकार प्राप्त हुए। वर्तमान समय में उत्तराखण्ड की स्त्रियाँ न केवल गृहकार्य कर रही हैं वरन वे राजनीति, प्रशासन, समाज सेवा, अध्ययन, अध्यापन, सेना क्षेत्र में नई–नई ऊचाईयाँ छू रही हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में स्त्रियों की दशा में पर्याप्त सुधार नहीं आया है। आज भी उन्हें कठिन परिश्रम करना पडता है। शराब का प्रचलन अधिक हो जाने से महिलाओं की समस्याऐं बड़ गईं है। स्त्रियां अभी भी आर्थिक रूप से पराश्रित बनी हुयी हैं। कुऐं के मेढक के समान एक ही स्थान पर रहने के पश्चात भी उनका दृष्टिकोण प्रगतिशील व आधुनिक है। आज के समय में उत्तराखण्ड के समाज में दहेज प्रथा का प्रचलन बढ गया है। समाज में स्त्रियों का सम्मान पूर्वकाल की अपेक्षा बढा है। विधवा विवाह को अच्छा नहीं माना जाता, उत्तराखण्ड में स्त्रियां पुनःविवाह के बजाय विधवा जीवन को अधिक अपनाती हैं। बाल विवाह समाप्त हो गये हैं,उत्तराखण्ड में स्त्रियों की साक्षरता की दर संतोषजनक है। कुमाऊ व गढवाल में स्त्रियों का सम्मान देश के अन्य भागों से अधिक है।

यह समझा जाता है की यहाँ के लोक साहित्य का अधिकांश भाग स्त्रियों द्वारा ही निर्मित है। यहाँ की महिलाऐं अकेले ही जंगल जाकर घास व लकड़ी काटती हैं, नदी,नालों से पानी भरती हैं, कृषि कार्यों में हाथ बटाती हैं और सामूहिक उत्सवों में सक्रिय योगदान देती हैं। स्थानीय नृत्य गीतों में वह पुरुषों के साथ मिलकर अपने भावों को स्वच्छन्द अभिव्यक्त करती हैं। नारी की इस विशिष्ट सामाजिक स्थिति के कारण ही उत्तराखण्ड के लोक साहित्य में यह विशेषता दिखलाई देती है।

2.6 सारांश

विवाह साधारणतः एक बन्धन अथवा धार्मिक संस्कार के रूपमें स्पष्ट होने वाली वह सामाजिक मान्यता हैं जो दो विषम लिंगी व्यक्तियों को यौन संम्बंध और उससे सम्बनधित समाजिक– आर्थिक सम्बन्धों में समिलित होने का अधिकार प्रदान करती हैं।

गृहस्थ आश्रम में विवाह द्वारा व्यक्ति प्रवेश करता हैं। 'हिन्दू विवाह की परिभाषा एक धार्मिक संस्कार के रूप में की जा सकती है जिसमें धर्म, प्रजोत्पत्ति तथा आदि के भौतिक, सामाजिक व आध्यात्मिक प्रयोजनों में एक स्त्री–पुरूष परस्पर स्थायी संबंध मे बँध जाते हैं। हिन्दू विवाह के धार्मिक रूप से कुछ उद्देश्य हैं,जैसे : धार्मिक कर्त्तव्यों की पूर्ति, प्रजा, रति, सामाजिक कर्त्तव्यों का पालन और पारिवारिक कर्त्तव्यों का पालन। उत्तराखण्ड में भी विवाह संस्कार सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्कार माना जाता है। यहाँ हिन्दुओं में प्रचलित ब्रह्म विवाह का प्रचलन सर्वाधिक है तथा इसे सबसे श्रेष्ठ माना जाता है।अब प्रेम विवाह का प्रचलन चल रहा है और इसमें माता–पिता व परिवार की रजामन्दी भी कहीं–कहीं देखी जाती है। क्षत्रिय और जनजातियों में राक्षस इत्यादि विवाह प्रकार के ऐतिहासिक उल्लेख भी पाये गये हैं। यहाँ विधवा विवाह पर कोई प्रतिबन्ध नहीं हैं यद्यपि विधवा विवाह कम ही होते हैं।मुस्लिम विवाह एक धार्मिक संस्कार के रुप में न होकर सामाजिक समझौते के रुप में समझा जाता है। मुस्लिम विवाह की कुछ शर्तें होती हैं। मुस्लिम विवाह में मेहर वह धन या सम्पत्ति है जो पति द्वारा पत्नी को विवाह के प्रतिफल के रुप में प्रदान की जाती है।

परिवार स्वभाविक और महत्वपूर्ण सामाजिक संगठनों में सबसे प्राचीनमत और पूरे विश्व में पाया जाने वाला प्रमुख संगठन है। यह सबसे महत्वपूर्ण प्राथमिक समूह है जो प्रत्येक समाज में पाया जाता है।

"नातेदारी" सामाजिक उद्धेश्यों के लिए स्वीकृत वंश संबन्ध हैं जो कि सामाजिक संबंधों के परम्परागत संबंधों का आधार है। मरडोक ने 33 प्रकार के द्वितीयक नातेदार और 151 प्रकार के तृतीयक नातेदार बताऐ हैं।नातेदारी की रीतियाँ विभिन्न नातेदारों से हमारे संबंधों को व्यक्त करती हैं, तथा इनसे हमें उनके साथ होने वाले व्यवहार का पता लगता है।जैसे : परिहार सम्बन्ध, परिहास सम्बन्ध, माध्यमिक सम्बोधन, मातुलेय, पितृष्वसा और सहकष्टी ।

उत्तराखण्ड की संस्कृति के अनुसार यहाँ की महिलाओं को देवी के रूप में पूज्य माना जाता है। नारी के प्रतिरुपों में कन्या, बहन, माता और पत्नी की छवि अंकित है। कुमाऊँ और गढ़वाल मण्डल में महिलाऐं ही समाज की रीढ़ है। उसे प्रातः काल से सांय के समय तक घर और बाहर के अनेक कार्य करने होते हैं।उत्तराखण्ड में स्त्रियों की भूमिका महत्वपूर्ण है। यहाँ अधिकांश पारिवारिक कार्य महिलाऐं ही करती हैं चाहे वह कृषि से संबंधित हो या पशुओं, बच्चों इत्यादि समस्त कार्य स्त्रियों को ही करने पडते हैं। स्त्रियों को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है।

2.7 तकनीकी शब्दावली

संस्कार– धार्मिक कर्मकाण्डों द्वारा समाविष्ट गुण
श्रम–विभाजन– कार्य को बंटवारे के आधार करना
मनुस्मृति– ऋषि मनु द्वारा लिखी गयी कानून की पुस्तक

2.8 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

खण्ड 2.3.5 के प्रश्न 1 के उत्तर के लिए देखिए इकाई 2.3.5.1 एव 2.3.5.2

खण्ड 2.3.5 के प्रश्न 2 के उत्तर के लिए देखिए इकाई 2.3.2
खण्ड 2.3.5 के प्रश्न 3 के उत्तर के लिए देखिए इकाई 2.3.6, 2.3.6.1 एव 2.3.6.2

2.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. देसाई, ए.आर., रूरल, सोश्योलॉजी इन इण्डिया, पॉपुलर प्रकाशन, बम्बई, 1969
2. जिमरमैन, फेमिली एण्ड सिविलाइजेशन, न्यूयार्क, 1947
3. घूरिये, सी.एस., कास्ट एण्ड क्लास इन इण्डिया, पॉपुलर बुक डिपो, 1959
4. कर्वे, इरावती, किनशिप ऑर्गनाइजेशन इन इण्डिया, ऐशिया पब्लिशिगं हाउस, बम्बई, 1965
5. जोशी, घनश्याम, उत्तरांचल का राजनीतिक, सामाजिक एंव सांस्कृतिक इतिहास, प्रकाश बुक डिपो, बरेली, 2003
6. सईयद,ए.आर.,रिलिजन एण्ड ऐथनसिटी अमंग मुस्लिम्स, रावत पब्लिकेशन,
7. बलुनी, दिनेशचन्द्र, उत्तरांचलः संस्कृति, लोक जीवन, इतिहास एंव पुरातत्व, प्रकाश बुक डिपो, बरेली, 2006
8. सिंह,वी.एन., आधुनिकता एवं नारी सशक्तीकरण, रावत पब्लिकेशन,2010
9. पटेल,तुलसी, भारत में परिवार : संरचना एवं व्यवहार , रावत पब्लिकेशन,2011
10. अग्रवाल,सी,एम,*मैन,कलचर एण्ड सोसाइटी इन कुमाँऊ हिमालया* , अल्मोड़ा,1998

2.10 सहायक / उपयोगी ग्रंथ सूची

1. जोशी,एम,पीः उत्तँराचल हिमालया
2. जोशी,एम,पीः उत्तँराचल कुमाऊँ – गढ़वाल
3. गुप्ता,एम,एलः भारतीय समाज एवं सामाजिक संस्थाऐं
4. जिमरमैनः फेमिली एण्ड सिविलाइजेशन
5. रिवर्स,डब्ल्यू,एच.आरः किंगशिप एण्ड मैरिज इन इण्डिया

2.11 निबंधात्मक प्रश्न

1.उत्तराखण्ड में हिन्दू विवाह का वर्णन कीजिए।
2.उत्तराखण्ड में नातेदारी से आप क्या समझते हैं इसकी विशेषताऐं क्या है?

इकाई –तीन : उत्तराखण्ड में सामाजिक नियन्त्रण

3.1 प्रस्तावना
3.2 इकाई के उद्देश्य
3.3 सामाजिक नियन्त्रण का अर्थ
  3.3.1 सामाजिक नियन्त्रण की परिभाषाऐं
3.4 उत्तराखण्ड में सामाजिक नियन्त्रण का महत्व अथवा आवश्यकता
  3.4.1 व्यवहारों में सन्तुलन रखना
  3.4.2 सामाजिक एकता की स्थापना करना
  3.4.3. पारस्परिक सहयोग की प्रेरणा
  3.4.4 सामाजिक अभिमति प्रदान करना
  3.4.5 मानसिक तथा बाह्य सुरक्षा
  3.4.6 परम्पराओं की रक्षा
  3.4.7 व्यक्तित्व का विकास
3.5 सामाजिक नियन्त्रण और समाजीकरण
3.6 सामाजिक नियन्त्रण के अभिकरण
  3.6.1 परिवार
    3.6.1.1 यौन–व्यवहार का नियमन
    3.6.1.2 विवाह संबंधी नियन्त्रण
    3.6.1.3 सामाजिक गुणों को विकसित करना
    3.6.1.4 सदस्यों की देखरेख
    3.6.1.5 सामाजीकरण
    3.6.1.6 आर्थिक ढ़ाचे ही धूरी
  3.6.2 धर्म
    3.6.2.1 धर्म समाज का आधार है
    3.6.2.2 धर्म मानव व्यवहार में पवित्रता भरता है
    3.6.2.3 धर्म मानव आचरण को संचलित करता है
    3.6.2.4 धर्म मानव व्यवहार को नियन्त्रित करता है
  3.6.3 शिक्षण संस्थाऐं और सामाजिक नियन्त्रण
    3.6.3.1 शिक्षण संस्थाऐं व्यक्तित्व का निर्माण करती है
    3.6.3.2 आार्थिक जीवन में योगदान
    3.6.3.3 शिक्षण संस्थाऐं और सभ्यता
    3.6.3.4 जीवन की पूर्णता और शिक्षा
  3.6.4 प्रथा व परम्परा और सामाजिक नियन्त्रण
  3.6.5 कानून या विधि
    3.6.5.1 पुरस्कार और दण्ड
  3.6.6 जनमत
    3.6.6.1 प्रचार
3.7 सारांश
3.8 तकनीकी शब्दावली
3.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर
3.10 संदर्भ ग्रंथ सूची
3.11 सहायक/उपयोगी ग्रंथावली
3.12 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

'नियन्त्रण' शब्द पर दृष्टिपात किया जाये तो यह स्पष्ट होगा की किसी की असीमित स्वंतन्त्रता में बाधा डालना अथवा कार्यो या व्यवहारों को नियमित करना ही नियन्त्रण है। सामाजिक नियन्त्रण में भी यही भाव छिपा हुआ है। प्रारम्भ में सामाजिक नियन्त्रण का अर्थ केवल दूसरे समूहों से अपने समूह की रक्षा करना एंव मुखिया के आदर्शों व आदेशों का पालन करना माना जाता था, परन्तु आज इसका एक विस्तृत अर्थ है। इसका प्रयोग विस्तृत रूप में किया जाता है।

सामाजिक नियन्त्रण से हम यह समझ सकते हैं कि समूह द्वारा मान्य या स्वीकृत व्यवहार–प्रतिमान के अनुरूप व्यक्तियों के व्यवहारों को नियमित करना है। इसका तात्पर्य सामाजिक व्यवस्था और उसके नियमन है और इन नियमन का उद्देश्य सामाजिक आदर्शों एंव उद्देश्यों की प्राप्ति है। आन्तरिक रूप से मनुष्य में वे सभी प्रवृत्तियाँ हैं जो पशुओं में पायी जाती हैं। इसका तात्पर्य यह है कि एक व्यक्ति को यदि स्वतन्त्र छोड़ दिया जाये तो एक व्यवस्थित समाज तथा जीवन की आशा नहीं कर सकते हैं। यह भी सच है कि मानव पशु नहीं है क्योंकि इसमें मानवोचित गुण हैं और इन गुणों का विकास इस कारण सम्भव हुआ है कि मानव को जन्म से लेकर मृत्यु तक समाज के नियन्त्रण में रहना होता है।

समाज का निर्माण अनेक व्यवस्थित तथा परस्पर–निर्भर सामाजिक संबंधों के द्वारा ही होता है। ऐसे सामाजिक संबंध तभी स्थापित किये जा सकते हैं जब व्यक्ति के व्यवहार पर कुछ नियन्त्रण किया जाए। समाज की स्थापना जिन समूहों के सदस्यों से होता है, उनकी विशेषताऐं एक समान नहीं होती हैं और उनके स्वार्थ भी एक दूसरे से भिन्न होते हैं। सामाजिक नियनत्रण के बिना यह सम्भव है कि सभी व्यक्ति तथा समूह अपनी शक्ति के द्वारा दूसरे पर अधिकार करने के लिए एक–दूसरे से संघर्ष करने लगें। इस संम्भावना को कम करने के लिए प्रत्येक समाज कुछ ऐसे नियमों तथा कार्य के ढंगों को विकसित करता है जिनके द्वारा सभी को अपने समाज के मूल्यों एंव मानदण्डों के अनुसार व्यवहार करने के लिए बाध्य किया जा सके। इसकी मुख्य विशेषता समूहों के बीच सघर्षों को कम करके पारस्परिक सहयोग को प्रोत्साहन देना होता हैं। शुरूआत में व्यक्ति के व्यवहारों पर नियन्त्रण रखने का कार्य धार्मिक विश्वासों, प्रथाओं तथा जनरीतियों के द्वारा किया जाता था लेकिन वर्तमान समाज एक जटिल और विशाल समाज है जिसमें कानूनों तथा नेतृत्व के द्वारा सामाजिक नियन्त्रण की स्थापना की जाती है। संक्षेप में, हम यह कह सकते हैं कि सामाजिक नियन्त्रण एक ऐसी व्यवस्था है जिसके द्वारा अनेक समूह नियमों के द्वारा अपने सदस्यों के व्यवहारों में समानता लाने का प्रयत्न करता है तथा उन्हें पारस्परिक संघर्षों से बचाता है।

3.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य विभिन्न तथ्यों के माध्यम से उत्तराखण्ड में सामाजिक नियंत्रण का परिचय कराना हैं। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप निम्नलिखित के संबंध में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

- सामाजिक नियन्त्रण का अर्थ एवं परिभाषाऐं
- उत्तराखण्ड में सामाजिक नियन्त्रण का महत्व अथवा आवश्यकता
- सामाजिक नियन्त्रण और सामाजीकरण
- सामाजिक नियन्त्रण के अभिकरण

3.3 सामाजिक नियन्त्रण का अर्थ

बचपन से व्यक्ति माता–पिता और परिवार के बड़े–बूड़ों के नियन्त्रण में रहता है, और शिक्षक या शिक्षण संस्था के नियन्त्रण में रहता है। राज्य के सदस्य होने के कारण उस पर कानून एंव विधि का नियन्त्रण होता है। अपने जीवन में उसे धर्म के नियंत्रण को स्वीकार करना पड़ता है और वृहत्तर सामाजिक अन्तःक्रियाओं के दौरान उसे यह देखकर स्वंय आश्चर्य होता है कि वह कितने प्रकार से सामाजिक विश्वासों, जनरीतियों, आचारों, परम्पराओं और प्रथाओं के द्वारा हर पल नियंत्रित होता है । वास्तव में नियन्त्रण के बिना जीवन–व्यवस्था और समाज–व्यवस्था तहस–नहस हो जायेगी।

मानव अपने स्वभाव से ही स्वार्थी है, हिंसा, द्वेष की भावना और अपने स्वाथों की सर्वप्रथम पूर्ति के लिये प्रयास करते रहना मानवीय व्यक्तित्व की कुछ सामान्य और स्वाभाविक विलक्षणताऐं हैं। ऐसी स्थिति में मानव को यदि पूर्ण स्वतंत्रता दी जाये तो वह अपनी मनमानी से समाज की व्यवस्था को बिगाड़ कर एक असभ्य समाज बना देगा। समाज द्वारा लगाये गये प्रतिबंधों को ही सामाजिक नियंत्रण कहते हैं।

परिभाषाऐं

मेकाइवर एवं पेज के शब्दों में, ''सामाजिक नियन्त्रण का अर्थ उस ढ़ंग से है जिनके द्वारा सपूर्ण सामाजिक व्यवस्था में एकता बनी रहती है तथा जिसके द्वारा यह व्यवस्था एक परिवर्तनशील संतुलन को बनाये रखने के लिये कार्य करती है।''

ऑगबर्न तथा निमकॉफ ने कहा है, ''व्यवस्था और स्थापित नियमों को बनाये रखने के लिये किसी भी समाज द्वारा डाले गये दबाव के प्रतिमान को उस समाज की नियन्त्रण व्यवस्था कहा जाता है।''

रॉस के कथनों में, ''सामाजिक नियन्त्रण का तात्पर्य उन समस्त शक्तियों से है जिनके द्वारा समाज अपने सदस्यों को मान्य व्यवहार–प्रतिमानों के अनुरुप बनाता है।''

बोटोमोर के अनुसार, '' सामाजिक नियन्त्रण का तात्पर्य मूल्यों तथा आदर्श नियमों की उस व्यवस्था से है जिसके द्वारा व्यक्तियों और समूहों के बीच के तनाव व संघर्ष दूर अथवा कम किये जाते हैं।''

गिलिन और गिलिन ने लिखा है, ''सामाजिक नियन्त्रण अनेक प्रयत्नों जैसें– सुझाव, अनुनय, प्रतिरोध, दबाव या बल प्रयोग आदि की व्यवस्था है जिसके द्वारा समाज किसी समूह को मान्यता प्राप्त व्यवहार प्रतिमानों के अनुरूप बनाता है।''

यह स्पष्ट है कि सामाजिक नियन्त्रण का अभिप्राय सामाजिक मूल्यों और मानदण्ड़ों की उस व्यवस्था से है जिसके द्वारा समूह में व्यक्तियों के बीच उत्पन्न होने वाले तनावों और संघर्षों को दूर किया जा सके।

3.4 उत्तराखण्ड में सामाजिक नियन्त्रण का महत्व अथवा आवश्यकता

किसी भी समाज में सामाजिक नियन्त्रण के विस्तृत प्रावधान अपरिहार्य होते हैं, उत्तराखण्ड का समाज भी इसका अपवाद नहीं है।सामाजिक नियन्त्रण द्वारा कुछ ऐसे कार्यों अथवा उद्देश्यों को पूरा किया जाता है– जो समाज के संगठन तथा एकीकरण के लिए जरूरी है। एक स्वस्थ सामाजिक जीवन के लिए सामाजिक संगठन व सुव्यवस्था का होना अति आवश्यक है और यह कार्य सामाजिक नियन्त्रण द्वारा ही पूरा किया जाता है। प्रत्येक समूह के विभिन्न सदस्यों की मनोवैज्ञानिक इच्छाऐं एक दूसरे से भिन्न होती हैं। सभी व्यक्ति भिन्न कार्य प्रणालियों के द्वारा अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण करने का प्रयत्न करते हैं। सामाजिक नियन्त्रण का महत्व इसी बात से स्पष्ट हो जाता है कि इन दशाओं के बीच नियन्त्रण की व्यवस्था के द्वारा ही समाज के सन्तुलन को बनाये रखना संभव हो पाता है।

इस संदर्भ में निम्नलिखित आवश्यक्ताओं अथवा उद्देश्यों का उल्लेख किया जा सकता हैः

3.4.1व्यवहारों में सन्तुलन रखना

सामाजिक नियन्त्रण की आवश्यकता व्यक्तिगत व्यवहार को नियंत्रित करने के लिये भी होती है। व्यक्ति और व्यक्ति में, व्यक्ति और समूह में तथा समूह और समूह में संघर्ष की सम्भावना हमेशा रहती है। यदि हम उत्तराखण्ड के परिपेक्ष में बात करें, तो यहाँ हमारी मनोवृत्तियाँ रूढ़िवादी हैं, लेकिन व्यवहार अब आधुनिकता को महत्त देते हैं, इससे व्यक्तिगत जीवन में तरह–तरह के तनाव उत्पन्न होते हैं और सामाजिक व्यवस्था कमजोर हो जाती है। पलायन के कारण लोगों की मानसिकता में परिर्वतन हो रहा है । सामाजिक संगठन के लिए यह जरूरी है कि समूह में व्यक्तियों की मनोवृत्तियों तथा उनके विचारों में संतुलन हो।

3.4.2 सामाजिक एकता की स्थापना करना

प्राणिशास्त्रीय भिन्नताओं, आदतों, रूचियों, प्रथाओं व परम्पराओं में भी विभिन्नताओं के कारण और अन्य विश्वासों, धर्मों, आदर्शों में विभिन्नताओं के कारण होती है। यदि नियन्त्रण न हो तो वे सदैव संघर्ष के द्वारा अपने स्वार्थों को पूरा करने के लिए प्रयत्न करेंगे। यह सामाजिक व्यवस्था को विघटित कर सकता है, परन्तु सामाजिक नियन्त्रण के कारण प्रत्येक व्यक्ति अपनी प्रस्थिति के अनुसार अपने दायित्वों का निर्वाह करता है। एक सुलझी हुई सामाजिक व्यवस्था द्वारा पारस्परिक सहयोग के लक्ष्य को प्राप्त करना ही सभी के हित में है।परन्तु सामाजिक संगठन के लिए किसी भी समूह के सदस्यों में समान दृष्टिकोण तथा समान मनोवृत्तियों का होना अत्यधिक आवश्यक है। यही प्रमुख विशेषता है जो सामाजिक एकता का आधार बनती है, सामाजिक नियन्त्रण समूह के सदस्यों के समान नियमों के अनुसार कार्य कराना सिखाती है अर्थात उल्लघन करने पर दण्ड भी देती है। व्यक्ति सामान्य या स्वीकृत ढंग से व्यवहार करना सीखते हैं, जिसके फलस्वरुप उनके व्यवहार में एकरुपता उत्पन्न होती है जो एकता स्थापित करने में सहायता प्रदान करती है।

3.4.3.पारस्परिक सहयोग की प्रेरणा

एक संगठित समाज के लिये आपसी सहयोग बहुत जरुरी है। यदि एक दूसरे के बीच सदैव सघर्ष की भावना रहेगी तो एकता कभी नहीं आयेगी। व्यक्ति सिर्फ अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिये कार्य करेगा और इससे समाज एक मानव समूह नहीं बल्कि एक असभ्य तथा जानवरों के समान व्यवहार करेगा।

3.4.4 सामाजिक अभिमति प्रदान करना

हमारे समाज में अनेक प्रथाओं, परम्पराओं, जनरीतियों, रुढ़ियों आदि का प्रचलन होता है। प्रचलन होता है। प्रत्येक व्यक्ति को इसे स्वीकार करना पडता है। सामाजीकरण की प्रकिया से व्यक्ति समाज के ढंग को सीखता है। सामाजिक नियन्त्रण के द्वारा व्यक्ति व्यवस्था में रहता है। अनेक सामाजिक व्यवहारों व भावनाओं को सामाजिक अभिमति प्रदान करना भी सामाजिक नियन्त्रण का एक प्रमुख उद्देश्य है।

3.4.5 मानसिक तथा बाह्य सुरक्षा

मानसिक सुरक्षा का तात्पर्य है कि व्यक्तियों को यह विश्वास हो कि कोई भी व्यक्ति उनके हितों पर आघात नही करेगा जबकि बाह्य सुरक्षा का अभिप्राय आजीविका तथा सम्पत्ति के क्षेत्र में सुरक्षा प्राप्त करना है। सामाजिक नियन्त्रण की व्यवस्था व्यक्ति की समाज–विरोधी प्रवृति को दबाकर अनेक नियमों के द्वारा उसे समाज से अनुकूलन करना सिखाती है तथा ऐसे व्यवहार करने के लिए बाध्य कराती है जो समाज द्वारा मान्यता प्राप्त हों। यह स्पष्ट है कि समाज के आन्तरिक संगठन व व्यवस्था के लिए सामाजिक नियन्त्रण की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

3.4.6 परम्पराओं की रक्षा

हमारा समाज, हमारी देव भूमि एक धार्मिक स्थान के अलावा कई जातियाएंव जनजातियों का निवास स्थान रहा है। हर एक समूह और संगठनों की अपनी–अपनी रीति–रिवाज, रहन–सहन, आदतें रही हैं। परम्पराएँ लम्बे अनुभवों पर आधारित होती हैं तथा इनका कार्य व्यवस्थित रूप से व्यक्तियों की महत्वपूर्ण आवश्यकताओं को पूरा करना होता है। सामाजिक संगठन को बनाए रखने में भी परम्पराओं की एक महत्वपूर्ण भूमिका होती है। परम्पराओं के टूटने पर किसी ना किसी रूप में समाज में समस्याऐं उत्पन्न होती है जो सामाजिक व्यवस्था को बिगाड़ देती हैं । सामाजिक नियन्त्रण सभी व्यक्तियों को परम्पराओं के अनुसार व्यवहार करने का प्रोत्साहन देता है। इसी से संस्कृति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होती है।

3.4.7 व्यक्तित्व का विकास

सामाजिक नियन्त्रण के सभी कार्यों में व्यक्तित्व का समुचित विकास सम्भवतः सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। व्यक्तित्व के विकास लिए सामाजिक गुणों की सीख तथा कुशलताओं का विकास आधारभूत है। जिन समाजों में सामाजिक नियन्त्रण कमजोर होता है, वहाँ लोगों का व्यक्तित्व अपनी संस्कृति के अनुरूप नहीं होता। वास्तव में, सामाजिक नियन्त्रण वैयक्तिक तथा सामाजिक सुरक्षा में वृद्धि करके पारस्परिक सहयोग तथा एकता प्रदान करता है। प्राचीन व्यवस्था को बनाए रखने के लिए सामाजिक विभिन्नताओं को एकरूपता में परिवर्तित करने के लिए व्यक्तिगत व्यवहारों को नियन्त्रित करने के लिए और समाज की रूचियों व व्यवहारों को सामाजिक अभिमति प्रदान करने के लिए सामाजिक नियन्त्रण का अत्यधिक महत्व है । सामाजिक नियन्त्रण सामाजिक जीवन में अनेक महत्वपूर्ण कार्यों को करता है। सामाजिक नियन्त्रण का पहला कार्य मानव समाज में सुव्यवस्था स्थापित व कायम रखने की समस्या को सुलझाना है। दूसरा कार्य, समाज के विभिन्न विरोधी समूहों को जनता की अर्थात, सबकी भलाई के लिए एकसाथ मिलाना और उन पर नियन्त्रण रखना तथा निश्चित स्थिति प्रदान करना है। समुदाय के मान्य व्यवहार–प्रतिमान को लोगों के सम्मुख प्रस्तुत करना तथा उसे स्वीकार करने के लिए लोगों को समझाना सामाजिक नियन्त्रण का तीसरा कार्य है। सामाजिक नियन्त्रण ही सभी सदस्यों तथा समूह के सामने विकास के लिए एक व्यवस्थित व संगठित परिस्थिति प्रस्तुत करता है।

3.5 सामाजिक नियन्त्रण और सामाजीकरण

सामाजिक नियन्त्रण और सामाजीकरण एक–दूसरे से घनिष्ठतः सम्बन्धित हैं। व्यक्ति के सामाजीकरण की प्रक्रिया के दौरान ही सामाजिक नियन्त्रण की प्रक्रिया भी चलती है। यह कहा जा सकता है कि सामाजीकरण के द्वारा सामाजिक नियन्त्रण अपने आप हो जाता है। मानव जन्म से लेकर मृत्यु तक प्रक्रिया से बँधा रहता और विभिन्न प्रकार से नियन्त्रित होता रहता है। कुमाँऊ और गढ़वाल में अपनी–अपनी रीति–रिवाज, खान–पान, विवाह प्रक्रिया, प्रथाएं और परम्पराऐं प्रचलित होती हैं। इसी तरह

समाज में सामाजिक व्यवस्था और संगठन को बनाए रखने के लिए कार्य–प्रणालियाँ तथा काम करने के निश्चित तरीके होते हैं। सामाजीकरण की प्रक्रिया के दौरान, इन रीति–रिवाजों तथा कार्य प्रणालियों के साथ व्यक्ति का सम्पर्क स्थापित हो जाता है और उसके व्यवहारों में ये सभी रीति–रिवाज आदि धीरे–धीरे जड़ पकड़ने लगते हैं। यह अपनाई हुई और परखी हुई होती है अतः इनको स्वीकार कर लेने पर व्यक्ति को समाज के अनुकूलन करने में सरलता होती है। उदाहरण के तौर पर देश में प्रधानमंत्री, परिवार में पिता, राज्य में मुख्यमंत्री होता है, जो अपनी शक्ति और आधार से व्यवहारों को एक निश्चित दिशा में संचालित अथवा नियंत्रित करने का कार्य सामाजीकरण के विभिन्न साधनों से करते हैं। जैसे परिवार, पड़ोस, शिक्षा–संस्था आदि। सामाजीकरण भी उन्हीं एजेंसियों या अभिकरणों के माध्यम से अधिक होता है जिन एजेंसियों के हाथ में सामाजिक नियन्त्रण की शक्ति अधिक होती है। सामाजीकरण यह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में प्रवेश करता है। व्यक्ति समाज के विभिन्न समूहों का सदस्य बनता है जिसके द्वारा समाज के मूल्यों और नियमों को स्वीकार करने की प्रेरणा मिलती है।

3.6 सामाजिक नियन्त्रण के अभिकरण

सामाजिक नियन्त्रण एक व्यापक व्यवस्था है जिसे अनेक अभिकरण तथा साधन संयुक्त रूप से प्रभावपूर्ण बनाते है। अभिकरण(agency) का तात्पर्य किसी भी ऐसी सत्ता, समूह अथवा संगठन से है जो नीतियों का निर्माण करता है अथवा नियमों को समूह और व्यक्ति पर लागू करता है। इस प्रकार कुछ विशेष व्यक्तियों, समूहों अथवा समुदाय से जीवन को नियन्त्रित करने में अभिकरण एक प्रत्यक्ष माध्यम है। उदाहरणार्थ–परिवार को 'अभिकरण' कहा जाएगा क्योंकि वह अपने सदस्यों पर नियन्त्रण स्थापित करता है तथा हास्य, व्यंग और बहिष्कार के द्वारा भी उन पर नियन्त्रण रख सकता है। समाज में सामाजिक नियन्त्रण के एक से अधिक साधन या विधियाँ होती हैं। निम्नलिखित सामाजिक नियन्त्रण के कुछ प्रमुख अभिकरण हैं–

3.6.1 परिवार

सामाजिक नियन्त्रण में परिवार सबसे महत्वपूर्ण अभिकरण है। एक व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास में परिवार का उत्तराखण्ड में भी महत्वपूर्ण योगदान है। जनरीतियाँ, लोकाचार, प्रथाऐं तथा नैतिकता आदि अपने आप ही व्यक्तियों को नियन्त्रित नही करते परन्तु यह कार्य परिवार के माध्यम से होता है। यहाँ तक की शिक्षा–संस्थानों का परिचय भी परिवार ही कराता है। परिवार व्यक्ति के सामाजीकरण का प्रमुख साधन है। परिवार एक प्राथमिक समूह है, बच्चा परिवार में जन्म लेता है और परिवार ही उसे समाज के अनुरूप ढालता है। परिवार आरम्भिक जीवन से ही बच्चे को जनरीतियों, लोकाचारों और प्रथाओं की शिक्षा देता है। समाज की नैतिकता से परिचित कराता है, समय–समय पर अनजाने में भी भूल हो जाने पर उससे प्रायश्चित कराता है तथा अनेक पौराणिक गाथाओं और अनुष्ठानों के द्वारा धार्मिक विश्वासों को दृढ़ बनाता है। प्रेम तथा स्नेह स्वंय ही नियनत्रण के प्रमुख साधन हैं जो परिवार में सम्भव हैं।

प्रो0 हेज़ ने कुछ ऐसे तरीके बताये हैं जिनके द्वारा परिवार सामाजिक नियन्त्रण में अनपा योगदान करता है। ये तरीके हैं –

- प्रतिदिन के उपदेश एंव स्वंय के कार्यो द्वारा,
- दिये गये वचन और कार्य की तुलना के द्वारा,
- पड़ोसी के सामने व पीछे कहे गये वाक्यों की तुलना द्वारा,

- अपने सुख दायक अनुभवों को बताकर,
- आकांक्षाओं का वास्तविक रूप बतलाकर अथवा दूसरों के अधिकारों का ध्यान रखते हुए उपदेश देकर।

परिवार निम्नलिखित वर्णन के द्वारा सामाजिक नियन्त्रण को प्रभावित करता है –

3.6.1.1 यौन–व्यवहार का नियमन

परिवार वह प्राथमिक संस्था एंव समूह है जिसके द्वारा मानव की यौन–क्रियाओं का नियन्त्रण और नियमन होता है। परिवार विवाह के द्वारा सामाजिक और कानूनी रूप से मानव की यौन–इच्छा की पूर्ति करता है। हमारे भारतीय समाज में परिवार से बाहर (पति–पत्नी के अलावा) यौन–संबंध को अवैध माना जाता है। व्यक्ति, परिवार से बाहर यौन–संबंध स्थापित करने से डरता है। परिवार यौन–व्यवहारों के नियन्त्रण में एक मुख्य भाग रखता है और वैश्यावृति से भी बचाता है।

3.6.1.2 विवाह संबंधी नियन्त्रण

परिवार अपने सदस्यों पर अनेक विवाह संबंधी नियन्त्रण भी लागू करता है। हमारे समाज में परिवार ही यह निश्चित करता है कि विवाह कब, किससे और कैसे करना चाहिए। जीवन साथी चुनते समय गोत्र, जाति, पद आदि का ध्यान रखा जाता है। हालाकि अब प्रेम विवाह का प्रचलन भी चल रहा है परन्तु परिवार सामाजिक नियन्त्रण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

3.6.1.3 सामाजिक गुणों को विकसित करना

परिवार अपने सदस्यों को एक अच्छा नागरिक और मनुष्य बनने में मदद करते हैं और इस प्रकार परिवार सामाजिक नियंत्रण में सहायक होता है। बच्चा, परिवार में कर्तव्य–पालन और आज्ञा–पालन की शिक्षा प्राप्त करता है। माता–पिता कर्तव्य ना केवल स्वंय निभाते हैं परन्तु बच्चों को सीख भी देते हैं। जब बच्चा माता–पिता, बढ़े–बूढ़ों को आपस में प्रेम से रहते देखता है और एक दूसरे को कर्तव्य पालन करते देखता है तो उसके अन्दर भी वे गुण विकसित हो जाते हैं, बाहरी समाज के प्रति भी वह अपने कर्तव्यों को घर से ही सीखता है। परिवार के प्रत्येक सदस्य आपस में सारे कार्य मिलजुलकर करते हैं और इस प्रकार आपस में सहयोग की भावना को विकसित करते हैं। यही सहयोग की भावना सामाजिक नियन्त्रण में सहायक होती है। अनुकूलन करने का गुण भी बच्चे परिवार से ही सीखते हैं। परिवार में विकसित आदत के आधार पर ही व्यक्ति में समाज, राष्ट्र और विश्व के लिए त्याग की भावना उत्पन्न होती है।

3.6.1.4 सदस्यों की देखरेख

प्रत्येक सदस्य को अपने व्यवहारों का आचरण किस तरह से करना चाहिए ये परिवार से सीखता है, यदि कोई सदस्य कोई ऐसा कार्य करता है जिसे समाज की स्वीकृति नहीं है तो सबसे पहले परिवार ही उसे उस कार्य को करने से रोकता है। परिवार अपने सदस्यों की सामान्य रूप से देख–रेख भी करता है और इस रूप में भी वह सामाजिक नियन्त्रण के एक प्रमुख साधन के रूप में सिद्ध होता है।

3.6.1.5 सामाजीकरण

परिवार सामाजीकरण की प्रमुख संस्था है। बच्चा परिवार में जन्म लेता है और जीवन भर सामाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा उससे नियन्त्रित रहता है। परिवार ही उसके व्यक्तित्व का निर्माण करता है। व्यक्ति जब जन्म लेता है तो उसमें कोई सामाजिक गुण नहीं होते हैं, परिवार ही सामाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा शिक्षा या सामाजिक व्यवहार एंव सदगुण न प्रदान करे तो वो एक जंगली पशु के समान ही बन कर रह जायेगा।

3.6.1.6 आर्थिक ढाँचे ही धुरी

परिवार ही अपने सदस्यों का आर्थिक जीवन निश्चित करता है। संपत्ति का उत्तराधिकारी कौन होगा यह परिवार निश्चित करता है। आयु, लिंग और शारारिक क्षमता के अनुसार परिवार ही सदस्यों में श्रम–विभाजन करता है। परिवार ही समाज में एक व्यवस्था बनाये रखता है।

3.6.2 धर्म

अलग–अलग समाज में अलग–अलग धार्मिक क्रियाकलापों, धार्मिक प्रतीकों और जादू–टोने, पौराणिक कथाओं आदि का समावेश रहता है। उत्तराखण्ड राज्य की अपनी अनोखी धार्मिक महत्ता है। धर्म अलौकिक विश्वासों और ईश्वरीय सत्ता पर आधारित होता है जिसके नियमों का पालन व्यक्ति पाप और पुण्य अथवा ईश्वरीय शक्ति के भय के कारण करता है। इस शक्ति की अभिव्यक्ति सामान्य रूप से अनेक देवी–देवताओं, स्वर्ग और नरक,, साकार अथवा निराकार ईश्वर जैसी अनेक धारणाओं के रूप में देखने को मिलती है। यह माना जाता है कि धर्म के आदेशों और निषेधों का पालन करना जीवन में सफलता लाता है तथा इसका विरोध और उल्लंघन करने से व्यक्ति का जीवन नियन्त्रण से बाहर हो जाता है। हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई इत्यादि धर्म बहुत सी रोचक घटनाओं, पौराणिक कथाओं, ईश्वरीय महिमा, कर्मकाण्डों और पवित्र वस्तुओं के माध्यम से यह विश्वास दिलाता है कि धर्म की अवहेलना से व्यक्ति की कितनी दुर्गति हो सकती है और इनका पालन व्यक्ति को कितना समृद्ध बना सकता है। निम्नलिखित विवेचन से हम यह समझ सकते हैं कि हमारे, कुमाँऊ और गढ़वाली दोनों समाजों में धर्म का महत्व अत्यधिक है और इसका प्रभाव हमारे जीवन में मानवता के गुण सिखाता है।

3.6.2.1 धर्म समाज का आधार है

उत्तराखण्ड में वास्तव में, धर्म समाज का आधार है। धार्मिक विश्वासों का सामाजिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपना एक महत्वपूर्ण स्थान होता है। क्योंकि धर्म जीवन का अंग होता है और उसके प्रति व्यक्ति का विश्वास भी होता है। धर्म समाज के उच्चतम आदर्शों तथा मूल्यों को अपने अन्दर समेट कर उनकी रक्षा करता है।

3.6.2.2 धर्म मानव व्यवहार में पवित्रता भरता है

धर्म किसी व्यक्ति के जीवन को दो स्पष्ट भागों में बाँट देता है – साधारण तथा पवित्र। पवित्र जीवन से दूर हो जाना धार्मिक भष्टाचार माना जाता है। इस प्रकार धर्म लोगों को पवित्र कर्म करने की सीख देता है ताकि वह पापों से दूर रहें। दुर्खीम ने कहा है कि धर्म एक सामूहिक आदर्श की अभिव्यक्ति है और इससे व्यक्ति के व्यवहारों तथा आचरण में निखार आता है। इस रूप में धर्म सामाजिक नियन्त्रण का एक महत्वपूर्ण अभिकरण है।

3.6.2.3 धर्म मानव आचरण को संचालित करता है

कॉमटे के अनुसार 'मानवता का धर्म' यह है कि प्रत्येक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के व्यक्तित्व और आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील हो। आधुनिक समाज उस दिशा में बढ़ रहा है जहाँ अब तक प्रचलित धर्मों का अधिक महत्व नहीं रह जायेगा। धार्मिक विश्वास से मनुष्य में यह धारणा पनप जाती है कि धार्मिक जीवन व्यतीत करने पर उसे इस जीवन में दैवीय वरदान मिल सकता है और ना करने पर अभिशाप भोगना पड़ सकता है । धार्मिक कर्तव्यों का विधान प्रत्येक धर्म में होता है, और यह मानव–आचरण का संचालन करता है। मानव इस लोक की ही नहीं, पारलौकिक जीवन की भी चिन्ता करता है।

3.6.2.4 धर्म मानव व्यवहार को नियन्त्रित करता है

सामाजिक नियन्त्रण के एक साधन अथवा अभिकरण के रूप में धर्म के इस महत्व को सभी विद्वान स्वीकार करते हैं। धर्म में जिस शक्ति में विश्वास किया जाता है वह अलौकिक शक्ति मानी जाती है। उस शक्ति का लाभ उठाने के लिए और उसके कोप से बचने के लिए लोग धर्म से संबंधित नियमों का सच्चाई से पालन करते हैं। उत्तराखण्ड में सामान्य देवी–देवताओं के अतिरिक्त स्थानीय देवी–देवताओं को भक्ति और विश्वास से पूजा जाता है। हर धर्म से संबंधित अनेक धार्मिक कथाऐं होती हैं, जिनके माध्यम से लोगों को उपदेश–निर्देश दिये जाते हैं। हर धर्म प्रत्यक्ष रूप में भी अनेक नियमों को प्रस्तुत करता है– जैसे बौद्ध धर्म में अहिंसा से संबंधित अनेक नियम है, जैन धर्म में अहिंसा का आचरण करने, सत्य बोलने और चोरी ना करने आदि के संबंध में कितने ही नियम हैं। इस्लाम धर्म भी अल्लाह के सभी बन्दों को भाई–भाई मानने का उपदेश देता है।

3.6.3 शिक्षण संस्थाऐं और सामाजिक नियन्त्रण

वर्तमान में शिक्षण संस्थाओं का महत्व बहुत ज्यादा बढ़ रहा है। शिक्षा जिन्दगी की बुनियादी जरूरत है। संस्कृति व सभ्यता के आदि काल में परिवार, समुदाय और धार्मिक संस्थाऐं ही शिक्षा की मुख्य साधन थीं । औपचारिक रूप में शिक्षा प्रदान करने का दायित्व विद्यालय पर होता है । विद्यालय को हम एक ऐसा स्थान समझ सकते हैं जहाँ बच्चों, युवकों, युवतियों को उन निश्चित रूपों में प्रशिक्षित किया जाता है जो इस व्यापक संसार में सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। समाज के विकास के साथ–साथ उसकी जटिलता बढती जा रही है। ज्ञान विज्ञान के क्षेत्र में इतना विकास हो गया है कि परिवार, धर्म या समुदाय के आधार पर स्वाभाविक रूप में ज्ञान प्राप्त करना सम्भव नहीं रहा। सामाजिक नियन्त्रण के क्षेत्र में विद्यालय का महत्व हम निम्नलिखित रूप से समझ सकते हैं।

3.6.3.1 शिक्षण संस्थाऐं व्यक्तित्व का निर्माण करती है

शिक्षण संस्थाऐं व्यक्तित्व का निर्माण करती हैं और सामाजिक नियन्त्रण में सहायक होती हैं। शिक्षण संस्थाओं के माध्यम से व्यक्ति के तर्क और विवेक में वृद्धि होने से वह स्वंय प्रत्येक व्यवहार के परिणामों को समझने लगता है, इससे आत्म–नियन्त्रण को भी प्रोत्साहन मिलता है, और इस प्रकार व्यक्ति की समाज विरोधी मनोवृति का सामाजीकरण हो जाता है। उत्तराखण्ड में भी हम यह देख सकते हैं कि अशिक्षित समाज की अपेक्षा एक शिक्षित समाज कहीं अधिक नियन्त्रित और नियमबद्ध जीवन व्यतीत करता है।

3.6.3.2 आार्थिक जीवन में योगदान

शिक्षा के द्वारा ही व्यक्ति अपने व्यवसायों को चुनता है और अपने आश्रितों के लिए रोटी, कपड़ा तथा जीवन संबंधी अन्य आवश्यक वस्तुओं को प्राप्त करने के लिए धन कमाता है। शिक्षा वह साधन है जो मानव की जीविकोपार्जन की समस्या सुलझाकर अनेक प्रकार के समाज विरोधी कार्यों को रोकने में सहायता प्रदान करती है, जैसे– चोरी, छीना–झपटी, लूट आदि।

3.6.3.3 शिक्षण संस्थाऐं और सभ्यता

बनार्ड शॉ के अनुसार शिक्षा का मुख्य कार्य मनुष्यों को सभ्य बनाना है। एक असभ्य मनुष्य पशु समान होता है। शिक्षा के द्वारा उसका मानसिक विकास भी होता है और उसकी सोच विस्तृत होती है। उत्तराखण्ड के कई क्षेत्रों में आज भी अशिक्षा है । नोबेल पुरूस्कार विजेता अर्मत्य सेन ने प्राथमिक शिक्षा को मनुष्य की 'अनिर्वाय शिक्षा आवश्यकता' माना है।

3.6.3.4 जीवन की पूर्णता और शिक्षा

सामाजिक नियन्त्रण के क्षेत्र में शैक्षिक संस्थाओं का महत्वपूर्ण योगदान है। शिक्षा कोई विशेष कार्य नहीं करती परन्तु हमें जीवन संबंधी प्रत्येक परिस्थिति के लिए इस प्रकार तैयार करती है कि उसमें हमें अधिकतम सफलता प्राप्त हो सके।मानव का बौद्धिक विकास करके भी शैक्षिक संस्थाऐं सामाजिक नियन्त्रण के कार्यों में अधिकतम सहायता प्रदान करते हैं । शिक्षा के द्वारा व्यक्ति की समस्त मानसिक शक्तियों, कल्पना, स्मरण, तर्क आदि का विकास होता है। इसके फलस्वरूप व्यक्ति तर्क द्वारा सोच–विचार कर अपने कार्य करता है, अपने तर्क की शक्ति के आधार पर उचित–अनुचित में भेद करता है और समाज विरोधी कार्य से दूर रहता है। ये सब सामाजिक नियन्त्रण व समाज की प्रगति के लिए आवश्यक है।

3.6.4 प्रथा व परम्परा और सामाजिक नियन्त्रण

परम्परा सामाजिक विरासत का वह अभौतिक अंग है जो हमारे व्यवहार के स्वीकृत तरीकों का द्योतक है और जिसकी निरन्तरता पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरण की प्रक्रिया द्वारा बनी रहती है। **जिन्सबर्ग** के शब्दों में, *''परम्परा का अर्थ उन सभी विचारों, आदतों और प्रथाओं का योग है जो व्यक्तियों के एक समुदाय का होता है, और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होता रहता है।''*सामाजिक नियन्त्रण में परम्परा का सबसे प्रमुख योगदान यह है कि यह व्यक्ति के व्यवहारों को प्रभावशाली ढंग से नियन्त्रित करता है। परम्परा कुछ निश्चित व्यवहार–प्रतिमानों को प्रस्तुत करती है और समाज के सदस्यों से यह आग्रह करती है कि वे उन्हीं प्रतिमानों का अनुसरण करें। हमारे पूर्वज बहुत प्रयासों के बाद विभिन्न परिस्थितियों में जिन व्यवहारों या क्रियाओं के ढंगों को उचित या सफल पाते हैं, वही व्यवहार के ढंग हमें परंपरा के रूप में प्राप्त होते हैं। इस रूप में परम्परा पूर्वजों द्वारा व्यावहारिक ढंग से परीक्षित व्यवहार के सफल व उपयोगी तरीकों का ही दूसरा नाम है। यही कारण है कि इन तरीकों के संबंध में हमारे मन में दुविधा नहीं होती और हम अपने अन्दर विभिन्न परिस्थितियों में एक सुरक्षा की भावना को स्वतः ही विकसित कर लेते हैं।

जिस समाज का स्वयं अपना कोई परम्परागत आधार नहीं होता है तथा जिसे केवल अन्य समाजों की प्रथाओं, विश्वासों आदि के सहारे रहना पड़ता है, उस समाज के सदस्यों में आत्म सम्मान, देश–गौरव व स्वाभिमान आदि के भावों का अभाव ही रहता है, क्योंकि उसे अपने पृथक तथा स्वतन्त्र अस्त्तिव की

चेतना ही नहीं हो पाती। यह स्पष्ट है कि कई रूपों में परम्पराऐं सामाजिक नियन्त्रण के स्थापन में अत्यधिक सहायक सिद्ध होती है।

3.6.5 कानून या विधि

सामाजिक नियन्त्रण के औपचारिक अथवा प्रत्यक्ष साधानों में कानून और विधि का एक प्रमुख स्थान है। हमारे भारतीय समाज में धर्म, प्रथा, परम्परा और धर्म का प्रभाव रहता है, परन्तु वर्तमान समाज में कानून का महत्व भी बढ़ रहा है। कानून आचरण के वह सार नियम हैं जिन्हैं इस निश्चितंता से प्रतिपादित किया जाता है कि अगर भविष्य में उनकी सत्ता को चुनौती दी गयी तो उसे अदालतों द्वारा लागू किया जायेगा। कानून, नियम, मानव व्यवहार को नियन्त्रित और नियमित करता है और इन नियमों का उल्लघंन करने वालों को दण्ड देने का उत्तरदायित्व एक प्रभुत्तासम्पन्न राजनैतिक शक्ति या सत्ता पर होता है। प्रथाऐं सामाजिक कार्यविधियां हैं। जिसका निर्माण विशेष सत्ता द्वारा नहीं किया जाता है जबकि कानून राज्य द्वारा बनाया एंव लागू किया जाता है। कानून एक राज्य के क्षेत्र में रहने वाले सभी व्यक्तियों तथा समूहों पर समान रूप से बिना किसी अपवाद के लागू होता है परन्तु प्रथा को लागू करने के लिए इस प्रकार की कोई संगठित व्यवस्था नही होती।

3.6.5.1 पुरस्कार और दण्ड

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी के रू‍ में समाज में निवास करता है और उसके सामाजिक कर्तव्य एंव अधिकार भी होते हैं। यदि मनुष्य समाज के मूल्यों के अनुसार अपने कार्य एंव व्यवहार करता है तो उसे सामाजिक प्रंशसा प्राप्त होती है इसी को 'पुरस्कार' भी कहा जा सकता है। यह पुरस्कार मनोवैज्ञानिक दृष्टि से सामाजिक नियन्त्रण का अति महत्वपूर्ण एंव शक्तिशाली साधन है। कभी–कभी तो यह साधन दण्ड से भी अधिक प्रभावपूर्ण सिद्ध होता है। पुरस्कार समाज या समूह द्वारा भौतिक अथवा अभौतिक रूप में दी गई वो सांत्वना है जो कि एक व्यक्ति या समूह को अच्छे कार्य या सेवा के लिए प्रदान की गई हो । पुरस्कार की अवधारणा के संबंध में दो बातें विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। प्रथम तो यह है कि पुरस्कार का स्वरूप सांस्कृतिक लक्षणों पर आधारित रहता है। दूसरी ओर संस्कृति में उसका महत्व नगण्य होता है। द्वितीय महत्वपूर्ण बात यह है कि पुरस्कार व्यक्तिगत या सामूहिक दोनों ही रूपों में दिया जा सकता है। भौतिक पुरूस्कार के अर्न्तगत मैडिल, शील्ड, नकद धन, धन सहित अनेक उपाधियां जैसे– 'परमवीर चक्र' 'महावीर चक्र', 'वीर चक्र' आदि अभौतिक पुरूस्कार वह होता है जिसमें पुरूस्कार वस्तु या धन के रूप में ना होकर किसी सामाजिक पद या प्रसंशा के रूप में होता है। जैसे डा0 किरण बेदी, वरिष्ठ पुलिस अफसर 'मैगसेसे' पुरस्कार से सम्मानित की जा चुकी हैं।समाज के अधिकतर व्यक्ति ऐसे ही कार्यों को करना चाहते हैं जिससे की उन्हें प्रशंसा प्राप्त हो। यह प्रशंसा पुरस्कार का ही एक प्रकार है। प्रशंसा मिलने से व्यक्ति में उस अच्छे कार्य को करने का एक विशेष उत्साह आ जाता है और भविष्य में अच्छे कार्य करने की ही सोचता है। प्रत्येक व्यक्ति सामाजिक प्रशंसा और सम्मान के वशीभूत होकर अच्छे से अच्छा कार्य करने को तैयार हो जाता है। सामाजिक नियन्त्रण में यह अति सहायक परिस्थिति है।

दण्ड सामाजिक प्रतिकार के रूप में वह कष्ट या यातना है जो एक समूह के ही अपराधी सदस्य को उसके अपराध के प्रतिफलस्वरूप न्यायालय द्वारा दी जाती है। **वेस्टरमार्क** के शब्दों में, *''दण्ड वह यातना है जो अपराधी पर उस समाज द्वारा या उस समाज के नाम पर जिसका कि वह स्थायी अथवा अस्थायी सदस्य है, एक निश्चित रूप में लागू किया जाता है। सामाजिक नियन्त्रण के प्रत्यक्ष एंव औपचारिक साधन के रूप में दण्ड का अत्यधिक महत्व है। यह साधन राज्य द्वारा लागू किया जाता है।*

समाज–विरोधी कार्यों को रोकने के लिए राज्य कानून बनाता है और कानून का उल्लंघन करने अथवा तोड़ने वाले को दण्ड प्रदान करता है। ''

दण्ड एक ऐसा साधन है जोकि राज्य के द्वारा बनाए गए कानूनों को जनता पर लागू करता है। समाज में शान्ति व्यवस्था और सुव्यवस्था बनाए रखने के लिए राज्य कुछ कानूनों का निर्माण करता है। चूँकि यह कानून प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से व्यक्ति के व्यवहारों को नियन्त्रित करते हैं।जिस व्यक्ति को जब कोई अपराध करने पर दण्ड दिया जाता है तो वह साधारणतया इसी दृष्टिकोण से दिया जाता है कि वह फिर दोबारा अपराध ना करे। कोई व्यक्ति एक छोटा अपराध करता है और उसे दण्ड दे दिया जाता है तो कई बार व्यक्ति यह भी सोच बैठता है कि जब मुझे अपराधी घोषित कर ही दिया गया है तो क्यों ना मैं हमेशा के लिए अपराध ही को पेशे के रूप में अपना लूं। इस प्रकार दण्ड के उपरान्त भी समाज का व्यवहार व्यक्ति के प्रति सहानुभूतिपूर्ण रहना चाहिए। ऐसा ना होने की स्थिति में यह खतरा उत्पन्न हो जाता है कि वह हमेशा के लिए अपराधी हो जाए। दण्ड का प्राथमिक उद्देश्य अपराधी को कष्ट देने के लिए अथवा दोबारा अपराध करने से रोकने के लिए कष्ट देना है जो अपराध करने के लिए लालायित हो सकते हैं। कुछ अपराध ऐसे होते हं जिनको करने पर अपराधी को कारावास की सजा होती है जिससे कि वह कुछ समय के लिए समाज से दूर हो जाता है। राज्य द्वारा विभिन्न स्थानों पर कारावासों का निमार्ण होता है, इन कारावासो में अपराधियों को रखा जाता है। मृत्यु–दण्ड का प्रचलन समाज में काफी समय से रहा है। इसमें व्यक्ति को किसी कठोर अपराध के लिए मृत्यु दण्ड दिया जाता है। स्पष्ट है कि दण्ड का उद्देश्य अपराधी को सुधारना है। दण्ड का कार्य अपराधी को केवल अपराध करने से रोकना या उसमें भय उत्पन करना ही नहीं वरन उसको सुधारना भी है ताकि वह एक सभ्य नागरिक बन सके और भविष्य में समाज–विरोधी कार्यों को ना करे। अपराधियों का यह सुधार कठोर दण्ड की अपेक्षा सुधारात्मक–दण्डों से अधिक अच्छे प्रकार से हो सकता है। दण्ड समाज के लिए एक अति आवश्यक शर्त है क्योंकि समाज की व्यवस्था अन्तिम रूप में इसी पर आश्रित है। दण्ड के अभाव में समाज विश्रृंखलता की ओर जाने लगता है। वास्तव में दण्ड से ही समाज में व्यवस्था और शान्ति का बोलबाला होता है क्योंकि इससे समाज के सदस्यों के व्यवहारों का नियन्त्रण व नियमन किया जाता है।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

1. सामाजिक नियन्त्रण में पुरस्कार और दण्ड के महत्व की व्याख्या कीजिए।

2. परिवार किस प्रकार से सामाजिक नियन्त्रण का अभिकरण है?

3. प्रथा से आप क्या समझते है? सामाजिक नियन्त्रण में परम्परा का क्या महत्व है?

3.6.6 जनमत

एक विशाल जन–समूह या एक समुदाय विशेष के सदस्यों द्वारा कुछ ना कुछ पारस्परिक विचार–विमर्श करके सामान्य हित से संबंधित किसी विषय के संबंध में व्यक्त किए गए सुनिश्चित विचार को ही जनमत कहते हैं । **जिन्सबर्ग** के अनुसार, *''जनमत का अर्थ समाज में प्रचलित उन विचारों एंव निर्णयों का समूह है, जो बहुत कुछ निश्चित रूप से प्रतिपादित हैं, जिसमें कुछ स्थायित्व है और जिसके प्रतिपादक उसे सामाजिक समझते हैं क्योंकि वह अनेक मस्तिष्कों के सामूहिक विचार का परिणाम है।''* जनमत का संबंध किसी सार्वजनिक विषय या समस्या से होता है। बहुसंख्यकों के मत को तब तक नहीं कहा जा सकता जब तक कि अल्पसंख्यक लोगों में भी उस मत के प्रति एकता की अनुभूति न हो सके। इसकी उत्पत्ति सामूहिक आधार पर होती है। जनमत की स्थापना पर प्रायः समाज के प्रतिष्ठित,

प्रभुतासम्पन्न और शक्ति प्राप्त वर्गों की रूचियों, हितों और उद्देश्यों का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। प्रजातन्त्र में जनमत निर्माण की प्रक्रिया के निम्नलिखित स्तर हैः

1. कोई समस्या या विषय
2. प्रारम्भिक छानबीन संबंधी विचार–विमर्श
3. सार्वजनिक वाद–विवाद
4. मतैक्य या सर्वसम्मति का स्तर

गाँव में प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे से व्यक्तिगत रूप में परिचित होता है। इस रूप में समुदाय में जनमत का महत्व और भी अधिक हो जाता है। कोई भी व्यक्ति जल्दी ही जनमत के विरूद्ध नहीं जाता और ना ही वह कोई जनमत विरोधी कार्य करना चाहता है। सामाजिक निन्दा का भय उसे ऐसा करने से रोकता हैं। जनमत जनता का ही मत होता है, जिसमें की जन–कल्याण की भावना निहित होती है। अतः जल्दी ही उसे कोई अस्वीकार नहीं कर पाता। इतना ही नहीं, प्राथमिक समाजों में सामाजिक व्यवहार के नियम भी सदैव इसी जनमत ही प्रभावित होते हैं। भारतवर्ष में दहेज–प्रथा हिन्दुओं की एक सामाजिक परम्परा रही है। परन्तु आज जनमत तीव्र गति से इसके विरूद्ध हो रहा है और इसलिए इसकी निन्दा सार्वजनिक रूप से की जा रही है और हो सकता है कि इसका अस्तित्व जल्दी ही समाप्त हो जाए। इस प्रकार स्पष्ट है कि जनमत समाज की संस्थाओं व समितियों, जिसमें कि सरकार भी सम्मिलित है, लोकहित के विरूद्ध कार्य करने से रोकता है और इस रूप में जनतन्त्र का सामाजिक नियन्त्रण के एक प्रभावशाली साधन के रूप में अत्यधिक महत्व है। जनमत जनता की भावनाओं तथा विचारों का प्रतिनिधित्व करता है, इसलिए शासकवर्ग को उसी आधार पर अपनी नीति निर्धारित करने मे मदद मिलती है और समाज–सुधारक अपने कार्यक्रमों को दिशा प्रदान करते हैं।

3.6.6.1 प्रचार

प्रचार शब्द अंग्रेजी शब्द 'propaganda' का हिन्दी रूपान्तर है। यह शब्द लैटिन भाषा के 'propagare' शब्द से निकला है , जिसका अर्थ उगाना, बढ़ाना या विकास करना है। आधुनिक समाज में प्रचार के कुछ साधन निम्न हैं–

- प्रेस, समाचारपत्र, पत्रिकाऐं, पुस्तकें आदि
- सिनेमा
- रेडियो, टेलिविजन और इन्टरनेट
- सार्वजनिक भाषण
- लाउडस्पीकर इत्यादि

प्रचार का महत्व सामाजिक नियन्त्रण के एक साधन के रूप में किसी से कम नहीं है। प्रचार द्वारा समाज में विभिन्न प्रकार से अपने सुझावों के रूप में विचार फैलाये जाते हैं जिससे जनता को किसी ना किसी रूप में उन विचारों को ग्रहण करना ही होता है। प्रचार हमारी आर्थिक क्रियाओं और व्यवहारों को नियन्त्रित करके सामाजिक नियन्त्रण में सहायक होता है। प्रचार की प्रविधियों का प्रयोग व्यापार और वाणिज्य के क्षेत्र में अत्यधिक होता है। इश्तहारों, पोस्टरों, फिल्मों तथा टेलीविजन का भी अत्यधिक प्रयोग व्यापारिक प्रचार के लिए किया जाता है। डी.डी.–1, मेट्रो, सोनी, जी., स्टार प्लस व टी.वी के अन्य चैनलों पर व्यापारिक प्रचार किए जाते हैं। हमारी आर्थिक क्रियाऐं इन सभी से काफी सीमा तक नियन्त्रित होती है।

3.7 सारांश

'नियन्त्रण' शब्द किसी वस्तु की असीमित स्वंतन्त्रता में बाधा डालना अथवा कार्यों या व्यवहारों को नियमित करना होता है। नियन्त्रण के बिना जीवन–व्यवस्था और समाज–व्यवस्था तहस–नहस हो जायेगी। सामाजिक नियन्त्रण का अर्थ किसी समूह द्वारा मान्य या स्वीकृत व्यवहार–प्रतिमानों के अनुरूप व्यक्तियों के व्यवहारों को नियमित करना है। मानव अपने स्वभाव से ही स्वार्थी है। हिंसा, द्वेष की भावना और अपने स्वार्थों की सर्वप्रथम पूर्ति के लिये प्रयास करते रहना मानवीय व्यक्तित्व की कुछ सामान्य और स्वाभाविक विशेषताऐं हैं। ऐसी स्थिति में मानव को यदि सपूर्ण स्वतंत्रता दी जाये तो वह अपनी मनमानी से समाज की व्यवस्था को बिगाड़ देगा और एक असभ्य समाज बना देगा। सामाजिक नियन्त्रण सभी व्यक्तियों को परम्पराओं के अनुसार व्यवहार करने का प्रोत्साहन देता है। इसी से संस्कृति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरिक होती है। परम्पराओं के टूटने पर किसी ना किसी रूप में समाज में समस्याऐं उत्पन्न होती हैं, जो सामाजिक व्यवस्था को बिगाड़ देती हैं, इसलिए सामाजिक नियन्त्रण अति–आवश्यक है। उत्तराखण्ड में हमारी मनोवृत्तियाँ रूढ़िवादी हैं, लेकिन व्यवहार अब आधुनिकता को महत्व दे रहे हैं, इससे व्यक्तिगत जीवन में तरह–तरह के तनाव उत्पन्न हो रहे हैं और सामाजिक व्यवस्था कमजोर हो रही है। सामाजिक नियन्त्रण व्यक्तिगत व्यवहार को नियंत्रित करता है और व्यक्तियों की मनोवृत्तियों तथा उनके विचारों में संतुलन लाने का प्रयास करता है। प्राचीन व्यवस्था को बनाए रखने के लिए,सामाजिक विभिन्नताओं को एकरूपता में परिवर्तित करने के लिए तथा व्यक्तिगत व्यवहारों को नियन्त्रित करने के लिए और समाज की रूचियों व व्यवहारों को सामाजिक अभिमति प्रदान करने के लिए सामाजिक नियन्त्रण का महत्व अत्यधिक है । सामाजीकरण वह प्रक्रिया है,जिसके द्वारा व्यक्ति अपने सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में प्रवेश करता है। व्यक्ति के सामाजीकरण की प्रक्रिया के दौरान ही सामाजिक नियन्त्रण की प्रक्रिया भी चलती है।सामाजिक नियन्त्रण के अनेक अभिकरण है। सामाजिक नियन्त्रण के अभिकरण के रुप में **परिवार** सबसे महत्वपूर्ण है। परिवार एक प्राथमिक समूह है जो व्यक्ति के सामाजीकरण का प्रमुख साधन है। परिवार प्रारंभ से ही बच्चे को जनरीतियों, लोकाचारों और प्रथाओं की शिक्षा देता है तथा समाज की नैतिकता से परिचित कराता है, समय–समय पर अनजाने में भी भूल हो जाने पर उससे प्रायश्चित भी कराता है और अनेक पौराणिक गाथाओं और अनुष्ठानों के द्वारा धार्मिक विश्वासों को दृढ़ बनाता है। उत्तराखण्ड में,वास्तव में, धर्म समाज का आधार है। **धर्म** के आदर्शों और निषेधों का पालन करना जीवन में सफलता लाता है तथा इसका विरोध और उल्लंघन करने से व्यक्ति का जीवन नियन्त्रण से बाहर हो जाता है।धर्म में जिस शक्ति में विश्वास किया जाता है वह अलौकिक शक्ति मानी जाती है। उस शक्ति का लाभ उठाने के लिए और उसके कोप से बचने के लिए लोग धर्म से संबंधित नियमों का सच्चाई से पालन करते हं। **शिक्षण–संस्थाओं** के माध्यम से व्यक्ति के तर्क और विवेक में वृद्धि होने से वह स्वंय प्रत्येक व्यवहार के परिणामों को समझने लगता है, इससे आत्म–नियन्त्रण को भी प्रोत्साहन मिलता है, और इस प्रकार व्यक्ति की समाज विरोधी मनोवृति का सामाजीकरण हो जाता है।**परम्पराऐं** हमें कुछ निश्चित व्यवहार–प्रतिमानों को प्रस्तुत करती हैं और समाज के सदस्यों से यह आग्रह करती हैं कि वे उन्ही प्रतिमानों का अनुसरण करें। **कानून** राज्य द्वारा बनाया एंव लागू किया जाता है। इन नियमों का उल्लघंन करने वालों को दण्ड देने का उत्तरदायित्व एक प्रभुत्ता सम्पन्न राजनैतिक शक्ति पर होता है।यदि मनुष्य समाज के मूल्यों के अनुसार अपने कार्य एंव व्यवहार करता है तो उसे सामाजिक प्रंशसा प्राप्त होती है जिसे **पुरस्कार** कहते हैं तथा समाज–विरोधी कार्यों को रोकने के लिए राज्य कानून बनाता है जिसका उल्लंघन करने अथवा तोड़ने से **दण्ड** प्रदान किया जाता है। **जनमत,** जनता की भावनाओं तथा विचारों का प्रतिनिधित्व करता है, और शासकवर्ग को उसी आधार पर अपनी नीति निर्धारित करने में मद्द मिलती हैं और समाज–सुधारक अपने कार्यक्रमों को दिशा प्रदान करते हैं तथा यह सामाजिक नियन्त्रण के एक प्रभावशाली साधन के रूप में महत्व सखता है। **प्रचार** द्वारा समाज में विभिन्न प्रकार से

अपने सुझावों के रूप में विचार फैलाए जाते हैं जिससे जनता को किसी ना किसी रूप में उन विचारों को ग्रहण करना ही होता है।यह स्पष्ट है कि सामाजिक नियन्त्रण के कई अभिकरण समाज में होते हैं,जिनके द्वारा समाज अपने सदस्यों की क्रियाओं और व्यवहारों पर नियन्त्रण रखता है तथा समाज में संगठन और व्यवस्था को कायम रखता है। सामाजिक नियन्त्रण एक ऐसी व्यवस्था है जिसके द्वारा अनेक समूह,नियमों के द्वारा अपने सदस्यों के व्यवहारों में समानता लाने का प्रयत्न करते हैं तथा उन्हें पारस्परिक संघर्षों से बचाते हैं।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि सामाजिक नियन्त्रण के एकाधिक अभिकरण समाज में होते हैं और उनके द्वारा समाज अपने सदस्यों की क्रियाओं और व्यवहारों पर नियन्त्रण रखते हुए समाज में संगठन और व्यवस्था को कायम रखता है। उत्तराखण्ड के सरल और सादे समाज में विशेषतः प्रथा,परम्परा,रूढ़ि,संस्कार,धर्म आदि द्वारा ही सामाजिक नियन्त्रण हो जाता है,परन्तु आधुनिक जटिल तथा बड़े समाजों में प्रथा,परम्परा आदि अपर्याप्त तथा प्रभावहीन होते हैं,इसलिए कानून,राज्य,पुलिस,सेना आदि द्वारा व्यक्ति तथा समूहों के व्यवहारों तथा कार्यों पर नियन्त्रण रखा जाता है।

3.8 तकनीकी शब्दावली

जनमत – जनता का मत या विचार

नियन्त्रण– किसी की असीमित स्वंतन्त्रता में बाधा डालना अथवा कार्यो या व्यवहारों को नियमित करना ही नियन्त्रण है।

कानून– समाज व्यवस्था को चलाने के लिए निर्मित आदेश जिनका परिपालन नागाकिों के लिए आवश्यक होता है।

दण्ड– एक ऐसा साधन जो राज्य के द्वारा बनाए गए कानूनों को जनता पर लागू करता है।

3.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

इकाई 3.6 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 1 के उत्तर के लिए देखिए इकाई 3.6.5.1

इकाई 3.6 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 2 के उत्तर के लिए देखिए इकाई 3.6.1

इकाई 3.6 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 3 के उत्तर के लिए देखिए इकाई 3.6.4

3.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

मुखर्जी,आर; *सामाजिक नियन्त्रण और सामाजिक परिर्वतन,* विवेक प्रकाशन, 2003

अग्रवाल,भरत, *सामाजिक नियन्त्रण और सामाजिक नियन्त्रण,* विवेक प्रकाशन, 2003

प्रेम,विश्वेश्वर, *हिमालय में भारतीय संस्कृति, चैतन्य प्रकाशन,* कानपुर, 1965

3.11 सहायक/उपयोगी ग्रंथ सूची

बिष्ट, शेर सिंह, *कुमाँऊ हिमालयः समाज एंव संस्कृति,* अल्मोड़ा, 1999

शर्मा, डी.डी.,*हिमालय संस्कृति के मूलाधार,* सोलन, 1998

रोनेक, जोसफ, एस., *सोशल कन्ट्रोल;* नोस्ट्रेन्ड कम्पनी, 1956

अग्रवाल,जी.के, *मानव समाज एंव समाजशास्त्रीय अवधारणाऐं,* साहित्य भवन, 2008

निबंधात्मक प्रश्न

1. सामाजिक नियन्त्रण की परिभाषा दीजिए। सामाजिक नियन्त्रण की क्या आवश्यकता है?
2. सामाजिक नियन्त्रण के क्या उद्देश्य हैं?

इकाई–चार : उत्तराखण्ड में सामाजिक परिर्वतन और आधुनिकीकरण

4.1 प्रस्तावना

4.2 इकाई के उद्देश्य

4.3 सामाजिक परिर्वतन का अर्थ

- 4.3.1 सामाजिक परिर्वन की परिभाषाऐं
- 4.3.2 सामाजिक परिर्वतन की विशेषताऐं
  - 4.3.2.1 सामाजिक प्रकृति
  - 4.3.2.2 विभिन्न प्रतिमान
  - 4.3.2.3 सार्वभौमिक घटना
  - 4.3.2.4 सामाजिक परिर्वतन की गति तुलनात्मक
  - 4.3.2.5 सामाजिक परिर्वतन एक विश्वव्यापी प्रकिया
  - 4.3.2.6 सामाजिक परिर्वतन की भविष्यवाणी नही की जा सकती
  - 4.3.2.7 सामाजिक परिर्वतन एक जटिल तथ्य
- 4.3.3 आधुनिक समाज में सामाजिक परिर्वतन

4.4 उत्तराखण्ड में सामाजिक परिर्वतन के कारक

- 4.4.1 सांस्कृतिक कारक
- 4.4.2 मनोवैज्ञानिक कारक
- 4.4.3 जैविकीय व प्राणिशास्त्रीय कारक
- 4.4.4 प्राकृतिक कारक
- 4.4.5 आर्थिक कारक
- 4.4.6 जनसंख्यात्मक कारक

4.5 उत्तराखण्ड में सामाजिक परिर्वतन

- 4.5.1 औद्योगीकरण
- 4.5.2 नगरीकरण
- 4.5.3 आधुनिक शिक्षा का प्रसार
- 4.5.4 पश्चिमीकरण
- 4.5.5 पलायन
- 4.5.6 कानूनी एंव संवैधानिक अधिकार व सुविधाए

4.6 उत्तराखण्ड में आधुनिकीकरण का अर्थ

- 4.6.1 आधुनिकीकरण की परिभाषाऐं
- 4.6.2 उत्तराखण्ड में आधुनिकीकरण की विशेषताऐं
  - 4.6.2.1 औद्योगीकरण
  - 4.6.2.2 नगरीकरण
  - 4.6.2.3 शिक्षा का महत्व
  - 4.6.2.4 नवीन प्रौद्योगिकी
  - 4.6.2.5 विज्ञान को बढ़ावा
  - 4.6.2.6 विभेदीकरण
  - 4.6.2.7 परम्परात्मकता का ह्रास
  - 4.6.2.8 श्रम विभाजन तथा विशेषीकरण
  - 4.6.2.9 कार्य प्रणालियों का विकास

4.6.3 आधुनिकीकरण के कारक
4.6.3.1 शिक्षा
4.6.3.2 संचार
4.6.3.3 पश्चिमीकरण
4.6.3.4 राष्ट्रवाद की भावना
4.6.3.5 संस्कृतिकरण
4.6.4 उत्तराखण्ड में आधुनिकीकरण का प्रभाव
4.6.4.1 परिवार में परिर्वतन
4.6.4.2 विवाह में परिर्वतन
4.6.4.3 शिक्षा में परिर्वतन
4.6.4.4 धार्मिक जीवन में परिर्वतन
4.6.4.5 आर्थिक जीवन में परिर्वतन
4.6.4.6 राजनीतिक जीवन में परिर्वतन
4.6.4.7 जाति व्यवस्था में परिर्वतन
4.7 सारांश
4.8 तकनीकी शब्दावली
4.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर
4.10 संदर्भ ग्रंथ सूची
4.11 सहायक/उपयोगी
4.12 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

सामाजिक परिर्वतन अतीत और आधुनिक सभी प्रकार के समाजों की विशेषता रही है। कहीं पर इसकी गति तीव्र तो कहीं पर मन्द रही है। समूह के आकार में परिर्वतन, अर्थव्यवस्था में परिर्वतन, सामाजिक संरचना का रूपान्तरण, विज्ञान का विकास, धार्मिक विश्वासों का महत्व, युद्ध, आपदा इत्यादि ऐसे तत्व हैं जो इन परिर्वतनों से सम्बन्धित हैं। समाज के प्रत्येक पहलू में परिर्वतन हुए हैं। व्यवहार में जीवन शैली में या सूचना प्रौद्योगीकी में सामाजिक परिर्वतन भौतिक और अभौतिक संस्कृति में होने वाले परिर्वतनों को भी इसके क्षेत्र में सम्मिलित करते हैं। यह कहा जा सकता है कि परिर्वतन एक व्यापक प्रकिया है। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, नैतिक, भौतिक आदि सभी क्षेत्रों में होने वाले किसी भी प्रकार के परिर्वतन को जो समाज में प्रभाव डालता है ,सामाजिक परिर्वतन कहा जा सकता है। यह विचलन स्वंय प्रकृति के द्वारा या मानव समाज द्वारा योजनाबद्ध रूप में हो सकता है। समाज के किसी विशेष पक्ष में यह हो सकता है, या समाज के समस्त ढ़ाँचे में आ सकता है। यह किसी ना किसी रूप में हमेशा चलने वाली प्रकिया है।

परिर्वतन प्रत्येक समाज की आवश्यकता है और यह प्रत्येक समाज में सामाजिक विकास की प्रकिया से उत्पन्न होती है। यह प्रकिया समाज की संरचना और कियाकलापों में बदलाव लाती है। एक अलग राज्य के रूप में स्थापित होने के पश्चात उत्तराखण्ड में कई परिर्वतन हुए हैं। कुमाँऊ और गढ़वाल मण्डलों में आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक परिर्वतन हुए हैं,जिसने समाज के कई पहलुओं को प्रभावित किया है । उत्तराखण्ड में प्रगति और वृद्धि कई गाँवों और जिलों में देखने को मिली है। पर्यटन

ने एक वृहत रूप लेकर प्रदेश की आर्थिक स्थिति को सुधारा है। शिक्षा के अधिक प्रसार ने लोगों में जागरूकता प्रदान की है। उत्तराखण्ड की 71 प्रतिशत साक्षरता इस बात का साक्ष्य है कि प्रदेश में उन्नति हुई है।उत्तराखण्ड में सामाजिक ढाँचे में विसंगतियाँ भी दृष्टिगत हो रही हैं जैसे– संयुक्त परिवारों का टूटना व वृद्धों के प्रति अनादर की भावना का बढ़ना, नैतिकता का पतन प्रायः देखने में आ रहा है। यहाँ समाज में भौतिकवाद तथा विलासिता बढ़ती नजर आ रही है, और व्यक्तिवाद पनप रहा है, फास्टफूड, रेस्टोरेन्ट, क्रेडिट कार्ड, मोबाइल फोन, इन्टरनेट का प्रयोग बढ़ा है।।

उत्तराखण्ड में आधुनिकीकरण का प्रभाव व दिशा दूसरे प्रदेशों से कहीं भिन्न रही है। आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में कई पारम्परिक संस्थाऐं और गतिविधियाँ फिर से शुरू हो गयी हैं। अब राष्ट्र स्तरीय चैनलों के अतिरिक्त लोकल चैनल भी धार्मिक प्रचार के लिए समर्पित दिख रहे हैं। आवागमन के साधनों को बढ़ाकर लोगों के आपसी सम्पर्क को बढ़ाया जा रहा है । गाँवों में राजनीतिकरण की प्रकिया पंचायती राज की संस्थाओं से और गतिशील हो गई है। विवाह और सम्पत्ति के हस्तान्तरण के मामलों में न्यायिक सुधार से परिवार के पारम्परिक ढाँचे का आधार प्रभावित हुआ है। उत्तराखण्ड के दोनों क्षेत्रों में चाहे व पहाड़ी क्षेत्र हो या मैदानी, परिर्वतन के परिणाम दिखाई पड़ रहे हैं।

4.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य विभिन्न तथ्यों के माध्यम से उत्तराखण्ड में सामाजिक परिवर्तन एवं आधुनिकीकरण का परिचय कराना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप निम्नलिखित के संबंध में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

- सामाजिक परिर्वतन का अर्थ,विभिन्न परिभाषाऐं तथा विशेषताऐं
- उत्तराखण्ड में सामाजिक परिर्वतन के कारक
- उत्तराखण्ड में सामाजिक परिर्वतन के घटक
- उत्तराखण्ड में आधुनिकीकरण का अर्थ एवं प्रभाव

4.3 सामाजिक परिर्वतन का अर्थ

सामाजिक परिर्वतन प्रकृति का नियम है, अथवा सामाजिक परिर्वतन भी प्राकृतिक या स्वाभाविक है। ऐसे किसी भी समाज की कल्पना नहीं की जा सकती जो की पूर्णतया अपरिर्वतनशील व स्थिर हो। यदि समाज की व्यवस्था में कोई परिवर्तन या हेर फेर हो जाता है तो उस बदलाव को सामाजिक परिर्वतन कहेंगे। सामाजिक परिर्वतन एक सार्वभौमिक घटना है, ये ऐसी प्रक्रिया है जो विश्व के सभी समाजों में चलती रहती है। साथ ही सामाजिक परिर्वतन सभी युगों में चलता रहता है। सभी समाजों में परिर्वतन की गति समान नहीं होती, कुछ समाजों में परिर्वतन तीव्र गति से व कुछ समाजों में मन्द गति से होते हैं। सामाजिक परिर्वतन की दिशा भी सदैव समान नहीं होती समाज में होने वाले परिर्वतन तीन दिशाओं में होते हैं–

1. प्रथम रेखीय परिर्वतन

2. चक्रीय परिर्वतन

3. उतार चढाव का परिर्वतन

समाजिक परिर्वतन में तीन तत्व होते हैं ''वस्तु तत्व'' ''समय'' तथा ''भिन्नता'' इसी प्रकार समय के अनुसार भिन्न–भिन्न होना ही सामाजिक परिर्वतन कहलाता है।

4.3.1 सामाजिक परिवर्तन की परिभाषाऐं

सामाजिक परिवर्तन की परिभाषाओं में काफी भिन्नता है कुछ विद्वान इसका क्षेत्र सामाजिक सम्बन्धों में परिवर्तन तक ही मानते हैं जबकि दूसरे समाजशास्त्री भौतिक एंव अभौतिक संस्कृति में होने वाले परिवर्तन को भी इसके क्षेत्र में समिलित करते हैं।कुछ प्रमुख समाजशास्त्रियों द्वारा दी गई सामाजिक परिवर्तन की परिभाषाऐं इस प्रकार हैं–

गिलिन तथा गिलिन *'' सामाजिक परिर्वतन जीवन की स्वीकृत विधियों में होने वाले परिर्वतन को कहते हैं, चाहे ये परिर्वतन भौगोलिक दशाओं में परिर्वतन से हुऐ हों या सांस्कृतिक साधनों, जनंसख्या की रचना या विचारधारा के परिर्वतन से या प्रसार से अथवा समूह के अन्दर ही आविष्कार के फलस्वरूप हुऐ हों''।*

गिन्सबर्ग *'' सामाजिक परिर्वतन से मेरा तात्पर्य सामाजिक ढांचे में परिर्वतन अर्थात समाज के आकार इसके विभिन्न अंगों अथवा इसके संगठन के प्रकार की बनावट एंव सन्तुलन में होने वाले परिर्वतन से है''।*

जॉनसन *'' अपने मूल अर्थ में सामाजिक परिर्वतन का अर्थ सामाजिक ढांचे में परिर्वतन से है''।*

बोटोमोर *'' सामाजिक संरचना , सामाजिक संस्थाओं अथवा उनके पारस्परिक संबन्ध में घटित परिर्वतन सामाजिक परिर्वतन है।''*

किंग्सले डेविस *'' सामाजिक परिर्वतन से तात्पर्य केवल सामाजिक संगठन अर्थात सामाजिक संरचना तथा प्रकार्यों से घटित होता है।''*

4.3.2 सामाजिक परिर्वतन की विशेषताऐं

इन विशेषताओं को अग्रांकित शीर्षकों के अंतर्गत समझा जा सकता है–

4.3.2.1 सामाजिक प्रकृति

सामाजिक परिर्वतन की प्रकृति सामाजिक है, क्योंकि सामाजिक परिर्वतन का संबंन्ध सम्पूर्ण समाज में होने वाले परिर्वतन से है। सामाजिक परिर्वतन समाज के सभी क्षेत्रों मे होता है अतः इनकी प्रकृति सामाजिक मानी जाती है। इस प्रकार से सम्पूर्ण सामाजिक क्षेत्र में हुए परिर्वतन को सामाजिक परिर्वतन कहा जा सकता है और इसलिए इसकी प्रकृति सामाजिक कही गई है।

4.3.2.2 विभिन्न प्रतिमान

सामाजिक प्रतिमान सदैव एक ही प्रकार का नहीं होता है बल्कि सामाजिक परिर्वतन के विभिन्न प्रतिमान होते हैं। यथा– समरेखीय प्रतिमान, चक्रीय प्रतिमान तथा उतार चढ़ाव का प्रतिमान।

4.3.2.3 सार्वभौमिक घटना

सामाजिक परिर्वतन एक सर्वव्यापी प्रकिया है जो हर समाज, स्थान, समय और परिस्थिति में निरन्तर होती रहती है। इसकी गति व दिशा में अन्तर हो सकता है किन्तु यह अवष्यंभावी है।

4.3.2.4 सामाजिक परिर्वतन की गति तुलनात्मक

सामाजिक परिर्वतन सभी समाजों में अवश्य होता है, किन्तु सभी समाजों में इसकी गति समान नही है। इसका मुख्य कारण यह है कि सामाजिक परिर्वतन की गति के संबंन्ध में अनुमान तभी लगाया जा सकता है जबकि हम एक समाज की दूसरे समाज से अथवा एक ही समाज के एक पक्ष की दूसरे पक्ष से तुलना करें।

4.3.2.5 सामाजिक परिर्वतन एक विश्वव्यापी प्रकिया

सामाजिक परिर्वतन दुनिया के हर समाज में घटित होता है। ऐसा कोई समाज नजर नहीं आता है जो लम्बे समय तक स्थिर है। परिर्वतन की रफ्तार कभी धीमी और कभी तीव्र होती है, लेकिन परिर्वतन समाज में चलने वाली एक अनवरत प्रकिया है।

4.3.2.6 सामाजिक परिर्वतन की भविष्यवाणी नहीं की जा सकती है

सामाजिक परिर्वतन बहुत अनिश्चित होते हैं। इनके बारे में निश्चित पूर्वानुमान लगाना कठिन है। हम अधिक से अधिक परिर्वतन की सम्भावना मात्र कर सकते हैं, परिर्वतनों की प्रवृति का अनुमान लगा सकते हैं किन्तु निश्चित भविष्यवाणी नहीं कर सकते हैं।

4.3.2.7 सामाजिक परिर्वतन एक जटिल तथ्य है

सामाजिक परिर्वतन की प्रकिया इतनी जटिल है कि इसे स्पष्ट नहीं किया जा सकता। कब, किस पर, किसका , कितना और कैसा प्रभाव पड़ेगा? इसे जान पाना कठिन है। भौतिक वस्तुओं का परिर्वतन अपेक्षाकृत सरल होता है लेकिन सांस्कृतिक मूल्यों में होने वाला परिर्वतन इतना जटिल होता है कि सरलता से उसका रूप भी समझ में नही आता। सामाजिक परिर्वतनों में जितनी वृद्धि होती जाती है वो उतना ही जटिल और दूरस्थ होता जाता है।

4.3.3 आधुनिक समाज में सामाजिक परिर्वतन

आधुनिक समाज में सामाजिक परिर्वतन ना तो मन चाहे ढंग से किया जा सकता है और ना ही पूर्णतः स्वतन्त्र और असंगठित छोड़ा जा सकता हैं। आज हर समाज में नियोजन के द्वारा सामाजिक परिर्वतन को नियंत्रित कर वांछित लक्ष्यों में क्रियाशीलता लाई जा सकती है।

4.4 उत्तराखण्ड में सामाजिक परिर्वतन के कारक

सामाजिक परिर्वतन एक जटिल प्रकिया है जिसका कोई एक कारण नहीं बताया जा सकता है कुछ प्रमुख कारक जो प्रायः भारत के संदर्भ में व्यवहृत हैं, उत्तराखण्ड में भी लागू होते हैं। इन कारकों को निम्न प्रकार से समझा जा सकता है–

4.4.1 सांस्कृतिक कारक

सांस्कृतिक कारकों में हम धर्म, विचार, नैतिकता , विश्वास , प्रथा , परम्परा , लोकाचार तथा विभिन्न संस्थाओं को सम्मिलित करते हैं। नवीन मूल्य एंव विश्वास सामाजिक संगठन तथा व्यवस्था को प्रभावित करते हैं, जिसके कारण सामाजिक परिर्वतन होता हैं। कुमाँऊ और गढ़वाल की संस्कृति यहाँ के

समाज की वाहक हैं। यहां भी संस्कृति के भौतिक एंव अभौतिक तत्वों में अन्तर होने से निरंतर सामाजिक परिर्वतन होता रहा है।

4.4.2 मनोवैज्ञानिक कारक

समस्त मानव सम्बन्ध, मानव–मस्तिष्क की उपज हैं। अतः सामाजिक सम्बन्धों में परिर्वतन, मानव–मस्तिष्क में परिर्वतन के कारण होते हैं। मानव में जिज्ञासा की प्रवृति पायी जाती है। इस प्रवृति ने ही मानव को आविष्कार करने एंव अज्ञात को खोजने की प्रेरणा दी । मानव ने अनेक ऐसे आविष्कार किये हैं जिन्होंने उसके जीवन को ही बदल दिया। अतः मनोवैज्ञानिक कारण भी सामाजिक परिर्वतन के लिए उत्तरदायी हैं।

4.4.3 जैविकीय व प्राणिशास्त्रीय कारक

जैविकीय कारक को सामाजिक परिर्वतन का प्रमुख कारक माना जाता है। कभी–कभी एक समाज में रहने वाली प्रजातियों की शारारिक विशेषताओं में एकाएक होने वाले परिर्वतन समाज की संरचना को परिवर्तित कर देते हैं।

4.4.4 प्राकृतिक कारक

प्राकृतिक कारक को भौतिक कारक भी कहते हैं। प्राकृतिक कारक के अर्न्तगत पृथ्वी का धरातल, धूप, तूफान, भूकम्प, बाढ़ें, हवाएँ एंव भौगोलिक दशाएँ आती है। इन प्राकृतिक परिस्थितियों एंव शक्तियों से समाज में परिर्वतन होता हैं।

4.4.5 आर्थिक कारक

आर्थिक कारक भी सामाजिक परिर्वतन के लिए उत्तरदायी हैं। सामाजिक परिर्वतन के लिए आर्थिक कारक को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। सम्पत्ति का स्वरूप, व्यवसाय की प्रकृति, सम्पत्ति का वितरण, लोगों का जीवन स्तर, व्यापार चक्र आदि सामाजिक संरचना को प्रभावित करते हैं। जिस प्रकार समाज में आर्थिक ढाँचे में परिर्वतन आता है, उसी प्रकार सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था में परिर्वतन होता रहता है। वास्तव में सामाजिक परिर्वतन एक जटिल तथ्य है इसकी व्याख्या किसी एक कारण के आधार पर नहीं की जा सकती है। अनेक कारणों के योग से ही समाज में परिर्वतन घटित होते रहते हैं।

4.4.6 जनसंख्यात्मक कारक

विद्वानों ने उत्तराखण्ड में सामाजिक परिर्वतन का मुख्य कारक समाज में जनसंख्या सम्बन्धी विशेषताओं को माना है। विभिन्न समूहों, समितियों और सम्पूर्ण समाज की रचना को उस समाज की जनसंख्या का आधार बहुत अधिक प्रभावित करता है।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

1. सामाजिक परिर्वतन की विशेषताऐं बतलाइये ।
2. सामाजिक परिर्वतन के कारकों की व्याख्या कीजिए।

4.5 उत्तराखण्ड में सामाजिक परिर्वतन

उत्तराखण्ड में सामाजिक परिर्वतन का निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत अध्ययन किया जा सकता है–

4.5.1 औद्योगीकरण

औद्योगीकरण का तात्पर्य मानवीय श्रम के स्थान पर बड़ी–बड़ी मशीनों के द्वारा बड़े पैमाने पर उत्पादन करना है। आद्योगीकरण के फलस्वरूप नगरीकरण की प्रकिया में वृद्धि हुई है और इस प्रकार नगरों में वेश–भूषा, खान–पान, व्यवहार व शिष्टता के ढंगों, विचारों तथा मनोवृतियों में व्यापक परिर्वतन हुए हैं। परम्परागत रूप से ग्रमीण जीवन विशुद्ध और सरल था लेकिन औद्योगीकरण में वृद्धि होने से गाँवो में भी नगरीय विशेषताओं का समावेश हो गया। नगरों के उद्योगों में लाखों ग्रामीण व श्रमिकों के कार्य करने से ग्रामीण परिवारों में विघटन की प्रकिया पैदा हो गयी। धीरे–धीरे गाँवों में अनौपचारिक सामाजिक नियन्त्रण का प्रभाव कम होने लगा। औद्योगीकरण से उत्पन्न दुष्परिणामों से बचने के लिए एक वृहत प्राशसनिक पद्धति का विकास हुआ, जिसके फलस्वरूप सामाजिक ढ़ाँचों में भी परिर्वतन होना स्वाभाविक था। औद्योगीकरण का प्रमुख उद्देश्य अधिक से अधिक उत्पादन करना और अधिक से अधिक लाभ प्राप्त करना है। इस प्रवृति ने सामाजिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र का व्यापारीकरण कर दिया, तात्पर्य यह नहीं है कि औद्योगीकरण के द्वारा उत्पन्न सभी परिर्वतन हमारी सामाजिक प्रगति में बाधक ही हैं वास्तव में औद्योगीकरण ने श्रम के महत्व को स्पष्ट करके तथा व्यक्ति को एक तार्किक दृष्टिकोण देकर उसे पहले ही अपेक्षा से कहीं अधिक प्रगतिशील भी बनाया है। इस तार्किक दृष्टिकोण के प्रभाव से रूढ़ियों तथा अन्धविश्वासों में कमी हुई और परम्परा के स्थान पर नवीन व्यवहारों का स्वागत किया जाने लगा। इतना ही नही औद्योगीकरण ने आजीविका के साधनों में वृद्धि करके सामान्य स्त्रियों को भी रोजगार के अवसर प्रदान किये। इस प्रकार औद्योगीकरण स्त्रियों की स्थिति में सुधार करने वाला प्रमुख साधन बन गया। उत्तराखण्ड में जातिवाद की संकीर्णता को कम करने, विभिन्न जातियों को एक साथ काम करने तथा पिछड़े वर्गों की आर्थिक स्थिति को सुधारनें में भी औद्योगीकरण का विशेष योगदान रहा है। इस प्रकार उत्तराखण्ड में सामाजिक परिर्वतन लाने में औद्योगीकरण के महत्व की अवहेलना नहीं की जा सकती है।

4.5.2 नगरीकरण

यह किसी कस्बा या बढ़े गाँव के नगर बनने की एक प्रकिया है। इस प्रकिया में गैर कृषि व्यवसायों में लगे हुऐ व्यक्तियों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होने लगती है। क्योंकि नगरों में अधिकांश जनसंख्या गैर कृषि व्यवसायों में संलग्न होती है। नगरीकरण के कारण व्यावसायिक विजातीयता बढ़ने लगती है तथा नगरीय जनयंख्या के आकार एंव घनत्व में भी परिर्वतन होना प्रारम्भ हो जाता है। अधिकांश लोग इसे नगरीय बनने अथवा नगरीय जीवन पद्धति को अपनाने की प्रकिया भी कहते हैं। नगरीकरण के विकास के साथ संचार एंव यातायात के साधनों का भी अत्यन्त विकास होता है। विभिन्न जाति एंव धर्म के लोग एक साथ एक जगह रहने लगते हैं। लोगों के बीच विचारों, विश्वासों का एंव ज्ञान का आदान–प्रदान होने लगता है, रेल एंव बसों में विभिन्न जाति के लोग एक साथ यात्रा करने लगते हैं, जिसके कारण परम्परागत मूल्यों में परिर्वतन आते हैं। वर्ग व्यवस्था की स्थापना प्रकिया शहरों में कुछ ज्यादा हो जाती है, अर्थात समाज सिर्फ जाति पर आधारित ना होकर वर्ग व्यवस्था के ढ़ाचे में ढ़लने लगता है और समाज में व्यापक परिवर्तन होते चले जाते हैं।

4.5.3 आधुनिक शिक्षा का प्रसार

शिक्षा अपने आप में सामाजिक गतिशीलता का कोई कारण नहीं है, पर ये निश्चित रूप से गतिशीलता के विभिन्न कारकों को बढ़ावा देता है। आधुनिकीकरण की प्रकिया ने शिक्षा के क्षेत्र को विकसित किया है। उत्तराखण्ड में शिक्षा का क्षेत्र संकुचित था और निम्न जाति के लोग को शिक्षा से

वंचित थे, क्योंकि शिक्षा का संबन्ध धर्म से जोडा जाता था। किन्तु आज उत्तराखण्ड के गाँव–गाँव में शिक्षा का क्षेत्र विस्तृत हो गया है और हर जाति के लोगों को समान शिक्षा व्यवस्था प्रदान की जा रही है। आधुनिकीकरण ने एक ओर जहाँ उत्तराखण्ड में आर्थिक सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्र में प्रगति के मार्ग–प्रशस्त किये हैं वहीं दूसरी ओर आधुनिकता के नाम पर अनुशासनहीनता तथा भष्टाचार को बढावा दिया है। आधुनिक शिक्षा का आधार वैज्ञानिक चिंतन है इसलिए इसके द्वारा समतामूलक एंव विकासोन्मुखी समाज को बढावा मिलना बिल्कुल स्वाभाविक है। आधुनिक शिक्षा ने सामाजिक गतिशीलता का एक उत्प्रेरक के रूप में काम किया है।

4.5.4 पश्चिमीकरण

सामाजिक परिर्वतन की अनेक प्रकियाओं में पश्चिमीकरण एक प्रमुख प्रकिया है। पश्चिमीकरण की प्रकिया के द्वारा उत्तराखण्ड में होने वाले परिर्वतनों को व्यक्त किया जा सकता है जो पश्चिमी सभ्यता तथा संस्कृति के प्रभाव के कारण उत्पन्न हुऐ हैं। पश्चिमीकरण एक चेतन तथा अचेतन दोनों ही प्रकारकी प्रकिया है, इसका अभिप्राय यह है कि पश्चिमी समाज की कुछ विशेषताओं को लोग चेतन रूप में जानबूझकर अपना रहे हैं वहीं पश्चिमी समाज की अनेक विशेषताओं को समाज सहज रूप से बिना सोचे समझे भी अपना रहा है। पश्चिमीकरण का समाज पर धनात्मक तथा ऋणात्मक दोनों ही प्रकार का प्रभाव पड़ा है। पश्चिमीकरण की संस्कृति से जहाँ एक ओर सकारात्मक परिर्वतनों का जन्म हुआ वही नकारात्मक तथा हानिकारक प्रभाव भी पडे हैं। पश्चिमीकरण परिर्वतन की उस प्रकिया का द्योतक है जो भारत के साथ ही उत्तराखड के जनजीवन, समाज व संस्कृति के विभिन्न पक्षों में उस पश्चिमी संस्कृति के सर्म्पक में आने के फलस्वरूप उत्पन्न हुई जिसे अंग्रेजी शासक अपने साथ लाये थे और उसके पश्चात से हम निरंतर अनेक बातों के लिए पश्चिम का अनुकरण कर रहे हैं। पश्चिमीकरण की प्रकिया का प्रचलन इस बात का सबूत है कि उत्तराखण्ड में सामाजिक गतिशीलता की गति तेज हुई है। इन दोनों प्रकियाओं में सामुहिक गतिशीलता का प्रमाण मिलता है। लोग अपनी सामाजिक स्थिति को सुधारने के लिए बेरोक–टोक प्रयास कर रहे हैं।

4.5.5 पलायन

औद्योगीकरण एंव यातायात के विकास की सुविधाओं ने प्रवास की प्रकिया को काफी तेज कर दिया है। एक लम्बे समय तक उत्तराखण्ड के लोग अपने गाँव की सीमा के अंदर ही जीवन निर्वाह करते थे, गाँव के बाहर की दुनिया की वे मात्र कल्पना ही कर सकते थे, स्वाभाविक रूप से गाँव की सीमा के अन्दर रहने वाले लोगों के बीच गतिशीलता नगण्य रही होगी। उत्तराखण्ड की कुल आबादी के लगभग 40 प्रतिशात लोग अपने जिले के बाहर प्रवास करते हैं। अपनी इच्छा के मुताबिक कोई भी व्यक्ति भारत के किसी भी कोने में आ–जा सकता हैं। प्रवास की नई प्रवृति ने जीवन में आगे बढ़ने का रास्ता प्रशस्त कर दिया है। व्यक्ति गाँव से निकलकर बड़े नगरो या शहरों में जाकर अपने जीवन का सर्वागीण विकास कर रहा है।

4.5.6 कानूनी एंव संवैधानिक अधिकार व सुविधाऐं

भारतीय संविधान में हर किसी को समान रूप से आगे बढ़ने का हक प्रदान किया गया है। जाति, धर्म, लिंग एंव जन्म स्थान के आधार पर सभी प्रकार के भेद–भाव को भारतीय संविधान में गैर कानूनी करार कर दिया गया। पिछड़ी जाति व निम्न जाति के लोगो के लिए निशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की गई व शिक्षा संस्थानों में अध्ययन एंव नौकरियों में आरक्षण की व्यवस्था कर दी गयी है, जिससे लाखों लोगों

को विकास की दौड़ में आगे निकलने का विशेष अवसर प्राप्त हो गया है। उत्तराखण्ड की कई जन जातियों को भी इसका फायदा मिला है।

4.6 उत्तराखण्ड में आधुनिकीकरण का अर्थ

आधुनिकीकरण परम्परा के स्थान पर नवीनता का विकास और स्पष्ट रूप से यह कह सकते हैं कि जब परम्परागत जीवन–शैली के स्थान पर आधुनिक तत्वों के विकास की प्रकिया प्रारम्भ हो जाती है तो इसे आधुनिकीकरण कहा जाता है।आधुनिकीकरण सामाजिक परिर्वतन की एक प्रकिया है। जिसका समाज या सामाजिक जीवन पर व्यापक प्रभाव पड़ा है। आज सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक, शैक्षिक आदि विभिन्न क्षेत्रों में आधुनिकीकरण के लक्षणों को देखा जा सकता है। आधुनिकीकरण सामाजिक परिर्वतन की वह प्रकिया है जिसका समाज पर सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों ही प्रकार का प्रभाव पड़ा है। आधुनिकीकरण के कारण समाज में ऐसे परिर्वतन हुए हैं जिनसे समाज में नकारात्मक परिर्वतन भी हुए हैं तथा समाज में विखण्डन हुआ है। वास्तव में आधुनिकीकरण सामाजिक परिर्वतन की वह प्रकिया है जिसने समाज में सर्वाधिक परिर्वतनों को जन्म दिया है।

4.6.1 आधुनिकीकरण की परिभाषाऐं

प्रोफेसर एम.एन.श्रीनिवास –*'' किसी गैर पश्चिमी देश में एक पश्चिमी देश के प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष प्रभाव के फलस्वरूप उत्पन्न होने वाले परिर्वतन का नाम ही आधुनिकीकरण है।''*

डा. एस.सी.दुबे –*''आधुनिकीकरण एक प्रकिया है जो परम्परागत समाज में प्रौद्योगिकी पर आधारित समाज की ओर अग्रसर होती है।''*

प्रोफेसर योगेन्द्र सिंह – *'' आधुनिकीकरण सांस्कृतिक क्रियाओं का एक विशेष रूप है जिसमें मुख्य रूप से सार्वभौमिक और विकासवादी लक्षणों का समावेश होता है, यह लक्षण अतिमानवता से सम्बन्धित होने के साथ सजातीय और वैचारिक आधार पर परे होते हैं।''*

आईजैनस्टाटँ – *'' ऐतिहासिक दृष्टि से आधुनिकीकरण एक प्रकार की सामाजिक, आर्थिक एंव राजनैतिक व्यवस्थाओं की और परिर्वतन की प्रकिया है जो 17वीं से 19वीं शताब्दी तक पश्चिमी यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका और 20वीं शताब्दी तक दक्षिणी अमेरिका, ऐशियाई व अफ्रीकी देशों में विकसित हुई।''*

4.6.2 उत्तराखण्ड में आधुनिकीकरण की विशेषताऐं

उत्तराखण्ड में आधुनिकीकरण की विशेषताऐं को अग्रांकित शीर्षकों के अंतर्गत समझा जा सकता है–

4.6.2.1 औद्योगीकरण

आधुनिकीकरण की प्रकिया के परिणाम स्वरूप बड़े–बड़े उद्योगों का विकास होने लगता है।

4.6.2.2 नगरीकरण

जब बड़े–बड़े उद्योग विकसित होते हैं तो नगरीकरण की प्रकिया जन्म लेती है। उद्योगों की स्थापना के परिणाम स्वरूप नगरों की जनसंख्या तेजी से बढ़ने लगती है जो नगरीकरण को और बढ़ावा देती है।

4.6.2.3 शिक्षा का महत्व

आधुनिकीकरण की एक विशेषता शिक्षा का महत्व भी है जिससे कि शिक्षा का विकास होता है इसमें परम्परागत शिक्षा व्यवस्था के स्थान पर आधुनिक वैज्ञानिक शिक्षा का तेजी से विकास होता है।

4.6.2.4 नवीन प्रौद्योगिकी

उत्तराखण्ड में आधुनिकीकरण की प्रकिया के परिणामस्वरूप ना केवल औद्योगीकरण तथा नगरीकरण को भी बढ़ावा मिला है वरन् नवीन प्रौद्योगिकी का भी विकास हुआ है।

4.6.2.5 विज्ञान को बढ़ावा

आधुनिकीकरण का एक और लक्षण विज्ञान तथा वैज्ञानिक उपकरणों को बढ़ावा मिलना है। इस प्रकिया के कारण समाज में विज्ञान का महत्व बढ़ जाता है।

4.6.2.6 विभेदीकरण

आधुनिकीकरण विभेदीकरण को भी विकसित करता है, विभिन्न आधारों पर समाज अनेक वर्गों में बँट जाता है।

4.6.2.7 परम्परात्मकता का ह्रास

आधुनिकीकरण की एक विषेषता यह भी है कि इससे जो कुछ परम्परागत है उसका महत्व कम हो जाता है और उसके स्थान पर नवीनता का विकास होता है।

4.6.2.8 श्रम विभाजन तथा विशेषीकरण

आधुनिकीकरण की एक विशेषता यह भी है कि इससें श्रम विभाजन तथा विशेषीकरण को भी बढ़ावा मिलता है।

4.6.2.9 कार्य प्रणालियों का विकास

आधुनिकीकरण एक बहुआयामी सामाजिक परिर्वतन की प्रकिया है जिसके द्वारा परम्परागत मूल्यों, विचारों, कार्यविधियों के स्थान पर नवीन सामाजिक मूल्यों, अवधारणाओं तथा कार्य प्रणालियों का विकास होने लगता है।

4.6.3 आधुनिकीकरण के कारक

आधुनिकीकरण एक व्यापक तथा जटिल प्रकिया है जिसके लिए किसी एक कारक को उत्तरदायी नहीं माना जा सकता । इसके प्रमुखतः पांच अग्रांकित कारक उत्तरदायी हैं–

4.6.3.1 शिक्षा

शिक्षा के अभाव में कोई भी परम्परागत समाज आधुनिकीकरण की प्रकिया से गुजर नहीं सकता है। शिक्षा के द्वारा मनुष्यों में ज्ञान को बढ़ावा मिलता है और इसके द्वारा प्रौद्योगिकी की खोज को बढ़ाव

मिलता है। ज्ञान और विज्ञान का प्रचार आधुनिकीकरण की प्रकिया के लिए आवश्यक शर्त है। यह व्यक्ति की समस्याओं को सुलझाने और भविष्य निर्माण में सहायक है।

4.6.3.2 संचार

ज्ञान और विज्ञान बढ़ने से संचार के माध्यमों का विकास होता है और ज्ञान व विज्ञान का प्रचार–प्रसार होता है। आधुनिकीकरण को आगे बढ़ाने में टी0वी, मोबाइल, फोन व अखबारों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

4.6.3.3 पश्चिमीकरण

पश्चिमीकरण भी आधुनिकीकरण को बढ़ावा देने का एक कारक है। वह इस रूप में कि इसके कारण परम्परागत मूल्यों को बढ़ावा मिलता हैं।

4.6.3.4 राष्ट्रवाद की भावना

आधुनिकीकरण की प्रकिया को बढ़ाने के लिए सभी लोगों के बीच राष्ट्रवाद की भावना को बढ़ावा देना चाहिए। अगर लोग जातिवाद व क्षेत्रीयता की भावना को अपने अन्दर रखेंगे तो हमारा देश तरक्की नहीं कर सकेगा, इसलिए हम सभी लोगों को अपने अन्दर राष्ट्रवाद की भावना को उत्पन्न करना चाहिए।

4.6.3.5 संस्कृतिकरण

आधुनिकीकरण के कारकों में एक प्रमुख कारक संस्कृतिकरण है। संस्कृतिकरण की प्रकिया के द्वारा परम्परागत कार्य विधियों के स्थान पर नवीन कार्य–विधियों को अपना लिया जाता है।

4.6.4 उत्तराखण्ड में आधुनिकीकरण का प्रभाव

आधुनिकीकरण एक विश्वव्यापी प्रकिया है, जिसका संबन्ध समस्त मानव जाति से है। उत्तराखण्ड में आधुनिकीकरण के चलते विसंगतियाँ भी दृष्टिगत हो रही हैं। आधुनिकीकरण एक सार्वभौमिक सांस्कृतिक प्रघटना है। यह केवल उत्तराखण्ड में ही नही अपितु पूरे भारत वर्ष में इसका प्रभाव देखा गया है।

4.6.4.1 परिवार में परिर्वतन

उत्तराखण्ड में संयुक्त परिवार की प्रणाली प्रचलित थी, परन्तु औद्योगीकरण व नगरीकरण की प्रकिया ने उत्तराखण्ड के संयुक्त परिवारों को प्रभावित किया है. जिसके परिणाम स्वरूप संयुक्त परिवार विघटित होकर एकांकी परिवारों में बदल रहे हैं।

4.6.4.2 विवाह में परिर्वतन

कुमाँऊ व गढ़वाल में बाल विवाह व विधवा विवाह पर प्रतिबंध लगाया गया था किन्तु आधुनिकीकरण के परिणाम स्वरूप आज सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और शैक्षिक क्षेत्रों में पुरूष व महिलाओं का सम्पर्क बढ़ा है, जिसके चलते अन्तर्जातीय प्रेम विवाह में वृद्धि हुई है। कन्या दान का आदर्श टूटा है और बाल–विवाह में कमी आयी है साथ ही विधवा पुर्नविवाह को कानूनी मान्यता मिल गई है।

4.6.4.3 शिक्षा में परिर्वतन

आधुनिकीकरण की प्रकिया ने शिक्षा के क्षेत्र को विकसित किया है। उत्तराखण्ड में शिक्षा का क्षेत्र संकुचित था और निम्न जाति के लोगों को शिक्षा से वंचित कर दिया जाता था और शिक्षा को धर्म से जोड़ा जाता था। आज के समय में सभी जाति के लोगों को समान शिक्षा दी जाती है।

4.6.4.4 धार्मिक जीवन में परिर्वतन

आधुनिकीकरण की प्रकिया से धर्म को आघात लगा है । उत्तराखण्ड में धार्मिक अन्धविश्वास एंव सामाजिक कुरीतियां व्याप्त थीं । धर्म की आड़ में छूआ–छूत को बढ़ावा दिया जाता था। पश्चिमी शिक्षा प्रणाली के परिणाम स्वरूप इन सामाजिक बुराइयों को दूर किया गया। राजा रामोहन राय, महात्मा गाँधी, स्वामी विवेकानन्द आदि दार्शनिकों ने इन सामाजिक बुराइयों को दूर करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। वर्तमान समय में हर घटना का कारण धर्म को ना मानकर तार्किक दृष्टिकोण से समझा जाता है।

4.6.4.5 आर्थिक जीवन में परिर्वतन

उत्तराखण्ड में आधुनिकीकरणी की प्रकिया ने आर्थिक जीवन की प्रकिया को भी प्रभावित किया है। विज्ञान, प्रौद्योगिकी, उद्योग–धन्धे और यातायात तथा संचार के साधन विकसित हो जाने से नगरों का विकास हुआ । यहाँ बड़े–बड़े उद्योग–धन्धे लगाये गये, इन उद्योग–धन्धों में कार्य करने के लिए गाँव के लोग शहरों में आ गये। इस प्रकार स्थानीय गतिशीलता में वृद्धि हुई साथ ही गाँव का परम्परागत व्यवसाय चरमरा गया जिससे गाँवों में निर्धनता, बेरोजगारी एंव भुखमरी बढ़ी है।

4.6.4.6 राजनीतिक जीवन में परिर्वतन

आधुनिकीकरण की प्रकिया ने उत्तराखण्ड के राजनीतिक जीवन को भी प्रभावित किया है। परम्परागत उत्तराखण्ड में गाँव–पंचायत शक्तिशाली होती थी जिसका अध्यक्ष गाँव प्रधान या मुखिया होता था। शासन व्यवस्था पर धर्म का प्रभाव था किन्तु आधुनिकीकरण की प्रकिया के परिणमस्वरूप प्रजात्रंत और धर्म निरपेक्षता का भारतीय राजनीति व उत्तराखण्ड की राजनीति में प्रवेश हुआ। वर्तमान काल में ग्राम पंचायत के अध्यक्ष का पद वंशानुगत नहीं हैं जैसा कि पहले था। आज भारत में प्रजात्रंत और धर्म निरपेक्ष राज्य चल रहा है।

4.6.4.7 जाति व्यवस्था में परिर्वतन

परम्परागत कुमाँऊ व गढ़वाल में जाति–व्यवस्था का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान था। आधुनिकीकरण की प्रकिया के फलस्वरूप विज्ञान का महत्व बढ़ा और धर्म का प्रभाव कम हो गया। इस प्रकार से जाति व्यवस्था का महत्व कम हुआ हैं। औद्योगीकरण, नगरीकरण ,जन संचार के साधनों के विकास से जाति व्यवस्था के प्रतिबंन्ध जो परम्परागत थे कमजोर पड़ गये हैं।

1. सामाजिक परिर्वतन व आधुनिकीकरण क्या है? स्पष्ट कीजिए।
2. उत्तराखण्ड में आधुनिकीकरण के प्रभाव को बतलाइये।

4.7 सारांश

सामाजिक परिर्वतन ऐतिहासिक और आधुनिक सभी प्रकार के समाजों की विशेषता रही है। कहीं पर इसकी गति त्रीव तो कही पर मन्द रही है। समूह के आकार में परिर्वतन, अर्थव्यवस्था में परिर्वतन, सामाजिक संरचना का रूपान्तरण, विज्ञान का विकास, धार्मिक विश्वासों का महत्व, युद्ध, आपदा इत्यादि ऐसे तत्व हैं जो इन परिर्वतनों से सम्बन्धित हैं। समाज के प्रत्येक पहलू में परिर्वतन हुए हैं। व्यवहार में, जीवन शैली में या सूचना प्रौद्योगिकी में सामाजिक परिर्वतन भौतिक और अभौतिक संस्कृति में होने वाले परिर्वतनों को भी इसके क्षेत्र में सम्मिलित करते हैं। उपरोक्त कथनों से यह कहा जा सकता है कि परिर्वतन एक व्यापक प्रकिया है। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, नैतिक, भौतिक आदि सभी क्षेत्रों में होने वाले किसी भी प्रकार के परिर्वतन को सामाजिक परिर्वतन कहा जा सकता है। यह विचलन स्वंय प्रकृति के द्वारा या मानव समाज द्वारा योजनाबद्ध रूप में हो सकता है। समाज के किसी विशेष पक्ष में यह हो सकता है, या समाज के समस्त ढाँचे में आ सकता है। यह किसी ना किसी रूप में हमेशा चलने वाली प्रकिया है।परिर्वतन प्रत्येक समाज की आवश्यकता है और यह प्रत्येक समाज में सामाजिक विकास की प्रकिया से उत्पन्न होती है। यह प्रकिया समाजों की संरचना और क्रियाकलापों में बदलाव लाती है। एक अलग राज्य के रूप में स्थापित होने के पश्चात उत्तराखण्ड में कई परिर्वतनों का प्रदर्शन हुआ। कुमाँऊ और गढ़वाल मण्डलों में आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक परिर्वतन हुए हैं,जिसने समाज के कई पहलुओं को प्रभावित किया है अर्थात उनमें परिर्वतन हुआ है। उततराखण्ड में प्रगति और वृद्धि कई गाँवों और जिलों में देखने को मिली है। पर्यटन ने एक विशाल रूप लेकर प्रदश की आर्थिक स्थिति को सुधारा है। शिक्षा ने लोगों में जागरूकता एंव सभ्यता प्रदान की है। उत्तराखण्ड की 71 प्रतिशत साक्षरता इस बात का साक्ष्य है कि प्रदेश में उन्नति हुई है।

उत्तराखण्ड में सामाजिक ढाँचे में विसंगतियाँ भी दृष्टिगत हो रही हैं जैसे– संयुक्त परिवारों का टूटना व वृद्धों के प्रति अनादर की भावना का बढ़ना, नैतिकता का पतन प्रायः देखने में आ रहा है। यहाँ समाज में भौतिकवाद तथा विलासिता बढ़ती नजर आ रही है, और व्यक्तिवाद पनप रहा है, फास्टफूड, रेस्टोरेन्ट, क्रेडिट कार्ड, मोबाइल फोन, इन्टरनेट, टी.वी चैनलों पर अश्लीलता परोसने जैसी नई संस्कृति विकसित हो रही है। गाँवों में राजनीतिकरण की प्रकिया पंचायती राज की संस्थाओं से और गतिशील हो गई है। विवाह और सम्पत्ति के हस्तान्तरण के मामलों में न्यायिक सुधार से परिवार के पारम्परिक ढाँचे का आधार प्रभावित हुआ है। उत्तराखण्ड के दोनों क्षेत्रों में चाहे व पहाड़ी क्षेत्र हो या मैदानी, परिर्वतन के परिणाम दिखाई पड़े हैं।

4.8 तकनीकी शब्दावली

1. पश्चिमीकरण –पश्चिमी देशों का अनुकरण

2. आधुनिकीकरण–आधुनिक ज्ञान–विज्ञान,तर्क एवं विवके पर आधारित मूल्यों से निर्मित व्यवस्था।

4.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

खण्ड 4.4 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 1 के उत्तर के लिए देखिए इकाई 4.3.2.1 से 4.3.2.7
खण्ड 4.4 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 2 के उत्तर के लिए देखिए इकाई 4.4.1 से 4.4.6
खण्ड 4.6 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 1 का उत्तर संपूर्ण इकाई के आधार पर लिखें
खण्ड 4.6 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 2 के उत्तर के लिए देखिए इकाई 4.6.4.1 से 4.6.4.7

4.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. श्रीनिवास, एम.एन; सोषल चेंज एन इण्डिया

2. सिंह, वी.एन; आधुनिकता एंव नारी सषक्तिकरण
3. प्रसाद, अवध; गावों में सामाजिक, आर्थिक एंव राजनैतिक परिर्वतन
4. पाण्डेय, पी.एन; ग्रामीण विकास एंव संरचनात्मक परिर्वतन

4.11 सहायक / उपयोगी ग्रंथावली

1. एम.एन.श्रीनिवास : सोशल चेजं इन मॉडर्न इण्डिया
2.योगेन्द्र सिंह : मॉडर्नाइजेशन ऑफ इण्डियन ट्रेडीशन

4.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. सामाजिक परिर्वतन से आप क्या समझते है?इसकी विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
2. आधुनिकीकरण की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए एंव उत्तराखण्ड में इसके परिणामों का वर्णन कीजिए।

इकाई–पाँच : उत्तराखण्ड की सामाजिक समस्याऐं

5.1 प्रस्तावना
5.2 इकाई के उद्देश्य
5.3 सामाजिक समस्या अर्थ एवं विशेषताऐं
5.4 सामाजिक समस्याओं के प्रकार एवं वर्गीकरण
5.4.1 हैरल्ड फैल्प्स का वर्गीकरण
5.4.2 सैमुएक किंग का वर्गीकरण
5.4.3 के0 डी0 भट्ट का वर्गीकरण
5.5. उत्तराखण्ड में विभिन्न सामाजिक समस्याऐं
5.5.1. पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित समस्याऐं
5.5.1.1 पारिवारिक विघटन
5.5.1.2 पारिवारिक तनाव
5.5.1.3 परिवार परित्याग
5.5.1.4 संयुक्त परिवार का विघटन
5.5.2. वैयक्तिक जीवन से सम्बन्धित समस्याऐं
5.5.2.1 अपराध
5.5.2.2 मद्यपान तथा मादक–द्रव्य–व्यसन
5.5.2.3 वेश्यावृत्ति
5.5.2.4 यौन – विचलन और एड्स की समस्या
5.5.3 सामुदायिक जीवन से सम्बन्धित समस्याऐं
5.5.3.1 जातिवाद
5.5.3.2 क्षेत्रवाद
5.5.3.3 आतंकवाद
5.5.3.4 लोक जीवन में भ्रष्टाचार
5.5.3.5 निर्धनता
5.6 सारांश
5.7 तकनीकी शब्दावली
5.8 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर
5.9 संदर्भ ग्रंथ सूची
5.10 सहायक/उपयोगी
5.11 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

सामाजिक समस्या उन परिस्थितियों अथवा दशाओं का नाम है जिन्हें समाज हानिकारक मानता है तथा जिनमें सुधार की समाज को आवश्यकता होती है। सामाजिक समस्या का तात्पर्य उन परिस्थितियों अथवा दशाओं से है जिन्हें एक समुदाय के अधिकांश व्यक्तियों के द्वारा अपने सुस्थापित नियमों, सामाजिक मूल्यों तथा समूह–कल्याण के विरूद्ध माना जाता है। जब समाज में समस्याऐं वैयक्तिक अभियोजन में गम्भीर बाधा उत्पन्न करके समाज के सन्तुलन को बिगाड़ देती हैं तभी उसको हम सामाजिक विघटन कहते हैं।

कुछ समस्याऐं ऐसी होती हैं जिन्हें स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है और कुछ ऐसी भी होती हैं जिनके लिए कोई निश्चित माप नहीं होता है। अपराध, तलाक, वेश्यावृत्ति, अवैध यौन–सम्बन्ध, अस्पृश्यता, सम्प्रदायवाद, भ्रष्टाचार, बंधुआ–श्रमिक आदि ऐसी समस्याऐं हैं। शारीरिक रोग तथा विकलांगता आदि जैविकीय समस्याओं का उदाहरण हैं। मानसिक दुर्बलता, मद्यपान, नशीले पदार्थों का सेवन, भिक्षावृत्ति, वेश्यावृत्ति, आत्महत्या तथा वैयक्तिक अनुकूलन में कमी जैसी समस्याऐं जैविक–मनोवैज्ञानिक समस्याऐं होती हैं। निर्धनता, बेरोजगारी, बाल–श्रम, आर्थिक शोषण आदि कुछ प्रमुख आर्थिक समस्याऐं हैं।

विभिन्न क्षेत्रों की विभिन्न प्रकार की समस्याऐं होती हैं। प्रत्येक समूह तथा समाज में अपनी–अपनी समस्याऐं होती हैं इनका प्रभाव विशेष समूहों तक ही सीमित रहता है, अनेक समस्याऐं एक बड़ी सीमा तक स्थानीय दशाओं से प्रभावित होती हैं। जातिवाद, भ्रष्टाचार, अपराध, श्वेतवसन–अपराध, बेरोजगारी, जनसंख्या वृद्धि, आतंकवाद तथा निर्धनता आदि इसी तरह की समस्याएँ राष्ट्रीय हैं।इस वैश्वीकरण के युग में देशों में अनेक अन्तर्राष्ट्रीय दशाऐं भी हमारे राष्ट्रीय एवं सामाजिक जीवन को प्रभावित करती हैं, बहुत सी समस्याऐं ऐसी हैं जिसका विस्तार अधिक या कम मात्रा में पूरे विश्व में देखने को मिलता है। यह आर्थिक और सामाजिक दोनों जीवन को प्रभावित करता है, युद्ध, आतंकवाद, मादक पदार्थों का सेवन, अन्तर–पीढी संघर्ष, युवा–सक्रियता आदि समस्याऐं लगभग सभी देशों की सामान्य समस्याऐं हैं।

5.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य उत्तराखण्ड की विभिन्न सामाजिक समस्याओं का परिचय कराना हैं। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप निम्नलिखित जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

- सामाजिक समस्या का अर्थ एवं विशेषताऐं
- सामाजिक समस्याओं के प्रकार एवं वर्गीकरण
- उत्तराखण्ड में विभिन्न सामाजिक समस्याऐं

5.3 सामाजिक समस्या : अर्थ एवं विशेषताएँ

सामाजिक समस्या वह अवस्था हैं जबकि एक समाज–विशेष के सांस्कृतिक मापदण्ड के अनुसार सामाजिक जीवन का कोई पक्ष या समाज के बहुतेरे सदस्यों का कोई व्यवहार अपने लोकप्रिय या स्वस्थ स्वरूप को खोकर विकृत या अवांछनीय रूप धारण कर लेता है और उस रूप में वह समाज के लिए अहितकर परिणामों को उत्पन्न करता है। सामाजिक समस्या का सम्बन्ध किसी व्यक्ति विशेष के व्यवहार से नहीं अपितु समाज के बहुत से सदस्यों के किसी दुर्त्यवहार, कठिनाई, बुरे या अवांछनीय क्रियाकलाप से होता है, कौन सा व्यवहार बुरा या अवांछनीय है, इसका अन्तिम निर्णय समाज में प्रचलित सांस्कृतिक मापदण्ड जैसे मूल्य, आदर्श, नैतिक, नियम आदि के द्वारा ही होता है, इसलिए यह जरूरी नहीं कि एक

समाज की कोई समस्या दूसरे किसी समाज में भी समस्या कहलाएगी,, प्रत्येक समाज की अपनी–अपनी समस्याऐं होती हैं परन्तु अधिकतर समाजों में अनेक समान प्रकार की समस्याऐं भी पाई जाती हैं, प्रत्येक समाज का ढाँचा कुछ ऐसे नियमों और मूल्यों पर आधारित होता है जिनकी सहायता से उस समाज में रहने वाले व्यक्ति एक–दूसरे से अनुकूलन कर सकें और अपनी विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा कर सकें, कभी–कभी सामाजिक परिवर्तन की दशा में एक समाज के सदस्यों की आवश्यकताएँ तथा आकांक्षाऐं तो बदल जाती हैं लेकिन सामाजिक ढाँचे में इसके अनुरूप परिर्वतन नहीं हो पाता। इसके फलस्वरूप सामाजिक ढाँचे मे कुछ ऐसे अवरोध और तनाव पैदा हो जाते हैं जो सम्पूर्ण सामाजिक सन्तुलन को बिगाड़ देते हैं। संक्षेप में, सामाजिक अनुकूलन में बाधा डालने वाली दशाओं अथवा सामाजिक जीवन को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करने वाली दशाओं को ही हम सामाजिक समस्याऐं कहते हैं। सामाजिक समस्या कोई वैयक्तिक घटना नहीं है, इसमें सामूहिकता का तत्व विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। प्राकृतिक समस्याओं को हम सामाजिक समस्या नहीं कह सकते क्योंकि यह सामाजिक ढाँचे से सम्बन्धित नहीं हैं,जैसे– बाढ, भूकम्प, महामारी, सूखा इत्यादि। इसके विपरीत अपराध, भिक्षावृति, मद्यपान, छुआछूत अथवा वेश्यावृत्ति का सम्बन्ध एक विशेष सामाजिक संरचना से होने के कारण इन्हें हम सामाजिक समस्या के अर्न्तगत रखेंगें। विभिन्न विद्वानों ने इसी दृष्टिकोण से सामाजिक समस्या के अर्थ को परिभाषित किया है। **फुलर और मेयर्स के अनुसार**, *''सामाजिक समस्या वह स्थिति है जिसे अधिकांश व्यक्तियों के द्वारा उन सामाजिक आदर्श नियमों के विचलन के रूप में देखा जाता है जिन्हें वे अपने लिए आवश्यक मानते हैं।''* **लारेन्स फ्रेन्क ने बताया** कि, *''सामाजिक समस्या काफी अधिक संख्यक लोगों की कोई ऐसी कठिनाई या दुव्यवहार है जिसे कि हम दूर करना या सुधारना चाहते हैं।''* **सैमुएल किंग के शब्दों में**, ''सामाजिक समस्या उन परिस्थितियों अथवा दशाओं का नाम है जिन्हें समाज हानिकारक मानता है तथा जिनमें सुधार की समाज को आवश्यकता होती है।'' **पॉल मर्टन के अनुसार**, *''सामाजिक समस्या वह दशा है जो अनुचित रूप से एक बड़ी संख्या में व्यक्तियों के जीवन को प्रभावित करती है तथा जिसके बारे में यह समझा जाता है कि सामूहिक प्रत्यनों के द्वारा इसमें सुधार किया जा सके।''* **ग्रीन** ने सामाजिक समस्या को सामाजिक मूल्यों तथा नैतिक नियमों के उल्लंधन के रूप में स्पष्ट किया है। *''सामाजिक समस्या ऐसी दशाओं की समग्रता है जिन्हें नैतिक आधार पर समाज में अधिकांश व्यक्तियों द्वारा अनुचित समझा जाता है।''*

इन सभी परिभाषाओं से स्पष्ट है कि सामाजिक समस्या का तात्पर्य उन परिस्थितियों अथवा दशाओं से है जिन्हें एक समुदाय के अधिकांश व्यक्तियों के द्वारा अपने सुस्थापित नियमों, सामाजिक मूल्यों तथा समूह–कल्याण के विरूद्ध माना जाता है। जब समाज में समस्याऐं वैयक्तिक अभियोजन में गम्भीर बाधा उत्पन्न करके समाज के सन्तुलन को बिगाड़ देती हैं तभी उसको हम सामाजिक विघटन कहते हैं।

सामाजिक समस्या की उपर्युक्त प्रकृति के आधार पर इसकी प्रमुख विशेषताऐं निम्नांकित रूप से समझ सकते हैं–

1) सामाजिक समस्या की प्रकृति सामूहिक होती है। एक या एक से अधिक व्यक्तियों के पास्परिक अभियोजन में उत्पन्न होने वाली बाधा को सामाजिक समस्या नहीं कह सकते।

2) सामाजिक समस्या वह स्थिति है जिसे दूर करने में भलाई है।

3) सामाजिक समस्या एक ऐसी स्थिति है जो समुदाय में बहुत से व्यक्तियों के विचलित व्यवहारों अथवा समाज के आदर्श नियमों के उल्लंधन के रूप मे देखने को मिलती है।

4) सामाजिक समस्या की अवधारणा का सम्बन्ध समाज के मूल्यों से है। मूल्यों में परिवर्तन होने के साथ सामाजिक समस्या के रूप में भी परिर्वतन हो जाता है। जिस प्रकार 'बाल विवाह' को पहले एक सामाजिक समस्या नहीं मानते थे परन्तु वर्तमान समय में मूल्य बदल जाने के कारण अब इसे उचित नहीं समझा जाता है।

5) प्राकृतिक अथवा जैविकीय क्षेत्र की समस्याओं को सामाजिक समस्या नहीं कह सकते क्योंकि सामाजिक समस्याऐं किसी विशेष सामाजिक संरचना से ही सम्बन्धित होती हैं।

6) सामाजिक समस्या की अवधारणा समाज कल्याण की धारणा से सम्बन्धित है। जागरूकता, नीति –निधारण तथा सुधार सामाजिक समस्या के वे चरण हैं जिनके द्वारा किसी समुदाय में इनका निवारण सम्भव होता है। कोई समाज जब कल्याण के प्रति सचेत होता है,तभी कुछ व्यवहारों को समस्या के रूप में देख सकते हैं अर्थात् उसका हल निकाल सकते हैं।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

1. सामाजिक समस्या का क्या अर्थ है ?
2. सामाजिक समस्या की प्रमुख विशेषताऐं बताए।

5.4 सामाजिक समस्याओं के प्रकार एवं वर्गीकरण

क्षेत्र के आधार पर सामाजिक समस्याओं की प्रकृति स्थानीय से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय तक हो सकती है। कुछ समस्याऐं ऐसी होती हैं जिन्हें स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है और कुछ ऐसी भी होती हैं जिनके लिए कोई निश्चित माप नहीं होता है। कुछ समस्याऐं अस्थाई होती हैं जबकि अनेक समस्याऐं एक लम्बी अवधि तक सामाजिक जीवन को प्रभावित करती रहती हैं। **गिलिन तथा डिटमर** ने कहा है कि जहाँ वैयक्तिक जीवन से सम्बन्धित समस्याऐं कम गम्भीर होती हैं तथा सामान्य उपचार के द्वारा उनका समाधान किया जा सकता है, वहीं सामुदायिक और राष्ट्रीय जीवन से सम्बन्धित समस्याऐं एक लम्बे समय के लिए सम्पूर्ण समाज की प्रगति में बाधक बनी रहती हैं।

5.4.1 हैरल्ड फैल्प्स का वर्गीकरण

फैल्प्स के अनुसार प्रत्येक समाज में सामाजिक व्यवस्था तथा व्यक्तिगत व्यवहार से सम्बन्धित कुछ इस तरह के नियम बनाए जाते हैं जिनकी सहायता से व्यक्ति अपने समूह से अनुकूलन कर सके एवं समाज प्रगति के रास्ते पर आगे बढ़ सके। जब भी इन नियमों का प्रभाव कम होने लगता है तो समाज में अनेक प्रकार की असमानताऐं और कठिनाई पैदा होने लगती हैं। यही असमानताऐं विभिन्न प्रकार की सामाजिक समस्याओं को जन्म देती हैं। इसी दृष्टिकोण से फैल्प्स ने सामाजिक समस्याओं को चार प्रमुख भागों में विभाजित किया है।

(1) **सांस्कृतिक मूल्यों से उत्पन्न समस्याऐं** – कुछ गंभीर समस्याऐं समाज में उत्पन्न हो जाती हैं जो मूल्यों के प्रभाव को कम कर देती हैं और मूल्यों में भ्रम पैदा कर देती हैं, ऐसी समस्याऐं वैयक्तिक जीवन से लेकर पारिवारिक, सामुदायिक तथा सामाजिक जीवन को विघटित कर देती हैं। अपराध, तलाक, वैश्यावृत्ति, अवैध यौन–सम्बन्ध, अस्पृश्यता, सम्प्रदायवाद, भ्रष्टाचार, बंधुआ–श्रमिक आदि ऐसी समस्याऐं हैं।

(2) **जैविकीय समस्याऐं** – यह वे समस्याऐं है जो शारीरिक दोषों से सम्बन्धित होने के कारण व्यक्ति के सामाजीकरण में बाधाऐं पैदा करती हैं। शारीरिक रोग ,विकलांगता आदि जैविकीय समस्याओं के

उदाहरण हैं। ये वैयक्तिक जीवन से सम्बन्धित तो होती ही है परन्तु इसका असर समाज के विभिन्न अंशों में अलग – अलग तरह से प्रभावित होता है।

(3) **जैविक–मनोवैज्ञानिक समस्याऐं** – यह मनोवैज्ञानिक कारणों से उत्पन्न होती हैं तथा व्यक्तित्व सम्बन्धी दोष उत्पन्न करके सामाजिक विकास में बाधक बन जाती हैं। मानसिक दुर्बलता, मद्यपान, नशीले पदार्थों का सेवन, भिक्षावृत्ति, वेश्यावृत्ति, आत्महत्या तथा वैयक्तिक अनुकूलन में कमी जैसी समस्याऐं इससे सम्बन्धित हैं। ये समस्याऐं समाज की प्रगति एवं विकास को प्रभावित करती हैं।

(4) **आर्थिक समस्याऐं** – बहुत सारी समस्याऐं हमारे आर्थिक जीवन में उत्पन्न होती हैं, इसका सम्बन्ध आर्थिक साधनों के अभाव से है। इस प्रकार निर्धनता, बेरोजगारी, बाल–श्रम, आर्थिक शोषण आदि कुछ प्रमुख आर्थिक समस्याऐं हैं।

5.4.2 सैमुएक किंग का वर्गीकरण

इन्होंने सामाजिक समस्याओं को दो भागों में विभाजित किया है, यह निम्न प्रकार से हैं –

(1) **स्पष्ट समस्याऐं** – समाज में कुछ समस्याऐं ऐसी होती हैं जिन्हें हम स्पष्ट रूप से देख सकते हैं और माप भी की जा सकती है, निर्धनता, अपराध, जनसंख्या–वृद्धि, बेकारी आदि ऐसी समस्याऐं हैं। आर्थिक समस्याओं को विभिन्न तरह से देखा जा सकता है, अर्थात् इनकी माप भी की जा सकती है।

(2) **अप्रकट समस्याऐं** – अप्रकट समस्याऐं वे समस्याऐं होती हैं जो छिपे रूप से विद्यमान होती हैं और इनकी गम्भीरता और दुष्परिणामों की कोई निश्चित माप करना बहुत कठिन होता है। जैसे – पारिवारिक तनाव, टूटे परिवार, जातिवाद, प्रजातिवाद, श्वेतवसन–अपराध, भ्रष्टाचार, क्षेत्रवाद तथा माद्रक द्रव्य व्यसन आदि इसी तरह की समस्याऐं है। यह समस्याऐं समाज को धीरे – धीरे खोखला कर देती हैं।

5.4.3 के0 डी0 भट्ट का वर्गीकरण

समाज मे कई प्रकार की समस्याओं का अध्ययन करते समय, भट्ट ने इन सामाजिक समस्याओं को चार भागों में विभाजित किया है।

(1) **क्षेत्रीय समस्याऐं** – विभिन्न क्षेत्रों की विभिन्न प्रकार की समस्याऐं होती हैं। जिन क्षेत्रों में लोग बदलती हुई दशाओं से अनुकूलन नहीं कर पाते अथवा कुछ विशेष परिस्थतियों में एक दूसरे को सन्देह की निगाह से देखने लगते हैं वहाँ अनेक क्षेत्रीय समस्याऐं उत्पन्न हो जाती हैं, जैसे – क्षेत्रवाद, दहेज प्रथा, परम्परावादिता तथा सम्प्रदायवाद इस वर्ग के उदाहरण हैं।

(2) **स्थानीय समस्याऐं** – प्रत्येक समूह तथा समाज में अपनी–अपनी समस्याऐं होती हैं इनका प्रभाव विशेष समूहों तक ही सीमित रहता है, अनेक समस्याऐं एक बड़ी सीमा तक स्थानीय दशाओं से प्रभावित होती हैं। उदाहरणार्थ – जाति–संघर्ष, धार्मिक–अन्धविश्वासों से उत्पन्न तथा पारिवारिक तनाव भी इसके अन्तर्गत आते हैं।

(3) **राष्ट्रीय समस्याऐं** – अनेक समस्याओं का फैलाव पूरे राष्ट्र में देखने को मिलता है। ऐसी समस्याऐं सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन में सबसे अधिक गम्भीर होती हैं। यह समस्याऐं – जातिवाद, भ्रष्टाचार, अपराध, श्वेतवसन–अपराध, बेरोजगारी, जनसंख्या–वृद्धि, आतंकवाद तथा निर्धनता आदि इसी तरह की समस्याएँ हैं।

(4) **अन्तर्राष्ट्रीय समस्याऐं** – यह युग वैश्वीकरण का युग है। अनेक अन्तर्राष्ट्रीय दशाऐं हमारे राष्ट्रीय एवं सामाजिक जीवन को प्रभावित करने लगी हैं, बहुत सी समस्याऐं ऐसी हैं जिसका विस्तार अधिक या कम मात्रा में पूरे विश्व में देखने को मिलता है। यह आर्थिक और सामाजिक जीवन को प्रभावित करता है, युद्ध, आतंकवाद, मादक पदार्थो का सेवन, अन्तर–पीढी संघर्ष, युवा–सक्रियता आदि समस्याऐं लगभग सभी देशों की सामान्य समस्या हैं। समाज में अनेक समस्याऐं ऐसी भी पायी जाती हैं जिन्हें हम किसी विशेष वर्ग में सम्मिलित नहीं कर सकते, उदाहरण के लिए, युद्ध, सांस्कृतिक कारणों से भी हो सकता है और आर्थिक कारणों से भी, वर्तमान भारतीय समाज में जातिवाद, दहेज प्रथा, अस्पृश्यता, महिलाओं का शोषण, संयुक्त परिवारों का विघटन, वेश्यावृत्ति, युवा–तनाव, असन्तुलित–औद्योगीकरण और भ्रष्टाचार जैसी समस्याऐं सम्पूर्ण जन–जीवन को विषाक्त कर रहीं हैं। हमारी किसी भी समस्या का रूप चाहे सामाजिक हो, राजनीतिक या धार्मिक अथवा आर्थिक, नियोजित प्रयत्नों के द्वारा इनका समाधान करने के स्थान पर लोग अनेक विश्वासों, धर्म–कर्म की धारणा के द्वारा इनके औचित्य को सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं, यह सबसे बड़ा दुर्भाग्य है। यहाँ की समस्याऐं केवल धार्मिक, सामाजिक ,आर्थिक अथवा राजनीतिक ही नहीं हैं बल्कि एक ही समस्या पर धर्म, सामाजिक व्यवस्था और राजनीतिक असन्तुलन का संयुक्त प्रभाव देखने को मिलता है।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

1. हैरल्ड फैल्प्स का सामाजिक समस्याओं का वर्गीकरण क्या है ?

5.5.0 उत्तराखण्ड में विभिन्न सामाजिक समस्याऐं

सामाजिक समस्याओं का अध्ययन स्वयं में एक जटिल विषय है। सामाजिक समस्या एक विचलित व्यवहार है जो समाज द्वारा अमान्य होता है और समाज को इस सीमा तक प्रभावित करता है कि उसके प्रति समुदाय की सहनशीलता की सीमा समाप्त हो जाती है, सामाजिक समस्या का तात्पर्य उन परिस्थितियों अथवा दशाओं से है जिन्हें एक समुदाय के अधिकांश व्यक्तियों के द्वारा अपने सुस्थापित नियमों, सामाजिक मूल्यों तथा समूह कल्याण के विरूद्ध माना जाता है और इसलिए इनका निराकरण यद्यपि सामाजिक सन्तुलन में उत्पन्न होने वाली बाधाऐं हैं, लेकिन फिर भी कोई समाज ऐसा नहीं होता जिसमें समस्याऐं बिल्कुल भी न पायी जाती हों, उत्तराखण्ड में भी कई सामाजिक समस्याऐं हैं, जो भारत के अन्य राज्यों में भी पाई जाती हैं। अन्तर केवल समस्याओं की मात्रा और गम्भीरता का होता है। प्रत्येक समुदाय अपनी समस्याओं का व्यावहारिक समाधान करने के लिए व्यापक स्तर पर प्रयत्न करता है। क्योंकि उत्तराखण्ड को एक नए राज्य के रूप में केवल ग्यारह वर्ष हुए है, तो इसकी अपनी राजनीतिक व सामाजिक समस्याऐं हैं। उत्तराखण्ड के दो मण्डल है – कुमाँऊ मण्डल एवं गढ़वाल मण्डल, इन दोनों मण्डलों की अपनी – अपनी सामाजिक और भौगोलिक समस्याऐं हैं । पहाड़ी और मैदानी क्षेत्रों से बना हुआ उत्तराखण्ड 'देव–भूमि' के नाम से देश भर में प्रसिद्ध है। उत्तराखण्ड में पायी जाने वाली समस्याओं को निम्नलिखित विवेचना से हम समझ सकते हैं और उन समस्याओं के हल के लिए अपने कदम वैयक्तिक या सामूहिक तौर पर बढ़ा सकते हैं। हम भारतीय हैं अर्थात् अपने समाज, अपने देश की उन्नति के लिए, एक सुखमय जीवन जीने के लिए, यह हमारा कर्तव्य है कि हम इसके निर्माण में अपना बहुमूल्य योगदान दें।

5.5.1.0 पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित समस्याऐं

उत्तराखण्ड की अनेक सामाजिक समस्याओं को हम विभाजित कर सकते हैं, जिससे इनको समझने में सरलता होगी।

5.5.1.1 पारिवारिक विघटन

पारिवारिक विघटन वह अवस्था है जिसमें परिवार के सदस्यों में हितों, उद्देश्यों और व्यक्तिगत आकांक्षाओं की एकता के अभाव में उनमें प्रेम, सहयोगिता तथा आत्म–त्याग की भावनाऐं नहीं हैं जिसके कारण वह परिवार अपने प्रमुख कार्यों को करने में असफल है और पारिवारिक जीवन में सुख नहीं है। एक परिवार रक्त सम्बन्ध, विवाह या गोद लेने के सम्बन्धों से बंधा हुआ पति–पत्नी, भाई–बहन, माता–पिता, लड़का–लडकी आदि का धनिष्ठ समूह होता है। इस समूह के सदस्य पारिवारिक स्वार्थ एवं कर्तव्य–बोध के आधार पर समान होने की चेतना या भवना रखते हैं, तभी पारिवारिक व्यवस्था या संगठन बना रहता है। उत्तराखण्ड में ग्रामीण क्षेत्र की संख्या नगरीय क्षेत्र से अधिक है और आज भी यहाँ रूढ़िवादिता पायी जाती है, एक साधारण उदाहरण यह है कि यदि कोई हिन्दू लड़का अन्य जाति या धर्म में विवाह कर ले तो सम्पूर्ण पारिवारिक जीवन पर असर होता है। परिवार के सदस्यों का स्वभाव अलग हो जाता है, और सांस्कृतिक भिन्नताओं के आधार पर परिवार के सदस्यों तथा बहू के बीच संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। इस स्थिति की संभावना तब अधिक होती है जब लड़का माता–पिता की इच्छा के विपरीत विवाह करे। वर्तमान युग में इस परिस्थिति में धीरे–धीरे बदलाव आ रहा है। अब लोगों की सोच कई कारकों से प्रभावित होती है और कट्टर रूढ़ीवादिता में कमी आयी है फिर भी परिवार विघटन एक महत्वपूर्ण समस्या है। आन्तरिक रूप में भी यदि परिवार के सदस्य एक दूसरे के साथ नहीं तो, यह भी पारिवारिक विघटन है। आधुनिक युग में सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियाँ पर्याप्त रूप में बदल गई हैं और कुछ ऐसे कारक क्रियाशील हैं जिनके कारण आज का परिवार विघटित हो रहा है।

5.5.1.2 पारिवारिक तनाव

पारिवारिक तनाव पारिवारिक विघटन का प्रमुख कारण है। **इलियट तथा मैरिल** के अनुसार ''पारिवारिक तनाव से हमारा तात्पर्य किसी भी ऐसी संघर्षात्मक स्थिति से है जो इसके सदस्यों, विशिष्ट रूप से पति–पत्नी के बीच विरोध अभिवृत्तियों को उत्पन्न करती हैं।'' पारिवारिक तनाव से तात्पर्य पति–पत्नी के आपसी मधुर सम्बन्धों में तनाव से है। पारिवारिक तनाव ऐसी स्थिति है जब पति–पत्नी में किसी विषय को लेकर आपस में विरोध होता है। उत्तराखण्ड में भी कई परिवारों में पारिवारिक तनाव होता है, इसके कारण व्यक्ति का स्वभाव, धार्मिक विचारों में भिन्नता, यौन–असन्तुष्टि, मानसिक बिमारी, निर्धनता, व्यापार में घाटा, अस्थायी व्यवसाय की अधिकता,योग्यतानुसार रोजगार न मिलना, महत्वाकांक्षा, सांस्कृतिक–पृष्ठभूमि में अन्तर इत्यादि।

5.5.1.3 परिवार परित्याग

उत्तराखण्ड में ही नहीं परन्तु पूरे विश्व के समस्त परिवारों में पूर्ण सामंजस्य नहीं पाया जाता है। सभी परिवारों मे कुछ न कुछ कमियाँ तो होती ही हैं। इन कमियों को दूर करने के लिए पति–पत्नी को एक दूसरे को समझने का प्रयास करना चाहिए, जो पति–पत्नी एक दूसरे की भावनाओं को समझते हैं, एक–दूसरे के साथ सहयोग एवं सामंजस्य से रहते हैं, उनमें पारिवारिक तनाव कम होता है, परित्याग में पति–पत्नी में से कोई एक परिवार को छोड़कर दूसरी जगह चला जाता है। इसके प्रमुख कारण शिक्षा की कमी, आर्थिक कमी, असन्तुष्ट सम्बन्ध, नैतिक पतन, तलाक से बचाव, कानूनों की जानकारी न होना आदि है। परित्याग के पश्चात् सबसे अधिक मानसिक पीढ़ा बच्चों को होती है, कुमाँऊ और गढ़वाल क्षेत्रों में अधिकांशतः महिला को ही अपने मायके जाना होता है। एक स्त्री के सम्मान को इससे बहुत ठेस पहुँचती है। परित्याग से विभिन्न सामाजिक समस्याओं का उदय होता है। जैसे बाल अपराधों में वृद्धि, बच्चों में आवारापन आदि।

5.5.1.4 संयुक्त परिवार का विघटन

भारतीय समाज में एक आधारभूत संस्था संयुक्त परिवार प्रणाली थी, इस परिवार प्रणाली का आजकल विघटन होते जा रहा है। संयुक्त परिवार में सम्मिलित–सम्पत्ति और सम्मिलित–निवास होता है, पारस्परिक कर्त्तव्य के सम्बन्ध में समानता होती है। संयुक्त परिवार में रहते हुए पहले बच्चे उदारता, सहिष्णुता, सेवा, सहयोगिता, प्रेम, सद्भाव, आज्ञाकारिता और हिल–मिलकर रहने की कला का पाठ पढ़ते हैं और परिवार में सबके लाभार्थ अपने स्वार्थों की बलि देना सीखते हैं। पलायन के कारण एक पुरूष अपने गाँव को छोड़कर शहर जाता है, अपने ही राज्य में या राज्य से बाहर, वह अपनी पत्नी और बच्चों को भी अपने साथ ले जाता है और इसका परिणाम संयुक्त परिवार का बिखरना होता है।

5.5.2.0 वैयक्तिक जीवन से सम्बन्धित समस्याऐं

इन समस्याओं को अग्रांकित शीर्षकों के अंतर्गत समझा जा सकता है–

5.5.2.1 अपराध

निर्धनता, बेरोजगारी तथा अपराध व बाल–अपराध एक दूसरे से आन्तरिक रूप में सम्बन्धित हैं। **करवाल** ने अपराध को कानून का उल्लंघन माना है, तो **सेथना** ने कहा है, '' अपराध कोई कार्य या दोष है जो देश में उस समय प्रचलित कानून के अन्तर्गत दण्डनीय है।'' अपराध से किसी न किसी प्रकार की हानि पहुँचती है। कोई भी कार्य तब तक अपराध नहीं माना जाएगा जब तक वह उस देश के कानून द्वारा निषिद्ध नहीं है। उत्तराखण्ड में अनेक प्रकार के विश्वास तथा प्रथाऐं देखने को मिलती हैं। इन प्रथाओं तथा विश्वासों के कारण भी अपराधी व्यवहारों को प्रोत्साहन मिलता है। बाल–विवाह, चोरी, हत्या करना, यौन–अपराध, डकैती आदि की संख्या बढ़ रही है, अपराध की भाँति बाल–अपराधों, विशेषकर औद्योगिक केन्द्रों में भी तेजी से वृद्धि हो रही है।

औद्योगीकरण व नगरीकरण के साथ उत्तराखण्ड में भी श्वेतवसन अपराधियों की संख्या बढ़ गई है। उद्योगपति वर्ग में अनेक व्यक्ति अपराध करते पकड़े गए हैं। व्यापारिक वर्ग के व्यक्ति भी श्वेतवसन अपराधियों या सफेदपोश अपराधियों के रूप में पाए जाते हैं। वस्तुओं में मिलावट करके जनता को अत्यन्त हानि पहुँचायी जाती है। आज वकील, डॉक्टर, नर्स, शिक्षा संस्थाओं के प्रबन्धक, राजनैतिक नेता तथा सरकारी अधिकरी भी धूस लेकर या आर्थिक शोषण करते समय पकड़े गए हैं।

5.5.2.2 मद्यपान तथा मादक–द्रव्य–व्यसन

उत्तराखण्ड में मद्यपान एक बहुत बड़ी समस्या है। इससे वैयक्तिक विघटन ही नहीं परन्तु यह समाज को भी प्रभावित करता है। एक शराबी व्यक्ति किसी भी साधन से शराब प्राप्त करने का प्रयत्न करता है और उसके दैनिक क्रियाकलाप में शराब सम्मिलित हो जाती है जिससे व्यक्ति का स्वास्थ गिरता है, मानसिक शांति व स्थिरता जाती रहती है, पारिवारिक जीवन विषमय हो जाता है और सामाजिक जीवन में अनेक समस्याओं का उद्भव होता है। **मित्रा** के अनुसार, ''मद्यपान वह अवस्था है जबकि व्यक्ति के लिए शराब पीना, इतना आकर्षक बन जाता है कि वह व्यक्ति बिना सोचे–समझे ही पीता रहता है कि उसके मस्तिष्क, शरीर, परिवार तथा समाज पर इसका कितना बुरा प्रभाव पड़ेगा। कठिनाई की बात यह है कि यदि एक व्यक्ति मित्रता, मजाक, फैशन या अन्य किसी दुःख–दर्द के कारण शराब पीना शुरू कर देता है तो अधिकतर धीरे–धीरे उसकी आदत पड़ती जाती है और बाद में समाज को हानि होती है। मद्यपान को व्यक्तिगत, पारिवारिक, आर्थिक, सामाजिक या नैतिक किसी भी दृष्टिकोण से उचित नहीं कहा

जा सकता है। इससे न केवल व्यक्तिगत जीवन के पतन की राह बनती है बल्कि परिवार तथा समाज के जीवन को भी खतरा उत्पन्न होता है।

नशाखोरी के अन्य साधन हो सकते हैं, जैसे गाँजा, चरस, भाँग, अफीम, एल0 एस0 डी0, मॉरफीन आदि। नशाखोरी से अनेक सामाजिक, आर्थिक तथा वैयक्तिक हानियाँ होती हैं और इसी कारण राज्य को नशा निषेध करना पड़ता है। मद्यपान तथा मादक पदार्थ की बुराई की रोकथाम के लिए सामाजिक जागरूकता की आवश्यकता है।

5.5.2.3 वेश्यावृत्ति

वेश्यावृत्ति एक गंभीर समस्या है जो नैतिक जीवन पर निरन्तर आघात करती रहती है, सन् 1965 से पहले तक वेश्यावृत्ति खुले तौर पर और आम सड़क और बाजारों में खूब प्रचलित था, आज भी एक 'सैक्स वर्कर' के नाम से वेश्यावृत्ति प्रचलित है। वेश्याओं के साथ शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करने वाले लोग शीघ्र ही अनेक प्रकार के गुप्त रोगों के शिकार हो जाते हैं, और गरीबी के कारण अपना इलाज भी नहीं करवा पाते। उत्तराखण्ड में भी एड्स के मरीज हैं जिन्हें उसके दुष्परिणाम झेलने पड़ रहे हैं तथा परिवार पर भी इसका असर हो रहा है। ऐसे रोगों का हस्तान्तरण पत्नी को ही नहीं बल्कि बच्चों को भी हो जाता है।

5.5.2.4 यौन – विचलन और एड्स की समस्या

यौन–पथभ्रष्टता के प्रमुख स्वरूपों को क्रमबद्ध रूप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है –

1.पूर्व–वैवाहिक,उत्तर–वैवाहिक तथा अतिरिक्त–वैवाहिक यौन पथभ्रष्टता,
2.समलिंगकामुकता
3.बलात्कार
4.अनब्याहा मातृत्व
5.वेश्यावृत्ति

एड्स का कारण केवल एक से अधिक लोगों के साथ असुरक्षित यौन–सम्बन्ध रखने से ही नहीं बल्कि इसके अनेक कारण हो सकते हैं, जैसे : दूषित इंजेक्शन का प्रयोग करना, नशे की आदत होना खासतौर से जो इंजेक्शन के द्वारा लिए जाते हैं,रोगग्रस्त पुरूष या स्त्री से शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करना अथवा रोगग्रस्त माँ से बच्चे को।

5.5.3 सामुदायिक जीवन से सम्बन्धित समस्याऐं

इन समस्याओं को अग्रांकित शीर्षकों के अंतर्गत समझा जा सकता है–

5.5.3.1 जातिवाद

क्योंकि हिन्दू समाज छोटे–छोटे टुकड़ों में विभाजित हुआ है और साथ ही उनमें ऊँच–नीच का एक संस्तरण भी कर दिया गया इसलिए जातिवाद और अस्पृश्यता की भावना उत्तराखण्ड में भी पाई जाती है, जातिवाद एक जाति के हित के सम्मुख अन्य जातियों के सामान्य हितों की अवहेलना और प्रायः हनन करने की प्रवृत्ति है। जातिवाद के विकास के कई कारक है, जैसेः विवाह सम्बन्धी प्रतिबन्ध, प्रचार व यातायात के साधनों में वृद्धि, नगरीकरण, अपनी जाति की प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए, औद्योगिक विकास संस्कृतिकरण, विभिन्न जातीय संगठन आदि।

जतिवाद के परिणामः जातिवाद, प्रजातन्त्र के लिए घातक है, नैतिक पतन, औद्योगिक कुशलता में बाधा, गतिशीलता में बाधक, विभिन्न समस्याओं का उदय तथा सामाजिक तनाव। राष्ट्र के विकास एवं सन्तुलित सामाजिक विकास के लिए जातिवाद की भावना निश्चय ही बाधक है। यह भावना व्यक्ति–व्यक्ति के बीच दूरी बढ़ाती है और अपनी ही जाति के सदस्यों के हितों को सर्वोपरि मानती है। आज विभिन्न जातियाँ मिलकर भी अपना संगठन बना रही हैं और राजनैतिक एवं आर्थिक लाभ प्राप्त करने के लिए इनका प्रयोग कर रही हैं।

5.5.3.2 क्षेत्रवाद

क्षेत्रवाद या क्षेत्रीयता एक क्षेत्र–विशेष में निवास करने वाले लोगों के अपने क्षेत्र के प्रति वह विशेष लगाव व अपने (अपनेपन) की भावना है जिसे कि कुछ सामान्य आदर्श, व्यवहार, विचार तथा विश्वास के रूप में अभिव्यक्त किया जाता है। बहुधा भौगोलिक कारक क्षेत्रीयता के विकास का एक अत्यन्त प्रभावपूर्ण कारक बन जाता है। भौगोलिक कारकों की भाँति ऐतिहासिक कारक भी क्षेत्रीयता के विकास में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। अनेक राजनैतिक कारक भी क्षेत्रीयता के विकास में अपना योगदान देते हैं। राजनैतिक संगठन या पार्टियाँ ऐसी हैं जो कि क्षेत्रीयता को भड़काकर लोकप्रिय होने का प्रयत्न करती हैं। प्रादेशिक भाषा के बोलने वालों को अपनी भाषा के प्रति अत्यधिक संवेगात्मक लगाव होता है जिसके फलस्वरूप वे यह मान बैठते हैं कि उनकी ही भाषा की शैली, शब्दावली, साहित्यिक समृद्धि तथा गहनता अन्य सभी भाषाओं से कहीं अधिक आकर्षक व श्रेष्ठ है। क्षेत्रीयता के कई दुष्परिणाम भी हैं। विभिन्न क्षेत्रों के बीच आर्थिक, राजनीतिक यहाँ तक कि मनोवैज्ञानिक संघर्ष और तनाव बढ़ सकता है। प्रत्येक क्षेत्र अपने स्वार्थों को सर्वोच्च स्थान दे बैठता है और उसे अपनी ही चिन्ता होती है। भाषा की भी समस्या जटिल हो जाती है तथा राष्ट्रीय एकता को चुनौती देती है।

5.5.3.3 आतंकवाद

वास्तव में, आतंकवाद की कोई सर्वमान्य परिभाषा सम्भव नहीं है क्योंकि अब तक आतंकवाद के अनेक स्वरूप हमारे सामने आए हैं। फिर भी सामान्य रूप में यह कहा जा सकता है कि आतंकवाद, हिंसा की धमकी के उपयोग द्वारा लक्ष्य–प्राप्ति के लिए संघर्ष या लड़ाई की एक विधि व रणनीति है एवं अपने शिकार में भय पैदा करना इसका मुख्य उद्देश्य है, उत्तराखण्ड, नेपाल की सीमा से लगा हुआ है जिसके वजह से माओवाद का भय यहाँ अनेक स्थानों में पाया जाता है। यह मानवीय सभ्यता व मानवोचित गुणों जैसे –दया, सहयोग, सहानुभूति, सुख व शान्ति को नष्ट करता है।

5.5.3.4 लोक जीवन में भ्रष्टाचार

भ्रष्टाचार सदैव किसी स्पष्ट अथवा अस्पष्ट लाभ के लिए कानून तथा समाज के विरोध में किया जाने वाला कार्य है। भ्रष्टाचारी व्यक्ति सहयोग, सेवा–कर्तव्य और नियम–कानून के प्रति निष्ठा की भावना को तिलांजलि देकर केवल अपने ही स्वार्थों की अधिकतम पूर्ति में लगा रहता है। भारतीय सामाजिक जीवन में भ्रष्टाचार की रूपरेखा जानने के लिए हमें अनेक विभिन्न रूपों को भी जानना होगा,यथा–

उद्योगपतियों में भ्रष्टाचार,ठेकेदारों में भ्रष्टाचार,प्रतिष्ठित व्यापारी वर्ग में भ्रष्टाचार,सरकारी अधिकारी एवं भ्रष्टाचार,वकील और भ्रष्टाचार,शैक्षिक संस्थाऐं एवं भ्रष्टाचार,डॉक्टर और भ्रष्टाचार,राजनीति और भ्रष्टाचार।

5.5.3.5 निर्धनता

उत्तराखण्ड के कई इलाके आज भी गरीबी में जूझ रहे हैं। जीवन स्तर अब भी नीचा है। निर्धनता के कारण ही इस क्षेत्र में अधिकतर जनता सन्तुलित भोजन का उपभोग नहीं कर पाती है और न उचित मात्रा में कपड़ों का उपभोग कर पाती है, निर्धनता के कारण स्वास्थ खराब हो जाने पर उसका इलाज भी अच्छे डॉक्टरों से नहीं करा सकते। लोग निर्धनता से छुटकारा पाने के लिए आत्महत्या तक कर बैठते हैं। निर्धनता के सामाजिक, आर्थिक, व्यक्तिगत, राजनैतिक कारण है और जनसंख्या भी एक कारक है।

सामाजिक कारण

- जाति प्रथा
- संयुक्त परिवार प्रणाली
- बिमारी तथा निम्न स्वास्थय स्तर
- अशिक्षा

व्यक्तिगत कारण

- बीमारी
- मानसिक रोग
- बुरी आदतें
- दुर्धटनाऐं

आर्थिक कारण

- खेती की पिछड़ी दशा
- कम पूँजी
- परिवहन व संचार के उन्नत साधनों की कमी
- श्रमिकों की कार्यक्षमता की कमी
- प्राकृतिक साधनों का अपर्याप्त उपयोग

राजनैतिक कारण

- राजनैतिक घुसपैठ
- राजनैतिक अस्थिरता व मँहगे चुनाव
- राजनैतिक भ्रष्टाचार

(i) जनसंख्या वृद्धि की समस्या

जनगणना 2001 के अनुसार उत्तराखण्ड की जनसंख्या 84.89 लाख थी। जिसमें पुरूषों की संख्या 43.26 लाख और महिलाओं की 41.63 लाख, उत्तराखण्ड का लिंगानुपात 964 : 1000 है। भारत में बढ़ती हुई जन्म–दर तथा घटती हुई मृत्यु–दर दोनों ही बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए उत्तरदायी हैं। भारत में अब भी धर्म, प्रथा और परम्परा का बोलबाला है। हिन्दू समाज में पुत्र का महत्व अत्यधिक है। यह माना जाता है कि पुत्र की प्राप्ति के बिना मोक्ष की प्राप्ति सम्भव नहीं है। पुत्र ही तर्पण और पिण्डदान के द्वारा पितरों की आत्मा को शांति प्रदान कर सकता है। साथ ही वंश की निरन्तरता को बनाए रखने के लिए

भी पुत्र उत्पन्न करना आवश्यक माना जाता है। अति जनसंख्या देश की आर्थिक प्रगति में बाधा डालती है तथा बेकारी की समस्या इससे गम्भीर हो जाती है। यह एक वास्तविकता है कि जनसंख्या वृद्धि की विस्फोटक स्थिति राष्ट्र के लिए सबसे बड़ी चुनौती है। इसलिए इस समस्या को सुलझाने के लिए हमें हर सम्भव प्रयास करना चाहिए।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

1. पारिवारिक तनाव से आप क्या समझते है?
2. क्या क्षेत्रवाद एक सामाजिक समस्या है?
3. निर्धनता के कारणों का उल्लेख कीजिए।

5.6 सारांश

उत्तराखण्ड भी भारत के दूसरे प्रदेशों की तरह कई समस्याओं से जूझ रहा है। प्रत्येक समुदाय अपनी समस्याओं का व्यावहारिक समाधान करने के लिए व्यापक स्तर पर प्रयत्न करता है। क्योंकि उत्तराखण्ड को एक नए राज्य के रूप में केवल ग्यारह वर्ष हुए है, तो इसकी अपनी राजनीतिक व सामाजिक समस्याऐं हैं। उत्तराखण्ड के दों मण्डल हैं – कुमाँऊ मण्डल एवं गढ़वाल मण्डल, इन दोनों मण्डलों की अपनी–अपनी सामाजिक और भौगोलिक समस्याऐं हैं। इन्हें हम निम्न प्रकार से विभाजित कर सकते हैं: **पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित समस्याऐ** : पारिवारिक विघटन,पारिवारिक तनाव,परिवार परित्याग, तथा संयुक्त परिवार का विघटन । **वैयक्तिक जीवन से सम्बन्धित समस्याऐं** : अपराध, मद्यपान तथा मादक–द्रव्य–व्यसन, वेश्यावृत्ति, यौन–विचलन और एड्स की समस्या। **सामुदायिक जीवन से सम्बन्धित समस्याऐं** : जातिवाद, क्षेत्रवाद, आतंकवाद , लोक जीवन में भ्रष्टाचार , निर्धनता, जनसंख्या वृद्धि इत्यादि।

यह स्पष्ट है कि सामाजिक समस्या कोई ऐसी सामाजिक अवस्था है जिसको कि आमतौर पर लोग बुरा मानते है और साथ ही उसके विलोपन या निरसन व उपचार के लिए प्रयास भी किए जाते हैं। उपरोक्त समस्याओं के अतिरिक्त उत्तराखण्ड में कई बड़ी–छोटी समस्याऐं पायी जाती हैं। पारिवारिक समस्या हो या सामूहिक समस्या, हर एक नागरिक का कर्तव्य बनता है कि वह अपनी ओर से किसी समस्या को बढ़ावा न दे। प्रत्येक नागरिक का फर्ज़ है कि वह अपने–अपने परिवार, अपने समाज तथा अपने देश की प्रगति में अपना बहुमूल्य योगदान दे और कल्याण कार्य करते चले जाए तभी हम एक सुखमय जीवन की आशा कर सकते हैं और एक व्यवस्थित एवं सन्तुलित समाज की दिशा में अग्रसर हो सकते हैं।

5.7 तकनीकी शब्दावली

1. **जैविकीय–** शरीर संबंधी
2. **पारिवारिक विघटन–** परिवार में टूटन या बिखराव
3. **लोक जीवन–** सार्वजनिक जीवन

5.8 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

इकाई 1.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 1 के उत्तर के लिए देखिए इकाई 1.3

इकाई 1.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 2 के उत्तर के लिए देखिए इकाई 1.3

इकाई 1.4 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 1 के उत्तर के लिए देखिए इकाई 1.4.1

इकाई 1.5 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 1 के उत्तर के लिए देखिए इकाई 1.5.1.2

इकाई 1.5 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 2 के उत्तर के लिए देखिए इकाई 1.5.3.2

इकाई 1.5 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 3 के उत्तर के लिए देखिए इकाई 1.5.3.5

5.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

मुखर्जी,आर तथा अग्रवाल,भरत, *सामाजिक समस्याऐं,* विवेक प्रकाशन, 2003

सचदेवा,डी.आर तथा विद्याभूषण , *एन इन्ट्रोडक्शन टू सोश्योलॉजी,* किताब महल ,इलाहाबाद, 2004

पाण्डेय,बी.डी., *कुमाँऊ का इतिहास,* शक्ति प्रेस,अल्मोड़ा,1937

रतूड़ी,हरिकृष्ण, *गढ़वाल का इतिहास,* भागीरथी प्रकाशन, पौड़ी,वि,1954

5.10 सहायक / उपयोगी ग्रंथावली

मुखर्जी,आर तथा अग्रवाल,भरत, *सामाजिक समस्याऐं,* विवेक प्रकाशन, 2003

सचदेवा,डी.आर तथा विद्याभूषण , *एन इन्ट्रोडक्शन टू सोश्योलॉजी,* किताब महल ,इलाहाबाद, 2004

5.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. सामाजिक समस्या को परिभाषित करते हुए, उसकी विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
2. विद्वानों ने किस प्रकार से सामाजिक समस्याओं को वर्गीकृत किया है?

इकाई–छह : उत्तराखण्ड का धार्मिक जीवन

6.1 प्रस्तावना
6.2 इकाई के उद्देश्य
6.3 धर्म की अवधारणा
6.4 उत्तराखण्ड के धार्मिक मेले
- 6.4.1 कालिका मेला
- 6.4.2 रेणुका देवी का मेला
- 6.4.3 पूर्णागिरी मेला
- 6.4.4 सेल्कु का मेला
- 6.4.5 नन्दाजात तथा नन्दा राजजात
- 6.4.6 माघ मेला
- 6.4.7 हिलजात्रा
- 6.4.8 मौण का मेला
- 6.4.9 नन्दादेवी का मेला
- 6.4.10 शिवरात्रि
- 6.4.11 उत्तरायणी मेला
- 6.4.12 बग्वाल मेला
- 6.4.13 मोस्टामाणू का मेला
- 6.4.14 तार्केश्वर मेला

6.5 उत्तराखण्ड के प्रमुख धार्मिक स्थल
- 6.5.1 हरिद्वार
- 6.5.2 ऋषिकेश
- 6.5.3 केदारनाथ
- 6.5.4 बद्रीनाथ
- 6.5.5 यमुनोत्री
- 6.5.6 गंगोत्री
- 6.5.7 नैनादेवी – नैनीताल
- 6.5.8 जागेश्वर
- 6.5.9 पाताल भुवनेश्वर

6.6 उत्तराखण्ड के उत्सव तथा त्यौहार
6.7 उत्तराखण्ड के लोक देवता
6.8 जागर
6.9 सारांश
6.10 तकनीकी शब्दावली
6.11 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर
6.12 संदर्भ ग्रंथ सूची
6.13 सहायक/उपयोगी
6.14 निबंधात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

धर्म किसी एक या अधिक पारलौकिक शक्ति में विश्वास और इसके साथ–साथ जुड़ी रीति–रिवाज,परम्परा,पूजा पद्धति और दर्शन का समूह है। इस सम्बन्ध में प्रोफेसर **महावीर सरन जैन** का कहना है कि आज धर्म को जिस रूप में प्रचारित एंव व्याख्यायित किया जाता रहा है. उससे बचने की जरूरत है। वास्तव में धर्म संप्रदाय नहीं है. जिन्दगी में हमें जो धारण करना चाहिए, वही धर्म है। नैतिक मूल्यों का आचरण ही धर्म है। धर्म मनुष्य में मानवीय गुणों के विकास की भावना है, सार्वभौम चेतना का सत्यसंकल्प है।धर्म एक बहुत व्यापक शब्द है। धर्म शब्द के अनेक अर्थ दिये गये हैं, यथा– सुकृतया पुण्य, न्याय, स्वभाव, आचरण, सत्संग, दान आदि, धर्म का धातुगत अर्थ धारण करना ही होता है। **निरूक्त** में धर्म शब्द का अर्थ नियम बताया गया है । इससे धर्म शब्द का वास्तविक अर्थ यह समझ सकते हैं– जिस नियम ने इस लोक या संसार को धारण कर रखा है, वही धर्म है । वेदों में लिखा है कि धर्म का अर्थ सुख होता है । यह सुख दो प्रकार का है–इस लोक का सुख तथा परलोक का सुख। इसलिए जिससे इन उपरोक्त अंकित सुखों की प्राप्ति हो वही धर्म है। सभी लोग पारलौकिक सुख के लिए प्रयत्न करते हैं और उसका साधन धर्म को माना जाता है।धर्म किसी ना किसी प्रकार की अतिमानवीय एंव अलौकिक शक्ति पर विश्वास है जिसका आधार भय,श्रद्धा,भक्ति और पवित्रता तथा अभिव्यक्ति, प्रार्थना और आराधना है।

भारतीय विचारकों ने मंथन करके धर्म के स्वरूप को इस प्रकार से व्यक्त किया है– वह मानव धर्म जिससे इहलोक और परलोक दोनों का अभ्युदय, चारों पुरूषार्थों (धर्म,अर्थ,काम,मोक्ष) की प्राप्ति होती है, उसी को हम धर्म कहते व समझते हैं। एक अत्यंत सरल भाषा में हम यह कह सकते हैं कि जो बिना भेद–भाव किए,अभ्युदय की ओर ले जाए और सबको सत्य एंव कल्याण का मार्ग दिखाए, वही धर्म है।पाश्चात्य विद्वान, धर्म को अनेक तरह से परिभाषित करते हैं। **टाइलर**, ''आत्माओं में विश्वास को ही धर्म मानते हैं।'' इस सिद्धान्त के अन्तर्गत यह माना जाता है कि मनुष्य शरीर के भीतर एक ऐसी वस्तु है ,जो उससे बाहर आ सकती है। मृत्यु के पश्चात वही देह को छोड़कर चली जाती है जिसे हम आत्मा कहते हैं। आत्मा में विश्वास के कारण मनुष्य में कई धारणाओं तथा धार्मिक संस्कारों की सृष्टि हुई।

मानव ने जब प्रकृति की विकराल और खौफनाक घटनाओं को देखा तो उसे लगा कि प्रकृति की कोई ऐसी ताकत है जो सब कुछ नियंत्रित करती है, धार्मिक चेतना के इस विषय की कभी एक ईश्वर के रूप में कल्पना की जाती है तो कभी अनेक देवी–देवताओं के समूह के रूप में, साथ ही यह भी कल्पना की जाती है कि विभिन्न देवी–देवताओं में भिन्न प्रकार की शक्तियाँ पाई जाती हैं। उदाहरण के रूप में ऋग्वेद के दो सबसे महत्वपूर्ण देवता इन्द्र और वरूण समझे जाते हैं। इन्द्र, बल और शक्ति के अधिष्ठाता हैं और वरूण मुख्यतयाः नैतिक व्यवस्था के संरक्षक, जिस तरह बौद्ध धर्म में निर्वाण की अवधारणा को सबसे महत्वपूर्ण माना जाता है उसी तरह अन्य धर्मो में अपनी–अपनी अवधारणाओं को मान्यता दी जाती है , हर धर्म में मानव की कल्पनाओं एवं लक्ष्य संम्बन्धी धारणाओं में अनेक समानता पायी जाती हैं, वहीं पर अनेक भेद भी दिखाई पड़ते हैं। इन्हीं धारणाओं तथा कल्पनाओं पर भिन्न संस्कृतियों की छाप रहती है। विभिन्न धर्मों में पाये जाने वाले धार्मिक अनुष्ठानों तथा उपासना एंव भक्ति के रूप में आश्चर्यजनक समानताऐं भी पायी जाती हैं।

6.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य विभिन्न स्रोतों के माध्यम से उत्तराखण्ड के धार्मिक जीवन का परिचय कराना हैं। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप यह निम्नलिखित जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

- धर्म का वास्तविक स्वरूप
- उत्तराखण्ड के विभिन्न धार्मिक मेले
- उत्तराखण्ड के प्रमुख धार्मिक स्थल
- उत्तराखण्ड के उत्सव तथा त्यौहार
- उत्तराखण्ड के लोक देवता
- जागर अनुष्ठान

6.3 धर्म की अवधारणा

धार्मिक धारणाओं का स्वरूप ऐतिहासिक होता है,अर्थात समय के साथ–साथ धार्मिक विश्वास भी बदलते रहते हैं। सभ्यता की प्रगति के साथ–साथ मनुष्य अपनी विभिन्न रूचियों,स्वार्थों तथा विषयों को अलग कर लेते हैं तथा उपासना और पूजा की पद्धतियाँ भी बदल लेते हैं। मनुष्य जिन देवी देवताओं की उपासना करता है, उनका उसके जीवन की महत्वपूर्ण जरूरतों से घना सम्बन्ध रहता है। जैसे, वैदिक आर्यों के जीवन में कृषि का एक प्रमुख स्थान था। इसलिए उन्होंने मुख्य देवता इद्र की इस प्रकार कल्पना की थी कि वह कृषि के लिए उपयोगी हो सकें। वैदिक इन्द्र को बादलों एंव वर्षा का देवता माना जाता है।

जैसे–जैसे मनुष्य का प्रकृति की भौतिक शक्तियों पर अधिकार बढ़ता गया, वैसे–वैसे उसके उपास्य देवताओं की प्रकृति बदलती गयी है, यह भी देखा गया है कि एक ही संस्कृति के अन्तर्गत शिक्षित और विद्धान लोग ईश्वर अथवा चरमतत्व की कल्पना एक तरह से करते हैं। और साधारण लोग दूसरे प्रकार से। फिर भी विभिन्न युगों तथा विभिन्न देशों में पाई जाने वाली धार्मिक चेतना के विषय में कुछ गुण ऐसे पाये जाते हैं जो सार्वभौम हैं, जैसे शक्ति तथा विराटता, रहस्यमयता और आकर्षण अतुलनीय हैं।

बृहदारण्यक उपनिषद में, ब्रहम का निम्नलिखित वर्णन मिलता है:

" वह स्थूल नहीं है,अणु नहीं है, ह्रस्व नहीं है, दीर्घ नहीं है, लाल नहीं है, उसमें छाया नहीं है, अंधेरा नहीं है, उसमें रस,गंध,रूप,शब्द,गति कुछ भी नहीं है"। इस प्रकार ब्रहम के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि वह किसी दुसरी वस्तु के सदृश्य या समान है। केनोपनिषद में भी कहा गया है कि ब्रहम तक न वाणी पहुँचती है ना मन और ना आँखें । उनके वर्णन का केवल एक ही उपाय है। यह कहना कि **वह है** ।

विद्धान *प्रेजर ने कहा है कि "धर्म वैज्ञानिक दृष्टि के विकास में एक सोपान मात्र है। धर्म की उत्पत्ति जादू–टोने से होती है और जब जादू–टोने से काम नहीं चलता तो विज्ञान का उदय होने लगता है।"* मानव चिन्तन का विकास कुल मिलाकर जादू–टोने से धर्म की और धर्म से विज्ञान की दिशा में हुआ है।

उपनिषदों के अनुसार मनुष्य का मुख्य कर्तव्य है कि वह उन कारणों को दूर करे जिनके कारण जीवात्मा जन्ममरण के बन्धन में पड़ता है। इसी को मोक्ष कहते हैं। आत्मतत्व को पहचाने बिना वह मोक्ष संभव नहीं है, जो जीव अपने पुण्यों के द्वारा आत्मतत्व को पहचान जाता है, वह देवयान द्वारा ब्रहमलोक या सत्यलोक को जाता है। जहाँ से पुनः इस मुत्युलोक में कष्ट उठाने के लिए लौटना नहीं पड़ता । जो जीव इस अवस्था को प्राप्त नहीं हो सकते,उनके लिए कर्म सिद्धान्त के अनुसार पुनर्जन्म का बंधन रहता है।

मध्ययुग में विकसित धर्म एंव दर्शन के परंपरागत स्वरूप एंव धारणाओं के प्रति आज के व्यक्ति की आस्था कम होते जा रही है। ***मध्ययुगीन धर्म एंव दर्शन के प्रमुख प्रतिमान थे– स्वर्ग की कल्पना, सृष्टि एंव जीवों के कर्ता रूप में ईश्वर की कल्पना***। वर्तमान जीवन की निरर्थकता का बोध अपने देश एंव काल की माया एंव प्रपंचों से परिपूर्ण अवधारणा , उस युग में व्यक्ति का ध्यान अपने श्रेष्ट आचरण, श्रम एंव पुरूषार्थ द्वारा अपने वर्तमान जीवन की समस्याओं का समाधान करने की ओर कम था, अपने आराध्य की स्तुति एंव जयगान करने में अधिक था।

धर्म के व्याख्याताओं ने संसार के प्रत्येक कियाकलापों को ईश्वर की इच्छा माना तथा मनुष्य को ईश्वर की हाथ की कठपुतली के रूप में स्वीकार किया। दार्शनिकों ने व्यक्ति के वर्तमान जीवन की विभिन्नता हेतु '***कर्म सिद्धान्त***' के सूत्र को प्रतिपादित किया। इसका परिणाम मध्य युग में यह हुआ कि वर्तमान की सारी मुसीबतों का कारण '***भाग्य' अथवा ईश्वर की मर्जी को मान लिया गया।*** धर्म के ठेकेदारों ने पुरूषार्थ के मुख्य द्वार पर ताला लगा दिया। समाज या देश की विभिन्नता को उसकी नियति मान लिया गया, समाज स्वयं भी भाग्यवादी बन कर अपनी सुख–दुख स्थितियों से संतोष करता रहा। आज के युग ने यह चेतना प्रदान की है कि विकास का रास्ता हमें स्वयं बनाना है। किसी समाज या देश की समस्याओं का समाधान कर्म–कौशल, व्यवस्था–परिर्वतन, वैज्ञानिक तथा तकनीकी विकास ,परिश्रम तथा निष्ठा से सम्भव है। आज के मनुष्य की रूचि अपने वर्तमान जीवन को संवारने में अधिक है, उसका ध्यान भविष्यमुखी ना होकर वर्तमान में है, वह दिव्यताआं को अपनी ही धरती पर उतार लाने के प्रयास में लगा हुआ है । वह पृथ्वी को ही स्वर्ग बना देने के लिए बेताब है।

उत्तराखण्ड एक सांस्कृतिक राज्य माना जाता है, वस्ततुः इस राज्य के साथ लगा पश्चिमी नेपाल का काली नदी तक विस्तृत प्रदेश भी कुछ शताब्दी पूर्व तक उत्तराखण्ड के साथ जुड़ा था। पुरातत्व की दृष्टि से समृद्व होते हुए भी इस क्षेत्र का सामाजिक इतिहास धुँधला है।

6.4 उत्तराखण्ड के धार्मिक मेले

हिमालय के इस पर्वतीय क्षेत्र में मेले सांस्कृतिक सम्मेलन के प्रमुख केन्द्रों के अतिरिक्त जीवन की एक आवश्यकता बनकर विद्यमान रहे हैं। पहाड़ों में दूर–दूर बसने वाले लोगों के लिए एक लम्बे समय तक अपने मित्र–संबधियों से मिलना सम्भव नहीं हो पाता था। यातायात और व्यापार की कमी के कारण दूर–दूर के गाँव जाकर अपनी आवश्यकताओं की चीजों को जुटाना दुष्कर होता था क्योंकि एक स्थान पर ही अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करना सम्भव नहीं था,शरीर एंव मन भी थक जाते थे क्योंकि लोगों को पहाड़ियों में ही अपना जीवन जीना पड़ता था। इन सब समस्याओं के निराकरण के रूप में मेलों की उत्पत्ति हुई। जिसमें आस–पास के गाँवों के लोग एक निश्चित स्थान पर एकत्र होकर अपना दुःख–सुख बाँटते, गीत, नृत्य आदि से अपना मनोरंजन करते और अपनी–अपनी हस्त निर्मित वस्तुओं का आदान–प्रदान करते । धीरे–धीरे इसका रूप बढ़ता गया।

मेले शब्द का तात्पर्य मिलन से है, जो ' मेल' से बना है । किसी निश्चित तिथी को विशेष स्थान पर होने वाला जन–समूह का मिलन ही हम मेला समझ सकते हैं। इस मिलन का धार्मिक और व्यापारिक महत्व होता है। अधिकांश मेले धार्मिक पर्वों पर लगते हैं, क्योंकि यह दिन एक निश्चित त्यौहार अथवा पर्व का संकेत होता है और अपने कृषि सम्बन्धित कार्यों से अवकाश लेकर धार्मिक क्रिया–कलापों को समर्पित होता है एवं इसका आयोजन धार्मिक स्थलों पर होता है। कई सामूहिक पूजाओं ने भी मेलों का रूप धारण कर लिया । मेलों से जुड़े पर्वों में से कुछ प्राकृतिक–भौगोलिक पर्व हैं,कुछ स्थानीय और कुछ सर्व प्रचलित पर्व हैं।

6.4.1 कालिका मेला

चैत तथा आश्विन मास की नवरात्रियों में गंगोलीहाट के कालिका मंदिर में देवी का एक बड़ा मेला लगता है। इस मेले में देवी को भैंसों और बकरियों की बलि चढ़ाई जाती है। भक्तगण देवी की पूजा करने के लिए अलग– अलग स्थानों से एकत्र होते हैं।

6.4.2 रेणुका देवी का मेला

यह मेला गढ़वाल में चैत्र की 23 गते को नाकुरी ग्राम में लगता है। जिसमे देवी की पूजा अर्चना करते हैं तथा वरदान माँगे जाते हैं। मान्यता है कि देवी की गई मनोकामना अवश्य पूरी करती हैं।

6.4.3 पूर्णागिरी मेला

नेपाल की सीमा के निकट काली नदी के किनारे के ऊँचें शिखर पर स्थित पूर्णागिरी देवी का मंदिर है। इस मंदिर में विषुवत संक्रान्ति को एक धार्मिक मेला लगता है।

6.4.4 सेल्कु का मेला

भाद्रपद के अन्त में गढ़वाल के हरसिल,मुखना,झाला,सौरा,लाटा,गोरसाली तथा सेंज आदि स्थानों पर सेल्कु के नाम से मेले लगते हैं। 20से 30 गते तक लगने वाले इन मेलों में गढ़वाल लोक संस्कृति अपने उत्कर्ष पर दिखाई देते हैं।

6.4.5 नन्दाजात तथा नन्दा राजजात

नन्दाष्टमी के अवसर पर ही गढ़वाल में नन्दाजात का उत्सव होता है। प्रतिवर्ष नन्दा अपने ससुराल बधाण (त्रिशूल पर्वत) से अपने मायके चाँदपुर आती हैं, विदा होते वक्त सभी गाँवो के भक्तगण उसे भेंट देते हैं। इसी विदाई समारोह को नन्दाजात कहा जाता है। हर बारह वर्ष बाद बड़ी यात्रा होती है जिसे राजजात कहते हैं।

पुराने समय में राजजात का राजाओं द्वारा आयोजन किया जाता था। मान्यता यह है कि प्रत्येक बारह वर्ष उस क्षेत्र में कही भी एक चौसिंगी बकरा पैदा होता है, तब नन्दा राजा को स्वप्न में दर्शन देती है और राजा राजजात की तैयारी करता है, देवी की प्रतिमा को सोने–चाँदी से सजा डोले में रखकर रिंगाल और भोजपत्र से बनी छत्र–छंतोली की छाया देते हुए जुलूस निकालते हैं और नन्दा को विदा किया जाता है। डोले के आगे–आगे चौसिंगी बकरा पथ प्रदर्शक के रूप में चलता है। यात्रा राजा के निवास स्थान से निकलती है और नौटी, चादँपुर, सेम, भगौती, कुलसारी, चैपड्रयू, नारायणबगड़, देवाल और रूपकुण्ड होती हुई हेमकुण्ड पहुँचती है।16500 फीट ऊँचे हेमकुण्ड में त्रिशूल पर्वत की जड़ पर

त्रिशूल हिमनद के पास डोला उतारा जाता है और फिर हवन किया जाता है, उसके बाद छंतोला तोड़कर उसकी खपच्चियों को प्रसाद के रूप में बाँटा जाता है, फिर खाद्य वस्तुआं से लदे हुए मेढ़े (बकरे) को अकेले ही त्रिशूल पर्वत की ओर रवाना कर दिया जाता है। गाथाओं के वर्णन एंव जनश्रुति के अनुसार, मेढ़ा स्वंय पर्वत की ओर बढ़ जाता है। इस प्रकार नन्दा की ससुराल यात्रा पूरी होती है। यह यात्रा बीस–इक्कीस दिनों की होती है।

6.4.6 माघ मेला

नन्दा जात के बाद गढ़वाल मण्डल का यह सबसे बड़ा मेला है। इसमें नौगाँव विकास खण्ड के कुण्ड तथा उत्तरकाशी के विश्वनाथ मंदिर के साथ–साथ अनेक मंदिरों में मेले लगते है और शिव की आराधना करते हैं। यह एक सप्ताह से चलने वाला मेला धार्मिक और व्यापारिक महत्व रखता है। गढ़वाल के विभिन्न क्षेत्रों से देवताओं की डोलिया एंव सांस्कृतिक टोलिया भी यहाँ आती हैं। गढ़वाल का गौचर मेला भी व्यापारिक एंव सांस्कृतिक दृष्टि से मशहूर है।

6.4.7 हिलजात्रा

पिथौरागढ़ जिले में भाद्रपद माह में आठूं के नाम से गवरा(गौरा) और शिवजी की पूजा की जाती है। फसलों के पौंधे लगाए जाते हैं, खेल लगते हैं, और झोड़े इत्यादि सामूहिक व सांस्कृतिक नृत्य किए जाते हैं। पिथौरागढ़ के कुमौड़ नामक गाँव में विशेष रूप से विशाल जनसमूह के बीच लकड़ी के मुखौटे पहनकर एक विशिष्ट प्रकार का अभिनय किया जाता है। परम्परागत रूप से इसके पात्रों का नाम निश्चित होता है, जैसे घोड़िया, नानिहौल (छोटे बैलों की जोड़ी), ठुलि हौल(बड़े बैलो की जोडी), नाई भजन मंडली, दही वाला इत्यादि।

6.4.8 मौण का मेला

आषाड़ मास में रवाई क्षेत्र में कमल नदी के किनारे सारीगाड़, वर्नीगाड़ आदि स्थानों पर मौण का मेला आयोजित किया जाता है। मछली पकड़ना एक मुख्य आकर्षण होता है।

6.4.9 नन्दादेवी का मेला

भाद्रपद के शुक्ल पक्ष की अष्टमी को सम्पूर्ण उत्तराखण्ड में नन्दाष्ठमी का पर्व बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। इस दिन मिलम, मुनस्यारी, अल्मोड़ा और नैनीताल तथा गड़वाल के अनेक स्थानों पर यह मेला आयोजित किया जाता है। तीन दिन का यह मेला नन्दा देवी का डोला उठने पर समाप्त होता है। नन्दा और सुनन्दा की प्रतिमाएँ केले के खम्भों से बनाकर पूजा की जाती है और डोले को जुलूस में निकालकर अन्त में विसर्जित किया जाता है। नन्दा को कुमाँऊ और गढ़वाल के निवासी परम शक्तिशालिनी देवी भी मानते हैं और अपनी बेटी–बहन मानकर उस पर ममतापूर्ण अधिकार जताते हुए उसके सुख–दुःख की चिन्ता भी करते हैं।

6.4.10 शिवरात्रि

शिवरात्रि को कुमाँऊ और गढ़वाल के भटवाडी,गंगोली, पुनेली, चित्रेश्वर, पाताल भुवनेश्वर, कपिलेश्वर, रिखेश्वर, पुंगेश्वर, मानेश्वर, कान्तेश्वर, बेतालेश्वर, जागेश्वर, विश्वनाथ, भिकियासैण, कमलेश्वर, कोटेश्वर, टपकेश्वर(देहरादून) आदि अनेक स्थानों में शिव की पूजा की जाती है व मेलों का आयोजन किया जाता है।

6.4.11उत्तरायणी मेला

यह मेला धार्मिक,सांस्कृतिक और व्यापारिक दृष्टि से काफी प्राचीन और लोकप्रिय है, बागेश्वर,थल, रामेश्वर, पंचेश्वर, सल्ट, भराडी, कर्णप्रयाग, रूद्रप्रयाग आदि अनेक स्थलों पर गंगा स्नान और मेलों का आयोजन होता है। सरयू और गोमती नदी के संगम पर स्थित बागेश्वर कुमाँऊ की प्राचीनतम नगरी है। मकर संक्राति को यहाँ स्नान करना,प्रयाग के समान पवित्र माना जाता है।

6.4.12 बग्वाल मेला

सावन की पूर्णमासी को लोहाघाट, चम्पावत तथा देवीधुरा के देवी के मंदिरों में बग्वाल मेला लगता था। आजकल यह मेला केवल देवीधुरा में दिखाई पड़ता है। बाराही देवी के पूजन के बाद मंदिर प्रांगण में आस–पास के अनेक गाँवों से आए हुए लोगों की भीड़ चार दलों(खामों) में बटकर एक–दूसरे पर बारी–बारी से पत्थर बरसाते हैं, इसी को मार का बग्वाल कहा जाता है। खेलने से पूर्व सभी खामों के लोग मुखिया के साथ मंदिर की परिक्रमा लेते हैं और बग्वाल पूरी होने पर प्रतिपक्ष के लोगों से गले मिलते हैं। यह दोस्ती का प्रतीक है। पत्थर मार के समय बचाव पक्ष वाले घास और पत्तों से बने हुए बड़े–बड़े छंतोलियों का ढाल के रूप में प्रयोग करते हैं।

6.4.13 मोस्टामाणू का मेला

भाद्रपद मास में ऋषिपंचमी को पिथौरागढ़ के मोस्टामाणू नामक स्थान पर मोस्ट्या देवता के मंदिर में लगने वाला प्रकृति से जुड़ा हुआ यह काफी प्राचीन काल का उत्सव है, यह माना जाता है कि देवता का जागर लगाकर, हवन पूजा करके देवता प्रसन्न होता है और वर्षा अवश्य होती है।

6.4.14 तार्केश्वर मेला

ज्येष्ठ तथा आाश्विन मास में तार्कश्वर महादेव गढ़वाल में शैव सिद्धान्त के अनुसार एक विशेष पूजा होती है। दक्षिण गढ़वाल में हजारों लोग एकत्र होकर रातभर भजन–किर्तन करते है। ताड़केश्वर को कौलान्दा शिव माना जाता है। इस स्थान पर शिव ने तारकासुर नामक दैत्य का वध किया था।

उपरोक्त मेलों के अतिरिक्त कुछ मेले जैसे मानेश्वर मेला, गिर का कौतिक, दुधियाड़ मेला, पिथौरागढ़ का जौलजीवी मेला, श्रीनगर में लगने वाला कमलेश्वर मेला, गुढ़केदार का मेला, धारचूला के निकट कंडाली का मेला, जौहार क्षेत्र का छुरमल मेला, नोदा कोथीम, मासी का मेला, बिखौती मेला इत्यादि काफी प्रसिद्व हैं।

कुमाँऊ और गढ़वाल के ये मेले धर्म से जुड़े हुए हैं। वेदों और पुराणों में इन तिथियों का धार्मिक महत्व भी बताया गया है। यहाँ के लोग किसी भी महत्वपूर्ण कार्य करने से पहले देवता को नमन कर कार्य सफलता हेतु प्रार्थना करते हैं। भिन्न–भिन्न पर्वो पर भिन्न–भिन्न देवी–देवताओं को पूजा जाता है।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

1. नन्दा राज जात से आप क्या समझते है?

2. मोस्टामाणू का मेला कहा मनाया जाता है?

6.5 उत्तराखण्ड के प्रमुख धार्मिक स्थल

यह क्षेत्र प्राचीन काल से ही तीर्थों का स्थान एंव दर्शनीय स्थलों का आकर्षक केन्द्र रहा है। कई लोग यहाँ पर आकर बस गये जो यही की संस्कृति से घुलमिल गए और अपनी संस्कृति की कुछ छाप भी इन्होंने छोडी। इस प्रकार यहाँ के तीर्थ स्थानों में अलग–अलग प्रकार की संस्कृतियों के संगम स्थल के रूप में एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। इसलिए यहाँ का सांस्कृतिक क्षेत्र एक मिला जुला एंव समृद्ध सांस्कृतिक क्षेत्र है।

पौराणिक ग्रंथ स्कन्दपुराण में यहाँ की नदियों, गुफाओं, शिवलिंगों, दुर्गापीठ आदि सिद्धपीठों का विस्तार से वर्णन किया गया है। इस भूमि पर देव, दानव, यक्ष, किन्नर,ऋषि–मुनियों ने कड़ी तपस्या कर पुरूषार्थों की प्राप्ति की थी। वैदिक काल में माना जाता है कि वशिष्ठ, अत्री, गौतम, विश्वामित्र आदि कई ऋषिमुनियों ने इस देवभूमि में आकर तपस्या की थी।

उत्तराखण्ड के प्रत्येक गाँव, नदी–तटा एवं पर्वतों पर कई देवी–देवताओं के मंदिर बने हुए हैं और इनमें से कई प्राचीन भी हैं। परन्तु इस क्षेत्र की धार्मिक महत्ता चार धामों–बदरीनाथ, केदारनाथ, यमनोत्री तथा गंगोत्री के कारण मानी जाती है। इसके अतिरिक्त गढ़वाल के देवप्रयाग में रघुनाथ, श्रीनगर चौंरास में कमलेश्वर, लंगूरगढ़ी में भैरव मंदिर, उत्तरकाशी में विश्वेस्वनाथ, बनगढ़ में भुवनेश्वरी, श्रीनगर में किलकिलेश्वर है। कुमाँऊ मण्डल के अल्मोड़ा में नागनाथ, भैरव, नन्दा, विश्वनाथ, अस्कोट में मल्लिकार्जुन, कालिका, चम्पावत में बालेश्वर, बैजनाथ, बागेश्वर का बाघनाथ, नैनीताल में नैना आदि के विख्यात मंदिर हैं।

6.5.1 हरिद्वार

शास्त्रों में इसे कपिलस्थान या मायापुरी के नामों से जाना गया है। कहा जाता है कि हर की पैड़ी नामक स्थान पर अमृत, कुम्भ से छलक कर गिरा था ।इसलिए इस स्थान को पवित्र माना गया है, और प्रति बारह वर्ष बाद यहाँ कुम्भपर्व लगता है जिसमें लाखों लोग स्नान करके पुण्य के भागीदार बनते हैं। हरिद्वार का प्रमुख आकर्षण हर की पैड़ी में बहती हुई गंगा है।

हर की पैड़ी के पास ब्रहम कुण्ड में भगवान ब्रहमा ने स्वयं निवास करने का वरदान दिया था। मुख्य गंगा नदी पर नील पर्वत के नीचे नील धारा नामक स्थान है, जहाँ पर शिव जी के नील नामक एक गण ने तपस्या की थी तथा नीलेश्वर महादेव का शिवलिंग स्थापित किया था।

6.5.2 ऋषिकेश

ऋषिकेश का पौराणिक नाम कुब्जाभ्र है । प्राचीनकाल में कहा जाता है कि इस स्थान पर देवदत्त नामक व्यक्ति ने तपस्या की थी ।

6.5.3 केदारनाथ

केदारनाथ तीर्थ में कत्यूरी शैली में निर्मित मंदिर विद्यमान है,जिसके गर्भगृह में त्रिकोणाकृति की ग्रेनाइट शिला का शिवलिंग है। लिंग में श्रावण में ब्रह्मकमल पुष्प चढ़ाने का महात्म्य माना जाता है। लिंग के चारों ओर अर्घा है और एक ही पत्थर की बनी है। माना जाता है कि स्वयंभू केदारलिंग की उपासना पाण्डवों ने की थी।

केदारकल्प में कहा गया है कि यहां पर शिव जी को नन्दकेश्वर नामक वृषभ प्रदान किया था। तभी से शिव ने उसे अपना वाहन तथा ध्वज में स्थान दिया था। अनुश्रुति के अनुसार शंकराचार्य ने केदारनाथ में ही देह त्याग किया था। कहा जाता है कि छद्म वेष में किसी शैव ने ही उनको विष देकर मार डाला था।

6.5.4 बद्रीनाथ

बद्रीनाथ की प्रमुख विशेषता यह है की इसकी पूजा हिन्दुओं के समान जैन और बौद्ध धर्म वाले श्रद्धा और भक्ति भाव से करते हैं। महाभारत में नर–नारायण की तपस्या और बदरीकाश्रम का उल्लेख है ,पुराणों से ज्ञात होता है कि इस तीर्थ क्षेत्र के अनेक नाम रहे हैं इनमें मुक्तिप्रदा, योगसिद्धा, विशालपुरी, बदरीकाश्रम, नर–नारायणाश्रम तथा बद्रीनाथ प्रमुख हैं। इस धाम की स्थापना के संबंध में स्कन्द पुराण में उल्लेख किया गया है जब आदि गुरु शंकराचार्य अष्टखण्ड की पहाडी पर तपस्या करने जा रहे थे तो आकाशवाणी हुई की तुम जिस चीज की प्राप्ति करना चाहते हो उसकी स्थापना तुम भगवान बद्रीविशाल की पुनर्स्थापना के माध्यम से कर सकते हो। भगवान बद्रीविशाल की मूर्ति नारदकुण्ड में पड़ी है। उसे निकाल कर बद्रीधाम की स्थापना का श्रेय प्राप्त करो। इसी आकाशवाणी के आधार पर शंकराचार्य ने नारदकुण्ड से मूर्ति निकालकर बद्रीधाम की स्थापना की। एक जनश्रुति यह भी हे कि बद्री वन की सुन्दर भूमि को देखकर बद्रीविशाल ने इसी भूमि में रहने का निश्चय किया लेकिन यहां शिव और पार्वती का निवास था। भगवान बद्रीविशाल ने एक शिशु का रुप धारण किया, जिसे पार्वती उठाकर अपने निवास स्थान में ले आई। जब शिव और पार्वती स्नान करके लौटे तो देखा कि किवाड़ अन्दर से बन्द है जहाँ भगवान बद्रीविशाल बन्द थे। किवाड़ खोलने में असमर्थ होने पर शिव और पार्वती समझ गये कि भगवान विष्णु शिशु का रुप धारण करके इस धाम में स्थापित होने आये हैं। अतः शिव और पार्वती वहाँ से अन्यत्र चले गये। इस प्रकार बद्रीधाम विष्णुधाम बन गया।यहाँ तप्तकुण्ड, नारदकुण्ड व सूर्यकुण्ड के अतिरिक्त गरुड़शिला, नारदशिला, बाराहशिला, नरसिंहशिला आदि भी उल्लेखनीय स्थान हैं। गुफाओं में व्यास, गणेश और मुचकुन्द की गुफाऐं प्रसिद्ध हैं। मन्दिर के पुजारी रावल कहलाते हैं जो आदिगुरु शंकराचार्य के वंशज तथा केरल के नम्बूदरीपाद् ब्राह्मण होते हैं। पूर्व में मन्दिर का प्रशासन महाराजा टिहरी गढ़वाल के हाथ में था किन्तु अब मन्दिर का प्रशासन समिति के पास है ।

6.5.5 यमुनोत्री

यमुना जिस स्थान पर इस क्षेत्र में उतरती है उसे यमुनोत्री कहते हैं। भागवत पुराण में उल्लेख है कि कृष्ण की पत्नी ने पूर्व जन्म में कालिंदी के तट पर तपस्या की थी। यमुना का असली स्रोत यमुनोत्री से लगभग 6 कि.मी. दूर कालिंदी पर्वत पर है। केदारखण्ड में यमुना के उद्भव और नामकरण के संबंध में यह कथा दी गई है कि सूर्य की दो पत्नियाँ संज्ञा और छाया थी। संज्ञा से गंगा और छाया से यम, यमी उत्पन्न हुऐ थे। इस प्रकार गंगा, यमुना वैमात्रिक बहनें थीं। माता का तिरस्कार करने से यम को श्राप के कारण भूतल पर उतरना पड़ा। तो सूर्य ने यमुना को भी तीनों लोकों के हित की भावना से पृथ्वी में अवतरित करवाया और वह पापों से संसार को मुक्ति दिलाने लगी प्रतिवर्ष यमुनोत्री मन्दिर के कपाट बैसाख महीने के शुक्लपक्ष की अक्षय तृतीया तिथि पर अप्रैल के अन्त या मई के आरम्भ में खुलते हैं तथा छः महीने प्श्चात कपाट दिवाली के दिन बंद होता है।

6.5.6 गंगोत्री

महाभारत में उल्लेख किया गया है कि यहाँ पर आकाश से गिरती हुई गंगा को महादेव जी ने अपने मस्तक पर धारण किया था तथा उसे मनुष्य लेाक में छोड़ दिया। यहाँ गंगा के दायें तट पर गंगा जी का भव्य मन्दिर है। मन्दिर के गर्भगृह में गंगा–यमुना की आभूषण युक्त मूर्तियाँ हैं। गंगोत्री में त्रिरात्रि निवास का विशेषफल बताया गया है। कहा जाता है कि इस स्थान पर बैठकर भागीरथ ने तप किया था जहाँ पर अब पिण्ड तथा दान आदि कार्य किये जाते हैं। गौमुख वह स्थान है जहाँ विशाल हिमनद के मुख से गंगा का उद्भव होता है। गंगा और उसके जल की महिमा का बखान भारत के समस्त धर्मों के साहित्य में हुआ है। सुल्तान मुहम्मद तुगलक के लिये गंगाजल निरन्तर दौलताबाद जाता था। आईनेअकबरी में लिखा है बादशाह अकबर गंगाजल को अमृत समझते थे और वही जल पीते थे।वर्तमान में जल प्रदूषण की दृष्टि से हरिद्वार का जल काफी अशुद्ध हो गया है परन्तु गंगोत्री ही वह स्थान है जहाँ पर गंगा का सबसे शुद्ध जल है।

6.5.7 नैनादेवी – नैनीताल

कहा जाता है कि जब पार्वती अपने पिता दक्ष के हवनकुण्ड में कूद पड़ी तो भगवान शंकर क्रोधित होकर देवी पार्वती के शरीर को अपने कंधे पर रख कर उत्तर दिशा की ओर निकल पड़े थे। जिस स्थान पर पार्वती का नेत्र गिरा वह स्थान ने तालाब का रुप ले लिया। नैनी तलाब की आकृती नेत्र की तरह है। नैनादेवी मन्दिर में विशेष पूजा नन्दाष्टमी को होती है । उस दिन देवी को महाभोग तथा बलि दी जाती है। दशमी के दिन उत्साह पूर्वक नैनादेवी की मूर्ति विसर्जित की जाती है।

6.5.8 जागेश्वर

जागेश्वर अल्मोड़ा जिले में एक प्रसिद्ध धार्मिक एवं ऐतिहासिक स्थल है। जागेश्वर को महादेव शिव के बारह ज्योर्तिलिंगों में से एक माना जाता है। इसकी स्थापना शंकराचार्य ने की थी। यहाँ कत्यूरी एवं चन्द काल में निर्मित 125 मन्दिर स्थित हैं। जागेश्वर समूह के मन्दिरों में सबसे बड़े मन्दिर जागेश्वर का जागनाथ मन्दिर, मृत्युंजय व दण्डेश्वर के मंदिर हैं इनके साथ साथ कुबेर, पुष्टि देवी मन्दिर तथा लकुलीश मन्दिर भी निर्मित हैं। जागेश्वर समूह के मंदिरों में फांसणा,वल्लभी एंव रेखा देवल प्रकार के मंदिर निर्मित हैं। जागेश्वर घाटी में मन्दिर यत्र–तत्र फैले हैं। कत्यूरी एवं चन्द राजाओं नें इन मन्दिर समूहों के संरक्षण हेतु कई ग्राम भूमि दान भी दिये थे। जागेश्वर के मुख्य मन्दिर में चन्द राजा दीप चन्द (1748.77 ई0) तथा विमल चन्द की अष्टधातु से निर्मित मूर्तियाँ भी हैं। मुख्य मन्दिर के बाहर दो विशालकाय प्रस्तर निर्मित द्वारपाल खडी मुद्रा में निर्मित हैं। यहां स्थित दण्डेश्वर के मन्दिर से दण्डेश्वर की बहुमूल्य मूर्ति प्राप्त हुई है। जिसे एक बार चोरों द्वारा चुरा भी लिया गया था। सरकार द्वारा जागेश्वर में एक संग्रहालय की स्थापना की है जिसमें जागेश्वर समूह के मन्दिरों से प्राप्त मूर्तियों को सुरक्षित रखा गया है। जागेश्वर मन्दिर का प्रबंधन आस–पास के ग्रामीण प्राचीन काल से परम्परागत रुप से कर रहे हैं। इस मन्दिर समूह के मन्दिरों के पुजारी यहाँ के आस–पास के गाँव से संबंधित हैं। जो बारी–बारी से मन्दिरों में पूजा का कार्य सम्पन्न करते हैं। परम्परा के अनुसार प्रत्येक पुजारी परिवार का सबसे बड़ा पुत्र ही मन्दिर का पुजारी पद प्राप्त कर सकता है। मन्दिर में प्रतिदिन प्रातः काल व संध्या के समय जागनाथ महाराज को महाभोग लगाया जाता है। जागेश्वर मन्दिर समूह देवदार के वृक्षों से आच्छादित सुन्दर शान्त घाटी में स्थित है। यहां स्थित नदी का उद्गम स्थल बागेश्वर जिले के खरही पट्टी के जैन–करास ग्राम में हैं। इस नदी में बरसात के अलावा अन्य मौसमों में अल्प मात्रा में जल रहता है। जागेश्वर की घाटी से 3–4 किमी दूरी की चढ़ाई पर पर्वतों के शिखर पर वृद्ध जागेश्वर स्थित है। जागेश्वर मन्दिर समूह के

पास अनेक प्राचीन धर्मशालाऐं थी परन्तु ये धर्मशालाऐं अब नहीं हैं। भगवान जागेश्वर के माहात्म्य के कारण वर्ष भर यहाँ भक्तों की भीड़ लगी रहती है। जागेश्वर में श्रावण मास में मेला लगता है। इस मेले में दूर–दूर से भक्त दर्शन हेतु यहाँ आते हैं व पूजापाठ कर मनोकामनाऐं माँगते हैं। श्रीनगर के कमलेश्वर के समान यहाँ भी हाथों में दीप लेकर संतान प्राप्ति हेतु रात्रि भर खड़े रहकर आराधना की जाती है। मानसखण्ड़ में जागेश्वर के धार्मिक महत्व की बडी प्रशंसा की गई है।

6.5.9 पाताल भुवनेश्वर

गंगोलीहाट से लगभग 6 कि.मी. दूरी पर पाताल भुवनेश्वर का मन्दिर एवं गुफा स्थित है। पाताल भुवनेश्वर के कत्यूरी कालीन मन्दिर से मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। यहाँ एक प्राचीन विशाल गुफा है। यहाँ से प्राप्त मन्दिरों में चण्डिका एवं शिव मन्दिर प्राप्त हुए हैं। यह मन्दिर 12वीं सदी ई0 के आसपास के निर्मित हैं।यहाँ से शिवलिंग, चामुण्डा देवी, विष्णु, लकुलीश, उमा महेश्वर तथा सूर्य की प्राचीन मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं।मन्दिरों से 300–400 मी0 दूरी पर पाताल भुवनेश्वर की विख्यात प्राचीन गुफा स्थित है। यह गुफा देवदार के जंगल से घिरी है। गुफा में जाने के लिये झुककर जंजीरों के सहारे उतरना पड़ता है। अंदर काफी विशाल खुली हुई जगह हैं। गुफा के अन्दर कई मार्ग हैं, मुख्य मार्ग में पत्थर को काटकर सीढियाँ बनी हैं जो कि सर्प की रीढ़ सी दिखती हैं। गुफा के अन्दर नमी होने के कारण फिसलन है। काली चिपचिपी मिट्टी से गुफा में संभल कर चलना पड़ता है। गुफा में अनेक प्रकार के प्राकृतिक चिन्ह बने हैं। कुछ तो इतने सुन्दर है कि सजीव जान पड़ते हैं। यह गुफा तीन खण्डों में विभाजित है यथा– ब्रह्मा, विष्णु और महेश तीनों देवता भुवनेश्वर महादेव के रूप में पूजे जाते हैं।

इन धार्मिक स्थलों के अतिरिक्त उत्तराखण्ड में और भी ऐतिहासिक व पुरातात्विक स्थल है, जैसे, बैजनाथ, देवप्रयाग, रूद्रप्रयाग, कर्णप्रयाग, नन्दप्रयाग, विष्णुप्रयाग, कलपेश्वर, गोपेश्वर, पांडुकेश्वर, बागेश्वर, हाट–कालिका, देवीधुरा, कटारमल इत्यादि।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

1. उत्तराखण्ड के चार धामों का संक्षिप्त में वर्णन कीजिए।

6.6 उत्तराखण्ड के उत्सव तथा त्यौहार

उत्तराखण्ड में विभिन्न धर्मों के समस्त त्यौहार, उत्सव एंव व्रत तो मनाये ही जाते हैं, साथ में कुछ स्थानीय त्यौहार भी मनाये जाते हैं। ये त्यौहार ना केवल मनोरंजन करने में सहायक हैं वरन् यह दूर देश में रहने वाले परिजनों को परस्पर मिलाने में भी योगदान देते हैं। मध्य हिमालय में स्थित उत्तराखण्ड में कई प्रकार के पर्वोत्सवों का आयोजन पूरे वर्ष किया जाता है। कुछ प्रमुख त्यौहार एंव उत्सव इस प्रकार हैः मकर संक्रान्ति (घुघुतिया), नंदाष्टमी, घी त्यार, हरेला, बिखौति, भिटौली, चैतौल, फुलदेई, संवत्सर प्रतिपदा, गंगा दशहरा, वट सावित्री, बैसी, रक्षा बन्धन, हरताली, तीज, आठूं, नवरात्रि, विजयादशमी, दीपावली, पश्वा, बसन्त पंचमी, होली इत्यादि। उपर्युक्त त्यौहार कुमाऊँ व गढ़वाल की संस्कृति को भारत के अन्य प्रान्तों से भिन्न करते हैं। प्रत्येक पूर्णमासी, अष्टमी, एकादशी तथा संक्रान्ति को व्रत–पूजन होते हैं।

6.7 उत्तराखण्ड के लोक देवता

उत्तराखण्ड में असंख्य देवी–देवताओं का निवास रहा है। यहाँ भारत वर्ष में प्रसिद्ध वेदों और पुराणों में वर्णित सभी देवी–देवताओं का निवास माना गया है। इनके अतिरिक्त अन्य स्थानीय देवी–देवता

भी हैं, जो कुलदेवता, इष्ट देवता आदि माने जाते हैं। इस क्षेत्र में वैदिक और पौराणिक देवताओं से भिन्न आर्यों की संस्कृति, मध्य युगीन उपासना पद्धति, शाक्त और तांत्रिक साधना आदि की पूजा की जाती है। इस क्षेत्र के लोग भूत प्रेत, यंत्रतंत्र, झाड़फूँक, बक्की, जागरी में अत्यधिक विश्वास करते हैं। कुछ देवताओं की पूजा–नैवेद्य, पुष्पपत्र, पकवान आदि से की जाती है किन्तु कुछ को बलि देकर संतुष्ट करना पड़ता है। इनमें से कुछ प्रकृति पूजा के प्रतीक हैं, कुछ महत्वपूर्ण ऐतिहासिक पात्र हैं। अपने जीवन काल में वीरता, न्याय, शासन या अन्य विशिष्ट गुणों के कारण अत्यंत लोकप्रिय देवता के रुप में पूजे जाते हैं। जैसे– गुस्याणी, गोलू, हरु, सैम, गंगनाथ, भोलानाथ, नन्दा, चौमू, भूमियाँ, बधाण, नौलदान, नागराजा, खेतरपाल, निरंकार, कालचिन, बालचिन, नारसिंह, सिंदुवा–विंदुवा, कोटगाड़ी, हटकाली, बाराही, भैरवनाथ, उफराई देवी, गोरल देवता आदि। इनके जीवन चरित्रों का बखान करने वाली गाथाऐं और गीत गाकर इनकी स्तुति की जाती है।

6.8 जागर

इस क्षेत्र के अधिकांश लोक देवताओं को जागर गाकर नचाया और प्रसन्न किया जाता है। गायक या कथावाचक भावनाओं से भरे गाथा सुनाते हैं। कई बार इन दैवी मनुष्यों की आत्मा वहाँ उपस्थित व्यक्तियों में से किसी पर भी अवतरित होती है और फिर वह व्यक्ति मृतात्मा की भाँति हाव–भाव तथा बातचीत करने लगता है। लोग उसे देवता मानकर फूल–अक्षत चढाते हुए नमन करते हैं और अपनी–अपनी जटिल समस्याऐं व्यक्त कर उनके कारण व निवारण के उपाय पूछते हैं। अवतार उन्हें यथानुकूल जवाब भी देता है। लोकविश्वास के अनुसार इन देवताओं के मन्दिरों में मनौती मांगने पर वह अवश्य पूरी हाती है। मनौती पूरी हो जाने पर भक्त देवता के मन्दिर में बकरी, मुर्गी, आदि की बलि एवं भक्त नारियल चढाते हैं अथवा झंडी, चिमटा, चुनरी या घंटी चढाता है। नारियल की बलि नर बलि की प्रतीक भी मानी जाती है और जो लोग मांस भक्षी नहीं हैं या प्राणी की बलि देना उचित नहीं मानते, वे भी बलि के प्रतीक स्वरुप नारियल तोड़कर चढ़ाते हैं। जिन गीतों एवं क्रियाओं का उपयोग देवी देवताओं के सूक्ष्म शरीर को प्रकाश में लाने के लिये किया जाता है, वे गीत एवं गाथाऐं जागर कहलाती हैं। इस प्रकार जागर एक ऐसा माध्यम है, जिसके अंर्तगत गीत संगीत से सूक्ष्म आत्मा, पश्वा (जिस व्यक्ति के उपर सूक्ष्म आत्मा का प्रभाव होता है) को अपने प्रभाव में लेकर कम्पन्न करने लगता है। पश्वा के अलौकिक नृत्य एवं क्रियाओं के पश्चात् ही ज्ञात होता है कि अमुक व्यक्ति को अमुक दैवीय शक्ति ने अपने प्रभाव में ले लिया है। जागर लोकगीत इसी प्रक्रिया को सम्पन्न कराते हैं, जिसमें विशेष वाद्यों का संगीत उत्प्रेरक का कार्य कराता है। उत्तराखण्ड में गाए जाने वाले जागर इस प्रकार हैं : देवताओं के जागर, देवियों के जागर पौराणिक जागर, ऐतिहासिक घटनाओं पर अधिरित जागर।

स्थानीय देवी देवताओं के राजवंशी और भूतांगी दो रुप माने गये हैं। भूतांगी देवताओं में भूत, प्रेत, मसाण, अंछरी या परियाँ आदि आते हैं। ये अति मानवीय शक्तियां कही गयी हैं। स्थानीय लोक साहित्य एवं गाथाओं में इनका महत्वपूर्ण वर्णन है।धार्मिक, सांस्कृतिक एंव पौराणिक दृष्टि से गढ़वाल–कुमाँऊ अंचल को ही देवभूमि 'उत्तराखण्ड' होने का गौरव प्राप्त है। युग–युगों से चले आये इस सम्मान वाले उत्तराखण्ड की महिमा का हमें आदर करना चाहिए।

6.9 सारांश

धर्म एक बहुत व्यापक शब्द है। धर्म शब्द के अनेक अर्थ दिये गये है, यथा सुकृतया पुण्य, न्याय, स्वभाव, आचरण, सत्संग, दान आदि धर्म का धातुगत अर्थ धारण करना ही होता है। निरूक्त में धर्म शब्द का अर्थ नियम बताया गया है । इससे धर्म शब्द का वास्तविक अर्थ यह समझ सकते है– जिस नियम ने

इस लोक या संसार को धारण कर रखा है वही धर्म है । वेदों में लिखा है कि धर्म का अर्थ सुख होता है । उत्तराखण्ड एक सांस्कृतिक राज्य माना जाता है, वस्ततुः इस राज्य के साथ लगा पश्चिमी नेपाल का काली नदी तक विस्तृत प्रदेश भी कुछ शताब्दी पूर्व तक उत्तराखण्ड के साथ जुड़ा था। पुरातत्व की दृष्टि से समृद्व होते हुए भी इस क्षेत्र का सामाजिक इतिहास धुँधला है। यह क्षेत्र प्राचीन काल से ही तीर्थों का स्थान एंव दर्शनीय स्थलों का आकर्षक केन्द्र रहा है। उत्तराखण्ड में हिन्दु धर्म में समस्त त्यौहार एंव उत्सव एंव व्रत तो मनाये ही जाते है, साथ में कुछ स्थानीय त्यौहार मनाये जाते हैं। यह त्यौहार न केवल आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण एवं मनोरंजन करने में सहायक हैं वरन् यह दूर देश में रहने वाले परिजनों को परस्पर मिलाने में भी योगदान देते हैं। धार्मिक, सांस्कृतिक एंव पैराणिक दृष्टि से गढ़वाल–कुमाँऊ अंचल को ही देवभूमि होने का गौरव प्राप्त हुआ है।

6.10 तकनीकी शब्दावली

जागर –प्राचीन कर्मकाण्ड जिसमें डंगरिया भाव–समाधि में जाकर लोगों की समस्याएं दूर करता है।
मुखौटे– विभिन्न अवसरों पर चेहरे में लगाये जाने वाली विभिन्न रूपाकृतियां।
परलोक– अन्य लोक
उपासना–पूजा–पद्यति
अवतरित–अवतार लेना

6.11 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

6.4 के प्रश्न 1 के उत्तर के लिए देखिए 6.4.5
6.4 के प्रश्न 2 के उत्तर के लिए देखिए 6.4.13
6.5 के प्रश्न 1 के उत्तर के लिए देखिए 6.5.3,6.5.4,6.5.5,6.5.6

6.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

1.बलुनी, दिनेशचन्द्र, *उत्तरांचलः संस्कृति, लोक जीवन, इतिहास एंव पुरातत्व*, प्रकाश बुक डिपो, बरेली, 2006
2.अशोक, यमुनादत्त वैष्णव, *कुमाँऊ–गढ़वाल के दर्शनीय स्थल*, श्री अल्मोड़ा बुक डिपो, 1978
3.जोशी, एम.पी., *उत्तरांचल हिमालया*, श्री अल्मोड़ा बुक डिपो, 1990
4.जोशी, घनश्याम, *उत्तरांचल का राजनीतिक, सामाजिक एंव सांस्कृतिक इतिहास*, प्रकाश बुक डिपो, बरेली, 2003

6.13 सहायक / उपयोगी ग्रंथ सूची

1.शर्मा, डी.डी., *उत्तराखण्ड का सामाजिक एवं सांस्कृतिक इतिहास*, 2003
2. वही , *उत्तराखण्ड के लोक देवता*, अंकित प्रकाशन, हल्द्वानी, 2006
3. वही ,*हिमालय संस्कृति के मूलाधार,* सोलन, 1998
4.पाण्डेय,बी.डी., *कुमाँऊ का इतिहास*, शक्ति प्रेस,अल्मोड़ा,1937
5.रतूड़ी,हरिकृष्ण,*गढ़वाल का इतिहास*, भागीरथी प्रकाशन, पौड़ी,वि,1954

6.14 निबंधात्मक प्रश्न

1. धर्म से आप क्या समझते है? उत्तराखण्ड के धार्मिक जीवन की विवेचना कीजिए।
2. उत्तराखण्ड के मेलों की व्याख्या कीजिए।

इकाई–सात : उत्तराखण्ड :कला,साहित्य एवं संगीत

7.1 प्रस्तावना

7.2 इकाई के उद्देश्य

7.3 लोक संस्कृति के घटकः लोक कला

7.3.1 मूर्तिकला

7.3.2 चित्रकला

7.3.3 काष्ठ कला

7.3.4 स्थापत्य कला

7.3.5 धातु शिल्प

7.3.6 ऐपण

7.3.7 भित्ति चित्र

7.3.8 उत्तराखण्ड की लोक चित्र शैली

7.3.9 अन्य हस्तकलाऐं

7.4 लोक साहित्य

7.4.1 लोक गीत

7.4.2 लोक गाथा

7.4.3 लोक कथा

7.5 लोक नृत्य एवं नाट्य

7.6 संगीत

7.7 सारांश

7.8 तकनीकी शब्दावली

7.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

7.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

7.11 सहायक/उपयोगी

7.12 निबंधात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

किसी भी समाज की संस्कृति मूलतः उसकी आचरण पद्धतियों, रीति–रिवाजों, पर्वों,मेले,गीतों–नृत्यों और कला के विविध रुपों में निहित होती है। प्रथा, परम्परा, दुःख–दर्द, रुढ़िवादिता, सामाजिक समस्याओं का वास्तविक ज्ञान भी इससे हो जाता है।उत्तराखण्ड का साहित्य, कलाऐं और संगीत इस बात के साक्ष्य हैं कि यहां का जीवन श्रम,उत्साह,सरल तथा विषम परिस्थितियों में सामन्जस्य करने की अद्भुत क्षमता से समन्वित है।

उत्तराखण्ड के लोक साहित्य के गंभीर अध्ययन से स्पष्ट आभास मिल जाता है कि कुमाऊँ और गढ़वाल का लोक जीवन एक जैसा ही है। धार्मिक मान्यतायें, लोक नृत्य–गीतों में पर्याप्त समानता है। लोक विश्वास पूर्णतः एक जैसे हैं। भौगोलिक स्थितियों के फलस्वरुप कहीं–कहीं सूक्ष्म अंतर होना स्वाभाविक है। इसलिये संभवतः लोकगीतों और नृत्यों में अलग–अलग शैलियों ने जन्म ले लिया । परन्तु ऐसी भिन्नता के दर्शन तो कुमाऊँ और गढ़वाल के विभिन्न क्षेत्रों में भी हो जाते हैं। यहां तक की स्थानीय देवताओं की पूजा अर्चना भी दोनों मण्डलों में एक जैसी होती है। कुमाऊँ का पर्चाधारी गैरीया गढ़वाल में गौरिल देवता के रुप में सम्मान प्राप्त करता है।

देवी–देवताओं के जागर गीतों में भी पर्याप्त समानता के दर्शन होते हैं। वेदकाल, पुराणकाल, शक, हूण, कुषाण, अशोक, हर्षवर्धन और गुप्तकाल आदि समयों में जितने भी परिर्वतन भारत में हुये हैं, उन सभी परिर्वतनों में उत्तराखण्ड के इन दोनों मण्डलों ने भी समय के साक्षी होने का गौरव प्राप्त किया है।

7.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य विभिन्न स्रोतों के माध्यम से उत्तराखण्ड की लोक संस्कृति का परिचय कराना हैं। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप निम्नलिखित जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

- लोक संस्कृति के विभिन्न घटक जिनमें मूर्तिकला, चित्रकला ,काष्ठ कला, स्थापत्य कला,धातु शिल्प, ऐपण, भित्ति चित्र एवं अन्य हस्तकलाऐं शामिल हैं।
- लोक साहित्य के अंतर्गत सम्मिलित लोक गीत, लोक गाथा, एवं लोक कथा
- लोक नृत्य एवं नाट्य

7.3 लोक संस्कृति के घटकः लोक कला

लोक संस्कृति के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए अब हम उसके विभिन्न घटकों के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे–

7.3.1 मूर्तिकला

उत्तराखण्ड में स्थापित मंदिरों से अनेक मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। ये मूर्तियाँ पाषाण, काष्ठ एंव धातुओं से निर्मित की गयी हैं। पाषाण युगीन चित्रकला के उदाहरण हिमालय की अनेक कन्धराओं से प्राप्त हुए हैं, किन्तु मूर्तिकला के ऐतिहासिक युग से पूर्व के अवशेष नहीं मिलते हैं। सर्वप्रथम मौर्य युगीन मृणमूर्तियाँ, रणिहाट उत्खनन से प्राप्त हुई हैं। पाषाण से निर्मित मूर्तियाँ सर्वाधिक प्राप्त हुई हैं । ये मूर्तियाँ प्रथम शताब्दी विक्रमी से बनना प्रारम्भ हो गयी थी, मूर्तियों का निर्माण स्थानीय चटटानों से किया गया है। मूर्तियों का निर्माण रक्त, श्याम, हरे वर्ण के पाषाणें से हुआ है। यहा से प्राप्त मूर्तियों का विषय धार्मिक है।

ये मूर्तियाँ बौद्ध, जैन एंव ब्राहमण धर्म से संबंधित हैं। श्याम वर्ण के पाषाण से निर्मित मूर्तियों में अमेल ''नैनीताल'' की श्रृंगार रथ दुर्गा, पश्चिमी उत्तराखण्ड के तपोवन की महिषमर्दिनी दुर्गा एंव खला गाँव की त्रिपुरबाला सुन्दरी देवी की मूर्ति प्रमुख है। हरे वर्ण की मूर्तियाँ बैजनाथ में विशेष रूप से प्राप्त हुईं। गुप्त काल से पूर्व मूर्तियाँ बिनसर, गोपेश्वर, ऋषिकेश, लाखामण्डल, पिथौरागढ़ व गुप्तोतर कालीन मूर्तियाँ जागेश्वर, बैजनाथ, गोपेश्वर, कटारमल आदि स्थानों से प्राप्त हुई हैं। पाषाण के अतिरिक्त काष्ठ व धातु से निर्मित मूर्तियाँ भी प्राप्त हुई हैं। कटारमल ''अल्मोड़ा'' से एक काष्ठ निर्मित स्तम्भ प्राप्त हुआ है इस स्तम्भ में पुरूष, मकर वल्लरी, नाग वेष्टित पूर्ण घट उत्कीर्ण है ये कलासौन्दर्य का अनुपम उदाहरण माना जाता है। गढ़वाल से प्राप्त स्थानक विष्णु तथा हरिहर, पिथौरागढ़ से प्राप्त विष्णु प्रतिमा, और गुनाग्राम अल्मोड़ा से प्राप्त विष्णु प्रतिमा महत्वपूर्ण हैं। उत्तराखण्ड में कुमाँऊ व गढ़वाल में विभिन्न प्रकार के स्थानीय देवी–देवताओं की मूर्तियाँ बनाकर उनके डोले घुमाये जाते हैं। ये मूर्तियाँ कभी विसर्जित कर दी जाती हैं और कभी पुनः स्थापित की जाती हैं। पार्थिव लिंग, सेली, लक्ष्मी की मूर्ति विवाह के अवसर पर बनने वाले समधी–समधन तथा विजयदशमी के अवसर पर बनने वाले पुतलों को भी मूर्ति निर्माण की लोककला के अर्न्तगत माना जाता है। मूर्ति–निर्माण के प्रमुख केन्द्र जागेश्वर, गोपेश्वर, मोरध्वज, लाखामण्डल इत्यादि थे।

7.3.2 चित्रकला

मानव निर्मित चित्रकला का जन्म गुफाओं में हुआ। इसके प्रमाण हमें कुमाऊँ व गढ़वाल के अनेक शैलाश्रयों में मिलते हैं। उत्तराखण्ड में लखुउड्यार नामक स्थान से पाषाण कालीन चित्रों का पता चला है। ये आकृतियां पक्के रंग के कारण आज भी सुरक्षित है। पर्वत वासी मानव भवन निर्माण आदि सभ्य तकनीकें जानने से पूर्व ही अपनी अनुभूतियों की कलात्मक अभिव्यक्ति करने लगा था।इस तथ्य के साक्षी गुफाओं के चित्र हैं। जिसमें चित्र कला के साथ–साथ नृत्यकला के भी दर्शन होते हैं। ये चित्र भारत के अन्य क्षेत्रों की ग्रफाओं के चित्रों से साम्य के आधार पर अपनी प्राचीनता को सिद्ध करते हैं। बाद के युगों में जैस–जैसे मनुष्य सभ्य होता गया वैसे–वैसे उसकी कलाओं का विस्तार और भी बढता गया। लेकिन चित्र कला के क्रमबद्ध विकास की कड़ियां अनेक बार टूटती दिखाई देती हैं। क्योकि बीच की अवधि के कोई अवशेष प्राप्त नहीं होते। वास्तुकला और मूर्तिकला आदि के परिमार्जन और विकास को देखते हुए यह मानना पड़ता है कि उस काल में यहा पर चित्रकला का रूप भी उच्चकोटि का रहा होगा, किन्तु पक्के रंगों और उचित संरक्षण के अभाववश उसके कोई चिन्ह सुरक्षित नहीं रह पाये। मध्य काल तथा आधुनिक काल में यहाँ जिस लोक चित्रकला की परम्परा चली उस पर यहा के धार्मिक जीवन की छाया स्पष्टतः दिखाई देती है। लोककला के साथ–साथ परिनिष्ठत कला भी पनपी, किन्तु उसका विस्तार और विकास बहुत कम हुआ। उत्तराखण्ड में चित्रकला की खोज बैरिस्टर मुकुन्दीलाल ने 20वीं सदी के प्रारम्भ में की थी। उत्तराखण्ड में चित्रकला की उत्पत्ति 1658ई0 में हुई। दो चित्रकारों श्यामदास व हरदास तथा इनके वंशजों को उत्तराखण्ड शैली का जन्मदाता माना जाता है।ऐतिहासिक काल में विकसित उत्तराखण्ड की चित्रकला शैली को गढ़वाल शैली के नाम से जाना गया है।

7.3.3 काष्ठ कला

काष्ठ कला भी मानव जीवन के साथ आदिम अवस्था से ही जुड़ी हुई है। समय के साथ धीरे–धीरे काष्ठ को काटकर, कुरेदकर और छीलकर बर्तन बनाये जाने लगे जिनमें खाद्य वस्तुयें रखी जाती थीं। उत्तराखण्ड में प्राचीन युग से लेकर आज तक काष्ठ पात्रों का निर्माण और उपयोग होता रहा है। प्रारम्भ में सादगी पूर्ण बर्तन, फिर उसमें कलात्मक अंलकरण और तदनन्तर मूर्तियों की रचना होने लगी। आज भी यहाँ के अस्कोट, दानपुर, जौनसार भाबर, चमोली और उत्तरकाशी आदि सीमान्त क्षेत्रों की

जनजातियाँ लकड़ी के बर्तन बनाने का व्यवसाय करती हैं। स्थानीय ग्रामवासी अनाज के भण्डारण से लेकर दूध तथा दुग्ध पदार्थो के लिए काष्ठ पात्रों का अधिक प्रयोग करते है। बड़े–बड़े भकार, दही रखने की ठेकी, पाली, मटठा बनाने की मथनी, डोकई या बिनारा, घी रखने की हड़पिया, फरूवा, मुमलि और नापतोल का माणा, नाली, पसेरी, हवन, पूजा इत्यादि के लिए स्रुवा, सूची, सरणी आदि पात्र इस बात के द्योतक हैं कि यहाँ प्राचीन काल से ही इन काष्ठ उपकरणों का निर्माण किया जाता रहा है और शनैः शनैःकाष्ठकला ने एक लोक कला का रूप धारण कर लिया। इस कला के दो रूप हैं–

1. उपयोगी रूप
2. सुशोभन रूप

काष्ठ–शिल्प के प्रमुख उदाहरण यहाँ विद्यमान स्थानीय शैली में निर्मित परंपरागत आवासीय भवन एवं यहाँ के प्राचीन मंदिर हैं । इनके अलावा कमाबेश काष्ठ–शिल्प के दर्शन फर्नीचर, बर्तन, मापक तथा अन्य घरेलू उपयोग के वस्तुओं, कृषि उपकरणों, धार्मिक वस्तुओं एवं अन्य कलात्मक वस्तुओ में भी होते हैं । इस अध्ययन द्वारा जो घटक प्रकाश में आये, उनका पुनः नामोल्लेख अग्रांकित है –

(1) प्रमुख प्रवेश–द्वार या खोली (2) अन्य द्वार (3) भवन के मुख्य भाग में विद्यमान विशाल खिड़कियां एकदरी, दोदरी, तिदरीइ त्यादि) (4) छोटी खिड़कियाँ (5) नकली खिड़किया (6) मौनपालक खड़कियाँ (7)स्तंभ (8) धरणी (9) उल्टी छत (10) छजली (11) धरणी (12) सीढ़ियां (13) मन्दिरों के शिखर में विद्यमान काष्ठ–छत्र ।

गृह उपयोगी एवं अन्य वस्तुओं में

(1) अलमारियाँ (2) अन्य फर्नीचर (3)घरेलू बर्तन (4) मापक बर्तन (5) कृषि–उपकरण (6)संग्रहण हेतु कोठार एवं भकार (7) धार्मिक वस्तुऐं (8) कलात्मक वस्तुऐं इत्यादि सम्मिलित की जा सकती हैं।

सुशोभन व अंलकारिक रूप के अंतर्गत मूर्तियाँ एंव दरवाजों, खिड़कियों के अंलकरण माने जाते थे। उत्तराखण्ड के परंपरागत काष्ठ–शिल्प के घटकों में अनेक मांगलिक चिह्नों, प्रतीकों एवं कलात्मक प्रतिमानों का उत्कीर्णन दिखाई देता है । इनमें से कुछ चिह्न/प्रतीक या कला–प्रतिमान केवल अलंकरण की दृष्टि से बनाये गये हैं, जबकि अनेक चिह्नों/प्रतीकों के पीछे वास्तु शास्त्र के कुछ निश्चित नियमों के प्रावधान की कल्पना की जा सकती है । यहाँ पर हम उत्तराखण्ड के काष्ठ–शिल्प में दर्शाये गये कुछ प्रमुख कला–प्रतिमानों का विश्लेषण करने का प्रयास करेंगे, यथा–

भारत में स्वास्तिक का मांगलिक चिह्न के रूप में प्रयोग अत्यंत प्राचीन काल से देखा जा सकता है । इस दृष्टि से मध्यहिमालय के भवन भी महत्वपूर्ण हैं, यहाँ के विभिन्न स्थानों में बने अनेक परंपरागत आवासीय भवनों की खोलियों (मुख्य प्रवेश–द्वार) में स्वास्तिक चिह्न का उत्कीर्णन देखा जा सकता है । स्वास्तिक का प्रयोग निर्विघ्न कार्य समाप्ति के लिए किया जाता है । शुभकार्यों का प्रतीक, स्वास्तिक, भवन के मुख्य–द्वार में इसलिए बनाया जाता है, ताकि उसकी अनिष्ट कारक दृष्टि से रक्षा हो सके और भवन में सुख–समृद्धि का बाहुल्य रहे ।स्वास्तिक दो रेखाओं द्वारा बनाया जाता है । दोनों रेखाओं को मध्य में समकोण स्थिति में विभाजित करके, दोनों रेखाओं के सिरों पर बाँयी ओर से दाँहिनी ओर समकोण बनाती रेखाओं को आगे इस प्रकार बढ़ाते हैं कि वह आगे की रेखा को छूने से पूर्व ही रूक जाय । स्वास्तिक को किसी भी स्थिति में रखें, उसकी रचना एकसी रहती है । स्वास्तिक के सिरों पर निर्मित समकोण पर मुड़ी हुई रेखायें अन्तहीन बताई गई हैं, जिसका कोई स्पर्श या संधि–बिन्दु नहीं होता है, क्योंकि ब्रह्माण्ड अनंत है । स्वास्तिक, सृष्टिचक्र के गूढ़ रहस्य का द्योतक है । स्वास्तिक में निहित अलौकिक शक्ति के कारण ही यह धार्मिक आस्था का प्रतीक बना ।'स्वस्ति' का प्रयोग कल्याण, आशीर्वाद,

कुशल–क्षेम, शुभकामना, पुण्य, पाप–प्रक्षालन एवं दान स्वीकारोक्ति के रूप में भी किया जाता है । इसका शाब्दिक अर्थ है – जो स्वस्ति अर्थात् क्षेम का कथन करता है । स्वस्ति को 'गणेश' का लिप्यात्मक रूप भी माना जाता है । स्वास्तिक .चक्र की गतिशीलता बाँये से दाँये को बतलाई गई है । पृथ्वी को गति देने वाली ऊर्जा का प्रमुख स्रोत उत्तरायण से दक्षिणायण की ओर होता है । वास्तुशास्त्र में उत्तर दिशा का अत्यंत महत्व है, अतः इस दिशा में भवन को खुला रखा जाता है, ताकि चुम्बकीय ऊर्जा एवं अन्य अलौकिक शक्तियों को भवन में संजोया जा सके । ईसाईयों के भवनों में लगा 'क्रास' चिह्न भी स्वास्तिक से मिलता–जुलता है । वास्तु में, स्वास्तिक चिह्न को भवनों के द्वारों पर एवं मंगल–पर्वों पर भवनों की दीवारों पर अंकित किया जाता है, आकाश से पृथ्वी तक ब्रह्माण्ड के चतुर्भुजीय आकार, धन चिह्न (+) की भाँति का स्वास्तिक चारों दिशाओं का प्रतीक है और जब इस चिह्न में चार भुजायें दक्षिणावर्ती होकर जुड़ जाती हैं, तो यह सूर्य का प्रतीक बन जाती हैं, क्योंकि सूर्योदय एवं सूर्यास्त की गणना भी दक्षिणावर्ती गति से ज्ञात होती है । स्वास्तिक का प्रयोग दिशापति देवों (अग्नि, इन्द्र, वरुण व सोम) की पूजा के लिए भी किया जाता है ।

उत्तराखण्ड के आवासीय भवनों एवं मंदिरों में प्राप्त दरवाजों, तिवारियों एवं खिड़कियों के द्वार–चौखटों में लगे स्तंभों के निचले भागों का आकार मंगल–कलश/घट–पल्लव की भांति का सर्वसामान्य रूप से प्रायः सभी उदाहरणों में पाया जाता है, यह मध्यहिमालय के काष्ठ–घटकों में संभवतः सर्वाधिक प्रचलित कला–अभिप्राय है। जल से परिपूर्ण एवं आम्रपत्र, पुष्प तथा नारियल से आच्छादित मंगल–कलश, वैदिक–काल से ही शुभता, समृद्धि एवं सम्पन्नता का प्रतीक माना जाता रहा है । सृष्टि का उद्भव जल से हुआ माना गया है, अतः जल, ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का प्रतीक है । आम एक सदाबहार वृक्ष है और उसके पत्ते (पल्लव) सृजन के पश्चात जीवन की निरन्तरता के बोधक माने गये हैं । आम की लकड़ी को भी पर्याप्त पवित्र माना गया है, यज्ञादि कार्यों के लिए इसकी लकड़ी उत्तम बताई गई है । आम की पत्तियों द्वारा बंधनवार बनाने की परंपरा भी भारत में अत्यंत प्राचीन रही है । जलपूरित कलश के ऊपर आम के पत्ते (पल्लव), मंगल–कलश को पूर्णता प्रदान करते हैं । घर को भी मंगलघट की संज्ञा दी गई है । प्रत्येक हिन्दू अनुष्ठान में कलश–स्थापन का विधान देखा जा सकता है।

उत्तराखण्ड के कुछ स्थानों में काष्ठ–घटकों में ॐ प्रतीक चिह्न भी उत्कीर्ण मिलता है । ॐ को हिन्दू धार्मिक ग्रंथों में, 'शब्द– ब्रह्म' का प्रतीक माना गया है । इस, 'ओंकार' को जो पहचान लेता है, जो इसके रहस्य को जान लेता है, वह मनोवांछित फल प्राप्त कर लेता है । ॐ, सम्पूर्ण ब्रह्म, ब्राह्माण्ड, प्रणव–मंत्र एवं अपरिमित शक्ति का प्रतीक है। यह एक ऐसा शब्द है जिसको देखने एवं आचरण करने (जपने) मात्र से मन एकाग्रता की ओर तत्पर हो जाता है और शान्ति–समृद्धि का मार्ग प्रशस्त होता है ।

उत्तराखण्ड के कुछ आवासीय भवनों में मछली (मीन) का अंकन भी हुआ है । मीन सच्चे प्रेम का प्रतीक माना गया है। यात्रा आरंभ करने से पूर्व, मत्स्य–दर्शन, कार्य सफलता का शुभ–शगुन माना जाता है । भवन के मुख्य–द्वार या अन्य स्थलों में मीन'–चिह्न को उत्कीर्ण के करने के पीछे संभवतः यही उद्देश्य रहा है, कि यदि मत्स्य के प्रत्यक्ष दर्शन नहीं होते हैं, तो उसके चित्र में दर्शन कर शुभ–शगुन कर लिया जाय । पौराणिक मान्यता के अनुसार भी विष्णु का प्रथम अवतार 'मत्स्य अवतार' ही है, प्रलय के समय मीन ने ही मनु की रक्षा की थी । यह कामदेव की ध्वजा का प्रतीक भी माना गया है । स्त्रियों के कर्णाभूषणों में, मत्स्य–कुण्डल के पहनने की परंपरा मिलती है । भवन में मीन का अंकन शुभता में वृद्धि करता है।

उत्तराखण्ड के आवासीय भवनों एवं मंदिरों में विद्यमान, काष्ठ–घटकों के अलंकरण के लिए ज्यामितीय अभिप्रायों का भी अधिकाधिक प्रयोग किया गया है । इन अभिप्रायों के निर्माण में सीधी सरल,

आड़ी–तिरछी, गोलाईयुक्त रेखाओं का प्रयोग किया गया है । रेखाओं के अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के त्रिभुजों, चतुर्भुजों, पंचभुजों इत्यादि तथा गोलाकार आकृतियों द्वारा अनेक प्रकार का अभिप्रायों का निर्माण यहाँ के काष्ठ–शिल्पकारों ने किया है । नाना प्रकार के कोण यथा–षट्कोण, अष्टकोण आदि भी काष्ठ–उत्कीर्णन में अवतरित हुए हैं । इनमें षट्कोण जहाँ एक ज्यामितीय आकृति है, वहीं धार्मिक रूप से भी इस आकृति का महत्त्व है, प्रायः प्रत्येक हिन्दू–अनुष्ठान में षट्कोण लिखकर उसके ऊपर कलश की स्थापना की जाती है ।

उत्तराखण्ड के काष्ठ–शिल्प में अनेक देवी–देवताओं, स्त्री–पुरुषों, पशु–पक्षियों एवं अन्य जीव–जन्तुओं के चित्रण को भी पर्याप्त स्थान दिया गया है । यहाँ पर पुनः यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि इन सजीव आकृतियों के निर्माण में न तो शारीरिक अनुपात का ध्यान रखा गया है और न ही शारीरिक बनावट एवं गोलाई का, निश्चय ही इसके अपवाद मिलते हैं, लेकिन सामान्यतः अधिकांश उदाहरणों में यही प्रवृत्ति पाई जाती है। उत्तराखण्ड के काष्ठ–घटकों में उत्कीर्ण सजीव–आकृतियों के विषय में यह कहा जा सकता है कि ये अत्यधिक, 'स्टाइलाइज्ड' हैं। उत्तराखण्ड के भवनों के द्वारों, खिड़कियों, स्तंभों, धरणियों, काष्ठ–पट्टों इत्यादि घटकों में जिन देवी–देवताओं का अंकन हुआ है, उनमें गणेश, सिंहवाहिनी दुर्गा, हनुमान, पद्मासनस्थ लक्ष्मी, शिव, गंगा–जमुना, सूर्य, चंद्र, सप्तमात्रकाओं में से अनेक मात्रकायें, विष्णु के दशावतारों में से अनेक अवतार और दशावतार भी उत्कीर्ण मिलते हैं । इसके अलावा अनेक स्थलों में स्थानीय देवों को भी उत्कीर्णन का माध्यम बनाया गया है । काष्ठ–घटकों में सामान्य स्त्री–पुरुषों को पर्याप्त अभिव्यक्ति मिली है, इसके सर्वश्रेष्ठ उदाहरण अल्मोड़ा नगर के खजांची मुहल्ला और चीनाखान मुहल्ला के कुछ पुराने भवनों में सामने की काष्ठ–आच्छादित दीवार में बनी मानवाकृतियाँ हैं, जो उत्तरांचल के काष्ठ–शिल्प के प्रतिनिधि उदाहरण कहे जा सकते हैं । इनके अलावा विभिन्न वेश–भूषाओं, मुद्राओं, अनेक प्रकार के अस्त्र–शस्त्रों से युक्त एवं नाना पशुओं में सवार, स्त्री–पुरुषों की आकृतियों को भी यहाँ काष्ठ–उत्कीर्णन में देखा जा सकता है ।

उत्तराखण्ड के काष्ठ–शिल्प के घटकों में पशु–पक्षियों की आकृति को भी उत्कीर्णन का विषय बनाया गया है। अनेक स्थानों में तो स्वयं, काष्ठ–घटकों को तोते, हाथी, मयूर, हंस, वृषभ आदि पशु–पक्षियों की आकृतियों में बनाया गया है, ऐसा विशेष रूप से द्वार–चौखट के साथ लगी पार्श्ववर्त्ती झालरों में देखा जा सकता है। यहाँ पर यह स्पष्ट करना आवश्यक है, कि ऐसी आकृतियों में 'लोच और वास्तविकता' (Plasticity & Naturalism) की कमी दिखाई देती है।जिन पशु–पक्षियों को स्थानीय काष्ठ–उत्कीर्णन में स्थान मिला है, उनमें प्रमुखतः हाथी, बाघ, ऊँट, घोड़ा, गाय–बैल, सुअर, हिरन, बन्दर, बकरी, मोर, तोता, हंस, गरुड़, कबूतर इत्यादि उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त सर्प, मछली भी कुछ स्थानों में अलंकरण का विषय बनी हैं ।

अनेक प्रकार के बेल–बूटे, पत्र–पुष्प इत्यादि भी काष्ठ–अलंकरण में बहुतायत से प्रयुक्त किए गए हैं, पद्म–पुष्प का अंकन सर्वाधिक हुआ है । नाना–भांति के अस्त्र–शस्त्र युक्त मानवों का प्रदर्शन भी यहाँ के काष्ठ–शिल्प की विशेषता है । जिन अस्त्र–शास्त्रों को स्पष्टतः पहचाना जा सकता है, उनमें धनुष–बाण, तलवार, गदा, ढाल, त्रिशूल, कटार, बन्दूक आदि प्रमुख हैं । शस्त्रास्त्रों को बनाने का कारण, भूत–प्रेत (छल–छिद्र) इत्यादि से भवन की रक्षा करना बतलाया गया है ।

7.3.4 स्थापत्य कला

उत्तराखण्ड में वर्तमान में विद्यमान सभी मन्दिर निर्विवाद रूप से प्रस्तर निर्मित हैं । इसका एक प्रमुख कारण प्राचीन काल से ही सभी प्रकार के श्रेष्ठ प्रस्तर–'कटौ, कमरस और सागर' का यहाँ आसानी

से प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होना है । उत्तराखण्ड में स्थानीय खानों से निकाले गये प्रस्तर खण्डों को आवश्यकतानुसार तराश कर मन्दिर–निर्माण में प्रयुक्त किया गया है । उल्लेखनीय है कि भवनों के विपरीत यहाँ मन्दिरों की चिनाई में किसी प्रकार के 'गारे' का उपयोग नहीं किया गया है । मन्दिरों में प्रयुक्त बड़े–बड़े शिलाखण्डों को जोड़ने के लिए यहाँ लौह–शलाकाओं का प्रयोग किया गया है । यह तकनीक विशेष दृष्टव्य है क्योंकि लौह–शलाकाओं के बन्धन ने मन्दिरों में प्रयुक्त प्रस्तर–खण्डों को इतनी सुद्रढ़ता प्रदान की है कि हिमालय के इस भूकम्पग्रस्त क्षेत्र में स्थिति होने के बावजूद भी ये मन्दिर शताब्दियों से अपने मूल रूप में खड़े रह सके हैं ।

उत्तराखण्ड में सभी प्रकार की श्रेष्ठ इमारती लकड़ी प्राचीन काल से ही प्रचुर मात्रा में आसानी से उपलब्ध रही है । यहाँ के अनेक मन्दिरों के शीर्ष पर वर्षा एवं हिमपात से सुरक्षा के लिए लकड़ी के छत्र लगाये गये मिलते हैं । कटारमल मन्दिर–समूह से 9वीं सदी ईस्वी के काष्ठ–निर्मित मन्दिर–स्तंभ और 14वीं–15वीं सदी ईस्वी के लकड़ी के दरवाजे प्राप्त हुए हैं । उपरोक्त तथ्यों से 7वीं सदी ईस्वी के उत्तराखण्ड में काष्ठ निर्मित मन्दिरों के निर्माण की कल्पना की जा सकती है । यह कल्पना तब और भी पुष्ट होती है जब यह तथ्य उद्घाटित होता है कि उत्तराखण्ड के उत्तरकाशी जनपद में अनेक प्राचीन काष्ठ–निर्मित मन्दिर विद्यमान हैं ।

जहाँ तक मन्दिर–निर्माण में ईंटों के प्रयोग का प्रश्न है यह परिकल्पना की जा सकती है कि उत्तराखण्ड में भी प्राचीनकाल में मन्दिरों के निर्माण में ईंटों का प्रयोग किया जाता रहा होगा । पुरातात्त्विक उत्खननों में उत्तराखण्ड के अनेक स्थानों – वीरभद्र , मोरध्वज , काशीपुर से इस प्रकार के प्रमाण मिले हैं । इसके अलावा उत्तराखण्ड के अनेक स्थानों से ईंटों की ऐसी संरचनाऐं प्रकाश में आयीं हैं जो सम्भवतः मन्दिर रही हों । उत्तराखण्ड के अनेक गांवों में खेतों की जुताई के समय ईंटों के टुकड़े आदि का मिलना प्राचीनकाल में यहॉ ईट निर्माण का संकेत देता है । प्रस्तर और काष्ठ के अतिरिक्त यहाँ के मन्दिरों में अति अल्प मात्रा में लोहे का प्रयोग लौह–शलाकाओं के रूप में मिलता है । उपरोक्त सामग्री के अलावा किसी प्रकार के गारे या पलस्तर का प्रयोग यहाँ के मन्दिरों में नहीं हुआ है ।

कुछ अपवादों को छोड़कर उत्तराखण्ड के मन्दिर मोटे तौर पर विशिष्ट उत्तर–भारतीय मन्दिर शैली में ही बने हैं, जिसे मालु–प्रतिहार, नागर अथवा इण्डो–आर्यन शैली कहा जा सकता है । हिमांचल और उत्तराखण्ड के मन्दिरों का विश्लेषण करते हुए इन्हें सम्मिलित रूप से 'हिमांचल शैली' के नाम से अभिहित किया गया है । इस सन्दर्भ में एम.पी.जोशी 'वास्तुशिरोमणि' नामक ग्रन्थ का उल्लेख करते हुए बताते हैं कि उत्तराखण्ड में इस प्रकार के ग्रन्थ के अस्तित्व से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उत्तराखण्ड में भी वास्तुशिल्प की अपनी परम्परा थी और वास्तुशिल्प का स्थानीय विकास शास्त्रीय आधार पर भारत के अन्य क्षेत्रों की तरह गुप्तकाल के पश्चात् हुआ । प्रतीत होता है कि गुप्तोत्तर काल में जिस स्थानीय वास्तुशिल्प का विकास उत्तराखण्ड में प्रारंभ हुआ वह कत्यूरी काल में पूर्ण विकसित होकर उत्तराखण्ड की सर्वमान्य शैली के रूप में प्रतिष्ठित हुआ । कत्यूरी शासकों के विषय में अनुश्रुति है कि वे प्रतिदिन सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक एक मन्दिर का निर्माण करवाते थे । वर्तमान में विद्यमान सर्वाधिक भव्य, कलात्मक और उच्चकोटि के मन्दिर वस्तुतः कत्यूरी–काल से ही सम्बन्धित हैं । कत्यूरियों के उत्तराधिकारी चन्दों और पंवारों ने भी मूलतः कत्यूरी–वास्तुशिल्प के आधार पर ही अपने मन्दिरों का निर्माण किया था । अतः कत्यूरी काल में विकसित उत्तराखण्ड के मन्दिर–वास्तुशिल्प को 'कत्यूरी वास्तुशिल्प' के नाम से अभिहित किया गया है ।

उत्तराखण्ड में प्राचीन काल में अनेक मन्दिर, भवन,किले एवं नौले निर्मित किये गये ,जिनमें से अनेक मन्दिर,भवन,किले एवं नौले अभी भी अस्तित्व में हैं। ये स्थापत्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

उत्तराखण्ड के अल्मोड़ा,टिहरी एवं चम्पावत जैसे नगरों में प्राचीन किले एवं मन्दिर तथा अनेक अन्य नगरों तथा स्थानों में मन्दिर व नौले देखने को मिलते हैं। इन्हें गुप्तोत्तर कालीन स्थापत्य की श्रेणी में रखा जा सकता है। उत्तराखण्ड में स्थापत्य कलाओं पर प्रकाश डालने वाले कुछ ग्रंथों में 'वास्तु शिरोमणि' प्रमुख है। इसकी रचना पंवार वंश के राजा श्यामशाह के काल की कही जाती है। संस्कृत भाषा में लिखे गये इस ग्रंथ की रचना सन् 1619 ई0 में की गई थी। उत्तराखण्ड के प्राचीन स्थापत्य की जानकारी प्रदान कराने में यहाँ निर्मित मंदिरों का महत्व सर्वाधिक है। शैव तथा वैष्णव संप्रदाय से संबंधित बहुसंख्य मन्दिर उत्तराखण्ड के विभिन्न स्थलों में निर्मित हैं।जिनमें से अधिकतर 6वीं–7वीं शताब्दी से 13वीं–14वीं सदी के मध्य के हैं।

7.3.5 धातु शिल्प

मध्य हिमालय की इस धरती में प्राकृतिक संम्प्रदाओं का विपुल भण्डार भरा हुआ है। जितनी संम्पदा दिखाई देती है, उतनी ही इसके भीतर भी संरक्षित है, जिसमें प्रमुख तौर पर अनेक प्रकार की धातुऐं और खनिज हैं। लौह युग और ताम्र युग में यहां धातुओं को तपा कर और ढ़ाल कर बर्तन बनाए जाने लगे थे। बनकोट नामक स्थान से प्राप्त हुई तांबे की मानवाकृति उत्तराखण्ड में मूर्ति निर्माण की सर्वप्रथम उदाहरण है। उत्तराखण्ड में तांबे की खानें थीं, जहा से तांबा निकाल कर उन्हे सरल आकृतियों में ढ़ाल कर गंगा घाटी आदि स्थानों में भेजा जाता होगा। यहां की टम्टा जाति का इतिहास ताम्र उद्योग के साथ जुड़ा हुआ है। यह उनका पारिम्परिक व्यवसाय रहा है। मध्य काल में विशालकाय मंदिरों की छतें एंव कलश, विशालकाय परात, गागर आदि बर्तन तथा कृषि एंव युद्ध के औजार यहीं से निकाली गई धातुऐं से बनाए जाते थे। पहाड़ों से लेकर तराई और गंगा घाटी में प्राप्त ताम्र संचय उपकरणों की बहुलता इस बात का स्पष्ट संकेत देती हैं कि यहाँ पर धातुशिल्प विकसित हो रहा था। तांबे की उत्कृष्ट कारीगरी के प्राचीनतम प्राप्त उदाहरण कुणिन्द कालीन सिक्के है। कुणिन्द सिक्कों के बाद के प्रमाण ताम्र पत्रों के रूप में मिलते हैं। इनमें तत्कालीन राजाओं के शासनादेश अंकित हैं, लाखामण्डल से प्राप्त ईश्वरा की प्रशस्ति, पाण्डुकेश्वर तथा तालेश्वर ताम्रपत्र आदि प्रमुख ताम्रपत्र हैं। 8वीं सदी के आस–पास निर्मित बाड़ाहाट (उत्तरकाशी) तथा गोपेश्वर के त्रिशूलों में कलश तथा पुरालिपि अंकित है। लोहाघाट के लुखानी नामक जंगल में हमें बिखरे हुए अनेक लौह खण्ड, उत्खनन से बने अनेक छोटे–छोटे गड्ढ़े तथा लोहा तपाने हेतु बनी बहुत पुरानी भट्टियों के बिखरे अवशेष आदि मिले हैं। लोहाघाट के अतिरिक्त अस्कोट, पिथौरागढ़, राईआगर तथा देहरादून में भी लोहे, तांबे आदि धातुओं की खानों के चिह्न मिलते हैं। धातु शिल्पियों ने काफी हद तक अपनी परम्परा को सुरक्षित रखा है, फिर भी स्थानीय निवासियों के दैनिक व्यवहार में इनका स्थान अब गौण होता जा रहा है, क्योंकि प्रत्येक छोटे स्थान पर भी बाजार बन गये हैं और बाजारों में अन्य प्रकार के आर्कषक और सस्ते बर्तन, आभूषण आदि तैयार मिलते हैं।

7.3.6 ऐपण

पर्वतीय क्षेत्रों में वर्तमान में जो कला सर्वाधिक प्रसिद्ध है वह लोक चित्र परम्परा 'ऐपण' या अल्पना है जो पूर्व मध्य काल में उद्भूत प्रतीत होती है। उत्तराखण्ड के मूल निवासी माने जाने वाली जातियों में आज भी अल्पना निर्माण की प्रथा प्रचलित है। इसकी प्रमुख लाक्षणिकता गेरू और बिस्वार द्वारा हाथ से अंकन करना हैं। बिस्वार भीगे चावलों को महीन पीसकर उससे बने पानी के घोल को कहते हैं। कुछ स्थानों पर बिस्वार के स्थान पर कमेट या सफेद मिट्टी का प्रयोग भी किया जाता है।सामान्य रूप से गेरू से लिपी भूमि पर ऐपण किये जाते हैं। उत्तराखण्ड में 'देहरी अलकंरण 'की परम्परा बहुत लोकप्रिय है। यहां पर 'देहरी ऐपण' का एक विशेष पर्व 'फूलदेई' है। विवाह, यज्ञोपवीत आदि पर लकड़ी के पट्टों पर 'ऐपण' बनाये जाते हैं।इसी प्रकार धुलिअर्ध्य की चौकी, जनेऊ तथा नामकरण के अवसर पर

सूर्य दर्शन की चौकी बनाई जाती हैं। विभिन्न स्थानों एंव सस्कारों पर अंकित किये जाने वाले एपणों को भिन्न–भिन्न नाम दिये जाते हैं जैसे– लक्ष्मी पूजा के लिए लक्ष्मी यंत्र या लक्ष्मी चौकी तथा शिवार्चन के लिए शिव पीठ कहा जाता है। ये ऐपण विभिन्न पर्वो एंव अनुष्ठानों पर किशोरियों एंव महिलाओं द्वारा लिखे जाते हैं।

7.3.7 भित्ति चित्र

दीवारों पर चित्रण करने की विधा को भित्ति चित्रण कहा जाता है। इसमें गेरू और बिस्वार का प्रयोग नहीं अपितु रगों का प्रयोग किया जाता है। उत्तराखण्ड में आदिमानव के द्वारा गुफाओं में अनेक चित्र बनाए गये मिलते हैं। कुमाँऊ का लखिउड्यार एवं गढ़वाल का गोरखाउड्यार इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। लोक चित्रण की एक शैली 'बरबून्द' भी है, जिसका अर्थ रेखा और बिन्दु द्वारा चित्रण करना है। इसके अतिरिक्त वसुधारा, ज्यूंती, गंगा दशहरा पत्र, पिछौड़, थापे, जन्माष्टमी पट्टा, वेदी अंकन, हाथ के थापे, षष्ठी चौकी इत्यादि भित्ति चित्रों के उपभेद हैं।

7.3.8 उत्तराखण्ड की लोक चित्र शैली

ये शैलियां कलाकार की कल्पना और सृजन की परिचायक हैं। उत्तराखण्ड में लोक चित्र की शैलियों को अनेक वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। कुछ प्रमुख चित्र शैलियां इस प्रकार हैं–

आकृतिपरक शैली – इस प्रकार के लोक चित्रों में देवी–देवताओं ,पुरूष–महिलाओं एंव पशु–पक्षियों आदि का अंकन हुआ है।

उकेरण शैली – इस शैली में गोदना तकनीक से बने चित्रों को सम्मिलित किया जाता है। शिव पीठ या अन्य देवी देवताओं के मंत्र, तांबे आदि की प्लेट पर खुदवाए जाते हैं।

रेखा प्रदान शैली – यहां के ऐपण, पट्ट चित्र आदि रेखा प्रधान शैली पर आधारित अंकन हैं। यही नहीं यहां की कला शैली में रेखांकन की ही प्रधानता देखी जाती है।

पूरक शैली – उत्तराखण्ड के लोक चित्रो की शैली में रंग भरने की अपनी एक विशेष परम्परा दिखाई देती हैं। दुर्गाष्टमी का थापा पूरक शैली के अर्न्तगत आता है।

छापा चित्र शैली – गंगा दशहरा पत्र आदि अब छपे हुऐ रूप में उपलब्ध होते हैं परंतु पूर्वकाल में इन्हैं हाथ से ही बनाने की परंपरा थी। गंगा दशहरा पत्र को दीवार पर चिपकाने से बरसात में बिजली गिरने से भवन को सुरक्षित किया जाता था।

7.3.9 अन्य हस्तकलाऐं

व्यवसाय के रूप में प्रयुक्त होने वाली अनेक हस्तनिर्मित वस्तुऐं अपनी कलात्मकता के कारण हस्तनिर्मित कलाकृतियों में सम्मिलित हो गई हैं। इन व्यावसायिक कलाओं में स्थापत्य, धातु शिल्प तथा काष्ठ कला भी सम्मिलित हैं। इनके अतिरिक्त जिन कलाओं ने उद्योग का रूप ग्रहण कर लिया है, उनमें प्रमुख तौर पर ऊन, बांस–रिंगाल की चटाई, टोकरी, ढोके, छत्यूरे तथा मिट्टी आदि की दस्तकारी हैं। कुमाँऊ में अति प्रचलित रंगवाली पिछोड़े का महत्व अधिक है।उत्तराखण्ड की लोक कला के अर्न्तगत आंकिक, अभिव्यक्ति, चित्र, ऐपण, रंगोली, चौक पूरना, वस्त्रछपाई, पर्व उत्सवों पर निर्मित की जाने वाली विविध आकृतियों के साथ ही पेपरकला, काष्ठ कला, बुनने की कला, आभूषण बनाने की कला, बर्तन

बनाने की कला तथा मूर्तिकला आदि निहित हैं। प्रत्येक लोक कला की अपनी विशेषता है तथा यह उत्तराखण्ड में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

1.ऐपण से आप क्या समझते हैं?

2. उत्तराखण्ड की लोक चित्रण शैली का परिचय दीजिए ?

7.4 लोक साहित्य

दुनिया के सभी भाषा समाजों के साहित्य का प्राचीनतम स्वरुप उनका लोक साहित्य होता है, जिसमें उस समाज की संस्कृति, इतिहास तथा समस्त जीवन अनुभव और ज्ञान का संचय तो रहता ही है, उसके साथ ही उसमें लोक रंजन के समकालीन एवं शाश्वत तत्व भी विद्यमान रहते हैं। लोक साहित्य किसी भी समाज की सबसे मूल्यवान थाती होती है। उसी में उसका भावी इतिहास गढ़ा रहता है।उत्तराखण्ड के गुफावासी मनुष्य चित्रकारी, नृत्य तथा अभिनय आदि द्वारा अपनी अभिव्यक्ति किया करता था, तो स्वाभाविक तौर पर इसके साथ ही लोक गीतों की अभिव्यक्ति भी करता था, क्योंकि हर्ष–शोक भावों की प्रथम अभिव्यक्ति मनुष्य ध्वनि व उद्‌गार के द्वारा ही करता है। लिखित भाषा से पूर्व मौखिक परम्परा से लोक साहित्य का संचयन और संवहन बहुत अच्छी तरह से होता था। काल क्रमेण भाषिक परिर्वतन के साथ–साथ उस संचरण का रुप भी बदलता गया। भाषा का लिखित रुप आने के बाद से प्राचीन लोक साहित्य का विलुप्त होना और भी स्वाभाविक है। इसलिये हम यह कह सकते हैं कि जितनी पुरानी उत्तराखण्ड की भाषा और बोलियाँ हैं, उतना ही पुराना यहां का लोक साहित्य भी है। यह अपनी बोली के साथ ही विकसित हुआ। यहां की प्रकृति, जलवायु एवं विशिष्ट भौगोलिक परिस्थितियों का यहां के लोक जीवन तथा उसकी अभिव्यक्ति पर गहरा प्रभाव पड़ा है। यहां के पार्वोत्सवों, मेलों, व्रतों, सांस्कृतिक समारोहों और धार्मिक अनुष्ठानों आदि के अवसर पर यहां के लोक साहित्य के विविध रुप प्रकट होते हैं।

लोक साहित्य के वर्गीकरण में सामान्यतया जो पद्धति अपनाई जाती है, उसके आधार पर लोक साहित्य के तीन वर्ग हैं– पद्य,गद्य तथा चम्पू। पद्य के अन्तर्गत जागर आदि गाथाऐं तथा मुक्तक गीत होते हैं तथा गद्य साहित्य के अन्तर्गत लोक गाथाऐं, मुहावरे, कहावतें और लोक प्रचलित मंत्र साहित्य उपलब्ध होता है। चम्पू गद्य–पद्यात्मक शैली में उपलब्ध होते हैं। साहित्य स्वरुप की दृष्टि से आलोच्य क्षेत्र का लोक साहित्य इस प्रकार विभाजित किया जाता है ''लोकगीत, लोकगाथा, लोककथा, लोकनृत्य, लोक नाट्य, प्रकीर्ण लोक साहित्य (लोक मुहावरे एवं पहेलियाँ)–

7.4.1 लोक गीत

उत्तराखण्ड का लोक साहित्य गीतों की दृष्टि से बहुत समृद्ध है। हिमालय की गोद में खेतों, नदियों, पर्वतों, घाटियों तथा घुघुती, काफू, मुनाल आदि पक्षियों के साथ यहां का मानव युगों से गाता रहा है। वह हिमालय की प्राकृतिक सुन्दरता के बीच यहां के कठिन जीवन को अनेक गीतों के माध्यम से सरस बना कर व्यतीत करता रहा है। लोक गीत लोक साहित्य की सबसे पुरानी विधा होते हुये भी पुराने गीत अपने मूल रुप में नही मिल पाते, क्योंकि मौखिक परम्परा में सुरक्षित रहने वाले इन गीतों में स्थान, समय और स्थिति के अनुसार परिर्वतन भी होते रहे हैं। यहां गाये जाने वाले लोक गीतों के प्रमुख रुप इस प्रकार हैं– संस्कार गीत, स्वान गीत, चूड़ाकर्म के समय के गीत, कन्यादान मण्डप के गीत, विदाई के

गीत, न्योली, छोपती, छपेली, चांचरी, चौंफुला, झोड़ा, बाजूबन्द, देवी–देवताओं संबंधी गीत, अन्य गीत–बैर,झोड़े, कृषि गीत आदि। शस्त्रों में सोलह संस्कार का विधान है। प्राचीन काल में यह सभी संस्कार विधिवत सम्पन्न किये जाते थे, किन्तु आज प्रमुख रुप से केवल जन्म, विवाह और मृत्यु संबंधी संस्कार ही रह गये हैं। कुमाऊँनी–गढ़वाली, जन–समाज में मृत्यु संस्कार को छोड़कर शेष समस्त संस्कारों के समय स्त्रियों द्वारा गीत गाये जाते हैं। वस्तुतः संस्कार गीत स्त्रियों की ही सम्पत्ति हैं। स्त्रियों ने ही समय–समय पर विभिन्न संस्कारों के अवसर पर गा–गा कर इन्हें आज तक सुरक्षित रखा है। उत्तराखण्ड के लोक समाज में कुछ ऐसे संस्कार गीत प्रचलित हैं जो किसी भी शुभ कार्य अथवा संस्कार के आरम्भ में अवश्य गाये जाते हैं। कुमाऊँ मे इन्हें 'शकुनाखर'' और ''न्यूतण'' कहा जाता है। गढ़वाल में कभी इनके लिये ''मंगल'' शब्द प्रयुक्त होता था परन्तु आज मंगल केवल विवाह गीतों के लिये ही रुढ़ हो गया है।

7.4.2 लोक गाथा

लोक साहित्य की विधाओं में लोक गाथाओं का स्थान सर्वोपरि है। लोकगाथाऐं लोकविश्वासों पर आधारित होती हैं। इनमें क्षेत्र–विशेष की ईश्वरीय, भूत–प्रेतों, राक्षस, परियों और प्रणय–वात्सल्य आदि से संबंधित घटनाओं का सरल भाषा में संगीतमय वर्णन होता है। गथाओं में लोक जीवन की संस्कृति का निर्मल प्रतिबिम्ब झलकता है। लोक गाथाओं को निम्न पाँच श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है–देव गाथाऐं,पौराणिक गाथाऐं,प्रणय गाथाऐं,वीर गाथाऐं,स्फुट गाथाऐं।

उत्तराखण्ड की उपलब्ध गाथाओं के अध्ययन से यही प्रतीत होता है कि सामन्तवादी व्यवस्था के आरम्भ होने से पूर्व ही इनकी रचना लोक में व्याप्त थी। 'पंवाड़ा' और 'भड़ौ' को उत्तराखण्ड में कत्यूरी शासन के बाद हुये अनेक सामन्तों के प्रशस्ति गीत कहा जा सकता है। उस काल में सत्ता के लिये लड़ने वाले छोटे–छोटे सामन्तों या भंड़ों के अपने–अपने चारण होते थे, जो युद्ध स्थल में चंफ और हुड़किया, भाट इत्यादि इन्हीं गायकों के वंशज माने जाते हैं। इस पूरे क्षेत्र में प्रचलित वीर गाथाऐं सातवीं से सत्रहवीं सदी ई0 के बीच रची गई प्रतीत होती हैं। सबसे पुराने वीर गीत पंवाड़े और रमौल गाथाऐं हैं। अन्य भारतीय साहित्यों की भाँति कुमाऊँ–गढ़वाल का आदि मध्य काल भी वीर गाथाओं से समृद्ध रहा है। वीर गीतों के साथ–साथ श्रृंगार और प्रेम गीत भी प्रचलित थे। भड़ौं, पवाड़े तथा अन्य वीर–श्रंगार युक्त गाथाऐं, जैसे–सूर्यवंशी राजा मालूशाही, जीतू, फयूँली, हरुहीत इत्यादि की रचनाऐं इसी काल की है। गीतों मे व्यक्त नारी के अभाव तथा कष्टों के अतिरिक्त ढाक्की, हुड़किया तथा बाद्यी जातियों का व्यावसयिक आविर्भाव भी इसी सामन्ती प्रथा की देन है। इन जातियों के पुरुष उपार्जन हेतु ठाकुरों, सामन्तों, ज़मींदारों के घर जाकर गाते बजाते–नाचते थे। धीरे–धीरे उन्होंने स्त्रियों को भी इस व्यवसाय में लगाया। यह जाति इस पेशे से आजीविका अर्जित करने के कारण निम्न मानी जाती रहीं, लेकिन यहाँ के सामाजिक इतिहास को समेटने वाले गीतों और गाथाओं को सजीव रखने का श्रेय भी इसी जाति को जाता है। वास्तव में कुमाऊँनी और गढ़वाली लोक गाथाऐं यहाँ के लोक जीवन का महाकाव्य हैं। इनके माध्यम से हमें परम्पराओं, रीतिरिवाजों, लोकविश्वास, रहन–सहन आदि के साथ सामाजिक और राजनैतिक इतिहास की जानकारी भी मिलती है। धर्मिक गाथाओं में वीर और श्रृंगार का तथा वीर गाथाओं में धर्म तथा प्रेम का निरुपण भी मिल जाता है। इस क्षेत्र में स्थानीय देवी देवताओं को प्रसन्न करने के लिये गायी जाने वाली उनसे संबंधित गाथा जागर कहलाती है। कुछ देवताओं के लिये ख्याला या घंटेली लगाई जाती है। जागर गाथा गाते हुये अधिकांश तौर पर किसी व्यक्ति में गाथा के नायक देवता का अवतरण होता है। किसी भी देवता के जागर से पूर्व पौराणिक गाथायें अवश्य गायी जाती हैं। गढवाल में कुछ पौराणिक गाथाओं के ही जागर भी लगाये जाते हैं। दोनों क्षेत्रों में स्थानीय देवताओं की संख्या अत्यधिक है, जिनमें

प्रमुख गौरिया (ग्वाल्ल, गोरिल, गोलू, ग्वैल), गंगनाथ, हरुसैम, निरंकार, छुरमल, कलबिष्ट, नागरजा–नागराजा, नरसिंह, भैरों इत्यादि हैं। गढवाल के प्रसिद्ध देवता नागराजा के रुप में हिन्दुओं के प्रसिद्ध देवता कृष्ण को नचाया जाता है।

उत्तराखण्ड की लोक गाथाओं में सर्वाधिक प्रसिद्ध प्रणय गाथा राजुला–मालूशाही की है। इसमें प्रेमाख्यान परम्परा की सभी विशेषताऐं, जैसे स्वप्न में प्रियदर्शन, मन्दिर में मिलन हेतु प्रयास, मार की बाधायें, पक्षी द्वारा संदेश, चमत्कार तथा अलौकिकता आदि मिलती हैं। इस प्रकार गाथाओं में नायक के जोगी वेष धारण करने की प्रवृति में नाथ संप्रदाय और सूफी प्रेमाख्यान परम्परा दोनों का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। वीर गाथाऐं कुमाऊँ में भड़ौ तथा गढ़वाल में पवाड़ा नाम से प्रचलित है। इन गाथाओं में हिमालय क्षेत्र के विभिन्न राजाओं तथा योद्धाओं के बीच हुये युद्धों का वर्णन मिलता है। कुछ गाथाऐं यहां के एतिहासिक राजाओं– ज्ञान चन्द, भारती चंद, रतनी चन्द, अजयपाल, मान शाह तथा प्रतीम देव आदि से संबंधित हैं। इससे भिन्न जातीय वीरों की गाथाओं में शौर्य और पराक्रम के दर्शन होते हैं। पूरे उत्तराखण्ड में इस तरह की तीस से अधिक लोकगाथाऐं मिलती हैं।

7.4.3 लोक कथा

कुमाऊँ और गढ़वाल की लोक कथाओं का इतिहास यहां के निवासियों की बोलियों के जन्म काल तक पीछे जाता है। लेकिन उनका संचयन असंभव है। वे बनती, मिटती, फिर जन्म लेती और विविध मोड़ लेती, बहती हुई आज तक पहुँची हैं। कथावाचक अपनी जानकारी की समस्त प्रकार की कथाओं के साथ–साथ अपने अनुभव, ज्ञान एवं कल्पनाओं को संजोकर नयी पुरानी सभी प्रकार की कथाऐं सुनाता है। परन्तु आज कल टेलीविजन के पदार्पण के बाद से यह परम्परा टूटने लगी है। इनको समझने के लिये हम इन्हें वर्गीकृत कर सकते हैं :

1. पौराणिक कथायें
2. अलौकिक कथायें
3. हास्य कथायें
4. वृत कथायें
5. पशु–पक्षी संबंधी कथायें
6. अन्य कथायें

इस पूरे प्रदेश में व्याप्त लोक कथाओं की अपनी अनेक विशेषताऐं हैं। लोक विश्वासों पर आधारित, सहज, सरल शैली में कही गयी ये कथायें हसाँती और रुलाती भी हैं। पक्षियों की विशिष्ट ध्वनियों पर आधारित सभी कहानियाँ दुखान्त हैं। चमत्कार, अतिशयोक्ति और अतिमानवीय तत्वों की प्रचुरता होते हुये भी लोककथायें यहां के जन जीवन की वास्तविक झाँकी प्रस्तुत करती हैं। यह कथायें स्थानीय मनुष्यों की प्रकृति के साथ की निकटता, कोमल संवेदना और सूक्ष्म बुद्धि के साथ–साथ सीधे और भोले स्वभाव को भी व्यक्त करती हैं।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

1.लोक गाथाओं को कौन–कौन सी श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है।

3. लोक कथा से आप क्या समझते हैं

7.5 लोक नृत्य एवं नाट्य

पर्वतीय लोक जीवन में नृत्य एवं नाट्य की परम्परा प्रागैतिहासिक काल से रही है। प्रारम्भ में कंठ से विविध प्रकार की ध्वनियाँ निकाल कर तथा लकड़ी, बर्तन, पत्थर जैसे साधनों को बजाकर नृत्य किये जाते थे। भाषा के विकास के साथ गीत भी बनते गये और वाद्यों का भी परिस्कार होता गया। कुमाऊँ और गढ़वाल में थाली बजाकर गाने–नाचने की प्रथा अभी भी पाई जाती है। यहां के अधिकांश नृत्य सामूहिक हैं और प्रायः गीतों के साथ किये जाते हैं। इसलिए लोक गीतों का एक बड़ा भाग नृत्य गीतों के रूप में ही जाना जाता है। उत्तराखण्ड में प्रमुख प्रचलित नृत्य झोड़ा, चांचरी, छपेली, पाण्डवनृत्य, देवीनृत्य, नागराजा, छोलिया, ठुलखेल,,चौंफुला, छोपती, लांग या हुड़का–हुड़क्यानी का नृत्य, होली नृत्य, जागर नृत्य, ढोल नृत्य, झुमैलो नृत्य, बौंछड़ोनृत्य, भैला–भैला नृत्य, बाजूबन्द नृत्य, लामण नृत्य, बंजारा नृत्य, सयनालोक नृत्य, चैतीनृत्य इत्यादि हैं।

इस क्षेत्र में मंचन किये जाने वाले नाटकों को दो श्रेणियों में रखा जा सकता हैंः धार्मिक एंव सामाजिक। धार्मिक नाटकों में मुख्यतः राम के चरित्र से संबंधित नाटक हैं। इसी प्रकार कुछ नाटक कृष्ण के जीवन से संबंधित हैं। भले ही उत्तराखण्ड में कृष्ण लीला का मंचन कम ही मिलता है। रामलीला मंचन के साथ–साथ पैराणिक नाटकों में अभिमन्यु नाटक, कृष्ण जन्म, हरीशचन्द्र नाटक, ध्रुव, प्रह्लाद तथा श्रवण कुमार के नाटक प्रमुख हैं। यहां पर लोक मंच की सीमित स्थिति और स्थानीय रंग की प्रचुरता के बावजूद भी चरित्र–चित्रण का कार्य कुशलता के साथ निभाया जाता है। लोक नाटकों में स्थानीय विश्वास, रीति–रिवाज, धर्म और जीवन से संबंधित मान्यताऐं पूर्ण समाहित होते हैं इन नाटकों में भाषा, कथानक, संवाद, पात्र, चरित्र, संगीत पूर्ण रूप से लोक विश्वासों पर निहित होते हैं। जागर नृत्य, पाण्डव नृत्य, पवाड़े, छोलिया, नागराजा आदि नृत्य अभिनय प्रधान हैं। विशुद्ध लोक नाट्य के अन्तर्गत रामलीला,स्वांग और हिलजात्रा को समझा ता सकता है।

उपरोक्त प्रमाणों से यह पता चलता है कि उत्तराखण्ड में नाट्य स्वरूप पहले भी जीवित था, परन्तु किसी शैली विशेष की परम्परा पर ना आधारित होने के कारण तथा पूर्व काल में कथानक विहीन अभिनय के कारण वे नाटय स्वरूप आज के युग तक नहीं पहुँच पाये, फिर भी शिव और उसके गणों से सम्बद्ध हिलजात्रा और महाभारत के प्रसंगों से जुड़े पाण्डव नृत्य इस प्रदेश की प्राचीनतम नाट्य परंपरा के आज तक के सजीव उदाहरण हैं। उत्तराखण्ड में लोक देवताओं के प्रति अधिक आस्था देखने को मिलती है।'' महासू'' की गाथा को इसलिए इस संग्रह में स्थान दिया गया है।

7.6 संगीत

गीत,वाद्य और नृत्य इन तीनों से मिलकर संगीत बनता है।गीत का मूल स्वर–समूह होता है और स्वर नाद पर आश्रित रहता है।नाद से वर्ण , वर्ण से शब्द और शब्दों से भाषा का निर्माण होता है।एक प्रकार से समस्त जगत नाद के ही अधीन होता है। नाद के आंदोलित होने पर संगीत की सृष्टि होती है। परंपरा से समाज में प्रचलित नैसर्गिक संगीत को ही लोक संगीत कहा जाता है।

उत्तराखण्ड में परंपरा से चले आ रहे संगीत को ही लोक संगीत पुकारा जाता है।संगीत के गायन और वादन की विकसित परंपरा यहां दिखती है। उत्तराखण्ड में चारों प्रकार के वाद्य यंत्र–ताल वाद्य , सुशिर वाद्य , तार वाद्य और घन वाद्य मिलते हैं।उत्तराखण्ड के प्रमुख वाद्ययंत्रों के अंतर्गत ढोल , दमामा या नगाढ़ा हुड़का , डमरू , ढोलक मुर्यौ या मुरज डफली , झाल या झर्झरी ,थाल , मंजीरा , घांट या

घंटी या घड़ियाल , घुंघरू , खड़ताल, चिमटा , खंजड़ी, कंसेरी , तूरी या तूर्य, रणसिंगा , बासुरी , मसकबीन , शंख , नाद बिणै या बिणाई , एकतारा , दोतारा तथा सारंगी आदि प्रमुख हैं।

संगीत, लोक–गीतों का अभिन्न होता है और लोक संगीत में किसी न किसी रू‍प में शास्त्रीय संगीत के तत्व विद्यमान रहते हैं।उत्तराखण्डके लोकगीतों में दुर्गा, मालकौंस , पहाड़ी ,हिडोल ,भीमपलासी, देश , पीलू ,केदारा ,आदि रागों की छाया देखी जासकती है। यहां मुक्तकऔर प्रबंध गीत गाये जाते हैं।

7.7 सारांश

उत्तराखण्ड की संस्कृति मूलतः उसकी आचरण पद्धतियों, रीति–रिवाजों, पर्वों,मेले,गीतों–नृत्यों और कला के विविध रुपों में निहित होती है। इनसे प्रथा, परम्परा, दुःख–दर्द, रुढ़िवादिता, सामाजिक समस्याओं का वास्तविक ज्ञान भी हो जाता है। उत्तराखण्ड के गुफावासी मनुष्य चित्रकारी, नृत्य तथा अभिनय आदि द्वारा अपनी अभिव्यक्ति किया करता था, तो स्वाभाविक तौर पर इसके साथ ही लोक गीतों की अभिव्यक्ति भी करता था, क्योंकि हर्ष–शोक भावों की प्रथम अभिव्यक्ति मनुष्य ध्वनि व उद्‌गार के द्वारा ही करता है। लिखित भाषा से पूर्व मौखिक परम्परा से लोक साहित्य का संचयन और संवहन बहुत अच्छी तरह से होता था। उत्तराखण्ड में स्थापित मंदिरों से अनेक मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। ये मूर्तियाँ पाषाण, काष्ठ एंव धातुओं से निर्मित की गयी हैं। पाषाण युगीन चित्रकला के उदाहरण हिमालय की अनेक कंधराओं से प्राप्त हुए हैं, किन्तु मूर्तिकला के ऐतिहासिक युग से पूर्व के अवषेष नही मिलते हैं सर्वप्रथम मौर्य युगीन मृण मूर्तियाँ, रणिहाट उत्खनन से प्राप्त हुई हैं। गुप्त काल से पूर्व मूर्तियाँ बिनसर, गोपेश्वर, ऋषिकेष, लाखामण्डल, पिथौरागढ़ व गुप्तोत्तर कालीन मूर्तियाँ जागेश्वर, बैजनाथ, गोपेश्वर, कटारमल आदि स्थानों से प्राप्त हुई हैं। पाषाण के अतिरिक्त काष्ठ व धातु से निर्मित मूर्तियाँ भी प्राप्त हुई हैं। कटारमल ''अल्मोड़ा'' से एक काष्ठ निर्मित स्तम्भ प्राप्त हुआ है इस स्तम्भ में पुरूष, मकर वल्लरी, नाग वेष्टित पूर्ण घट उत्कीर्ण है ये कलासौन्दर्य अनुपम माना जाता है। गढ़वाल से प्राप्त स्थानक विष्णु तथा हरिहर, पिथौरागढ़ से प्राप्त विष्णु प्रतिमा, और गुनाग्राम अल्मोड़ा से प्राप्त विष्णु प्रतिमा महत्वपूर्ण हैं।

उत्तराखण्ड में लखुउड्यार नामक स्थान से पाषाण कालीन चित्रों का पता चला है। ये आकृतियां पक्के रंग के कारण आज भी सुरक्षित है। उत्तराखण्ड की चित्रकला शैली को गढ़वाल शैली के नाम से भी जाना जाता है। पर्वत वासी मानव भवन निर्माण आदि सभ्य तकनीकें जानने से पूर्व ही अपनी अनुभूतियों की कलात्मक अभिव्यक्ति करने लगा था।इस तथ्य के साक्षी गुफाओं के चित्र हैं। जिसमें चित्र कला के साथ–साथ नृत्यकला के भी दर्शन होते हैं। ये चित्र भारत के अन्य क्षेत्रों की गुफाओं के चित्रों से साम्य के आधार पर अपनी प्राचीनता को सिद्ध करते हैं। बाद के युगों में जैसे–जैसे मनुष्य सभ्य होता गया वैसे–वैसे उसकी कलाओं का विस्तार और भी बढता गया। लेकिन चित्र कला के क्रमबद्ध विकास की कड़ियां अनेक बार टूटती दिखाई देती हैं। क्योंकि बीच की अवधि के कोई अवशेष प्राप्त नहीं होते। वास्तुकला और मूर्तिकला आदि के परिमार्जन और विकास को देखते हुए यह मानना पड़ता है कि उस काल में यहाँ पर चित्रकला का रूप भी उच्चकोटि का रहा होगा, किन्तु पक्के रंगों और उचित संरक्षण के अभाववश उसके कोई चिह्न सुरक्षित नहीं रह पाये।

उत्तराखण्ड में प्राचीन युग से लेकर आज तक काष्ठ पात्रों का निर्माण और उपयोग होता रहा है। प्रारम्भ में सादगी पूर्ण बर्तन, फिर उसमें कलात्मक अंलकरण और तदनन्तर मूर्तियों की रचना होने लगी। आज के समय में यहा के अस्कोट, दानपुर, जौनसार भाबर, चमोली और उत्तरकाशी आदि सीमान्त क्षेत्रों की जनजातियाँ लकड़ी के बर्तन बनाने का व्यवसाय करती हैं। बड़े–बड़े भकार, दही रखने की ठेकी, पाली, मटठा बनाने की मथनी, डोकई या बिनारा, घी रखने की हड़पिया, फरूवा, मुमलि और नापतोल का

माणा, नाली, पसेरी, हवन पूजा इत्यादि के लिए स्रुवा, सूची, सरणी आदि पात्र इस बात के द्योतक हैं कि यहाँ की प्राचीनतम कलाओं में काष्ठकला भी एक थी।

लोक साहित्य के वर्गीकरण में सामान्यतया जो पद्धति अपनाई जाती है, उसके आधार पर लोक साहित्य के तीन वर्ग हैं– पद्य,गद्य तथा चम्पू। हिमालय की गोद में खेतों, नदियों, पर्वतों, धाटियों तथा घुधुती, काफू, मुनाल आदि पक्षियों के साथ यहां का मानवयुगों से गाता रहा है। वे हिमालय की प्राकृतिक सुन्दरता के बीच यहां के कठिन जीवन को अनेक गीतों के माध्यम से सरस बना कर व्यतीत करता रहा है। लोक गीत, लोक साहित्य की सबसे पुरानी विधा होते हुये भी पुराने गीत अपने मूल रुप में नही मिल पाते, क्योंकि मौखिक परम्परा में सुरक्षित रहने वाले इन गीतों में स्थान, समय और स्थिति के अनुसार परिर्वतन भी होते रहे हैं।

उत्तराखण्ड में स्थापत्य कलाओं पर प्रकाश डालने वाले कुछ ग्रंथों में 'वास्तु शिरामणी प्रमुख है। संस्कृत भाषा में लिखे गये इस ग्रंथ की रचना सन् 1619 ई0 में की गई थी। उत्तराखण्ड में तांबे की खाने थी, जहाँ से तांबा निकाल कर उन्हे सरल आकृतियों में ढ़ाल कर गंगा घाटी आदि स्थानों में भेजा जाता होगा। यहां की टम्टा जाति का इतिहास ताम्र उद्योग के साथ जुडा हुआ है। यह उनका पारम्परिक व्यवसाय रहा है।धातु शिल्पियों ने काफी हद तक अपनी परम्परा को सुरक्षित रखा है, फिर भी स्थानीय निवासियों के दैनिक व्यवहार में इनका स्थान अब गौण होता जा रहा है, क्योंकि प्रत्येक छोटे स्थान पर भी बाजार बन गये हैं और बाजारों में अन्य प्रकार के आर्कषक और सस्ते बर्तन, आभूषण आदि तैयार मिलते हैं।

पर्वतीय क्षेत्रों में वर्तमान में जो कला सर्वाधिक प्रसिद्ध है वह लोक चित्र परम्परा 'ऐपण' या अल्पना पूर्व मध्य काल में उद्भूत प्रतीत होती है। उत्तराखण्ड के मूल निवासी माने जाने वाली जातियों में आज भी अल्पना की प्रथा विद्यमान है। इसकी प्रमुख लाक्षणिकता गेरू और बिस्वार द्वारा हाथ से अंकन करना है। बिस्वार भीगे चावलों को महिन पीसकर उससे बने घोल को कहते हैं। इस क्षेत्र में मंचन किये जाने वाले नाटकों को दो श्रेणियों में रखा जा सकता हैः धार्मिक एंव सामाजिक। यहाँ की लोक कला, लोक गाथाऐं, लोक साहित्य और संगीत कुमाऊँ और गढ़वाल की महान संस्कृति को दर्शाता है।

7.8 तकनीकी शब्दावली

1. **देव गाथाऐं**– देवताओं से संबंधित कहानियां ।
2. **स्थापत्य कला**– इसके अंतर्गत स्मारक,इमारत,भवन इत्यादि की निर्माण कला–शिल्प का अध्ययन किया जाता है।
3. **स्वांग**– अभिनय कला जिसमें किसी की नकल उतारी जाती है।
4. '**देहरी अलकंरण**– दरवाजे की चौखट के निचले भाग में ऐपण द्वारा की गयी सजावट।
5.

7.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

खण्ड 7.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न संख्या 1 के उत्तर के लिए देखिए इकाई 7.3.6

खण्ड 7.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न संख्या 2 के उत्तर के लिए देखिए इकाई 7.3.8

खण्ड 7.4 के स्वमूल्यांकित प्रश्न संख्या 1 के उत्तर के लिए देखिए इकाई 7.4.2

खण्ड 7.4 के स्वमूल्यांकित प्रश्न संख्या 2 के उत्तर के लिए देखिए इकाई 7.4.3

7.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1–प्रेम,विश्वेश्वर, *हिमालय में भारतीय संस्कृति,* चैतन्य प्रकाशन,कानपुर, 1965

2–साह, इला, *कुमाऊँनी लोकगीतों का समाजशास्त्रीय अध्ययन,* अंकित प्रकाशन, हल्द्वानी, 2008

3–नौटियाल, शिवानन्द, *उत्तराखण्ड की लोकगाथाऐं,* श्री अल्मोड़ा बुक डिपो

4–जोशी, प्रयागदत्त, *कुमाँऊ–गढ़वाल की लोक गाथाऐं, एक सांस्कृतिक अध्ययन,* बरेली, 1979

7.11 सहायक/उपयोगी ग्रंथावली

1–उपाध्याय, कृष्णदेव, *लोक साहित्य की भूमिका,* साहित्य भवन, इलाहाबाद, 2004

2–बैराठी, कृष्णा, सत्येन्द कुश , *कुमाँऊ की लोक कला और संस्कृति,* 1992

3–सक्सेना, कौशल कुमार, *कुमाँऊः कला, शिल्प और संस्कृति,* अल्मोड़ा, 1994

7.12 निबंधात्मक प्रश्न

1–.उत्तराखण्ड की लोक कलाओं का वर्णन कीजिए।

2–उत्तराखण्ड के लोक साहित्य का वर्णन कीजिए।

इकाई आठ : उत्तराखण्ड : मानवीय संसाधन एवं जनसंख्या

8.1 प्रस्तावना
8.2 उद्देश्य
8.3 जनसंख्या एवंमानवीय संसाधन
8.4 जनांककीय विशेषताएँ
8.4.1 जनसंख्या का आकार, वृद्धि दर तथा वितरण
8.4.2 उत्तराखण्ड में ग्रामीण–शहरी जनसंख्या
8.4.4 उत्तराखण्ड में जनसंख्याधार्मिक वितरण
8.4.4 उत्तराखण्ड में लिंगानुपात
8.4.5 उत्तराखण्ड में जनसंख्या घनत्व
8.4.6 उत्तराखण्ड में साक्षरता दर
8.4.7 उत्तराखण्ड में जन्म दर, मृत्यु दर एवं मातृत्व मृत्यु दर
8.5 जनसंख्या वृद्धि एवं आर्थिक विकास में सम्बन्ध
8.6 जनसंख्या वृद्धि का आर्थिक विकास पर प्रभाव
8.7 आर्थिक विकास का जनसंख्या वृद्धि पर प्रभाव
8.8 जनसंख्या नीति
8.9 सारांश
8.10 शब्दावली
8.11 अभ्यास प्रश्न व उत्तर
8.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची
8.13 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री
8.14 निबन्धात्मक प्रश्न

8.1 प्रस्तावना

आधुनिंक उत्तराखण्ड में समाज और अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित यह आठवी इकाई है। इससे पहले की इकाई में आप प्रदेश की सामाजिक विशेषताओं की सामान्य जानकारी प्राप्त कर चुके हैं।

एक देश में मानवीय संसाधन अर्थात् उपलब्ध जनसंख्या उस देश के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाहन करती है। प्रस्तुत इकाई में उत्तराखण्ड की जनसंख्या संरचना, जनसंख्या की प्रवृत्तियॉ, प्रमुख लक्षण, जनाधिक्य की समस्या/उपाय तथा जनसंख्या का आर्थिक विकास से सम्बन्ध, जनसंख्या नीति आदि बिन्दुओं का विस्तार से विश्लेषण प्रस्तुत है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप उत्तराखण्ड में जनसंख्या संरचना, जनसंख्या वृद्धि की प्रवृत्तियों, इसकी समस्याओं, उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था के विकास में जनसंख्या के महत्व को समझ सकेंगे तथा इसका विश्लेषण कर सकेंगे।

8.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप –

- जनसंख्या मानवीय संसाधन के रुप में आर्थिक विकास का मुख्य घटक है इसे समझा सकेंगें।
- बता सकेंगे कि उत्तराखण्ड जनसंख्या का आकार तथा वितरण कीस्वरुप क्या है।
- बता सकेंगे कि उत्तराखण्ड में जनसंख्या वृद्धि की प्रवृत्तियां क्या हैं।
- बता सकेंगे कि जनसंख्या वृद्धि की समस्याएं एवं इसके नियन्त्रण के क्या उपाय हैं।
- समझा सकेंगे कि अर्थव्यवस्था के विकास हेतु मानवीय संसाधन क्यों महत्वपूर्ण हैं।

8.3 जनसंख्या एवं मानवीय संसाधन

आप जानते हैं कि आर्थिक विकास के लिए प्राकृतिक व मानवीय दोनों संसाधन बहुत जरुरी हैं। प्राकृतिक संसाधनों के विषय में आप ग्यारहवीं इकाई में अध्ययन करेंगे।आर्थिक विकास मुख्य रूप से दो बातों पर निर्भर करता है : प्रथम, प्राकृतिक संसाधन एवं द्वितीय, मानवीय संसाधन। वास्तविक रूप में आर्थिक विकास में सबसे अधिक योगदान मानवीय संसाधन अर्थात् वहॉ उपलब्ध जनसंख्या का ही होता है। जनसंख्या के विकास के स बिना आर्थिक उन्नति और विकास की गाडी नहीं चल सकती है। प्राकृतिक साधन , पूंजी, संगठन एवं तकनीक आदि को उत्पादन कार्य में लगाने के लिए मानवीय साधन की ही आवश्यकता होती है। मनुष्य अपनी बौद्धिक एवं शारीरिक शक्ति से भौतिक साधनों का विदोहन करते हुए नवप्रवर्तनों द्वारा उत्पादन प्रक्रिया को विकसित करता है और इस प्रकार आर्थिक विकास के मार्ग को प्रशस्त करता है। स्पष्टतः जनसंख्या आर्थिक विकास का साधन ही नहीं वरन् साध्य भी है और विकास की सम्पूर्ण प्रक्रिया को पूर्ण करती है।

मानवीय संसाधन की उपलब्धता की जानकारी करते समय केवल संख्या ही नहीं बल्कि उनके शिक्षा का स्तर,स्वास्थ्य की दशा,दक्षता व उत्पादकता को भी ध्यान में रखना होता है। उन्नत मानवीय संसाधन (मानवीय पूँजी) आर्थिक विकास की गति में तीव्रता लानेमें बहुत सहायक होता हैं। परन्तु वर्तमान समय में तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या गम्भीरतम समस्याओं में एक प्रमुख समस्या के रूप में उभरकर सामने आई है।

अब आपको उत्तराखण्ड की जनसंख्या की जनांककीय विशेषताओं के बारे में बताया जायेगा।

8.4 जनांककीय विशेषताएँ

आप जानते हैं कि हमारे देश में जनांककीय विशेषताओं को जानने के लिए प्रत्येक दस वर्ष बाद भारत सरकार द्वारा जनगणना की जाती है।देश की चौदहवीं एवं आजाद भारत की सातवीं जनगणना मार्च, 2011 में सम्पन्न की जा चुकी है एवं भारत के महा रजिस्ट्रार एवं आयुक्त द्वारा दिनांक 31 मार्च, 2011 को देश स्तर पर तथा निदेशक, उत्तराखण्ड द्वारा दिनांक 02 अप्रैल, 2011 को राज्य के जिलेवार अनन्तिम जनसंख्या आँकड़ों को जारी किया किया। जिनकी विश्लेषण जनसंख्या का आकार, वृद्धि दर तथा वितरण, ग्रामीण–शहरी जनसंख्या, जनसंख्या धार्मिक वितरण, राज्य में लिंगानुपात, जनसंख्या घनत्व, साक्षरता दर और जन्म दर, मृत्यु दर एवं मातृत्व मृत्यु दर के रुप में किया जा रहा है।

8.4.1 जनसंख्या का आकार, वृद्धि दर तथा वितरण

आप इस तथ्य से परिचित होंगे कि उत्तराखण्ड राज्य की स्थापना हुई तो वर्ष 1991 के ऑकडो के आधर पर राज्य की जनसंख्या 71,13,483 थी।यह उस समय भारत की कुल जनसंख्या (84,64,21,039) का 0.84 प्रतिशत थी।वर्ष 2001 में हुई जनगणना के अनुसार राज्य की जनसंख्या 84,89,349 थी। यह उस समय भारत की कुल जनसंख्या (1,02,87,37,436) का 0.83 प्रतिशत थी। परन्तु वर्ष 2011 में हुई जनगणना के अनन्तिम परिणामों के अनुसार राज्य की जनसंख्या 1,01,16,752 हो गयी जो भारत की कुल जनसंख्या (1,21,01,93,422) का 0.84 प्रतिशत है। यह जानने योग्य तथ्य है कि कुल जनसंख्या की दृष्टि से भारत के सभी राज्यों में उत्तराखण्ड के 20वें(सारणी 8.1) स्थान में अभी कोई परिवर्तन नहीं हुआ है।

सारणी 8.1 –सम्पूर्ण भारत एवं उत्तराखण्ड की जनसंख्या का आकार

	1991	2001	2011	कुल जनसंख्या का प्रतिशत			2001तथा 2011 में स्थान
				1991	2001	2011	
उत्तराखण्ड	71,13,483	84,89,349	1,01,16,752	0.84	0.83	0.84	20
सम्पूर्ण भारत	84,64,21,039	1,02,87,37,436	1,21,01,93,422	100	100	100	

स्रोत–Census of India1991,2001, 2011

सारणी 8.2 में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात हुई जनगणनाओं के आधार पर सम्पूर्ण भारत से तुलना करते हुए उत्तराखण्ड की जनसंख्या की प्रतिशत दशकीय वृद्धि दरों को व्यक्त किया गया है।

सारणी 8.2 – सम्पूर्ण भारत एवं उत्तराखण्ड की जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दरें (प्रतिशत में)

दशक	सम्पूर्ण भारत	दशक में परिवर्तन	उत्तराखण्ड	दशक में परिवर्तन
1951–1961	21.64		22.57	

1961–1971	24.8	+3.16	24.42	+1.85
1971–1981	24.66	–0.14	27.45	+3.03
1981–1991	23.87	–0.79	23.13	–4.32
1991–2001	21.54	–2.33	20.41	–2.74
2001–2011	17.64	–3.9	19.17	–1.24

स्रोतः–Census of India 2011

सारणी 8.2 से यह तो आप स्पष्ट कर ही सकते हैं कि राज्य सृजन के पश्चात् उत्तराखण्ड में जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर भारत की औसत दर से भी अधिक है।जबकि यह 1961–71 ,1981–91 एवं 1991–2001 मेंसम्पूर्ण भारत से कम रही। उत्तराखण्ड राज्य में दशकीय गिरावट सर्वाधिक 1981–1991 के दशक में (–4.32 प्रतिशत) थी जो 1991–2001 के दशक में (–2.74 प्रतिशत), 2001–2011 के दशक में (–1.24 प्रतिशत) रही ।सारणी 8.3 से यह जानकारी प्राप्त होती है कि दशक 2001–2011 में उत्तराखण्ड राज्य की जनसंख्या की औसत वार्षिक वृद्धि दर (1.77 प्रतिशत) दशक 1991–2001 में दर (1.87 प्रतिशत) की तुलना में कम रही। परन्तु यह गिरावट सम्पूर्ण भारत से कम रही। जहॉ दशक 2001–2011 में जनसंख्या की औसत वार्षिक वृद्धि दर (1.64 प्रतिशत) दशक 1991–2001 में दर (1.97 प्रतिशत) थी।

सारणी 8.3– सम्पूर्ण भारत व उत्तराखण्ड की जनसंख्या की वार्षिक वृद्धि दरें (दशक 1991–2001 व 2001–2011 के दौरान)

अवधि	औसत वार्षिक घातांकीय वृद्धि दर (प्रतिशत में)	
	भारत	उत्तराखण्ड
दशक 1991–2001	1.97	1.87
दशक 2001–2011	1.64	1.77

स्रोतः–Census of India 1991,2011

उत्तराखण्ड में दो मैदानी (हरिद्वार, ऊधमसिंह नगर), दो पर्वतीय–मैदानी (देहरादून, नैनीताल) व शेष नौ जिले पर्वतीय हैं। प्रदेश की लगभग आधी से अधिक जनसंख्या हरिद्वार, देहरादून व ऊधमसिंह नगर में निवास करती है। सभी 9 पर्वतीय जिलों में रहने वाली जनसंख्या का प्रदेश की कुल जनसंख्या से प्रतिशत वर्ष 1991 की तुलना में 2001 में तथा 2001 की तुलना में 2011 में कम हो रही है जो पर्वतीय क्षेत्रों से मैदानी क्षेत्रों की ओर पलायन को दर्शाता है। इसके अनेक कारण हैं, जैसे –भौतिक अद्योसंरचना का विकसित न होना, पर्वतीय क्षेत्रों में अत्यन्त कठिन व विषम भौगोलिक परिस्थितियाँ, भू–स्खलन व भू–क्षरण की समस्या में लगातार वृद्वि होना, अच्छे रोजगार व व्यवसाय के अवसर का समाप्त होना, कृषि की लाभदेयता का समाप्त होना व कुटीर ग्राम उद्योगों का समाप्त होना, स्वास्थ्य व चिकित्सा, यातायात, पेयजल आदि सुविधाओं का बहुत कम होना। प्रदेश के विभिन्न पर्वतीय व मैदानी जिलों में जनसंख्या वितरण को जानने के लिए सारणी 8.4 व 8.5 में प्रदेश में जिलेवार जनसंख्या वितरण व वृद्धि दरों को दर्शाया गया है।

सारणी 8.4–उत्तराखण्ड में जिलेवार जनसंख्या वितरण (वर्ष 1991, 2001 व 2011)

जिला	1991	2001	2011
अल्मोड़ा	610500	632866	622506
बागेश्वर	226200	247163	259898
चम्पावत	190900	1282143	1696694
पिथौरागढ़	416647	462289	483439
नैनीताल	574800	762909	954605
पौड़ी गढ़वाल	670800	697078	687271
टिहरी गढ़वाल	520214	604747	618931
रूद्रप्रयाग	200493	227439	242285
चमोली	520214	604747	618931
उत्तरकाशी	239709	295013	330086
छेहरादून	1025679	1282143	1696694
ऊधमसिंह नगर	924900	1235614	1648902
हरिद्वार	1124500	1447187	1890422
उत्तराखण्ड	7113483	8489349	10086292

स्रोत–Census of India1991,2001, 2011

सारणी 8.5–उत्तराखण्ड में जिलेवार जनसंख्या का प्रतिशत एवं स्थान क्रम (वर्ष 2001 व 2011)

थ्जला	वर्ष 2001			वर्ष 2011		
	व्यक्ति	कुल से प्रतिशत	स्थान क्रम	व्यक्ति	कुल से प्रतिशत	स्थान क्रम
हरिद्वार	1447187	17.04	1	1927029	19.05	1
छेहरादून	1282143	15.10	2	1698560	16.79	2
ऊधमसिंह	1235614	14.55	3	1648367	16.29	3

नगर						
नैनीताल	762909	8.99	4	955128	9.44	4
पौड़ी गढ़वाल	697078	8.21	5	686527	6.79	5
अल्मोड़ा	632866	7.45	6	621927	6.15	6
टिहरी गढ़वाल	604747	7.24	7	616409	6.09	7
पिथौरागढ़	462289	5.45	8	485993	4.80	8
चमोली	370359	4.36	9	391114	3.87	9
उत्तरकाशी	295013	3.48	10	329686	3.26	10
बागेश्वर	247163	2.91	11	259840	2.57	11
चम्पावत	224542	2.64	13	259315	2.56	12
रूद्रप्रयाग	227439	2.68	12	236857	2.34	13
उत्तराखण्ड	8489349	100.00		10116752	100.00	

स्रोत–Census of India2001, 2011

सारणी 8.6–उत्तराखण्ड में जिलेवार जनसंख्या दशकीय प्रतिशत वृद्धि दर
(दशक 1991–2001 व 2001–2011)

जिला	जनसंख्या की दशकीय प्रतिशत वृद्धि दर			
	1991–2001	स्थान क्रम	2001–2011	स्थान क्रम
ऊधमसिंह नगर	33.60	1	33.40	1
हरिद्वार	28.70	3	33.16	2
देहरादून	25.00	4	32.48	3
नैनीताल	32.72	2	25.20	4
चम्पावत	17.60	6	15.49	5
उत्तरकाशी	23.07	5	11.75	6
चमोली	13.87	8	05.60	7
पिथौरागढ़	10.95	10	05.13	8
बागेश्वर	09.28	11	05.13	9
रूद्रप्रयाग	13.43	9	04.14	10
टिहरी गढ़वाल	16.24	7	01.93	11

अल्मोड़ा	03.67	13	–01.73	12
पौड़ी गढ़वाल	03.91	12	–01.51	13
उत्तराखण्ड	20.41		19.17	
सम्पूर्ण भारत	21.54		17.64	

स्रोतः–Census of India1991,2001, 2011

8.4.2 उत्तराखण्ड में ग्रामीण–शहरी जनसंख्या

ग्रामीण एवं शहरी जनसंख्या का अनुपात उसकी आर्थिक प्रगति को दर्शाता है। जिस प्रदेश में ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में जनसंख्या समान होती है, वह प्रदेश सन्तुलित आर्थिक–व्यवस्था वाला प्रदेश माना जाता है। प्रदेश में नगरीय जनसंख्या अधिक होने पर माना जाता है कि उस प्रदेश के निवासियों को अधिक सुख–सुविधाएं उपलब्ध हैं तथा ग्रामीण जनसंख्या अधिक होने पर विपरीत स्थिति होती है। जनसंख्या का ग्रामीण तथा शहरी वर्गों में विभाजन, लोगों के निवास–स्थान के आधार पर किया जाता है। ग्रामीण–शहरी जनसंख्या की गणना हेतु नगर क्षेत्र वे माने गये हैं जो निम्नलिखित मानदण्डों को पूरा करते हैं :

(1) वे सभी क्षेत्र जहां नगर निगम, नगर पालिका, छावनी बोर्ड अथवा अधि सूचित नगरीय क्षेत्र हों,

(2) वे क्षेत्र जहां– न्यूनतम जनसंख्या 5000 हो, कार्यशील पुरूष जनसंख्या का न्यूनतम 75 प्रतिशत गैर–कृषि कार्यों में संलग्न हो तथा जनसंख्या का घनत्व न्यूनतम 400 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर हो।

जनसंख्या का ग्रामीण व नगरीय क्षेत्रों में वितरण प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों की आर्थिक प्रगति को प्रगट करता है। अधिक नगरीय क्षेत्रों का होना एक सीमा तक अधिक प्रगति का सूचक माना जा रहा है। सामान्य रूप से ग्रामों की तुलना में नगरों में बहुत अधिक विकसित बाजार, शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन आदि की अधिक सुविधाएँ तथा रोजगार व व्यवसाय के अधिक अवसर होने के कारण व्यक्ति ग्रामों से नगरों की ओर जाने की प्रवृत्ति रखते हैं। वर्ष 2011 की जनगणना के आधार पर उत्तराखण्ड की ग्रामीण जनसंख्या कुल जनसंख्या का69.77प्रतिशत है जोकि वर्ष 2001 में 74.41 प्रतिशत अर्थात 4. 66प्रतिशत कमी तथा नगरीय जनसंख्यावर्ष 2011 कुल जनसंख्या 30.23प्रतिशत हैजोकि वर्ष 2001 में 25. 59 प्रतिशत थीअर्थात 4.64 प्रतिशत की वृद्वि हुई।सारणी 8.7 में वर्ष 2011 एवं 2001 में उत्तराखण्ड के नगरीय व ग्रामीण जनसंख्या का कुल जनसंख्या से प्रतिशत एवं महिला पुरुष हिस्सेदारी को दर्शया गया है।

सारणी 8.7–उत्तराखण्ड में ग्रामीण–शहरी जनसंख्या का वितरण

वर्ष	2011			2001		
जनसंख्या	कुल	पुरुष	महिला	कुल	पुरुष	महिला
सम्पूर्ण	100,86,292 (100)	51,37,773	49,48,519	84,89,349 (100)	43,25,924	41,63,425
ग्रामीण	70,36,954	35,19,042	35,17,912	63,10,275 (74.33)	31,44,590	31,65,685

	(69.77)					
शहरी	30,49,338 (30.23)	16,18,731	14,30,607	21,79,074 (25.67)	11,81,334	9,97,740
0–6 वर्ष में	2011			2001		
सम्पूर्ण	13,55,,814	7,171,199	6,38,615	13,60,032	7,12,949	6,47,083
ग्रामीण	9,90,776	5,21,792	4,68,984	10,72,360	5,59,248	5,13,112
शहरी	3,65,038	1,95,407	1,69,631	2,87,672	1,53,701	1,33,971

स्रोतः–Census of India2001, 2011

सारणी 8.7 के विश्लेषण से ही पता चलता है कि आयु वर्ग 0–6 की जनसंख्या में वर्ष 2011 में वर्ष 2001 की तुलना में कमी हुई।आयु वर्ग 0–6 की जनसंख्या में वर्ष 2011 में 13,55,,814 है जो वर्ष 2001 में 13,60,032 थी अर्थात 4218 की कमी हुई।

8.4.3 उत्तराखण्ड में जनसंख्या धार्मिक वितरण

उत्तराखण्ड में धर्म के आधार पर जनसंख्या के आंकडों का विश्लेषण सारणी 8.8 में किया गया हैधर्म के आधार पर वितरण की दृष्टि से उत्तराखण्ड में हिन्दुओं की बहुत अधिकता है। जिनकी प्रतिशत संख्या वर्ष 2001 में 84.89 प्रतिशत से कम होकर वर्ष 2011 में 82.97प्रतिशत ही रह गयी।वही मुस्लिमप्रतिशत जनसंख्या में वृद्वि हुई जो 2001 में 11.92प्रतिशत से बढकर वर्ष 2011 में 13.95प्रतिशत हो गयी। अर्थात हिन्दू जनसंख्या में 2001–2011 के दशक में 1.99 प्रतिशत की कमी तथा मुस्लिम जनसंख्या में 2001–2011 के दशक में 2.03 प्रतिशत की वृद्वि हुई। 2001–2011 के दशक में इसाई एवं अन्य व अवर्णित धर्म जनसंख्या के प्रतिशत में वृद्वि हुई।वही 2001–2011 के दशक में सिक्ख,बौद्ध एवं जैन की जनसंख्या के प्रतिशत में कमी हुई।

सारणी 8.8– वर्ष 2011 के उत्तराखण्ड में धर्म के आधार पर जनसंख्या

धर्म	2011 में कुल संख्या	2011 में प्रतिशत	2001 में प्रतिशत
हिन्दू	8ए368ए636	82.97	84.96
मुस्लिम	14,06,825	13.95	11.92
इसाई	37781	0.37	0.32
सिक्ख	236,340	2.34	2.50
बौद्ध	14926	0.15	0.14
जैन	9183	0.09	0.11
अन्य व अवर्णित धर्म	12601	0.13	0.05
समस्त	100.0	100.0	100.0

स्रोतः–Census of India2001, 2011

8.4.3उत्तराखण्ड में लिंगानुपात

लिंगानुपात से आपको प्रति हजार पुरूष स्त्रियों की संख्या की जानकारी मिलती है। बदलता लिंगानुपात विवाह व बच्चों की संख्या को तो प्रभावित करता ही है, साथ ही इससे अनेक प्रकार के सामाजिक व नैतिक परिवर्तन भी होते हैं। सारणी 8.9 में प्रदेश का जिलेवार लिंगानुपात को दर्शाया गया है जिससे आप प्रदेश में लिंगानुपात सम्बन्धी विशेषताओं को जान सकते हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि पर्वतीय जिलों में प्रति हजार पुरूष स्त्रियों की संख्या मैदानी जिलों से अधिक है।अल्मोड़ा जिले में लिंगानुपात सर्वाधिक 1142 है, जबकि हरिद्वार जिलें में सबसे कम 889 है। उत्तराखण्ड के लिंगानुपात में वर्ष 2001 की तुलना में वर्ष 2011 में एक की बढोत्तरी हुई। वर्ष 2001 की तुलना में वर्ष 2011 में अल्मोड़ा, पौड़ी गढ़वाल,बागेश्वर, पिथौरागढ़ और चम्पावत जिलों के लिंगानुपात में कमी दर्ज की गयी। जबकिवर्ष 2001 की तुलना में वर्ष 2011 में रूद्रप्रयाग, टिहरी गढ़वाल, चमोली, उत्तरकाशी, नैनीताल, उधम सिंह नगर, देहरादून और हरिद्वार जिलों में वृद्वि हुई।

सारणी 8.9–उत्तराखण्ड में जिलेवार लिंगानुपात – वर्ष 2001 व 2011

जिला	स्त्रियों की संख्या प्रति हजार पुरूष			
	वर्ष 2001	स्थान क्रम	वर्ष 2011	स्थान क्रम
अल्मोड़ा	1145	1	1142	1
रूद्रप्रयाग	1115	2	1120	2
पौड़ी गढ़वाल	1106	3	1103	3
बागेश्वर	1106	4	1093	4
टिहरी गढ़वाल	1049	5	1078	5
पिथौरागढ़	1031	6	1021	6
चमोली	1016	8	1021	7
चम्पावत	1021	7	981	8
उत्तरकाशी	0941	9	0959	9
नैनीताल	0906	10	0933	10
ऊधमसिंह नगर	0902	11	0919	11
देहरादून	0887	12	0902	12
हरिद्वार	0865	13	0879	13
उत्तराखण्ड	0962		0963	

स्रोतः–Census of India2001, 2011

8.4.4 उत्तराखण्ड में जनसंख्या घनत्व

जनसंख्या घनत्व से आशय प्रति वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में निवास करने वाले व्यक्तियों की औसत संख्या से है। इसे 'व्यक्ति–भूमि अनुपात' भी कहा जाता है। यह किसी विशेष क्षेत्र में जनसंख्या के केन्द्रीयकरण को दर्शाने का प्रमुख सूचक है। जनसंख्या घनत्व को निकालने के लिए कुल जनसंख्या में कुल क्षेत्रफल का भाग दे दिया जाता है। इसके आधार पर क्षेत्र विशेष में जनसंख्या के संकेन्द्रण की जानकारी प्राप्त होती है। जिन क्षेत्रों में शिक्षा, यातायात, संचार, बैंकिंग, स्वास्थ्य व पेय जल आदि की सुविधाएँ अधिक होती हैं तथा रोजगार व व्यापार के अवसर अधिक होते हैं, वहीं पर यह घनत्व अधिक होता है। इसी कारण उत्तराखण्ड के पर्वतीय जिलों में बहुत कम जन घनत्वव मैदानी जिलों में बहुत अधिक जन घनत्व पाया जाता है। सारणी 8.10 में वर्ष 2001 व 2011 में प्रदेश काजिलेवार जनसंख्या घनत्व को दर्शाया गया है।वर्ष 2011 में हरिद्वार जिले में जन घनत्व सर्वाधिक 817 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है, जबकि उत्तरकाशी जिलें में न्यूनतम 41व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है।

सारणी 8.10–उत्तराखण्ड में जिलेवार जनसंख्या घनत्व – वर्ष 2001 व 2011

जिला	जनसंख्या घनत्व (व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर)				
	वर्ष 2001	स्थान क्रम	वर्ष 2011	स्थान क्रम	वर्ष 2011 में 2001 की तुलना में वृद्वि
हरिद्वार	613	1	817	1	204
ऊधमसिंह नगर	486	2	648	2	162
छेहरादून	415	3	550	3	135
नैनीताल	179	5	225	4	46
अल्मोड़ा	201	4	198	5	03
टिहरी गढ़वाल	166	6	169	6	03
चम्पावत	127	8	147	7	20
पौड़ी गढ़वाल	131	7	129	8	02
रूद्रप्रयाग	115	9	119	9	04
बागेश्वर	110	10	116	10	06
पिथौरागढ़	065	11	069	11	04
चमोली	046	12	049	12	03
उत्तरकाशी	037	13	041	13	04

उत्तराखण्ड	159		189		30

स्रोतः–Census of India2001, 2011

उत्तराखण्ड के जन घनत्व में वर्ष 2001 की तुलना में वर्ष 2011 में 30व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटरकी बढोत्तरी हुई।वर्ष 2001 की तुलना में वर्ष 2011 मेजन घनत्व में सर्वाधिक वृद्विहरिद्वार जिले में204 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर की हुई। जबकिवर्ष 2001 की तुलना में वर्ष 2011 मे जन घनत्व में न्यूनतम वृद्धि पौड़ी गढ़वाल जिले में 02 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर की हुई।

8.4.5 उत्तराखण्ड में साक्षरता दर

साक्षर उस व्यक्ति को कहा जाता है जोकि सात वर्ष से अधिक का हो तथा किसी एक भाषा को पढ़ लिख और बोल सकता हो।साक्षरता दर की सहायता से क्षेत्र विशेष में मानवीय संसाधनों की योग्यता की प्रारम्भिक स्थिति ज्ञान होता है। यह दर जितनी अधिक होती है, क्षेत्र के विकास में उतनी ही सहायता मिलती है।

सारणी 8.11–उत्तराखण्ड में जिलेवार प्रभावी साक्षरता दर – वर्ष 2001 व 2011

जिला	प्रभावी साक्षरता दर (प्रतिशत में)					
	वर्ष 2001			वर्ष 2011		
	व्यक्ति	पुरूष	स्त्रियाँ	व्यक्ति	पुरूष	स्त्रियाँ
देहरादून	78.99	85.87	71.20	85.24	90.32	79.61
नैनीताल	78.36	86.32	69.55	84.85	91.09	78.21
चमोली	75.43	89.66	60.49	83.48	94.18	73.20
पिथौरागढ़	75.95	90.06	62.60	82.93	93.45	72.97
पौड़ी गढ़वाल	77.49	90.91	60.70	82.59	93.18	73.26
रूद्रप्रयाग	73.65	89.81	59.57	82.09	94.97	70.94
अल्मोड़ा	73.64	89.19	60.56	81.06	93.57	70.44
चम्पावत	71.29	87.27	54.18	80.73	92.65	68.81
बागेश्वर	70.42	87.67	56.98	80.69	93.20	69.59
उत्तरकाशी	65.71	83.60	46.70	75.98	89.26	62.23
टिहरी गढ़वाल	66.73	85.33	49.42	75.10	89.91	61.77
हरिद्वार	63.75	73.83	52.09	74.62	82.26	65.96

ऊधमसिंह नगर	64.86	75.22	53.35	74.44	82.48	65.73
उत्तराखण्ड	71.61	83.28	59.63	79.63	88.33	70.70
सम्पूर्ण भारत	64.83	75.26	53.67	74.04	82.14	65.46

स्रोतः–Census of India2001, 2011

प्रदेश में प्रभावी साक्षरता दर जो वर्ष 2001 में 71.62 प्रतिशत थी, वर्ष 2011 में बढ़कर 79.63 प्रतिशत(8.01 प्रतिशत की वृद्वि) हो गयी। परन्तु साक्षरता की स्थिति के आधार पर प्रदेश सम्पूर्ण देश में 14वें स्थान से खिसककर 17वें स्थान पर आ गया है। प्रदेश की साक्षरता दर देश की औसत साक्षरता दर से अधिक तो है परन्तु प्रदेश की स्त्रियों की साक्षरता दर पुरूषों की साक्षरता दर की तुलना में अभी भी कम है। सारणी 2.9 में प्रदेश की जिलेवार पुरूष व महिलाओ की साक्षरता दरों को दर्शाया गया है। वर्ष 2011 में सर्वाधिक साक्षरता जिला देहरादून(85.25 प्रतिशत), जबकि उधम सिंह नगर जिलें में न्यूनतम साक्षरता (74.44प्रतिशत) दर्ज की गयी है।वर्ष 2011 में सर्वाधिक महिला साक्षरता जिला देहरादून (79.61 प्रतिशत), जबकि टिहरी गढवाल जिलें में न्यूनतम साक्षरता (61.77 प्रतिशत) दर्ज की गयी है।वर्ष 2011 में सर्वाधिक पुरुष साक्षरता जिला रुद्धप्रयाग (94.97 प्रतिशत), जबकि हरिद्वार जिलें में न्यूनतम साक्षरता (82.26 प्रतिशत) दर्ज की गयी है।

8.4.6 उत्तराखण्ड में जन्म दर, मृत्यु दर एवं मातृत्व मृत्यु दर

जन्म दर : जन्म दर से अर्थ एक वर्ष में एक हजार जनसंख्या पर जन्म लेने वाले शिशुओं की कुल संख्या से है। इसे निकालने के लिए निम्नलिखित सूत्र का उपयोग किया जाता है :

$$\text{जन्म दर} = \frac{\text{एक वर्ष में जन्मे जीवित शिशुओं की कुल संख्या}}{\text{उस वर्ष में देश की कुल जनसंख्या}} \times 1000$$

एक देश की जनसंख्या का आकार बहुत हद तक उस देश की जन्म दर एवं मृत्यु दर पर निर्भर करता है। यदि जन्म दर अधिकमृत्यु दर की तुलना में तो जनसंख्या अधिक गति से बढ़ेगी। उत्तराखण्ड में 2009 में यह 19.7 प्रति हजार थी जो 2012 में 18.5 प्रति हजार तथा2013 में 18.3 प्रति हजारहो गयी। वर्तमान में 2016(अनुमानित) में 16.5 प्रति हजार है। उत्तराखण्ड में जन्म दर के अधिक होने के कारण हैं– बाल विवाह, निर्धनता, विवाह की अनिवार्यता, संयुक्त परिवार प्रणाली का ह्रास, रूढ़िवादिता, मनोरंजन की सुविधाओं का कम होना, ग्रामीण क्षेत्रों में परिवार नियोजन का पूर्ण रूप से सफल न होना आदि।

मृत्यु दर : मृत्यु दर से आशय एक वर्ष में एक हजार जनसंख्या पर मृत्युओं की संख्या से है। इसे निकालने के लिए निम्नलिखित सूत्र का उपयोग किया जाता है :

$$\text{मृत्यु दर} = \frac{\text{एक वर्ष में मृतकों की कुल संख्या}}{\text{उस वर्ष में देश की कुल जनसंख्या}} \times 1000$$

एक प्रदेश की जनसंख्या को जन्म दर के साथ ही मृत्यु दर पर भी महत्वपूर्ण ढ़ंग से प्रभावित करती है। मृत्युदर के अधिक होने की स्थिति में देश के लोग अधिक मृत्यु की क्षतिपूर्ति हेतु जन्म दर को बढ़ा देते हैं, जिससे जनसंख्या में वृद्धि हो जाती है। विकास प्रक्रिया के कारण मृत्यु दर में कमी आ रही है। 2009 में यह 6.5 प्रति हजार थी जो 2012 में 6.1 प्रति हजार तथा2013 में भी 6.1 प्रति हजारहो गयी। वर्तमान में 2016(अनुमानित) में 5.8 प्रति हजार है। उत्तराखण्ड में मृत्यु दर में कमी के कारण हैं– शिक्षा एवं स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार, बीमारियों एवं महामारियों में कमी, अन्धविश्वास में कमी, जीवन स्तर का ऊँचा होना, मनोरंजन के साधनों का विस्तार, महिलाओं की स्थिति में सुधार होना आदि। उत्तराखण्ड में जन्म दर व मृत्यु दर राष्ट्रीय औसत से कम है। इन दरों को सारणी 2.10 की सहायता से देखा जा सकता है।

सारणी 8.12 –उत्तराखण्ड में अशोधित जन्म दर, अशोधित मृत्यु दर व मातृत्व मृत्यु दर (प्रति हजार जनसंख्या)

	2009	2012	2013	2016(अनुमानित)
अशोधित जन्म दर (प्रति हजार जनसंख्या)	19.7	18.5	18.2	17.5
अशोधित मृत्यु दर (प्रति हजार जनसंख्या)	6.5	6.1	6.1	5.8
मातृत्व मृत्यु दर (प्रति हजार जनसंख्या)		34	32	25

स्रोतः–Directorate of Economics and Statistics

अभ्यास प्रश्न 1

प्रश्न (क) लघुउत्तरीय

1.उत्तराखण्ड की आधी आबादी का संकेन्द्रण कहॉ है।

2. लिंग अनुपात से क्या आशय है ?

प्रश्न (ख)– एक शब्द/वाक्य में उत्तर दीजिए–

(1)वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड के किस जनपद में सर्वाधिकजनसंख्या निवास करती है?

(2)वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड के किस जनपद में सबसे कम जनसंख्या निवास करतीहै?

(3)वर्ष 2001 की तुलना में वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड के कितनें जनपदों की जनसंख्या में बढी हुई है ?

(4)दशक 2001–11 में उत्तराखण्ड के किस जनपद की जनसंख्या में सर्वाधिक वृद्धि दर है?

(5)दशक 2001–11 में उत्तराखण्ड के किस जनपद की जनसंख्या की वृद्धि दर सबसे कम है?
(6)दशक 2001–11 में उत्तराखण्ड के कितने जनपदों की जनसंख्या की वृद्धि दर प्रदेश के जनसंख्या की वृद्धि दर से कम रही है ?
(7)दशक 2001–11 में उत्तराखण्ड के कितने जनपदों की जनसंख्या की वृद्धि दर प्रदेश के जनसंख्या की वृद्धि दर से अधिक रही है ?
(8)दशक 1991–2001 की तुलना में दशक 2001–11 में उत्तराखण्ड के कितने जिलों की जनसंख्या की वृद्धि दर में कमी हुई है?
(9)वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड के किस जनपद में नगरीय जनसंख्या सर्वाधिक थी ?
(10)वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड के किस जनपद में नगरीय जनसंख्या सबसे कम थी ?
(11)वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड में किस धर्म के अनुयायी सर्वाधिक थे ?
(12)वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड के किस जनपद में स्त्रियों की संख्या (प्रति हजार पुरूष) सर्वाधिक है?
(13)वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड के किस जनपद में स्त्रियों की संख्या (प्रति हजार पुरूष) सबसे कम है?
(14)वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड के कितने जनपदों में स्त्रियों की संख्या (प्रति हजार पुरूष) प्रदेश में स्त्रियों की संख्या (प्रति हजार पुरूष) से कम है?
(15)वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड के कितने जनपदों में स्त्रियों की संख्या (प्रति हजार पुरूष) प्रदेश में स्त्रियों की संख्या (प्रति हजार पुरूष) से अधिक है?
(16)वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड के किस जनपद का जनसंख्या घनत्व सर्वाधिक है?
(17)वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड के किस जनपद का जनसंख्या घनत्व सबसे कम है ?
(18)वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड के कितने जनपदों का जनसंख्या घनत्व प्रदेश के जनसंख्या घनत्व से कम है ?
(19)वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड के कितने जनपदों का जनसंख्या घनत्व प्रदेश के जनसंख्या घनत्व से अधिक है ?
(20)वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड के किस जनपद में कुल व्यक्तियों की साक्षरता दर सर्वाधिक है?
(21)वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड के किस जनपद में कुल व्यक्तियों की साक्षरता दर सबसे कम है?
(22)वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड के कितने जनपदों में कुल व्यक्तियों की साक्षरता दर प्रदेश की साक्षरता दर से कम है ?
(23)वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड के कितने जनपदों में कुल व्यक्तियों की साक्षरता दर प्रदेश की साक्षरता दर से अधिक है ?

प्रश्न (ग) – सत्य/असत्य बताइए–

(1)दशक 1991–2001 की तुलना में दशक 2001–11 में उत्तराखण्ड के जनसंख्या की वृद्धि दर में कमी हुई है।
(2)दशक 2001–11 में उत्तराखण्ड की जनसंख्या वृद्धि दर भारत की जनसंख्या वृद्धि दर की तुलना में कम है।
(3) वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में रहने वाले हिन्दुओं की संख्या मैदानी क्षेत्रों में रहने वाले हिन्दुओं की संख्या से अधिक है।
(4) वर्ष 2001 की तुलना में वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड की जनसंख्या में स्त्रियों की संख्या (प्रति हजार पुरूष) में वृद्धि हुई है।
(5) वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड में स्त्रियों की संख्या (प्रति हजार पुरूष) भारत की जनसंख्या में स्त्रियों की संख्या (प्रति हजार पुरूष) की तुलना में कम है।
(6) वर्ष 2001 की तुलना में वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड के जनसंख्या घनत्व में वृद्धि हुई है।

(7) उत्तराखण्ड का जनसंख्या घनत्व भारत के जनसंख्या घनत्व की तुलना में कम है।
(8)वर्ष 2001 की तुलना में वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड में महिलाओं की साक्षरता दर में वृद्धि हुई है।
(9)वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड में महिलाओं की साक्षरता दर पुरूषों की साक्षरता दर से अधिक है।
(10)वर्ष 2011 में उत्तराखण्ड में कुल व्यक्तियों की साक्षरता दर भारत की साक्षरता दर से अधिक है।

8.5 जनसंख्या वृद्धि एवं आर्थिक विकास में सम्बन्ध

आज के इस अति गत्यात्मक विश्व में सभी देश एवं प्रदेश विकसित बनने की आकांक्षा रखते हैं। एक प्रदेश के विकास में वहां के उपलब्ध प्राकृतिक संसाधन एवं मानवीय संसाधन अर्थात् जनसंख्या का महत्वपूर्ण योगदान होता है। इनमें भी मानवीय संसाधन अर्थात् जनसंख्या अधिक महत्वपूर्ण होती है क्योंकि यह उपलब्ध जनसंख्या ही है जो अन्य संसाधनों का उपयोग कर प्रदेश के विकास को आगे बढ़ाती है। मनुष्य अपनी बौद्धिक एवं शारीरिक शक्ति से भौतिक साधनों का शोषण करता है, नवप्रवर्तनों द्वारा उत्पादन प्रक्रिया को विकसित करता है और इस प्रकार आर्थिक विकास के मार्ग को प्रशस्त करता है। रिचर्ड टी. गिल ने भी कहा है कि 'आर्थिक विकास एक यान्त्रिक प्रक्रिया ही नहीं है बल्कि एक मानवीय उद्यम भी है। इसका प्रतिफल अन्तिम रूप से मानवीय गुणों, उसकी कार्यकुशलता तथा उसके दृष्टिकोण पर निर्भर करता है।' वास्तव में, जनसंख्या वृद्धि एवं आर्थिक विकास में घनिष्ठ सम्बन्ध होता है और यह दोनों ही एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। इस प्रभाव को दो प्रकार से देखा जा सकता है : प्रथम, जनसंख्या वृद्धि का आर्थिक विकास पर प्रभाव तथा द्वितीय, आर्थिक विकास का जनसंख्या वृद्धि पर प्रभाव।

8.6 जनसंख्या वृद्धि का आर्थिक विकास पर प्रभाव

जनसंख्या वृद्धि का आर्थिक विकास पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। यदि जनसंख्या स्थिर गति से बढ़ती है तो यह आर्थिक विकास में सहयोग देती है परन्तु यदि जनसंख्या में तीव्र एवं असन्तुलित वृद्धि होती है तो यह आर्थिक विकास निम्नलिखित प्रकार से प्रभावित करती है :

- तीव्र जनसंख्या वृद्धि के कारण उत्पादन वृद्धि का प्रभाव नगण्य हो जाता है।
- जनसंख्या में अधिक वृद्धि के कारण प्रति व्यक्ति आय में कमी आती है।
- अधिक जनसंख्या हेतु अधिक उपभोग पर व्यय करने के कारण बचत एवं विनियोग कम हो जाता है।
- उपभोग पर अधिक व्यय से विकास हेतु आवश्यक पूंजी–निर्माण कम हो जाता है।
- जनसंख्या वृद्धि के कारण शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास जैसी सुविधाओं में कमी आती है।
- जनसंख्या बढ़ने से श्रम–शक्ति में वृद्धि होती है परन्तु रोजगार के अवसर उस अनुपात में न बढ़ पाने से बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न होती है।
- अति जनसंख्या से अपराध जैसी विभिन्न समस्याओं का उदय होता है।
- जनसंख्या वृद्धि से उत्पादक जनसंख्या पर आश्रितों का भार बढ़ता है।
- अधिक जनसंख्या से होने वाली समस्याओं के कारण कुशल जनसंख्या अन्य देशों में प्रवास कर जाती है।

- जनसंख्या में तीव्र वृद्धि से कृषि जोतों का आकार छोटा हो जाता है जिससे खेतों की उत्पादकता घटती है।

8.7 आर्थिक विकास का जनसंख्या वृद्धि पर प्रभाव

आर्थिक विकास भी जनसंख्या को भी महत्वपूर्ण ढ़ंग से प्रभावित करता है जो निम्नलिखित हैं :

- आर्थिक विकास होने से जन्मदर में कमी आती है।
- विकास के कारण शिक्षा एवं चिकित्सा सुविधाएं बढ़ने से मृत्युदर में कमी आती है।
- विकास प्रक्रिया से लोगों के दृष्टिकोण में परिवर्तन होता है। वे बच्चों को सम्पत्ति न मानकर दायित्व मानने लगते हैं।
- विकास के कारण लोगों की आय में वृद्धि तथा जीवन स्तर में सुधार होता है जिससे वे छोटे परिवार की ओर आकृषित होते हैं।
- शिक्षा एवं अन्य सुविधाओं के विकास होने से लड़का एवं लड़की का भेद कम होता है जिससे लोग कम सन्तानोत्पत्ति करते हैं।
- आर्थिक विकास के प्रभाव से जनसंख्या की वृद्धि दर में कमी आती है।

8.8 जनसंख्या नीति

जनसंख्या नीति के माध्यम से जनसंख्या का नियोजन किया जाता है। इस नीति में जनसंख्या के परिमाणात्मक एवं गुणात्मक दोनों पहलुओं का अध्ययन किया जाता है। जनसंख्या नीति के परिमाणात्मक पहलु के अन्तर्गत जनसंख्या के आकार एवं संरचना को राष्ट्रीय साधनों के अनुपात में नियन्त्रित किया जाता है, जबकि गुणात्मक पहलू के अन्तर्गत जनसंख्या के गुणों (जैसे– स्वास्थ्य स्तर, जीवन प्रत्याशा, शिक्षा आदि) में वृद्धि करने का प्रयास किया जाता है। भारत में जनसंख्या नीति प्रारम्भ स्वतन्त्रता के बाद से ही हो गया था परन्तु पूर्व में जनसंख्या को कोई समस्या नहीं मानने के कारण इस नीति पर अधिक ध्यान नहीं दिया गया। तीसरी पंचवर्षीय योजना के समय जनसंख्या में तीव्र वृद्धि होने के कारण इस ओर अधिक ध्यान दिया गया। चौथी योजना में तो इस नीति को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई जबकि पांचवी योजना में आपातकाल के समय 16 अप्रैल, 1976 को राष्ट्रीय जनसंख्या नीति की घोषणा की गई। इसमें राज्य सरकारों को जनसंख्या नियन्त्रण हेतु 'अनिवार्य बन्ध्याकरण' का कानून बनाने का अधिकार दे दिया गया। इस अनिवार्यता के कारण सरकार का पतन हो गया तथा अगली सरकार ने 1977 में नई जनसंख्या नीति की घोषणा की जिसमें अनिवार्यता के स्थान पर स्वेच्छा के सिद्धान्त को महत्व प्रदान किया गया साथ ही 'परिवार नियोजन कार्यक्रम' का नाम बदलकर 'परिवार कल्याण कार्यक्रम' कर दिया गया। इसके पश्चात् जून 1981 में भी सरकार ने राष्ट्रीय जनसंख्या नीति में संशोधन किया।

नवीन जनसंख्या नीति : 2000

सरकार ने 15 फरवरी, 2000 को नई राष्ट्रीय जनसंख्या नीति की घोषणा की। इस नीति में जनसंख्या के परिमाण को राष्ट्रीय साधनों के अनुरूप नियन्त्रित करने एवं जीवन–स्तर में गुणात्मक सुधार लाने के लिए तीन उद्देश्य निश्चित किये गये :

- तात्कालिक उद्देश्य : पर्याप्त मात्रा में गर्भ निरोधक उपायों का विस्तार करने के लिए स्वास्थ्य के बुनियादी ढ़ांचे का विकास करना।
- मध्यमकालीन उद्देश्य : कुल प्रजनन दर को सन् 2010 तक 2.1 के प्रतिस्थापन स्तर तक लाना।
- दीर्घकालीन उद्देश्य : सन् 2045(अब 2070) तक जनसंख्या ऐसे स्तर पर स्थिर करना जो आर्थिक वृद्धि, सामाजिक विस्तार तथा पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से अनुकूल हो।

इस नीति में छोटे परिवार के प्रोत्साहन हेतु विभिन्न प्रेरक उपायों की घोषणा की गई, जिनमें प्रमुख हैं : छोटे परिवार को बढ़ावा देने वाली पंचायतों एवं जिला परिषदों को केन्द्र सरकार द्वारा पुरष्कृत करना, गरीबी रेखा से नीचे के उन परिवारों को 5000 रूपये की स्वास्थ्य बीमा की सुविधा देना जिनके केवल दो बच्चे हैं और उन्होने बन्ध्याकरण करवा लिया है, बाल–विवाह निरोधक अधिनियम तथा प्रसव पूर्व लिंग परीक्षण तकनीकी निरोधक अधिनियम को कड़ाई से लागू किया जाना, गर्भपात सुविधा योजना को मजबूत करना, ग्रामीण क्षेत्रों में बन्ध्याकरण की सुविधा हेतु सहायता देना आदि। इसके साथ ही देश में राष्ट्रीय जनसंख्या आयोग, राज्य जनसंख्या आयोग एवं योजना आयोग में समन्वय प्रकोष्ठ का गठन भी किया गया है।

अभ्यास प्रश्न 2

प्रश्न 01 : निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताईये।

(क) नवीन जनसंख्या नीति की घोषणा 15 फरवरी, 2000 को की गई।

(ख) 1976 की जनसंख्या नीति में 'परिवार नियोजन कार्यक्रम' का नाम बदलकर 'परिवार कल्याण कार्यक्रम' कर दिया गया।

(ग) जनसंख्या नीति 2000 का दीर्घकालीन उद्देश्य सन् 2070 तक जनसंख्या को स्थिर अवस्था में लाना है।

8.9 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप यह जान चुके हैं कि मानवीय संसाधन, जनसंख्या व आर्थिक विकास आपस में जुडें हुए है। जनसंख्या की अधिकता विकास के लिए घातक है तो अनुकूलतम बिन्दु से नीचे रहने पर रुकावट भी है।जनसंख्या आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान देती है। यदि राष्ट्रीय साधन तथा जनसंख्या का एक उचित संयोग हो तो तीव्रता से आर्थिक विकास होता है। यदि इस संयोग में असन्तुलन आ जाये अर्थात् जनसंख्या, राष्ट्रीय साधनों की तुलना में तीव्र गति से बढ़े तो विभिन्न प्रकार की सामाजिक–आर्थिक समस्याएँ जन्म लेने लगती हैं। अतिशय जनसंख्या के कारण मनुष्य की मूलभूत सुविधाओं (भोजन, वस्त्र एवं आवास) की व्यवस्था सम्बन्धी समस्या, बेरोजगारी एवं प्रदूषण की समस्या, ऊर्जा–संकट, विद्युतीकरण का अभाव, मन्द विकास गति, कानून और व्यवस्था की समस्या, अति–नगरीकरण और नगरों की ओर पलायन की समस्या बढ़ती जा रही है। इसके परिणामस्वरूप भविष्य में भी अधिक जनंसख्या हेतु आवश्यक सुविधाओं की अनुपलब्धता, कृषि योग्य भूमि में कमी, आवश्यक जल संसाधनों में कमी, पर्यावरण प्रदूषण में वृद्धि, पर्याप्त रोजगार की अनुपलब्धता, गरीबी और विषमता में वृद्धि, उच्च प्रशिक्षित जनसंख्या की उपलब्धता में कमी, प्रति व्यक्ति आय में कमी, पर्याप्त विकास हेतु आवश्यक पूंजी निर्माण में कमी, आश्रितता–अनुपात में वृद्धि जैसी विभिन्न समस्याएँ आवश्यक रूप से उत्पन्न होगीं।जनगणना, 2011 व इससे पिछली जनगणना, 2001 की सहायता से प्रदेश की अनेक जनांककीय विशेषताओं की विवेचना की गयी है। जनसंख्या का आकार,

वृद्धि, वितरण, लिंगानुपात, घनत्व व साक्षरता दर को जिलेवार व्यक्त किया गया हैं।जनसंख्या नीति 2000 के द्वारा तात्कालिक, मध्यमकालीन एवं दीर्घकालीन उद्देश्य बनाकर आर्थिक विकास हेतु आवश्यक स्थिर एवं गुणवान जनसंख्या प्राप्त करने के प्रयास किये जा रहे हैं।इ स इकाई के अध्ययन के बाद आप उत्तराखण्ड की जनसंख्या संरचना, इससे जुड़ी कुछ समस्याओं व नीतियों को अच्छी तरह समझ सकेंगे।

8.10शब्दावली

जनसंख्या घनत्व– प्रति वर्ग किलोमीटर निवास करने वाले लोगो की संख्या।

जन्म दर – जन्म दर से अर्थ एक वर्ष में एक हजार जनसंख्या पर जन्म लेने वाले शिशुओं की कुल संख्या से है।इसे निकालने के लिए निम्नलिखित सूत्र का उपयोग किया जाता है :

$$\text{जन्म दर} = \frac{\text{एक वर्ष में जन्मे जीवित शिशुओं की कुल संख्या}}{\text{उस वर्ष में देश की कुल जनसंख्या}} \times 1000$$

मृत्यु दर – मृत्यु दर से आशय एक वर्ष में एक हजार जनसंख्या पर मृत्युओं की संख्या से है। इसे निकालने के लिए निम्नलिखित सूत्र का उपयोग किया जाता है :

$$\text{मृत्यु दर} = \frac{\text{एक वर्ष में मृतकों की कुल संख्या}}{\text{उस वर्ष में देश की कुल जनसंख्या}} \times 1000$$

कार्यशील जनसंख्या–कुल जनसंख्या में से बाल जनसंख्या (0–14 वर्ष) एवं वृद्ध जनसंख्या (65+ वर्ष) को घटा देने पर जो जनसंख्या शेष रहती है, उसे कार्यशील जनसंख्या अथवा उत्पादक जनसंख्या कहा जाता है।

जनसंख्या–विस्फोट –जनसंख्या–विस्फोट एक ऐसी स्थिति है जिसमें जनसंख्या अत्यधिक तीव्र गति से बढ़ती है जिसे थोड़े समय में नियन्त्रित नहीं जा सकता है। भारत में 70 के दशक में यह स्थिति व्याप्त थी।

8.11अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

उत्तर(क) : (1)प्रदेश की लगभग आधी से अधिक जनसंख्या हरिद्वार, देहरादून व ऊधमसिंह नगर में निवास करती है।

(2)लिंग अनुपात से आशय एक देश की जनसंख्या में पुरूषों के तुलना में स्त्रियों की संख्या है। इसे स्त्री–पुरूष अनुपात भी कहा जाता है।

(3)उत्तर –(ख) (1) हरिद्वार, (2) रूद्रप्रयाग, (3) 11, (4) ऊधमसिंह नगर, (5) पौड़ी–गढ़वाल, (6) 04, (7) 09, (8) 11, (9) देहरादून, (10) रूद्रप्रयाग, (11) हिन्दू, (12) अल्मोड़ा, (13) हरिद्वार, (14) 05, (15) 08, (16) हरिद्वार, (17) उत्तरकाशी, (18) 05, (19) 08, (20) देहरादून, (21) ऊधमसिंह नगर, (22) 04, (23) 09,

(ग) (1) सत्य, (2) असत्य, (3) सत्य, (4) सत्य, (5) असत्य,(6) सत्य, (7) सत्य, (8) सत्य, (9) असत्य, (10) सत्य,

अभ्यास प्रश्न 2 उत्तर : (क) सत्य, (ख) असत्य, (ग) सत्य।

8.12संदर्भ ग्रन्थ सूची व ई–लिंक्स

- Aggarwal, S.P. (ed.) (1995), *Uttarakhand: Past, Present and Future,* Concept Publishing Company, New Delhi.
- Dewan, M.L. & Jagdish Bahadur (eds.) (2005), *Uttaranchal: Vision and Action Programme*, Concept Publishing Company, New Delhi.
- Mehta, G.S. (1999), *Development of Uttarakhand: Issues and Perspectives*, APH Publishing Corporation, New Delhi.
- Pangtey, Yatendra Singh and others (2011), *Uttarakhand at a Glance 2010-11*, Directorate of Economics and Statistics, Dehradun.
- Planning Commission, Government of India (2009), *Uttarakhand Development Report*, Academic Foundation, New Delhi.
- Sati, V.P. & Kamlesh Kumar (2004), *Uttaranchal: Dilemma of Plenties and Scarcities*, Mittal Publications, New Delhi.
- अर्थ एवं सांख्यिकीय निदेशालय (2011), सांख्यिकीय डायरी 20015–16, उत्तराखण्ड सरकार

8.13 सहायक / उपयोगी पाठ्यसामग्री

1. ठाकुर, सुदीप व अन्य (सम्पादक) (2010), *उत्तराखंड उदयः एक दशक की यात्रा (2000 से 2010),* अमर उजाला पब्लिकेशन्स लिमिटेड, नोएडा।

2. बलूनी, विद्या दत्त, *उत्तराखण्डः एक सम्पूर्ण अध्ययन,* अरिहन्त पब्लिकेशन्स (इ) प्रा लि, मेरठ।

3. पाण्डेय, अशोक कुमार, *उत्तरांचलः सम्पूर्ण अध्ययन,* उपकार प्रकाशन, आगरा।

4. सविता मोहन (2007), *उत्तराखण्डः समग्र अध्ययन,* तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली।

8.14 निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 1 : उत्तराखण्ड में जनसंख्या की प्रमुख विशेषताएं क्या हैं ?नवीन जनसंख्या नीति को स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 2 : 'आर्थिक विकास का प्रतिफल अन्तिम रूप से मानवीय गुणों, उसकी कार्यकुशलता तथा उसके दृष्टिकोण पर निर्भर करता है।' विवेचना कीजिए।

प्रश्न 3: वर्ष 2001 के साथ वर्ष 2011 की तुलना करते हुए उत्तराखण्ड की जनांककीय विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

प्रश्न 4: उत्तराखण्ड के पर्वतीय व मैदानी जिलों की जनांककीय विशेषताओं की तुलना कीजिए।

प्रश्न 5 : 'जनसंख्या में तीव्र वृद्धि प्रदेश की आर्थिक प्रगति में बाधक है।' इस कथन की समीक्षा कीजिए।

इकाई नौ : उत्तराखण्ड का नियोजनःगरीबी और बेरोजगारी

9.1 प्रस्तावना
9.2 उद्देश्य
9.3 गरीबी का आशय
9.4 गरीबी की माप
9.5 गरीबी का परिमाण
9.6 उत्तराखण्ड में गरीबी के कारण
9.7 उत्तराखण्ड में गरीबी का विश्लेषण
9.8 उत्तराखण्ड में गरीबी निवारण के उपाय
9.9 बेरोजगारी का आशय
9.10 बेरोजगारी की प्रकृति
9.11 उत्तराखण्ड में बेरोजगारी के कारण
9.12 उत्तराखण्ड में बेरोजगारी का विश्लेषण
9.13 उत्तराखण्ड में बेरोजगारी को दूर करने के सुझाव
9.14 उत्तराखण्ड में गरीबी एवं बेरोजगारी निवारण कार्यक्रम
9.15 उत्तराखण्ड में गरीबी एवं बेरोजगारी निवारण की रणनीति का आलोचनात्मक मूल्यांकन
9.16 सारांश
9.17 शब्दावली
9.18 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
9.19 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
9.20 सहायक/उपयोग पाठ्य सामग्री
9.21 निबन्धात्मक प्रश्न

9.1 प्रस्तावना

आधुनिंक उत्तराखण्डमें समाज और अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित यह नवीं इकाई है। इससे पहले की इकाई उत्तराखण्ड की जनसंख्या एवं मानवीय संसाधन के अध्ययन से आपको उत्तराखण्ड की जनसंख्या का आकार, वृद्धि दर तथा वितरणके बारे में सामान्य जानकारी प्राप्त हुई।

उत्तराखण्ड में गरीबी एवं बेरोजगारी का क्या आशय है? गरीबी एवं बेराजगारी के क्या कारण है? गरीबीएवं बेराजगारी निवारण के लिए अनेक कार्यक्रम योजना काल में लागू किए गए परन्तु आशानुसार सफलता नहीं प्राप्त हुई।इससे जुड़ी सरकार द्वारा गरीबी एवं बेरोजगारी निवारण के लिए अपनायी गई नीतियों एवं कार्यक्रमों को जान सकेंगे।इस सन्दर्भ में किए जानें वाले उपाय एवं नीतियों में परिवर्तन की कैसी आवश्यकता हैं, प्रस्तुत इकाई में इसकी विस्तार से चर्चा की गयी है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप गरीबी एवं बेरोजगारी आशयएवंपरिदृश्य कोजान पायेगें। उत्तराखण्ड में गरीबी एवं बेरोजगारीके लिए उत्तरदायी विभिन्न कारणों का वर्णन कर सकेंगे।आप उत्तराखण्ड सरकार द्वारा गरीबी एवं बेरोजगारी निवारण के लिए अपनायी गई नीतियों एवं कार्यक्रमों को जान सकेंगे।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- गरीबी एवं बेरोजगारी आशय परिदृश्य एवं परिमाण को जान सकेंगें ।
- गरीबी एवं बेरोजगारीके परिदृश्य का वर्णन कर सकेंगे।
- गरीबी एवं बेरोजगारीके लिए उत्तरदायी विभिन्न कारणों का वर्णन कर सकेंगे।
- सरकार द्वारा गरीबी एवं बेरोजगारी निवारण के लिए अपनायी गई नीतियों एवं कार्यक्रमों को विवेचना कर सकगें।

9.3. गरीबी का आशय

जब समाज का एक भाग न्यूनतम जीवन स्तर से भी नीचे जीवन यापन के लिए विवश होते है तो यह स्थिति गरीबी की स्थिति कहलाती है। विश्व के सभी देशों में गरीबी को परिभाषित करने का प्रयास किया गया है। परन्तु इन सबका आधार न्यूनतम या अच्छे जीवन स्तर की कल्पना है। यद्यपि गरीबी को कई दृष्टिकोण से परिभाषित करने का प्रयास किया जाता है। एक दृष्टिकोण में गरीबी को आधारिक सुविधाओं यथा भोजन, आवास, शिक्षा तथा चिकित्सा से सम्बद्व कर परिभाषित करने का प्रयास किया गया है। आय के स्तर पर विचार किए बिना यदि किसी परिवार में इस आधारिक सुविधाओ की कमी रहती है तो उस परिवार को गरीब माना जाता है। इस दृष्टिकोण का सबसे बडा दोष यह है, कि इसमें वे भी परिवार गरीबी की सूची में सम्मिलित कर लिए जाते है जिनकी आय अधिक है परन्तु अपनी बुनियादी आवश्यकताओं पर व्यय नहीं करते है। और दूसरी ओर वे परिवार सम्मिलित नहीं होते है जिनकी आय तो नगण्य है परन्तु वे ऋण, पूर्व बचत को कम करके रिश्तेदारों और मित्रों से सहायता

लेकर अपनी बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति करते है। एक दूसरे दृष्टिकोण में एक परिवार की न्यूनतम आवश्यकताओं का आकलन तथा फिर एक आधार वर्ष की कीमत के आधार पर अपेक्षित आय में रुपांतरित कर दिया जाता है। भारत में इसी दृष्टिकोण के आधार पर गरीबी को परिभाषित किया जाता है। विभिन्न विद्वानो ने गरीबी को निम्न प्रकार परिभाषित किया है–

राउन्ट्री ने गरीबी को परिभाषित करते हुये लिखा है कि "गरीबी जीवन को व्यवस्थित रूप से चलाने के लिये किये गये न्यूनतम व्यय से सम्बन्धित है, जिसमें भोजन, कपड़ा, मकान, घर का किराया, ईंधन आदि सभी आवश्यक वस्तुओं की कीमत शामिल है।"

दो अध्येताओं, **शाहीन रफी खान** और **डैमियन किल्लेन** ने गरीबी की स्थिति को बहुत स्पष्ट रूप में व्यक्त किया है। इनके अनुसार गरीबी भूख है, गरीबी बीमार होना है और डॉक्टर को न दिखा पाने की विवषता है। यह स्कूल में न जा पाने और निरक्षर रह जाने का नाम है। गरीबी बेरोजगारी व अपने भविष्य के प्रति भय है। यह अपने बच्चे को उस बीमारी से मरते हुये देखने की स्थिति है जो अस्वच्छ पानी पीने से होती है। गरीबी शक्ति प्रतिनिधित्व और स्वतन्त्रता की हीनता का नाम है।

एस0 महेन्द्र देव ने गरीबी को बहुआयामी तथ्य के संदर्भ में लिया है। इनके अनुसार गरीबी केवल आय व उपभोग के स्तर से ही सम्बन्धित नहीं वरन् स्वास्थ्य व शिक्षा का भी गरीबी की अवधारणा में विचार करना चाहिये।

प्रो0 अर्मत्य सेन के अनुसार, गरीबी निरपेक्ष वंचित की तुलना में सापेक्षिक अभाव को बताती है। सेन का मानना है कि सामान्यतः भुखमरी गरीबी को ही दर्शाती है परन्तु यह आवश्यक नहीं कि व्यापक रूप में गरीबी होने पर भुखमरी भी गम्भीर अवस्था में हो।

बाईसब्रान्ड के अनुसार गरीबी मुख्यतः अपर्याप्त भोजन, कपड़ा और रहने की समस्या से सम्बन्धित है।

इस प्रकार गरीबी की धारणा एक बहुआयामी तथ्य है। यह केवल आय व उपभोग स्तर से ही सम्बन्धित नहीं वरन् स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास व उचित रहन–सहन के स्तर से वंचित रहने की स्थिति से भी सम्बन्धित है।

9.4 गरीबी की माप

गरीबी की माप के लिए सामान्यतः दो प्रतिमानों का प्रयोग किया जाता हैः

सापेक्षित प्रतिमान : गरीबी के सापेक्षित माप के अर्न्तगत देश की जनसंख्या की सम्पत्ति उपभोग अथवा आय स्तर के आधार पर विभिन्न क्रमिक वर्गो में विभक्त किया जाता है। इस प्रकार प्राप्त वर्गों को सम्पति, आय, उपभोग के बढ़ते या घटते हुए स्तरो के आधार पर क्रमबद्व किया जाता है। तत्पश्चात उच्चतम 5 प्रतिशत या 10 प्रतिशत निवासियों के अंश से की जाती है। सापेक्षित प्रतिमान के आधार पर प्राप्त जानकारी गरीबी की अपेक्षा आय, सम्पत्ति तथा उपभोग के वितरण में व्याप्त विषमता का बेहतर चित्रण करती है। इसकी सीमा यह है कि इसके द्वारा गरीबी की माप करने पर विकसित देशों में भी जनसंख्या का एक बड़ा भाग गरीबी की श्रेणी में आयेगा। यद्यपि उन देशो के गरीबों के रहन सहन का स्तर विकासशील देशों के गरीबों की तुलना में अधिक बेहतर होगा। वस्तुतः यह प्रणाली गरीबी की

वास्तविक माप का चित्रण नहीं करके आर्थिक विषमता का चित्रण करती है। यही कारण है कि उत्तराखण्ड में गरीबी की माप इस विधि से नहीं की जाती है।

निरपेक्ष प्रतिमान : गरीबी माप की इस विधि के अर्न्तगत गरीबी की माप के लिए देश में विद्यमान एक न्यूनतम उपभोग स्तर को जीवन यापन की अनिवार्य आवश्यकताओं के आधार पर निर्धारित किया जाता है। न्यूनतम उपभोग स्तर से कम उपभोग करने वाले व्यक्ति को गरीबो की श्रेणी में रखा जाता है। उत्तराखण्ड में इस न्यूनतम उपभोग स्तर को गरीबी रेखा की संज्ञा दी गयी है। गरीबी रेखा के निर्धारण के लिए जीवन यापन हेतु अनिवार्य आवश्यक वस्तुओं की न्यूनतम मात्रा को पोषकता की न्यूनतम मात्रा के आधार पर ज्ञात किया जाता है। इस प्रकार प्राप्त भौतिक मात्राओं की कीमत से गुणा करके मुद्रा के रूप में परिवर्तित कर दिया जाता है। प्राप्त मौद्रिक मान प्रति व्यक्ति न्यूनतम उपभोग व्यय को प्रदर्शित करता है। यही न्यूनतम उपभोग व्यय गरीबी रेखा को व्यक्त करता है। ज्ञातव्य है कि गरीबी की माप के लिए **निरपेक्ष प्रतिमान का प्रयोग सर्वप्रथम खाद्य एवं कृषि संगठन के प्रथम महानिदेशक ब्याएड आर ने 1945** में किया तथा इसके आधार पर गरीबी की माप करने के लिए क्षुधा रेखा की संकल्पना का प्रतिपादन किया। यही संकल्पना विश्व के सभी देशों में किसी न किसी रूप में विद्यमान है।

उत्तराखण्ड में गरीबी की माप करने के लिए निरपेक्ष प्रतिमान का ही प्रयोग किया जा रहा है। इसी प्रतिमान के आधार पर निर्धारित किए गये न्यूनतम उपभोग व्यय को गरीबी रेखा की संज्ञा दी जाती है। इस विधि के माध्यम से गरीबी की माप करने की विधि को हेड काउंट रेशियो भी कहा जाता है।

9.5 गरीबी का परिमाण

गरीबी के परिमाण का अनुमान लगाने के लिये समुचित एवं संतोषजनक आँकड़ों का अभाव है। इसका कारण यह है कि इस देश में आय के वितरण से सम्बन्धित आँकड़ों का प्रायः उचित संकलन नहीं हो पाता। परन्तु राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के विभिन्न दौर में सर्वेक्षण के आधार पर जनसंख्या के विभिन्न वर्गों द्वारा निजी उपभोग पर व्यय के संतोषजनक आँकड़े उपलब्ध हुये हैं। परन्तु गरीबी की परिभाषा पर मतभेद और अध्ययन की रीतियों के अन्तर के कारण बर्धन, मिन्हास, पी0डी0 ओझा तथा दांडेकर व नीलकंठ रथ आदि अर्थशास्त्री गरीबी की व्यापकता के सम्बन्ध में एक दूसरे से भिन्न निष्कर्षों पर पहुँचे हैं।

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन (NSSO) ने गरीबी की स्थिति के आंकलन के लिये 2004–05 के अपने सर्वेक्षण में दो तरह की प्रश्नावली का प्रयोग किया है। जिसमें प्रथम 30 दिन के **यूनीफार्म रिकॉल पीरियड (URP)**उपभोग व्यय व दूसरा 365 दिन के संदर्भ वाले **मिक्स्ड रिकॉल पीरियड (MRP)**पर आधारित था। इन दोनों ही आधारों पर गरीबी अनुपात अलग–अलग आँकलित किया गया है।

योजना आयोग द्वारा आंकलित गरीबों की संख्या को लेकर विवाद बना रहता है। 1993–94 में योजना आयोग ने प्रसिद्व अर्थविद डी0 टी0 लकड़वाला की अध्यक्षता में गठित विशेषज्ञ दल द्वारा योजना आयोग के पूर्व आँकडों को अविश्वसनीय बताते हुए गरीबी की माप के लिए वैकल्पिक फार्मूले का उपयोग करने का सुझाव दिया। जिसके अंतर्गत **शहरी गरीबी के आंकलन के लिए औद्योगिक श्रमिकों के उपभोक्ता मूल्य सूचकांक** एवं **ग्रामीण क्षेत्रो में इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु कृषि श्रमिको के उपभोक्ता मूल्य सूचकांक को आधार** बनाया। 11 मार्च 1997 को योजना आयोग की पूर्ण बैठक में गरीबी रेखा की

माप के लिए लकड़वाला फार्मूले को स्वीकार कर लिया गया। इस न्यूनतम उपभोग के लिए आवश्यक आय के विषय पर अर्थशास्त्री एकमत नहीं है। 7वें वित्त आयोग ने एक नयी वर्द्धित गरीबी रेखा की अवधारणा की संकल्पना का प्रतिपादन किया। इस वर्द्धित गरीबी रेखा के निर्धारण में मासिक वैयक्तिक उपभोग व्यय में सरकार द्वारा शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवार नियोजन, समाज कल्याण आदि पर किए जाने वाले प्रति व्यक्ति मासिक व्यय की राशि भी जोड़ दिया। इस प्रकार प्राप्त हुई धनराशि को वर्द्वित गरीबी रेखा का नाम दिया गया। वर्द्वित गरीबी रेखा पूरे देश के लिए समान नहीं होगा बल्कि इसका निर्धारण प्रत्येक राज्य के लिए अलग–अलग होगा। इस कारण योजना आयोग द्वारा गरीबी रेखा निर्धारण के सम्बन्ध एक वैकल्पिक परिभाषा स्वीकार की जिसमें आहार सम्बन्धी जरुरतों को ध्यान में रखा गया है। इस अवधारणा के अनुसार **"जिनको ग्रामीण क्षेत्र में प्रतिव्यक्ति 2400 कैलोरी प्रतिदिन तथा शहरी क्षेत्र में 2100 कैलोरी प्रतिदिन के हिसाब से पोषक शक्ति नहीं प्राप्त होती है उनको गरीबी रेखा से नीचे माना जाता है।"**जो व्यापक गरीबी की स्थिति को बताता है। जिसका विद्यमान होना चिन्ता का विषय है। इसी अवधारणा पर आधारित योजना आयोग राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण एवं विश्व बैंक द्वारा उपभोग व्यय से सम्बन्धित जो जानकारी उपलब्ध है उसके आधार पर शहरी व ग्रामीण क्षेत्र में गरीबी के अनुमापन का प्रयास किया गया।

9.6 उत्तराखण्ड में गरीबी का विश्लेषण

उत्तराखण्ड में गरीबी केविश्लेषण के सन्दर्भ में तेन्दुलकर समिति एवं रंगराजन समिति के ऑकडें उपलब्ध है।तेन्दुलकर समिति के अनुसार कुल गरीबी अनुपात में वर्ष 2009–10 से वर्ष 2011–12 में 6.7 प्रतिशत की कमी दर्ज हुई। जो संख्या में 6.3 लाख है। शहरी गरीबी अनुपात में वर्ष 2009–10 से वर्ष 2011–12 में 14.7 प्रतिशत की कमी दर्ज हुई। जो संख्या में 4.1 लाख है। ग्रामीण गरीबी अनुपात में वर्ष 2009–10 से वर्ष 2011–12 में 2.7 प्रतिशत की कमी दर्ज हुई। जो संख्या में 2.1 लाख है।रंगराजन समिति के अनुसार कुल गरीबी अनुपात में वर्ष 2009–10 से वर्ष 2011–12 में 8.3 प्रतिशत की कमी दर्ज हुई। जो संख्या में 8.1 लाख है। शहरी गरीबी अनुपात में वर्ष 2009–10 से वर्ष 2011–12 में 6.9 प्रतिशत की कमी दर्ज हुई। जो संख्या में 1.5 लाख है। ग्रामीण गरीबी अनुपात में वर्ष 2009–10 से वर्ष 2011–12 में 9.9 प्रतिशत की कमी दर्ज हुई। जो संख्या में 6.7 लाख है।

सारणी 9.1 उत्तराखण्ड में गरीबी का विश्लेषण

वर्ष	गरीबी अनुपात			गरीबी की संख्या लाख में		
	ग्रामीण	शहरी	कुल	ग्रामीण	शहरी	कुल
तेन्दुलकर समिति के अनुसार						
2009–10	14.3	25.2	18	10.3	7.5	17.9
2011–12	11.6	10.5	11.3	8.2	3.4	11.6

क्मी	**2.7**	**14.7**	**6.7**	**2.1**	**4.1**	**6.3**
रंगराजन समिति के अनुसार						
2009–10	**22.5**	**36.4**	**26.7**	**15.6**	**10.9**	**26.5**
2011–12	**12.6**	**29.5**	**18.4**	**8.9**	**9.4**	**18.4**
क्मी	**9.9**	**6.9**	**8.3**	**6.7**	**1.5**	**8.1**

स्रोत–Report of the Expert Group to Review the methodology for measurement of Poverty Govt. of India Planning Commission June 2014.

गरीबी के उक्त ऑकडों में बडे विभेद का आधार दोनो समिति का गरीबी रेखा के मध्य पाया गया अन्तर है।तेन्दुलकर समिति के अनुसार शहरी गरीबी रेखावर्ष 2009–10 रुपया 899 से बढकर वर्ष 2011–12 में रुपया 1082 हो गयी। ग्रामीण गरीबी रेखा वर्ष 2009–10 रुपया 720 से बढकर वर्ष 2011–12 में रुपया 880 हो गयी। रंगराजन समितिके अनुसार शहरी गरीबी रेखा वर्ष 2009–10 रुपया 1169.82 से बढकर वर्ष 2011–12 में रुपया 1408.12 हो गयी। ग्रामीण गरीबी रेखा वर्ष 2009–10 रुपया 830.09 से बढकर वर्ष 2011–12 में रुपया 1014.95 हो गयी।

सारणी 9.2 उत्तराखण्ड में गरीबी रेखा

विधि	**ग्रामीण**		**शहरी**	
	2009–10	**2011–12**	**2009–10**	**2011–12**
तेन्दुलकर समिति के अनुसार	720	880	899	1082
रंगराजनसमिति के अनुसार	830.09	1014.95	1169.82	1408.12
अन्तर	110.09	134.95	270.82	326.12

स्रोत–Report of the Expert Group to Review the methodology for measurement of PovertyGovt. of India Planning Commission June 2014.

तेन्दुलकर समिति और रंगराजन समिति के बीचग्रामीण गरीबी रेखा में अन्तर वर्ष 2009–10 रुपया 110.09 का था वह बढकर वर्ष 2011–12 में रुपया 134.95 हो गया। तेन्दुलकर समिति और रंगराजन समिति के बीचशहरी गरीबी रेखा में अन्तर वर्ष 2009–10 रुपया 270.82 का था वह बढकर वर्ष 2011–12 में रुपया 326.12 हो गया।

9.7 उत्तराखण्ड में गरीबी के कारण

उत्तराखण्ड में योजनाओं में गरीबी को कम करना प्रत्यक्ष उद्देश्य नहीं था। यह कल्पना की गयी कि राष्ट्रीय आय की तीव्र वृद्धि दर पूर्ण रोजगार को कायम करेगी और रहन–सहन का स्तर ऊँचा उठेगा और गरीबी स्वंय समाप्त हो जायेगी। परन्तु विकास के साथ–साथ गरीबी में कोई विशेष कमी नहीं आयी हैं गरीबी के प्रमुख कारण निम्न है–

- उत्तराखण्ड एक कृषि एवं पर्यटन प्रधान राज्य है। जिसकी कुल कार्यकारी जनसंख्या का दो तिहाई कृषि एवं सम्बद्ध क्रियाकलापों में संलग्न है। जिसके पिछडने का मूल कारण राज्य के कृषक आज भी कृषि के पुराने तरीकों द्वारा ही कृषि कार्य करते है, उनके कृषि उपकरण भी परम्परागत ही हैं, साथ ही कृषि के लिए सिंचाई की समुचित व्यवस्था न होना है।
- उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था का विकास प्रकृति की कृपा पर निर्भर है। हमेशा कोई न कोई प्राकृतिक प्रकोप लगा रहता है। कभी राज्य में विकराल सूखा, तो कभी भूकम्प, तो कभी अतिवृष्टि उसकी फसल को समूल समाप्त कर देती है।
- विकास की इस प्रक्रिया में राज्य में**बेरोजगारी और अर्द्ध–बेरोजगारी** में निरन्तर वृद्धि हुई है तथा इसी के साथ–साथ गरीबी भी बढ़ती चली गयी है।
- **अल्पविकास और असमानता** गरीबी के दोहरे जनक हैं।जिसमें लगातार विस्तार विद्यमान है।
- **जनसंख्या की ऊँची वृद्धि दर**विकास द्वारा राज्य ने जो कुछ भी अर्जित किया है, उसमें से अधिकांश का उपभोग कर लिया गया है और आर्थिक विकास के लिए बहुत थोड़े से साधन शेष रह गये। जनसंख्या की ऊँची वृद्धि दर के कारण प्रति व्यक्ति औसत आय में भी बहुत कम वृद्धि हुई है।
- **आर्थिक विकास दर के अपर्याप्त** रहने के कारण गरीबी को समाप्त करने में राज्य विफल रहा है। दसवीं पंचवर्षीय एवं ग्यारहवी पंचवर्षीय योजना की समाप्तिऔर बारहवीं योजना के प्रारम्भ हो जाने के बाद भी कृषि और औद्योगिक क्षेत्र की विकास की दर की स्थिति बहुत अधिक संतोषजनक नहीं है।
- **पूंजी निर्माण की कमी**उत्तराखण्ड राज्य में व्याप्त गरीबी के मूल कारणों में से है। पूंजी निर्माण की यह कमी राज्य के आर्थिक विकास में बहुत बड़ी बाधा सिद्ध हो रही है। पूंजी निर्माण की कमी के अनेक कारण है; जैसे– प्रति व्यक्ति न्यून आय, बचत की क्षमता का अभाव, अपर्याप्त बैंकिग सुविधाएं आदि।
- उत्तराखण्ड राज्य में कुशल श्रम की बहुत कमी रही है। इसका कारण राज्य में तकनीकी शिक्षा का अभाव रहा है, परिणामस्वरूप श्रमिकों की कार्यक्षमता अत्यधिक कम होती है। कार्यक्षमता की कमी का प्रभाव उनकी आय पर पड़ता है, फलस्वरूप वे गरीबी से स्वयं को मुक्त नहीं कर पाते।
- **भौतिक एवं सामाजिक अद्योसंरचना** अभाव के कारण आज भी उत्तराखण्ड राज्य के बहुत से गांव, मुख्य नगरों एवं कस्बों से नहीं जुड़ सके हैं। परिणाम स्वरूप गांवों का किसान आज भी अपनी उपज मंडियों एवं बाजारों में नहीं ले जा पाता। अतः उन्हें अपने उपज की सही कीमत नहीं मिल पाती जिससे ऐसे किसानों में गरीबी सदैव बनी रहती है।
- उत्तराखण्ड राज्य में जनसंख्या का एक बड़ा भाग **निरक्षर** है। जिसका परिणाम उन्हें अपने शोषण के रूप में भुगतना पड़ता है।

- ❖ उत्तराखण्ड राज्य में आज भी**प्राथमिक चिकित्सा सुविधाओं** का अभाव है। जनसंख्या के उस बड़े भाग को जो गरीबी की सीमा रेखा से नीचे का जीवनयापन कर रहा है,जिसे प्राथमिक चिकित्सा सुविधाएं भी उपलब्ध नहीं हो पा रही है।
- ❖ उत्तराखण्ड राज्य में अनेक ऐसी सामाजिक कुप्रथाओं का प्रचलन है जो इस राज्य के निवासियों को गरीब बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। राज्य के लोग विविध त्योंहारो, विवाह समारोह, मृत्यु–भोज एवं अन्य ऐसी ही प्रथाओं पर अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिए धन का अपव्यय करते है। जिसमें से अधिकांश लोग यह कार्य कर्ज लेकर करते है और कर्ज के भुगतान में ही उनका सम्पूर्ण जीवन और आय समाप्त हो जाती है।

9.8 उत्तराखण्ड में गरीबी निवारण के उपाय

गरीबी की समस्या को दूर करने के लिए उन दशाओं को सुधारना आवश्यक है जिनके कारण गरीबी उत्पन्न होती है। जिस लिए एक बहुपक्षीय कूटनीति बहुत जरूरी है। इसके प्रमुख पक्ष निम्न है–

1. आर्थिक विकास दर को बढ़ाने का प्रयास किया जाना चाहिए, विशेष रूप से सभी क्षेत्रों के मध्य का संतुलन बनाया जाए।

2. कृषि विकास एवं गरीबी के मध्य प्रत्यक्ष सह–सम्बन्ध दिखाई देता है। जिन राज्यों में कृषि क्षेत्र की संवृद्धि दर तेज पायी गई वहाँ गरीबी में कम देखी गई। हरित क्रान्ति का प्रभाव जैसे–जैसे सीमान्त एवं छोटे कृषकों तक पहुँचा गरीबी में कमी हुई। अतः कृषि विकास की नवीन रणनीति, लघु व सीमान्त कृषिकों तथा ऐसे भूमि क्षेत्रों को भी ध्यान में रखना है, जहाँ भूमि उपज न्यून है।

3. गरीबी के निवारण हेतु ग्रामीण एवं लघु कुटीर उद्योगों एवं ग्रमीण हस्तशिल्प का विकास किया जाना चाहिए। इस हेतु ग्रामीण औद्योगिकरण को बढ़ावा देते हुए ग्राम स्तर पर लघु कुटीर उद्योगों को स्थापित करने के लिए अधिक प्रयास करने होगें तथा इन्हें संसाधन, वित्त व बाजार की समस्त सुविधाँए प्रदान करनी होगी। लघु उद्योगों में नवीन शोध को बढ़ावा देकर अत्पादित वस्तु की गुणवत्ता को बढ़ाना होगा।

4. एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम गरीबी निवारण की अधिक सुस्पष्ट एवं महत्वपूर्ण नीति है। इसके द्वारा उत्पादकता वृद्धि ग्रामीण जनसंख्या के जीवन–स्तर में सुधार एवं स्वालम्बन युक्त विकास किया जाना सम्भव होगा। जिस परिप्रेक्ष्य में श्रम गहन कृषि विकास, कृषि आधारित लघु एवं खाद्य प्रसंस्करण उद्योग की स्थापना, एवं कार्यक्रमों के निर्माण में ग्राम जन की भागीदारी सुनिश्चित करना होगा।

5. जन संख्या की तीव्र वृद्धि ने विकास को प्रभावहीन कर दिया। राष्ट्रीय आय में नगण्य वृद्धि हुई। इस हेतु एक प्रभावी नीति के निर्माण एवं क्रियान्वयन की आवश्यकता है।

6. आय एवं धन के वितरण में असमान्ता को कम करने हेतु तीव्र कदम उठाने चाहिए। प्रगतिशील करारोपण के माध्यम से वितरण में समानता लाने का प्रयास किया जाए। भूमि एवं शहरी सम्पत्ति की अधिकता सीमा का निर्धारण कर अतिरिक्त को जनकल्याण के कार्यो में लगाया जाना चाहिए।

7. बचत, निवेश और पूँजी–निर्माण को तीव्र प्रोत्साहन हेतु प्रभावी कदम उठाने चाहिए। बचत को प्रोत्साहन कर उन्हे उत्पादक कार्यो में लगाया जाना चाहिए। इस परिप्रेक्ष्य में छोटी–छोटी बचतों को एकत्रीकरण के साथ ही विदेशी प्रत्यक्ष पूँजी को भी आकर्षित करना आवश्यक है।

8. आधार भूत आवश्यकताएं जो गरीबी के मूल कारण से जुड़ी है, प्रभावी आय आवश्यक है। इस सन्दर्भ में प्राथमिक शिक्षा, स्वास्थ्य सुविधा, सड़क, बिजली, आवास एवं विद्युतीकरण के कार्यक्रमों को तीव्रता से लागू कर गरीबी पर प्रत्यक्ष प्रहार सम्भव है।

9. क्षेत्रीय असमानता को दूर करने एवं सीमान्त प्रदेशों में प्रेरित प्रवास रूपी कार्यक्रम आरम्भ करने चाहिए। जैसा कि ब्राजील, चीन, मलेशिया जैसे देशो में महज जनसंख्या प्रदेशों से भूमी पर जनसंख्या का दबाव कम करने के लिए सीमान्त प्रदेशों में प्रवास को प्रेरित करने का व बसाव की विधि को अपनाया एवं सफलता पायी।

अभ्यास प्रश्न

1. उत्तराखण्ड में 2011–12(**रंगराजन समिति**) में ..... प्रतिशत लोग गरीबी रेखा से नीचे रहते है।
2. गरीबी रेखा की पुर्न परिभाषा हेतु ..... की अध्यक्षता में समिति गठित की गयी है।
3. गरीबी की माप के लिए सामान्यतः..... का प्रयोग किया जाता है
4. स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना 1 जनवरी .....से प्रारम्भ हुई थी।
5. निर्धनता रेखा मापने का कैलोरी मापदण्ड ..... द्वारा दिया गया है।
6. उत्तराखण्ड में गरीबी की माप .....प्रतिमान विधि से की जाती है।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1.गरीबी का परिमाण से क्या आशय है।

.....

.....

.....

.....

2.उत्तराखण्ड में गरीबी के परिमाण का अनुमान किस विधि से करते है।

.....

.....

.....

.....

3.सापेक्ष एवे निरपेक्ष गरीबी किसे कहते है?

.....

.....

.....

.....

4.राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना अधिनियम की प्रमुख दो विशेषता बताइए।

.....

.....

.....

.....

9.9 बेरोजगारी का आशय

अर्थव्यवस्था चाहे विकसित हो अथवा अल्प विकसित बेरोजगारी एक सामान्य बात है। बेरोजगारी कुशल एवं अकुशल दोनो श्रेणी के श्रमिकों के मध्य पाई जाती है। आर्थिक दृष्टि से देखे तो यह उत्पादन के एक महत्वपूर्ण संसाधन की बर्वादी है। बेराजगारी ऐसी स्थिति का निर्माण करती है जहाँ व्यक्ति का सर्वाधिक नैतिक पतन हो जाता है।

बेरोजगारी उत्तराखण्ड की एक ज्वलन्त समस्या है जिसकी जड़ गहरी पहुंच चुकी है। आज इसका स्परूप दीर्धता की ओर बढ़ता चला जा रहा है। भारत में ही बेकारी नहीं अपितु बेकारी की समस्या विश्वव्यापी है। सामान्यतया जब एक व्यक्ति को अपने जीवन निर्वाह के लिए कोई कार्य नहीं मिलता है तो उस व्यक्ति को बेरोजगार और इस समस्या को बेराजगारी कहते है। दूसरे शब्दों में जब कोई व्यक्ति कार्य करने का इच्छुक है और वह शारीरिक रुप से कार्य करने में समर्थ भी है लेकिन कोई कार्य नहीं मिलता जिससे की वह अपनी जीविका का निर्वाहन कर सके तो इस प्रकार की समस्या बेरोजगारी की समस्या कहलाती है। हम बेरोजगार जनसंख्या के उस बढ़े भाग को नहीं कहते हैं जो काम के लिए नहीं मिलते जैसे विधार्थी बढ़े उम्र के व्यक्ति घरेलू कार्यो में लगी महिलायें आदि। जैसा **प्रो0 पीगू** ने कहा है **"एक व्यक्ति तभी ही बेरोजगार कहलाता है। जबकि उसके पास कार्य नहीं हो और वह रोजगार पाने का इच्छुक हो।"**

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के प्रकाशन के मुताबिक बेरोजगार शब्द में वे सब व्यक्ति शामिल किये जाने चाहिये जो एक दिये हुए दिन में काम की तलाश में और रोजगार में नहीं लगे हुए हैं किन्तु यदि कोई रोजगार दिया जाय तो काम में लग सकतें है।

समस्या को परिभाषित करने के लिए यह आवश्यक है कि आवश्यकता और साधन के बारे में विस्तृत विवेचन किया जाये। **बेरोजगारी के सन्दर्भ में जब हम दृष्टिपात करते है तो पाते है कि रोजगार के अवसरों और रोजगार के साधनों के संख्यात्मक मान में भी बहुत बढ़ा अन्तर है यही अन्तर बेरोजगारी चिन्तन के लिए हमें विवश करता है।**

बेरोजगारी मूलरुप से गलत आर्थिक नियोजन का परिणाम है। व्यक्ति जहां संसार में एक मुंह के साथ आता है वही श्रम हेतु दो हाथ भी लाता है। जब तक इन हाथों को श्रम के साधन प्राप्त नहीं होते

तब तक अर्थव्यवस्था को पूर्ण नियोजित अर्थव्यवस्था नहीं माना जा सकता है। गाँधी जी का इस संन्दर्भ में विचार सम्पत्ति व्यक्तिगत नहीं होनी चाहिए उत्पत्ति के साधनों पर नियंत्रण होना चाहिए समाज में उपस्थित विभिन्न आर्थिक तत्व को नियोजित ढ़ंग से कुटीर और लघु उद्योगो को प्रश्रय देना चाहिए।

बेरोजगारी से आशय एक ऐसी स्थिति से है जिसमें व्यक्ति वर्तमान मजदूरी की दर पर काम करने को तैयार होता है परन्तु उसे काम नहीं मिलता है।

बेरोजगारी का अनुमान लगाते समय केवल उन्हीं व्यक्तियों की गणना की जाती है जो–

1. कार्य करने के योग्य हो।
2. कार्य करने के इच्छुक हो।
3. वर्तमान मजदूरी पर कार्य करने को तैयार हो।

'' बेरोजगारी वह स्थिति है जिसमें कार्य करने की इच्छा रखने वाले व्यक्ति को शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ एवं कार्य करने में सक्षम होने पर भी प्रचलित मजदूरी दर पर काम नहीं मिल पाता।''

उन व्यक्तियों को जो कार्य करने के योग्य नहीं है, जैसे– बीमार बूढ़े, बच्चें, विद्यार्थी आदि को बेरोजगारी में सम्मिलित नहीं किया जाता है। इसी प्रकार जो लोग कार्य करना ही पसन्द नहीं करते है, उनकी गणना भी बेरोजगारी में नहीं की जाती है।

9.10 बेरोजगारी की प्रकृति

बेरोजगारी की समस्या ने कई रूप ले लिया हैं, जो निम्नवत है –

- **प्रच्छन्न बेरोजगारी,** बेरोजगारी का वह स्वरूप है जो प्रत्यक्ष रूप में दिखायी नहीं देता और छुपा रहता है भारत में इस प्रकार की बेरोजगारी कृषि में पायी जाती हैं। जिसमें आवश्यकता से अधिक व्यक्ति लगे हुए हैं। यदि इनमें से कुछ व्यक्तियों को खेती के कार्यों से अलग कर दिया जाता है तो उत्पादन में कोई अन्तर नहीं पड़ता हैं। इसका अर्थ यही है कि इस प्रकार के व्यक्तियों द्वारा उत्पादन में कोई योगदान नहीं दिया जाता है। ऐसे व्यक्ति प्रच्छन्न बेरोजगारी के अर्न्तगत आते हैं।

- जब किसी व्यक्ति को अपनी क्षमता के अनुसार कार्य नहीं मिलता है या पूरा कार्य नहीं मिलता है। तो इसे **अल्प रोजगार** कहते हैं। जैसे एक इंजीनियरिग की डिग्री प्राप्त व्यक्ति लिपिक या श्रमिक के रूप में कार्य करता हैं तो इसे अल्प रोजगार कहते हैं ऐसे व्यक्ति कार्य करता हुआ दिखायी तो देता परन्तु इसकी पूर्ण क्षमता का उपयोग नहीं होता है।

- जब व्यक्ति कार्य के योग्य है और वह कार्य करना चाहते है लेकिन उन्हें कार्य नहीं मिलता है तो ऐसी स्थिति को **खुली बेरोजगारी** कहते है। भारत में इस प्रकार की बेरोजगारी व्याप्त है यहाँ लाखों व्यक्ति ऐसे है जो शिक्षित है तकनीकी योग्यता प्राप्त है लेकिन उनको काम करने का अवसर नहीं मिल रहा हैं।

- **मौसमी बेरोजगारी** इस प्रकार की बेरोजगारी वर्ष के कुछ समय में ही होती है भारत में यह कृषि में पायी जाती हैं। जब खेती की जुताई एवं बुआई का मौसम होता है तो कृषि उद्योग में दिन रात कार्य होता है। इसी प्रकार जब कटाई का समय होता है तो फिर कृषि में कार्य होता है। लेकिन बीच के समय में इतना काम नहीं होता है। अत; इस प्रकार के समय में श्रमिकों को काम नहीं मिलता है। इस बेरोजगारी को **मौसमी बेरोजगारी** कहते है।

- शिक्षित बेरोजगारी खुली बेरोजगारी का ही एक रूप है। इसमें शिक्षित व्यक्ति बेरोजगार होते हैं। शिक्षित बेरोजगारी में कुछ व्यक्ति अल्प रोजगार की स्थिति में होते है। जिन्हें रोजगार मिला हुआ होता है लेकिन वह उनकी शिक्षा के अनुरूप नहीं होता है। भारत में भी इस प्रकार की बेरोजगारी भी पायी जाती है।

बेरोजगारी का स्वरूप देश के शहरी तथा ग्रामीण दोनो क्षेत्रो में विद्यमान है। शहरी बेरोजगारी दो प्रकार की है प्रथम शिक्षित लोगो की बेरोजगारी तथा द्वितीय औद्योगिक मजदूरों और शारीरिक श्रम करने वाले लोगो की बेरोजगारी ग्रामीण क्षेत्र में बेरोजगारी मुख्य रुप से तीन प्रकार की है प्रथम मौसमी बेरोजगारी, द्वितीय प्रच्छन्न या छिपी हुई बेरोजगारी और तृतीय प्रत्यक्ष बेरोजगारी।

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के अनुसार बेराजगारी के तीन परिकल्पनाएँ की जाती है–

- **चिरकालिक बेरोजगारी या सामान्य स्थितिः** यह बेरोजगार व्यक्तियो की संख्या के रुप में माप है जो पूरे वर्ष के दौरान बेरोजगार हो। इसी कारण इस बेरोजगारी को खुली बेरोजगारी के रुप में जाना जाता है।

- **साप्ताहिक स्थिति बेरोजगारी** : इसे भी व्यक्तियों की संख्या के आधार पर मापन किया जाता है अर्थात ऐसे व्यक्ति जिन्हे सर्वेक्षण सप्ताह के दौरान एक घंटे का भी रोजगार नहीं मिला हो।

- **दैनिक स्थिति बेरोजगारी :** इसे व्यक्ति दिनों या व्यक्ति वर्षो के रुप में मापन करते है। अर्थात वे व्यक्ति जिन्हें सर्वेक्षण सप्ताह के दौरान या एक दिन या कुछ दिन रोजगार प्राप्त न हुआ हो। यह बेरोजगारी की व्यापक माप है। जिसमें सामान्य स्थिति बेरोजगारी और अल्परोजगार दोनो शामिल होते है।

9.11 उत्तराखण्ड में बेरोजगारी के कारण

प्रदेश में बेरोजगारी के लिए बहुत से कारण जिम्मेंवार होते है इन्हें हम आन्तरिक और बाहरी कारणों में बाँट सकते आन्तरिक कारण श्रमिकों के स्वभाव, शारीरिक, मानसिक व नैतिक कमियों से सम्बन्धित होते है। प्राय; एक व्यक्ति अपनी इच्छा के बावजूद अपनी शारीरिक मानसिक कमजोरियों दोषपूर्ण शिक्षा एवं प्रशिक्षण आदि के कारण काम पाने में असमर्थ रहता है। इन परिस्थितियों में बेरोजगारी आन्तरिक कारणों का नतीजा होती है। बेरोजगारी के बाहरी कारण भी बहुत से होते हैं। श्रम बाजार में चक्रीय उतार चढ़ाव हो रहा है। मंदी के दिनों में व्यावसायिक क्रियायें एक न्यूनतम स्तर पर होती है और बेरोजगारी बढ़ती है। किन्तु दूसरी ओर तेजी के दौरान व्यावसायिक क्रियाओं का विस्तार होता है और इस समय बेकारी की मात्रा घटने लगती हैं। मंदी और तेजी की ऐसी अवधियॉ विभिन्न कारणों से होती है जिन्हें व्यापार चक्रों के सिद्धान्तों द्वारा स्पष्ट किया जाता हैं। उद्योग में विवेकीकरण की योजनाओं को अपनाया जाना बेरोजगारी को उत्पन्न करता है। इसके अलावा कुछ व्यवसाय व

आर्थिक क्रियायें स्वभाव से मौसमी होती है। जैसे बिल्डिंग निर्माण या कृषि। अन्त में आकस्मिक श्रम पद्धति भी जिसके अर्न्तगत श्रमिकों को कुछ कार्यों पर सिर्फ व्यवसायिक व्यवस्था के समय ही स्थाई रूप में लगाया जाता है दूसरे समय ऐसे श्रमिकों के लिए बेकारी पैदा कर दी जाती है।

मोटे तौर से बेरोजगारी के कारणों की व्याख्या के संबंन्ध में तीन सैद्धान्तिक विचारधाराएँ पायी जाती है।

1 पहली विचारधारा के मुताबिक बेकारी निर्बाध सिद्धान्त अर्थात स्वतंत्र प्रतियोगिता तथा स्वतंत्र व्यापार से डिग जाने का दण्ड होती है।

2 दूसरी विचारधारा के मुताबिक बेकारी व्यापार चक्रों के कारणों की जटिलताओं के कारण पैदा होती है. । इसे चक्रीये बेकारी के रूप में देखा जाता है।

3 तीसरी विचारधारा के मुताबिक बेकारी प्रभावी मांग की कमी उपभोग पर किये जाने वाले पूँजीगत व्यय की कमी या निवेश की कमी या दोनों ही के कारण पैदा होती है।

बेरोजगारी के दोष बहुत अधिक है। राष्ट्र के लिए बेरोजगारी समस्या एक गम्भीर समस्या है क्योंकि खाली मस्तिष्क शैतान का घर हैं। काल मार्क्स के मुताबिक कार्य मानवीय अस्तित्व के लिए मूल शर्त है। व्यापक बेरोजगारी एक ऐसी बुराई है जो गम्भीर आर्थिक सामाजिक एवं राजनैतिक खतरों से भरी है। तकलीफ निराशा और असंतोष पैदा करके बेरोजगारी राजनीति और सामाजिक जीवन को कड्डवा बनाती है तथा सुरक्षा को ठेस पहुंचाती है। पेट की आग को बुझाने के लिए व्यक्ति कुछ भी कार्य कर सकता है। यदि उनको सही रूप से व्यवसाय नहीं मिलेगा जिससे वह अपने अनुकूल जीवन यापन कर सके तो निश्चित रूप से ही वह गलत कार्यों को करने के लिए प्रेरित होगें जिन्हें करना वह स्वंय भी उचित नहीं समझते किन्तु करना पड़ता है क्योंकि मरता क्या न करता।

बेरोजगारी से व्यक्ति में यह भावना आती है कि वह समाज के लिए गैर जरूरी है। वह परिवार में अपने को बोझ समझने लगता है। इसी कारण से वह अपराधी तक बन सकता है। किसी देश में निष्क्रिय मानव व्यक्ति का मतलब उत्पादन एवं आय का उस स्तर से नीचा होना है जिस पर कि वे सभी श्रमिकों को काम पर नहीं लगा सकते है। मानवीय दृष्टिकोण से इस बेरोजगारी का गम्भीर परिणाम व्यक्ति का स्वंय का नुकसान है। इसमें धीरे–धीरे व्यक्ति की कार्य क्षमता ह्रास होता है। उसकी इस शक्ति को यदि उचित रूप में काम में लिया जाये तो यह राष्ट्र के लिए उन्नति समृद्धि एवं सम्पन्नता का साधन बन सकती है।

जिस प्रदेश में बेरोजगारी होती है उस प्रदेश में नयी–नयी सामाजिक समस्यायें जैसे चोरी, डकैती, बेईमानी, अनैतिकता, शराबखोरी, जुआ–बाजी आदि पैदा हो जाती है। जिससे सामाजिक सुरक्षा को खतरा पैदा हो जाता है शांति और सुरक्षा की समस्या उत्पन्न हो जाती है जिस पर सरकार को भारी व्यय करना पड़ता है। वर्तमान आतंकवाद की समस्या भी मेंरी समझ में किसी न किसी रूप में बेरोजगारी का ही एक परिणाम है।

बेरोजगारी की समस्या प्रदेश में राजनीतिक अस्थिरता पैदा करती है। क्योंकि बेकार व्यक्ति हर समय राजनीति उखाड़–पछाड़ में लगे रहते हैं। आज राजनीति से जुड़े हुए बहुत व्यक्ति ऐसे हैं जो किसी न

किसी रूप में समाज में अपराधी रहे हैं। ऐसे व्यक्ति अपनी योग्यता के आधार पर नहीं बल्कि दबाव और शक्ति से कानून को अपने हाथ में लेना चाहते हैं।

प्रदेश में व्याप्त दीर्घस्थायी बेरोजगारी और अल्प–रोजगार की समस्या के लिए निम्न घटक उत्तरदायी है–**जनसंख्या में होने वाली तीव्र वृद्धि दर फलस्वरूप श्रम शक्ति में तीव्र वृद्धि दर–** जनांकिकीय दृष्टि से हम इतनी तेजी से आगे बढ़ रहे है कि प्रगति और परिवर्तनों के बावजूद हम आर्थिक दृश्टि से ठहरे हुए जान पड़ते है।नियोजन काल में राज्य की जनसंख्या तथा इसके फलस्वरूप श्रम–शक्ति कई गुना बढ गयी है। बढ़ती हुई श्रम–शक्ति के लिए पर्याप्त रोजगार के अवसर उपलब्ध न कराये जाने के कारण बेराजगारी की मात्रा बढ़ती गई है।

अनुप्रयुक्त शिक्षा प्रणाली एवं कार्य के प्रति संकुचित दृष्टिकोण–प्रदेश में प्रचलित शिक्षा प्रणाली के कारण शिक्षित युवक नौकरी पाने की इच्छा रखते हुए भी शारीरिक श्रम वाले रोजगार से दूर भागते है। सरकार अभी तक शिक्षा प्रणाली को आर्थिक विकास की आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं ढाल सकी है परिणामस्वरूप करोड़ों शिक्षित युवक और युवतियां रोजगार की तालाश में घूमते–फिर रहे है।

कुटीर उद्योगों का पतन– श्रम गहन होने के कारण इन उद्योगों का रोजगार की दृष्टि से विशेष महत्व है। आर्थिक नियोजन के अन्तर्गत पूंजी गहन बड़े उद्योगों की स्थापना पर विशेष बल दिये जाने के कारण कुटीर और लघु उद्योगों का वांछनीय विकास नहीं हो पाया है। फलतः राज्य में गरीबी और बेरोजगारी की समस्या निरन्तर गम्भीर होती चली गई है।

कृषि की मानसून पर अधिक निर्भरता एवं सिचाई साधनों का अभाव– निर्धनता के उन्मूलन, रोजगार के अवसरों में वृद्धि, आवश्यक वस्तुओं की कीमतों में स्थायित्व तथा घरेलू बाजार के विस्तार की दृष्टि से कृषि के महत्व को जानते हुए तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था में सुधार की आवश्यकता बार–बार स्वीकार करते हुए भी नियोजन काल में कृषि क्षेत्र को कुल निवेश योग्य साधनों में से उचित हिस्सा नहीं दिया गया है। फलतः गांवों से शहरों की ओर श्रम शक्ति के पलायन की प्रवृत्ति जोर पकड़ती गई तथा ग्रामीण क्षेत्रों में अदृश्य बेरोजगारी की समस्या गहन होती चली गई।

उत्पादन साधनों का असमान वितरण– भूमि और पूंजी जैसे उत्पादन साधनों का अत्यधिक असमान वितरण, आर्थिक विषमता और बेरोजगारी की समस्या के लिए प्रत्यक्ष रूप से उत्तरादायी है। 20 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या खेतिहर श्रमिकों के रूप में निर्धनता, शोषण, कुपोषण और अल्प रोजगार से ग्रस्त है। उत्तराखण्ड में 70 प्रतिशत किसानों की जोतें अनार्थिक आकार (एक हेक्टेयर से कम) की हैं जिन्हें सम्पूर्ण वर्ष में 5–6 महीने निष्क्रिय रहना पड़ता है। दूसरी ओर बहुत थोड़ी पूंजी वाले इस राज्य में उपलब्ध पूंजी गिने–चुने हाथों में केन्द्रित है। साधन सम्पन्न व्यक्तियों की स्वार्थी प्रवृत्ति के कारण विभिन्न व्यवसायों में श्रम की बचत करने वाल गहन तकनीक का उपयोग किया जा रहा है।

अविकसित सामाजिक दशाएं–प्रदेश की दोषपूर्ण सामाजिक संस्थाएं (जाति–प्रथा, संयुक्त परिवार प्रणाली, छुआछूत, बाल–विवाह, प्रदा पर्था आदि) बेरोजगारी की समस्या को उग्र बनाने में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सहायक हुई है। जनसाधारण की निरक्षरता, अन्धविश्वास और भाग्यवादिता ने भी युवकों को निष्क्रिय बनाये रखने में सहयोग दिया है। श्रम शक्ति का असन्तुलित व्यावसायिक वितरण, व्यावसायिक शिक्षण एवं शिक्षण सुविधाओं की अपर्याप्तता, श्रम शक्ति में गतिशीलता का अभाव आदि कारणों ने भी बेरोजगारी और बेरोजगार की समस्या को गम्भीर बना दिया है।

पर्याप्त तकनीकी प्रशिक्षण सुविधाओं का अभाव– आज अधिकांश शिक्षा ऐसी दी जाती है कि केवल सैद्धान्तिक ज्ञान तक ही सीमित है और जिसका जीवन में अधिक उपयोग नहीं है। बी0ए0, एम0ए0 करने के बाद भी लड़को को यह भी पता नही हो पता है कि अब उसे क्या करना है। तकनीकी शिक्षा के पूर्ण अभाव के कारण वह अपना कोई छोटा–मोटा व्यवसाय भी नहीं कर सकता।

पूंजी निर्माण की धीमी गति– बेरोजगारी में वृद्धि होने के कारण प्रतिव्यक्ति आय बहुत कम होती जा रही है, परिणामस्वरूप बचत एवं विनियोग की दर में भी कमी हो रही है। इससे पूंजी निर्माण की गति बहुत धीमी हो गयी है जिसका प्रभाव उद्योग, व्यापार एवं अन्य सेवाओं पर पड़ रहा है और उनका विस्तार नही हो पा रहा है। इस चक्र के प्रभाव से बेरोजगारी की संख्या में और अधिक वृद्धि हो रही है।

स्वरोजगार के प्रति उपेक्षा –प्रदेश में शिक्षित बेरोजगारी बढ़ने के मूल में यह कारण निहित है कि प्रत्येक युवा अपनी शिक्षा समाप्त करने के बाद नौकरी की तालाश में जुट जाता है। उसमें स्वयं का व्यवसाय करने की भावना का अभाव रहता है, परिणामस्वरूप बेरोजगारों की संख्या में बहुत तेजी से वृद्धि होती जा रही है।

बेरोजगारी के खराब असर बराबर बढ़ते जा रहे हैं। इसीलिए **विलयम बेवरिज ने लिखा है कि बेरोजगार रखने के स्थान पर लोगों को गड्ढे खुदवाकार वापस भरने के लिए नियुक्त करना ज्यादा अच्छा है।**

सार रुप में हमारे देश की बेरोजगारी का कारण उसकी संरचनात्मक अवस्था में निहित है। जो कृषि के अल्प विकास उद्योगो का असंतुलित विकास सेवा क्षेत्र के संकुचित आकार के श्रम की माँग में है जो और रोजगार के अवसर सीमित कर देते है। लोग विद्यमान मजदूरी दर पर कार्य करने को तत्पर है परन्तु फिर भी कार्य की अनुउपलब्धता के कारण वह बेरोजगार है।

9.12 उत्तराखण्ड में बेरोजगारी

राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन की रिपोर्ट के अनुसार उत्तराखण्ड में प्रतिशत बेरोजगारी दर 4. 1 एवं शहरी बेरोजगारी दर 6.8 प्रतिशत थी। जो सम्पूर्ण भारत से कम है।(**सारणी 9.3**)

सारणी 9.3 बेरोजगारी दर(CDS) का विवरण

	ग्रामीण	**शहरी**
उत्तराखण्ड	**4.1**	**6.8**
भारत	**8.2**	**8.3**

स्रोतः–राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन 2004

उत्तराखण्ड में रोजगार वृद्वि दर की विवेचना सारणी 9.4 में की गयी है। 1994–2000 के मध्य पुरुष के लिए यह –1.44, महिला –0.29 और कुल –2.84 थी। वह **1983–2004**के मध्य पुरुष के लिए यह 0.51, महिला 0.65 और कुल 0.34 थी। वही वर्ष 2004–2014 के सन्दर्भ में अनुमानित रुप सेपुरुष के लिए यह 1.45, महिला 1.87और कुल 1.54 है।

सारणी 9.4 उत्तराखण्ड में रोजगार वृद्वि दर

अवधि	पुरुष	महिला	कुल
1983–88	0.62	0.84	0.36
1988–94	2.83	1.97	3.88
1994–2000	–1.44	–0.29	–2.84
2000–04	3.48	4.65	1.84
1983–2004	0.51	0.65	0.34
2004–14(अनुमानित)	1.45	1.87	1.54

स्रोतः–राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन

2011 की जनगणनानुसार उत्तराखण्ड में 3872275 कामगार लगे थे। जिसमें से कुल कृषि कामगारों की संख्या 1888551 है।कृषि कामगारों का कुल कामगारों से प्रतिशत 51.23 प्रतिशत है। सर्वाधिककृषि कामगारों का कुल कामगारों से प्रतिशतबागेश्वर जनपद में 76.12 प्रतिशत है। न्यूनतमकृषि कामगारों का कुल कामगारों से प्रतिशतदेहरादून जनपद में 19.80 प्रतिशत है।पर्वतीय जनपदो में कृषि कामगारों का कुल कामगारों से प्रतिशत55.46 प्रतिशत है। मैदानी जनपदो में कृषि कामगारों का कुल कामगारों से प्रतिशत41.44 प्रतिशत है।

सारणी 9.5उत्तराखण्ड में 2011 की जनगणना के अनुसार कार्य विभाजन

जनपद	कृषक	कृषि श्रमिक	कुल कृषि कामगार	अन्य	कुल कामगार	कृषि कामगारों का कुल कामगारों से प्रतिशत
अल्मोड़ा	207617	10274	217891	80320	298211	73.07
बागेश्वर	85125	8985	94110	29528	123638	76.12
चम्पावत	59993	4032	64025	35541	99566	64.30
पिथौरागढ़	137332	5432	142764	73726	216490	65.94
नैनीताल	137530	34742	172272	203909	376181	45.79
पौड़ी गढ़वाल	150607	13715	164322	109830	274152	59.94
टिहरी गढ़वाल	187121	8129	195250	85192	280442	69.62

रूद्रप्रयाग	83155	3200	86355	26677	113032	76.40
चमोली	121157	3845	125002	55938	180940	69.08
उत्तरकाशी	117264	4387	121651	35625	157276	77.35
छेहरादून	77176	38195	115371	467397	582768	19.80
पर्वतीय जनपद का योग	1364077	134936	1499013	1203683	2702696	55.46
ऊधमसिंह नगर	122686	165250	287936	303522	591458	48.68
हरिद्वार	93660	103115	196775	381346	578121	34.04
मैदानी जनपद का योग	216346	268365	484711	684868	1169579	41.44
उत्तराखण्ड	1580423	403301	1983724	1888551	3872275	51.23

स्रोतः–जनगणना 2011

9.13 उत्तराखण्ड में बेरोजगारी को दूर करने के सुझाव

किसी भी प्रदेश में बढ़ती हुई बेरोजगारी चिन्ता का विषय है। बेरोजगारी की इस गम्भीर समस्या ने अनेक ऐसी समस्याओं को जन्म दिया है जिनका समाधान खोज पाना अत्यधिक कठिन हो गया है। यदि समय रहते बेरोजगारी के समाधान की दिशा में सार्थक प्रयास नहीं किये जा सके तो प्रदेश एवं समाज का विघटन अवश्यम्भावी है। बेरोजगारी की समस्या के समाधान के लिए कुछ सुझाव निम्नवत है–

- बढ़ती जनसंख्या पर नियंत्रण किया जाना अति आवश्यक है। बिना जनसंख्या वृद्धि पर नियन्त्रण किये बेरोजगारी की समस्या का समाधान सम्भव नहीं है।
- लघु एवं कुटीर उद्योग धन्धों का विकास किया जाना चाहिए।
- उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था में कृषि को प्रधानता वाला राज्य है,जहॉ वर्ष के मात्र छः–सात माह के लिए कृषक और कृषि श्रमिक के पास रोजगार की व्यवस्था रहती है। शेष समय में कृषक और श्रमिक बेरोजगार रहते है, अतः इस खाली समय के उपयोग के लिए कृषि से सम्बद्ध सहायक उद्योगों जैसे– दूध का व्यवसाय, मुर्गीपालन, पशुपालन आदि की स्थापना की जानी चाहिए।
- ग्रामों में रोजगार उन्मुख योजनाओं का क्रियान्वयन किया जाना चहिए क्योंकि सर्वाधिक बेरोजगारी ग्रामीण क्षेत्रों में है, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार की सम्भावनायें भी सबसे अधिक है।

- रोजगार उन्मुख शिक्षा प्रणाली स्थापना की जानी चहिए।
- उद्योगों की पूर्ण उत्पादन क्षमता का उपयोग करना चाहिए।
- आधारिक एवं सामाजिक अद्योसंरचना को मजबूत बनाकर विनियोग को प्रेरित किया जा सकता है जिससे रोजगार में बढ़ोत्तरी होगी तथा अनिवार्य उपभोक्ता वस्तु उद्योगों का विस्तार भी होगा।
- नई तकनीकी का इस प्रकार से प्रयोग होना चाहिए जिससे उत्पादन क्षमता में बढ़ोत्तरी होगी आय में वृद्वि होगी प्रेरणा से नवीन उद्योगों की स्थापना होगी। जो रोजगार में वृद्वि लायेगा।

9.14 उत्तराखण्ड में गरीबी एवं बेरोजगारी निवारण के कार्यक्रम

गरीबी एवं बेरोजगारीको समाप्त करने के लिए सरकार अनेक गरीबी एवं बेरोजगारीनिवारक कार्यक्रम चलाये हुए है जिससे लोगो की आय का सृजन हो। इसमें से अधिकांश कार्यक्रम भौतिक सम्पदा के निर्माण जैसे– ग्रामीण आधारिक संरचना के अन्तर्गत सड़क, पीने का पानी की सुविधाओं, सीवरेज आदि से जुड़े है जबकि अन्य को स्वरोजगार हेतु प्रोत्साहित करना तथा व्यापार प्रारम्भ करने हेतु सहायता प्रदान करना है। स्वयं सहायता समूह भी लोगों के सतत् विकास हेतु प्रयत्नशील है। गरीबी एवं बेरोजगारी निवारक कार्यक्रम निम्न है–

अस्थायी रोजगार सृजित करने वाले कार्यक्रम– जवाहर रोजगार योजना (जे0आर0वाई0), जवाहर समृद्धि योजना, दस लाख कुआं योजना, रोजगार गारंटी योजना, काम के बदले आनाज, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (एन0आर0ई0पी0), भूमिहीन ग्रामीण रोजगार गारण्टी कार्यक्रम (एन0आर0ई0जी0पी0), राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना अधिनियम (2005)।

सतत् रोजगार एवं आय सृजित कार्यक्रम– स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना, स्वयंसिद्धा प्रोजेक्ट, संयुक्त वन प्रबन्धन कार्यक्रम, स्वयं सहायता समूह, ग्रामीण वन प्रबन्धन कमेटी, सूक्ष्म वित्त एवं प्रबन्धन द्वारा लाभार्थी का व्यापक आर्थिक सुधार।

जीविका की लागत कम करने वाले कार्यक्रम – सार्वजनिक वितरण प्रणाली, स्वजल धारा (ग्रामीण क्षेत्र में पीने के पानी की सुनिश्चितता करना), इन्दिरा आवास योजना।

इनमें से मुख्य कार्यक्रमों का विवरण निम्न है–

स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना– 1 जनवरी 1999 में जवाहर रोजगार योजना में इन्दिरा आवास योजना तथा दस लाख कुआं योजना शामिल कर ली गयी। हाशिम कमेटी की सिफारिशों के आधार पर इसका नया नामकरण **स्वर्ण जयन्ती ग्राम समृद्धि योजना** कर दिया गया। इसमें कुछ योजनाएं और शामिल की गई। जैसे–**समन्वित ग्राम विकास कार्यक्रम**, **स्वरोजगार के लिए ग्रामीण युवाओं का प्रशिक्षण कार्यक्रम**, **ग्रामीण क्षेत्र में महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम**, **ग्रामीण दस्तकारों को उन्नत औजारो की किट आपूर्ति कार्यक्रम** तथा **गंगा कल्याण योजना**। वर्तमान में इसका नाम ग्रामीण आजीविका मिशन कर दिया गया है।

इस योजना का उद्देश्य सहायता प्राप्त प्रत्येक परिवार को एक निश्चित अवधि में (3 वर्ष की अवधि) में गरीबी रेखा से ऊपर उठाना है। कम से कम 50 प्रतिशत अनुसूचित जाति/जनजाति, 40 प्रतिशत महिलाओं तथा 3 प्रतिशत विकलांगों को योजना का लक्ष्य बनाया गया है। आगामी 5 वर्षों में प्रत्येक विकास खण्ड में रहने वाले ग्रामीण गरीबों में से 30 प्रतिशत को इस योजना के दायरे में लाने का प्रस्ताव है।

योजना में दी जाने वाली धनराशि केन्द्र और राज्य सरकार 90:10 के अनुपात में विभाजित करेंगी। इस योजना के दो प्रमुख घटक हैं–प्रत्येक विकास खण्ड पर चार या पाँच मुख्य ऐसी गतिविधियों का चयन पंचायत समितियों द्वारा करने का प्रावधान है जो स्थानीय संसाधनों, शिल्प और

विपणन उपलब्धता के अनुरूप हों, ताकि स्वरोजगारी अपने विनियोग से लाभकारी आय प्राप्त कर सकें। ऐसी मुख्य गतिविधियों द्वारा गरीबों को संगठित करके स्वयं सहायता समूह का निर्माण करना है। एक स्व–सहायता समूह में गरीबी की रेखा से नीचे के परिवारों से सम्बन्धित 10–20 व्यक्ति हो सकते हैं तथा एक व्यक्ति एक से अधिक समूह का सदस्य नहीं होना चाहिए। लघु सिचाई योजनाओं, दुर्गम क्षेत्रों (पहाड़ी इलाकों तथा रेगिस्तानी क्षेत्रों) में तथा विकलांग व्यक्तियों के मामले में यह संख्या 5 से 20 तक हो सकती है। इस स्वय–सहायता समूह में महिलाओं को वरीयता प्रदान की गई है।

यह योजना एक ऋण एवं सब्सिडी योजना है, जिसमें ऋण एक प्रमुख तथ्य है, जबकि सब्सिडी परयिोजना लागत के 30 प्रतिशत के एक समान दर पर होगी, किन्तु इसकी अधिकतम सीमा 7500 रूपये होगी। अनुसूचित जाति/जनजाति के लिए यह सीमा 50 प्रतिशत या 10,000 रूपये होगी। स्वयं सहायता समूहों के लिए सब्सिडी परियोजना लागत का 50 प्रतिशत, लेकिन अधिकतम 1.25 लाख रूपये होगी। सिंचाई परियोजनओं के लए सब्सिडी कार्योत्तर है।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना अधिनियम–2005–नरेगा के नाम से प्रसिद्ध यह योजना रोजगार के अन्य कार्यक्रमों से बिल्कुल अलग है, क्योंकि यह मात्र एक योजना नहीं, बल्कि एक कानून है जो रोजगार की वैधानिक गारंटी प्रदान करता है। इस योजना के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्येक परिवार के एक सदस्य को वर्ष में कम से कम 100 दिन अकुलशल श्रम वाले रोजगार की गारंटी दी गई है। (प्रत्येक परिवार एक वित्तीय वर्ष में 100 दिन का रोजगार प्राप्त कर सकता है तथा इसका विभाजन परिवार के वयस्क सदस्यों के बीच किया जा सकता है) राज्यों में कृषि श्रमिक के लिए वैधानिक न्यूनतम मजदूरी का भुगतान किया जाता है जो 100 रूपये से कम नहीं होगी। योजना के तहत् 33 प्रतिशत लाभ भोगी महिलाएं होंगी। रोजगार के इच्छुक एवं पात्र व्यक्ति द्वारा पंजीकरण कराने के 15 दिन के भीतर रोजगार न दिए जाने पर निर्धारित दर से बेरोजगारी भत्ता सरकार द्वारा प्रदान किया जाने का प्रावधान है।

महात्माँ गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना–मनरेगा के नाम से जानी जाने वाली यहयोजना राज्य में 2 मार्च, 2006 से संचालित की जा रही है। इस योजना के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्येक वित्तीय वर्ष में शारीरिक श्रम रोजगार करने के इच्छुक परिवारों को उनकी मांग के आधार पर 100 दिन का गारण्टी शुदा रोजगार उपलब्ध कराने का प्रावधान है।

योजना प्रथम चरण में राज्य के तीन जनपदों टिहरी, चमोली एवं चम्पावत में संचालित की गयी है। द्वितीय चरण में दो जनपद हरिद्वार और उधमसिंहनगर सम्मिलित किये गये तथा तृतीय चरण में दिनांक 01.04.2008 से राज्य के अन्य आठ जनपदों में योजना संचालित की जा चुकी है। इस योजना द्वारा मानव दिवस सृजित कर श्रमिक परिवारों को श्रम रोजगार उपलब्ध कराया गया।

लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों के लिये बी0पी0एल0 योजना– यह योजना सफेद रंग के राशन कार्डधारी 9000/– या उससे कम वार्षिक आय वर्ग के परिवारों हेतु लागू है ।इस योजना में रू0 4.65 प्रति किलो ग्राम की दर से 10.250 किलो गेहूँ एंव रू0 6.15 प्रति किलो की दर से 24.750 किग्रा0 चावल तथा हरिद्वार में 19.800 किलो गेहूँ एवं 15.200 किग्रा0 चावल कार्ड धारकों को उपलब्ध कराया जाता है । राज्य में इस योजना के कार्ड धरकों की संख्या 307074 है।

निर्धनतम परिवारों हेतु अन्त्योदय अन्न योजना–इस योजना के अन्तर्गत बी0पी0एल0 श्रेणी के निर्धनतम लक्षित 190926 परिवारों का चयन किया गया है । जिन्हें गुलाबी रंग के राशन कार्ड जारी किये गये है । इन परिवारों को 2.00 रू0 प्रतिकिलो की दर से प्रतिमाह 10.750 किग्रा0 गेंहूँ एवं 3.00 रू0 प्रतिकिलो की दर से प्रतिमाह 24.250 किग्रा0 चावल उपलब्ध कराया जाता है ।

इन्दिरा आवास योजना(IAY)– यह एक केन्द्र प्रायोजित योजना है जिसका वित्तपोषण केन्द्र एवं राज्य के बीच 90:10 के अनुपात में किया जाता है। 1999–2000 से प्रारम्भ की गयी इन्दिरा भवन आवास योजना गांवो में गरीबो के लिए मुफ्त में मकानो के निर्माण की प्रमुख योजना है।

शहरी रोजगार एवं गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम– शिक्षित बेरोजगारों को स्वरोजगार प्रदान करने के लिए प्रधानमंत्री रोजगार योजना (PMRY) को 1993–94 में शहरी क्षेत्रों में चलाया गया।

बालिका समृद्धि योजना(BSY) को 1997 में बालिकाओं के प्रति समाज के दृष्टिकोण में परिर्वतन लाने के विशेष उद्देश्य से प्रारम्भ किया गया था।

उत्तराखण्ड़ ग्रामीण स्वरोजगार मिशन–उत्तराखण्ड़ राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में स्वरोजगार प्रदान कराने हेतु वर्ष 2006–07 में ''उत्तराखण्ड़ ग्रामीण स्वरोजगार मिशन'' नामक अत्यन्त महत्तवाकांक्षी योजना प्रारम्भ की गयी हैं।

उत्तराखण्ड़ सार्वभौम रोजगार योजना–उत्तराखण्ड़ सार्वभौम रोजगार योजना वित्तीय वर्ष 2006–07 से राज्य में प्रारम्भ की गयी है। योजना शतप्रतिशत राज्य सेक्टर से संचालित की जा रही है। योजना का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में स्वरोजगार के इच्छुक नव युवक/नवयुवतियों को शासकीय सहायता एवं बैंकों द्वारा वित्तपोशित कराकर विभिन्न क्रियाकलापों में स्वरोजगार उपलब्ध कराना है। ।

एकिकृत बाल विकास तथा सेवा स्कीम(ICDS)-1975 में शुरू इस स्कीम का उद्देश्य 6 वर्ष तक के उम्र के बच्चों, गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली महिलाओं को स्वास्थ्य पोषण एवं शैक्षणिक सेवाओं का एकीकृत पैकेज प्रदान करना है, आँगन वाड़ी, भवनो, सीडीपीओ कार्यलयों एवं गोदामों के निर्माण के लिए ऋण प्रदान करना है।

प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना (PMGY) जिसका प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण लोगों की आवश्यक आवश्यकताओं (criticalneeds) को निर्धारित समयावधि में पूरा करना है।

प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना– 25 दिसम्बर, 2000 को लागू की गयी। 60 हजार करोड़ रुपये की इस योजना का उद्देश्य 500 से अधिक जनसंख्या वाले गांवों को 2007 तक हर मौसमी सड़क से जोड़ना है।अब इससे बढाकर 2017 कर दिया गया है। यह एक 100 प्रतिशत केन्द्र प्रायोजित योजना है। इसका वित्तपोषण डीजल पर उपकर से होता है।

9.15 उत्तराखण्ड में गरीबी एवं बेरोजगारी निवारण की रणनीति का आलोचनात्मक मूल्यांकन

योजनाकारों की आरम्भ से ही यह धारणा थी कि आर्थिक विकास प्रक्रिया के द्वारा राष्ट्रीय आय में वृद्धि होगी जिसका प्रभाव रिसाव द्वारा नीचे तक स्वंय ही पहुँच जायेगा। जिसके साथ प्रगितिशील करारोपण तथा सार्वजनिक व्यय का कल्याणकारी स्वरूप गरीबी में कमी लायेगा। परन्तु गरीबी निवारण की ष्ह धारणा सफल न हो सकी। इस सन्दर्भ में गरीबी निवारण कार्यक्रम का पूरा ध्यान अतिरिक्त आय के सृजन पर केन्द्रित रहा है। परिवार कल्याण, पैष्टिक आहार, सामाजिक सुरक्षा तथा न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति की ओर ध्यान नहीं दिया गया है।इन कार्यक्रमों में अपाहिज, बीमार तथा उत्पादक रूप से काम करने के अयोग्य लोगों के लिए कुछ नहीं किया गया है।जनसंख्या के लगातार छोटा होता जा रहा है, स्वरोजगार उद्यमों पर या मजदूरों के रोजगार कार्यक्रमों पर निर्भरता सही नहीं है।

वर्ष 1965–66 के बाद नई कृषि क्रान्ति के आने से गुणात्मक परिवर्तन हुआ। अब कृषि उत्पादन में वृद्धि और अधिक भूमि के कारण नहीं बल्कि गहन खेती के कारण होने लगी। इससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था में ऐसे परिर्वतन हुए जो गरीबों के लिए हितकर नहीं थे। जैसे मशीनों द्वारा श्रम का

प्रतिस्थापन फलस्वरूप रोजगार के अवसर नहीं बढ़ सके। बड़े भूस्वामियों ने छोटे–छोटे काश्तकारों से बटाँई खेती लेकर स्वय कृषि कार्य करना शुरू कर दिया। बड़े कृषकों की आय बढ़ने एवं मँहगी कृषि आगत से साधन–विहीन सीमांत व छोटे कृषकों की आय घटने से स्थानीय दस्तकारों व कारीगरों द्वारा बनाई गई वस्तुओं की माँग गिरी और लोग ज्यादा गरीब हो गए।

जबकि आवश्यकता इस बात पर ध्यान देने की है कि गरीबी की रेखा से नीचे रह रहे विभिन्न लोगों के आय स्तरों पर क्या प्रभाव पड़ रहा है।

अभ्यास प्रश्न 2

लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. उत्तराखण्ड में बेरोजगारी की प्रकृतिकी विवेचना कीजिए ।

.....

.....

.....

2. उत्तराखण्ड में बेरोजगारी को दूर करने के सुझाव पर संक्षिप्त टिप्पणी लीखिए।

.....

.....

.....

3. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना अधिनियम पर संक्षिप्त टिप्पणी लीखिए।

.....

.....

.....

4. अदृश्य बेरोजगारी का अर्थ बताइए।

.....

.....

.....

5. मौसमी बेरोजगारी आशय एवं इसकी प्रवृत्ति की विवेचना कीजिए।

.....

.....

.....

9.16 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप यह जान चुके हैं उत्तराखण्ड की आर्थिक समस्याओं में सर्वाधिक प्रमुख समस्या गरीबी एवं बेरोजगारी है। 1947 में जब भारत स्वतंत्र हुआ तो उसे विरासत में मिली एक पंगु अर्थव्यवस्था जिसमें गरीबी एवं बेरोजगारीकी जड़े बरगद के वृक्ष के समान पनप चुकी थी। अर्थव्यवस्था को गरीबीएवं बेरोजगारी के जाल से निकाला जाय तथा देश में तीव्र तथा आत्मनिर्भर आर्थिक विकास लाया जाए नियोजन काल में मिश्रित आर्थिक प्रणाली को चुना।गरीबी की माप के लिए सामान्यतः दो प्रतिमानोंसापेक्षित प्रतिमान और निरपेक्ष प्रतिमान का प्रयोग किया जाता है।7वें वित्त आयोग

ने एक नयी वर्द्धित गरीबी रेखा की अवधारणा की संकल्पना का प्रतिपादन किया।योजना आयोग द्वारा गरीबी रेखा निर्धारण के सम्बन्ध एक वैकल्पिक परिभाषा स्वीकार की जिसमें आहार सम्बन्धी जरुरतों को ध्यान में रखा गया है। इस अवधारणा के अनुसार जिनको ग्रामीण क्षेत्र में प्रतिव्यक्ति 2400 कैलोरी प्रतिदिन तथा शहरी क्षेत्र में 2100 कैलोरी प्रतिदिन के हिसाब से पोषक शक्ति नहीं प्राप्त होती है उनको गरीबी रेखा से नीचे माना जाता है। बेरोजगारी उत्तराखण्ड की एक ज्वलन्त समस्या है एक व्यक्ति तभी ही बेरोजगार कहलाता हैं,जबकि उसके पास कार्य नहीं हो और वह रोजगार पाने का इच्छुक हो।गरीबी एवं बेरोजगारी को समाप्त करने के लिए सरकार अनेक गरीबी एवं बेरोजगारी निवारक कार्यक्रम चलाये हुए है जिससे लोगो की आय का सृजन हो। यद्यपि सरकार विभिन्न योजनाओं के माध्यम से रोजगार के नवीन अवसर पैदा करने तथा युवाओं की आय में सकारात्मक वृद्धि करने के प्रयास कर रही है। तथापि इन समस्याओं को दूर करने के लिए सरकार को अभी और गम्भीरता से अपने प्रयासों को लागू करना होगा। इस इकाई के अध्ययन से आप आर्थिक समस्याओं में सर्वाधिक प्रमुख समस्या गरीबी एवं बेरोजगारीके कारणों,निवारण के उपाय एवं उसके प्रभाव की व्याख्या कर सकेंगे।

9.17 शब्दावली

माइग्रेशन – एक जगह से दूसरी जगह जाकर रहने लगना।

अदृश्य बेरोजगारी– खेतों पर से यदि अतिरिक्त लोगों को हटा लिया जाय और उत्पादन में कमी न आये।

कुशलतम प्रयोग– न्यूनतम नुकसान पर अधिकतम इस्तेमाल द्वारा उत्पादन करना।

बी0पी0एल0– गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगो को कहते है।

गरीबी का दुश्चक्र– अल्प विकसित देशों के आर्थिक विकास में व्यवधान डालने वाली उन समस्यओं एवं बाधाओं से है जो इन देशों के गरीबी के 'कारण व परिणाम के रूप में' वृत्ताकार आकार में घटित होती रहती है।

प्रति व्यक्ति आय –राष्ट्रीय आय में कुल जनसंख्या का भाग देने पर प्रति व्यक्ति आय प्राप्त होती है।

मानव विकास सूचकांक –विकास के तुलनात्मक अध्ययन हेतु मानव विकास रिपोर्ट में संयुक्त राष्ट्र के विकास कार्यक्रम द्वारा (यू.एन.डी.पी.) द्वारा मानव विकास सूचकांक का निर्माण किया गया। इस सूचकांक को जीवन प्रत्याशा, शैक्षिक योग्यता तथा क्रय शक्ति आधारित प्रति व्यक्ति आय को शामिल करके निर्मित किया गया है एवं वर्तमान समय में यह विकास का महत्वपूर्ण पैमाना है।

महिला सशक्तिकरण –महिला सशक्तिकरण से तात्पर्य महिलाओं यके आर्थिक सामाजिक उत्थान के साथ–साथ राजनैतिक चेतना के ऐसे विकास है जहां महिला समाज के हर क्षेत्र में स्वतन्त्रता तथा समाना पूर्वक योगदान कर सके एवं प्रत्येक स्तर पर निर्णय निर्माण की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदारी निभा सके।

ग्रामीण विकास –ग्रामीण स्तर पर सभी को बुनियादी सुविधायें उपलब्ध कराते हुये ग्रामीण जीवन स्तर सुधार करने की प्रक्रिया को ग्रामीण विकास कहते है।

क्रय शक्ति– खरीदने की क्षमता को कहते है।

9.18 अभ्यास प्रश्न के उत्तर

18.4 2. प्रो0 रंगराजन समिति 3. कैलोरी मानक 4.1999 5. योजना आयोग 6. निरपेक्ष प्रतिमान

9.19 सन्दर्भ–सूची

1. मामोरिया, चतुर्भुज, भारत की आर्थिक समस्याएं, साहित्य भवन, आगरा।
2. दत्त एवं सुन्दरम, भारतीय अर्थव्यवस्था, एस0 चंद एण्ड कं0 लि0, नई दिल्ली।
3. Aggarwal, S.P. (ed.) (1995), *Uttarakhand: Past, Present and Future,* Concept Publishing Company, New Delhi.
4. Dewan, M.L. & Jagdish Bahadur (eds.) (2005), *Uttaranchal: Vision and Action Programme*, Concept Publishing Company, New Delhi.
5. Mehta, G.S. (1999), *Development of Uttarakhand: Issues and Perspectives*, APH Publishing Corporation, New Delhi.
6. Pangtey, Yatendra Singh and others (2011), *Uttarakhand at a Glance 2010-11*, Directorate of Economics and Statistics, Dehradun.
7. Planning Commission, Government of India (2009), *Uttarakhand Development Report*, Academic Foundation, New Delhi.
8. Sati, V.P. & Kamlesh Kumar (2004), *Uttaranchal: Dilemma of Plenties and Scarcities*, Mittal Publications, New Delhi.

9.20 सहायक/उपयोग पाठ्य सामग्री

- अर्थ एवं सांख्यिकीय निदेशालय (2016), सांख्यिकीय डायरी 20015–16, उत्तराखण्ड सरकार
- आर्थिक सर्वेक्षण(विभिन्न अंक),वित मंत्रालय भारत सरकार, नई दिल्ली।
- कुरूक्षेत्र (विभिन्न अंक), ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
- योजना (विभिन्न अंक) योजना आयोग, नई दिल्ली।
- ठाकुर, सुदीप व अन्य (सम्पादक) (2010), *उत्तराखंड उदयः एक दशक की यात्रा (2000 से 2010)*, अमर उजाला पब्लिकेशन्स लिमिटेड, नोएडा।
- बलूनी, विद्या दत्त, *उत्तराखण्डः एक सम्पूर्ण अध्ययन*, अरिहन्त पब्लिकेशन्स (इ) प्रा लि, मेरठ।
- पाण्डेय, अशोक कुमार, *उत्तरांचलः सम्पूर्ण अध्ययन*, उपकार प्रकाशन, आगरा।
- सविता मोहन (2007), *उत्तराखण्डः समग्र अध्ययन,* तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली।

9.21 निबन्धात्मक प्रश्न

1. गरीबी का अर्थ अथवा धारणा को स्पष्ट करते हुए उत्तराखण्डमें गरीबी के अनुमानों की विवेचना कीजिए।

2. गरीबी के निराकरण हेतु उत्तराखण्डसरकार द्वारा चलायी जाने वाली विभिन्न योजनाओं को संक्षेप में लिखिए।

3. बेरोजगारी की प्रकृति एवं कारणों की व्याख्या कीजिए तथा उत्तराखण्ड में इसके निदान के उपाय बताइए।

4. किसी प्रदेश के अविकसित रहने के लिए बेरोजगारी किस रूप में जिम्मेदार है?क्या इस दिशा में मानवीय नियोजन प्रभावी भूमिका निभा सकता है।

इकाई दस : उत्तराखण्डः क्षेत्रीय असमानता एवं जनजातीय विकास

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 क्षेत्रीय असमानता : अर्थ एवं स्वरूप

10.4 उत्तराखण्ड में क्षेत्रीय असमानता की स्थिति

10.5 क्षेत्रीय असमानता के कारण

10.6 क्षेत्रीय असमानता को दूर करने के उपाय

10.7 जनजातीय विकासः अर्थ

10.8 उत्तराखण्ड में जनजातियां

10.9 उत्तरखण्ड में जिलेवार जनजातियों की संख्या

10.10 उत्तराखण्ड में जनजातीय कल्याण कार्यक्रम

10.11 सारांश

10.12 शब्दावली

10.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

10.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची

10.15 सहायक उपयोगी सामग्री

10.16 निबंधात्मक प्रश्न

10.1 प्रस्तावना

आधुनिक उत्तराखण्ड में समाज और अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित यह दसवीं इकाई है। इससे पहले की इकाईयों से आप उत्तराखण्ड की जनसंख्या एवं मानवीय संसाधन और गरीबी एवं बेरोजगारी के बारे में अध्ययन कर चुके है।

उत्तराखण्ड की नियोजित व्यवस्था में विकास की दौड़ में पर्वतीय क्षेत्र और वहां के लोग पिछड़ गये हैं, जिसके परिणामस्वरूप क्षेत्रीय असमानताएं उत्पन्न हो गयी है। वर्तमान इकाई में आप उत्तराखण्ड में बढ़ती क्षेत्रीय असमानता के बारे में अध्ययन करेंगें।उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था में क्षेत्रीय असमानता एक प्रमुख आर्थिक समस्या के रूप में विद्यमान है । यहाँ आगे क्षेत्रीय असमानता का आशय उसे जुड़े कारणों, समस्याओं एवं नीतियों का उल्लेख भी किया गया है ।उत्तराखण्ड में विद्यमान जनजातीयों का विश्लेषण करने के साथ ही उत्तराखण्ड मेंजनजातीय विकास के कार्यक्रमों की भी व्याख्या प्रस्तुत है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद क्षेत्रीयअसमानता को सामान्य दृष्टि से समझा सकेंगें । आप यह भी समझा सकेंगें कि क्षेत्रीयअसमानता के क्या कारण एवं इसके क्या दुष्प्रभाव है । उत्तराखण्ड में क्षेत्रीय असमानता का विश्लेषण कर सकेगें है और इससे दूर करने के उपाय और उपलब्धियाँ को जान सकेंगें।इस इकाई के अध्ययन के बाद आप क्षेत्रीय असमानताओं का सम्यक विश्लेषण कर सकेंगे तथा जनजातीय विकास के महत्व को समझा सकेंगे।

10.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप–

- उत्तराखण्ड में क्षेत्रीयअसमानता की प्रकृति को जान सकेंगें ।
- उत्तराखण्ड के सम्बन्ध में बढ़ती क्षेत्रीय असमानता का वर्णन कर सकेंगें ।
- उत्तराखण्ड में क्षेत्रीय असमानताएं के लिए उत्तरदायी विभिन्न कारणों का वर्णन कर सकेंगें ।
- उत्तराखण्ड में क्षेत्रीयअसमानताओं को दूर करने के उपाय और उपलब्धियाँ को जान सकेंगें ।
- उत्तराखण्ड में विद्यमान जनजातीयों का विश्लेषण कर सकेगें।
- उत्तराखण्ड में जनजातीय विकास के कार्यक्रमों की जानकारी प्रदान कर सकेगें।

10.3 क्षेत्रीय असमानताःअर्थ एवं स्वरूप

किसी भी प्रदेश का आर्थिक विकास केवल सकल घरेलू आय एवं उत्पादन में वृद्धि में ही निहित नहीं, वरन् उसका एक महत्वपूर्ण पहलू आय एवं उत्पादन का न्यायोचित वितरण भी है । वितरण का स्वरूप कैसा है, व्यक्तिगत एवं प्रादेशिक वितरण की स्थिति कैसी है, वितरण में समानता है अथवा असमानता और विषमता का आर्थिक जीवन पर क्या प्रभाव है ? इन कई महत्वपूर्ण प्रश्नों का सम्बन्ध धन व सम्पत्ति के वितरण से है जिसका अर्थव्यवस्था पर व्यापक प्रभाव पड़ता है ।आय तथा सम्पत्ति के असमान वितरण से अभिप्राय अर्थव्यवस्था की उस परिस्थितियों से है जिसमें कि कुछ लोगों क आय, औसत आय से बहुत अधिक तथा अधिकांश लोगों की आय, औसम आय से बहुत कम होती है । आय तथा सम्पत्ति के असमान वितरण की समस्या का सम्बन्ध मुख्य रूप से व्यक्तिगत आय के वितरण में

विषमताओं से होता है । इससे अभिप्राय यह है कि कुछ व्यक्तियों की आय बहुत अधिक है जबकि अधिकतर लोगों की आय बहुत कम है ।

किसी भी राष्ट्र में आय और धन के वितरण का इसकी अर्थव्यवस्था पर गहरा प्रभाव पड़ता है । जब तक आय का वितरण वैयक्तिक एवं प्रादेशिक स्तर पर समान रहता है तो आर्थिक विकास का मार्ग प्रशस्त होता है, समृद्धि बढ़ती है और राजनीतिक शान्ति के साथ–साथ सामाजिक सद्भावना बनी रहती है, व्यक्तिगत कुशलता एवं प्रेरणा बढ़ती है। सामाजिक कल्याण में वृद्धि होती है, गरीबी और अमीरी की घृणा नहीं पनपती और सर्वत्र शान्ति एवं सौहार्द पनपता है ।

इसके विपरीत समाज में धन एवं आय का असमान वितरण और प्रदेश में व्याप्त आर्थिक विषमताओं से अर्थव्यवस्था में कई प्रकार की आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक समस्याएं पैदा होती हैं । प्रदेश में आय तथा धन की वैयक्तिक एवं प्रादेशिक वितरण जितना विषम एवं असमान होगा उतनी ही आर्थिक विकास की गति धीमी होगी, समाज में वर्ग–संघर्ष और तनाव से राजनीतिक शान्ति एवं सुदृढ़ता को खतरा होगा। यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा कि किसी भी भाग में गरीबी विश्व समृद्धि को सबसे बड़ा खतरा है । आर्थिक क्षेत्र में विषमताएं आर्थिक शोषण को बढ़ावा देती हैं । अमीरों से गरीबों का द्वेष क्रान्ति को बुलावा देता है । गरीबी में नीचा जीवन–स्तर उत्पादन क्षमता को कम करके उन्हें अधिक गरीब बनाता है जबकि दूसरी ओर विलासिता में डूबे धनी लोग देश के आर्थिक साधनों को कम उपयोगी क्षेत्रों में ले जाकर सामाजिक कल्याण में कमी करते हैं ।

भारत में आर्थिक असमानता निरन्तर बढ़ती जा रही है । भारत में आय के वितरण की जांच करने के लिए सरकार ने सर्वप्रथम प्रो. पी.सी. महालनोबिस की अध्यक्षता में एक समिति नियुक्त की थी। इस समिति के अतिरिक्त नेशनल काउंसिल ऑफ एप्लाइड इकोनोमिक रिसर्च, रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया तथा कई अर्थशास्त्रियों जैसे लाइडल, ओझा और भट्ट, रानाडिवे, अहमद, भट्टाचार्य आदि ने आय के वितरण के सम्बन्ध में जांच की है । भारत में कई प्रकार की आर्थिक असमानतायें पाई जाती हैं । इनमें से निम्नलिखित प्रकार की असमानतायें अधिक महत्वपूर्ण हैं ।

1. परिसम्पत्ति की असमानता
2. आय तथा उपभोग की असमानता
3. क्षेत्रीय असमानता

यदि किसी देश में तुलनात्मक रूप से अत्यधिक विकसित राज्यों एवं पिछड़े राज्यों और आर्थिक रूप से बहुत सम्पन्नक्षेत्रों या राज्योंतथा बहुत पिछड़े हुए क्षेत्रों या राज्यों का सहअस्तित्व हो तो उस स्थिति को क्षेत्रीय असंतुलन की संज्ञा दी जाती है। उदाहरण– के लिए किसी प्रदेश में अधिक उद्योग होते है तो किसी प्रदेश में इनकी संख्या काफी कम। इसी प्रकार किसी प्रदेश में प्राकृतिक संसाधन अधिक होते है तो किसी प्रदेश में काफी कम। इसी को हम प्रादेशिक या क्षेत्रीय असमानता कहते है। क्षेत्रीय असमानता अन्तर्राज्यीय भी हो सकता है अथवा राज्य के विभिन्न क्षेत्रो के मध्य भीअसमानता हो सकता है। उत्तराखण्ड राज्यप्राकृतिक संरचना एवं विकास नीतियों के कारण बडे विस्तार रूप में क्षेत्रीय असमानतालगातार बढती चली गई।

उत्तराखण्ड राज्य में क्षेत्रीय असमानता के मुख्यतः दो कारण है–

- प्राकृतिक कारण
- मानव निर्मित कारण

क्षेत्रीय असमानता प्राकृतिक साधनों के असमान वितरण से हो सकता है तथा मानव निर्मित कारण द्वारा भी होता है। जब संसाधनों और तकनीकी की सीमितता के कारण प्रत्येक राज्य या देश की अर्थव्यवस्था को अपने विभिन्न क्षेत्रों के मध्य प्राथमिकता क्रम निर्धारित करना पड़ता है। जिसके नीतिपरक प्रबन्ध के सही दृष्टिकोण न होनें के कारण कुछ क्षेत्र विकास की दौड़ में आगे निकल जाते है तो कुछ क्षेत्र पिछड़ जाते है। जिससे क्षेत्रीय असमानताएं उत्पन्न होना प्रारम्भ हो जाती है। यदि दीर्घकाल तक इन क्षेत्रों पर ध्यान न दिया जायें तो आर्थिक असमानओं के साथ–साथ सामाजिक असमानताऐं भी उत्पन्न होने लगती है। इसलिए प्रत्येक राज्य अर्थव्यवस्था का लक्ष्य संतुलित प्रादेशिक विकास करना होता है। संतुलित प्रादेशिक विकास का यह अर्थ नहीं कि राज्य का प्रत्येक क्षेत्र सामान्य रूप से आत्मनिर्भर हो और न ही इसका यह अर्थ है कि राज्य के प्रत्येक क्षेत्र सामान्य रूप से औद्योगिकरण का स्तर हो या राज्य के प्रत्येक क्षेत्र का आर्थिक ढ़ॉचा एक जैसा हो; बल्कि इसका अर्थ है कि आर्थिक रूप से जहाँ तक सम्भव हो वहाँ तक उद्योगो का राज्य के पिछड़े क्षेत्रों में दूर–दूर तक फैलाव करना है। जिससे अन्ततः पिछड़े क्षेत्रों के लोगों का जीवन–स्तर बढ़ा कर उन्नत क्षेत्रों के लोगों के जीवन–स्तर के समान हो जाए, चाहे ऐसा कृषि उद्योग, व्यापार या वाणिज्य के माध्यम से सम्मलित रूप से किया जाये।

सम्पूर्ण भारत की तरह उत्तराखण्ड में भी अनेक प्रकार की आर्थिक–सामाजिक असमानताएं पायी जाती है उसमें प्राकृतिक कारण मुख्य रूप से भूमिका निर्वाहन कर रहा है। भौगोलिक असमानताओं के कारण उत्तराखण्ड को पहाड़ी एवं मैदानी इलाको के रूप में विभाजित किया जाता है। जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न जिलों के मध्य असमानताएं स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। उत्तराखण्ड के तेरह जिलों में से चार जिलो– हरिद्वार तथा ऊधमसिहं नगर पूर्ण मैदानी हैं तथा नैनीताल, देहरादून, का अधिकांश भाग मैदानी है सामाजिक एवं आर्थिक सूंचकाकों पर ये चार जिले अन्य जिलों की तुलना में अधिक विकसित और सम्पन्न है। प्रदेश के विभिन्न सामाजिक समूहों में असमान अवसर तथा जीवन की गुणवत्ता स्तर भी असमान है। इन सामाजिक समूहों में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों को शामिल किया जा सकता है। लम्बे समय से इन अनुसूचित जाति एंव अनुसूचित जनजाति के लोगों के साथ भेदभाव एवं शोषणपूर्ण व्यवहार होता रहा है। जिसका कारण पहाड़ों में प्राप्त होने वाली जीवन की मूलभूत सुविधाएं कुछ वर्ग लोगो तक ही सिमट कर रह गयी है।

क्षेत्रीय असंतुलन का मूल्यांकन निम्न सूचको के आधार पर करते है।

- शुद्ध राज्य घरेलू उत्पाद में जनपदवार वितरण के आधार पर।
- जनपदवारप्रति व्यक्ति शुद्ध राज्यीय घरेलू उत्पाद के आधार पर।
- कृषि क्षेत्र में असुंलन के आधार पर असमानता।
- जनसंख्या का घनत्व एवं साक्षरता के अनुपात के आधार पर असमानता।
- आधारिक रचना सम्बन्धी असमानताएं।
- मानवीय विकास सम्बन्धी असमानताएं।
- औद्योगिक असंतुलन के आधार पर असमानता।

10.4. उत्तराखण्ड में क्षेत्रीय असमानता की स्थिति

उत्तराखण्ड के 13 जनपदों में 11 जनपद पूर्णतः पर्वतीय जनपद हैं तथा 02 जनपद देहरादून एवं नैनीताल ऐसे पर्वतीय जनपद हैं जिनमें पर्याप्त मैदानी भाग है। उत्तराखण्ड राज्य के कुल सकल घरेलू उत्पाद का 64 से 72 प्रतिशत भागीदारी 04 जनपद हरिद्वार, उधमसिंहनगर, देहरादून एवं नैनीताल

सम्मिलित रूप से हैं। आँकड़े यह दर्शाते हैं कि अवस्थापना सम्बन्धी सुविधायें इन जनपदों में होने के कारण इन जनपदों में विकास उत्तराखण्ड राज्य के निर्माण के पूर्व से ही था तथा उत्तराखण्ड राज्य के निर्माण होने के बाद इन जनपदों में विकास काफी तेज गति से हुआ। पर्वतीय जनपद इन चारों जनपदों को छोड़कर, अनेक भौगोलिक एवं प्राकृतिक समस्याओं से जूझते चले आ रहे हैं। जैसे पानी, आपदाभूस्सखलन, बादल का फटना तथा पलायन आदि। पर्वतीय क्षेत्रों की अर्थव्यवस्था, इन आपदाओं के कारण समग्र रूप से विकसित नहीं हो पा रही है। जिसके कारण मैदानी जनपदों एवं पर्वतीय जनपदों के आर्थिक विकास में एक गहरी खाई पैदा हो गयी है। जनपदों की क्षेत्रीय असमानता मापने का एक महत्वपूर्ण सूचक है–जिला घरेलू उत्पाद के अनुमान।

सारणी 10.1जनपदवार सकल घरेलू उत्पाद (स्थायी भाव पर)

जनपद	सकल घरेलू उत्पाद (रूपये लाख)									
	2004-05	2005-06	2006-07	2007-08	2008-09	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13Q	2013-14A
उत्तरकाशी	66086	73924	83439	86268	92736	99094	99906	105024	109852	117503
चमोली	104775	109904	127543	144002	154849	170459	169630	179987	188048	201593
रुद्रप्रयाग	47104	50623	58075	61545	66972	73964	88367	97631	102631	109688
टिहरी गढवाल	153996	172321	185065	195168	214033	239639	280183	309116	32459	348318
देहरादून	454099	517661	589585	688835	794634	884699	1030027	1124403	1189291	1263305
पौड़ी गढवाल	161172	179515	206330	229354	257788	287693	323822	352663	371710	394634
पिथौरागढ	109860	117754	129622	143443	155670	174645	204089	206693	216236	230889
बागेश्वर	50958	53886	65379	63986	68342	74915	84476	92489	97046	103539
अल्मोडा	155814	159268	182356	196846	211673	240782	263541	282013	295468	314961
चम्पावत	54640	61670	63538	69012	82953	91690	85609	95216	100241	106768
नैनीताल	251385	303385	330069	392388	440068	500579	554990	613358	649436	686671
ऊधमसिंह नगर	369866	466808	563629	705393	811993	904055	1114152	1237231	1312778	1372021
हरिद्वार	498812	560047	641373	824813	931830	1038600	1267896	1392217	1472031	1542826
उत्तराखण्ड	2478567	2826766	3226003	3801453	4283541	4780814	5566689	6088041	6429308	6792716

सारणी 10.1 के अनुसार अवलोकन सक स्पष्ट होता हैं कि जिला हरिद्वार,ऊधमसिंह नगर, देहरादून, नैनीताल के सकल घरेलू उत्पाद संदर्भित वर्षो में प्रत्येक वर्ष इसी क्रम में उच्च रहे हैं। इन जिलों का सम्मिलित रुप से कुल सकल घरेलू उत्पाद संदर्भित वर्षो में राज्य के कुल सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 64 से 72 प्रतिशत है। जिला रुद्रप्रयाग, बागेश्वर एवं चम्पावत जो नवीन पर्वतीय जिले है, के सकल घरेलू उत्पाद संदर्भित वर्षो में अन्य जिलों के अपेक्षाकृत निम्न रहे हैं। इन जिलों का सम्मिलित रुप से कुल सकल घरेलू उत्पाद राज्य के कुल सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 5 से 6 प्रतिशत हैं।

अन्य 6 जनपदो यथा उत्तरकाशी, चमोली, टिहरी, पौडी गढवाल, पिथौरागढ, अल्मोडा का सम्मिलित रुप से कुल सकल घरेलू उत्पाद राज्य के कुल सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 23 से 30 प्रतिशत है।

उक्त के अतिरिक्त आर्थिक विषमता मापने का एक महत्वपूर्ण सूचक प्रति व्यक्ति आय है। उत्तराखण्ड राज्य की जनपदवार प्रति व्यक्ति आय आधार वर्ष 2004–05 के आधार पर निम्न हैःसारणी 10.2से स्पष्ट है कि वर्ष 2013–14 के उपरोक्त आंकडों के तुलनात्मक अध्ययन में यह तथ्य संज्ञान में आते है कि जनपद देहरादून, हरिद्वार, ऊधमसिंह नगर एवं नैनीताल की प्रति व्यक्ति आय राज्य की प्रति व्यक्ति आय से अधिक तथा जनपद उत्तरकाशी में न्यूनतम हैं।

सारणी 10.2जनपदवार प्रति व्यक्ति आय (प्रचलित भाव पर)

जनपद	प्रति व्यक्ति आय (रूपये में)										वर्ष 2013–14 के अनुसार प्रति व्यक्ति आय में रैंकिंग
	2004-05	2005-06	2006-07	2007-08	2008-09	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13Q	2013-14A	
उत्तरकाशी	19070	21515	26204	27412	32990	37947	42079	47755	52574	59791	13
चमोली	24219	25898	33638	39557	46660	54247	62269	69543	78371	90173	6
रुद्रप्रयाग	18411	20443	25129	27763	32529	38861	47459	55495	61561	69401	12
टिहरी गढवाल	22212	28091	30002	33035	38684	46379	59496	88282	75249	85156	8
छेहरादून	29961	35486	42104	50887	61546	72465	89282	101315	109675	122804	2
पौड़ी गढवाल	20679	24481	30259	35254	42454	50838	62354	72228	79904	91708	5
पिथौरागढ	20770	23435	27528	32198	37839	46008	56458	63045	69994	79981	9
बागेश्वर	18212	20069	25958	26843	31297	37254	46194	54360	60646	68730	11
अल्मोडा	22150	23857	29152	32740	39358	49405	59000	67701	75474	86699	7
चम्पावत	21335	24834	28866	31047	40481	47252	49793	57990	64165	72922	10
नैनीताल	27498	34317	39082	47214	55593	66098	76950	89102	95227	105960	4
ऊधमसिंह नगर	24136	31835	38751	49333	58249	67647	85541	100058	195087	115543	3
हरिद्वार	28074	32945	38397	50848	59428	67597	88980	103836	110115	122172	1

उत्तराखण्ड	24726	29423	35111	42619	50674	59584	73619	85372	92191	103349	

उपरोक्त सारणी के विश्लेषण यह स्पष्ट होता है कि जनपद रुद्रप्रयाग, बागेश्वर एवं चम्पावत, उत्तरकाशी, चमोली, टिहरी, पौडी गढवाल, पिथौरागढ, अल्मोडा के अवस्थापना विकास किये जाने की आवश्यकता है। इन जनपदों का अवस्थापना विकास किये जाने पर ही यहा के लोगों का रोजगार के तलाश में बडे शहरों की ओर पलायन को रोका जा सकता है। उत्तराखण्ड राज्य का लगभग 67 प्रतिशत भाग वन क्षेत्र से अच्छादित है। उत्तराखण्ड के ग्रामीणों ने इन वन क्षेत्रों को संरक्षित रखने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। वन क्षेत्रों का संरक्षण कर पर्यावरण के ह्रास में कमी आयी है।

वर्ष 2011 की जनगणनानुसार उत्तराखण्ड में 3872275 कामगार लगे थे। जिसमें से कुल कृषि कामगारों की संख्या 1888551 है।कृषि कामगारों का कुल कामगारों से प्रतिशत 51.23 प्रतिशत है। सर्वाधिककृषि कामगारों का कुल कामगारों से प्रतिशतबागेश्वर जनपद में 76.12 प्रतिशत है। न्यूनतमकृषि कामगारों का कुल कामगारों से प्रतिशतदेहरादून जनपद में 19.80 प्रतिशत है।पर्वतीय जनपदो में कृषि कामगारों का कुल कामगारों से प्रतिशत55.46 प्रतिशत है। मैदानी जनपदो में कृषि कामगारों का कुल कामगारों से प्रतिशत41.44 प्रतिशत है।

सारणी 10.3उत्तराखण्ड में 2011 की जनगणना के अनुसार कार्य विभाजन

जनपद	कृषक	कृषि श्रमिक	कुल कृषि कामगार	अन्य	कुल कामगार	कृषि कामगारों का कुल कामगारों से प्रतिशत
अल्मोड़ा	207617	10274	217891	80320	298211	73.07
बागेश्वर	85125	8985	94110	29528	123638	76.12
चम्पावत	59993	4032	64025	35541	99566	64.30
पिथौरागढ़	137332	5432	142764	73726	216490	65.94
नैनीताल	137530	34742	172272	203909	376181	45.79
पौड़ी गढ़वाल	150607	13715	164322	109830	274152	59.94
टिहरी गढ़वाल	187121	8129	195250	85192	280442	69.62
रूद्रप्रयाग	83155	3200	86355	26677	113032	76.40
चमोली	121157	3845	125002	55938	180940	69.08
उत्तरकाशी	117264	4387	121651	35625	157276	77.35

छेहरादून	77176	38195	115371	467397	582768	19.80
पर्वतीय जनपद का योग	1364077	134936	1499013	1203683	2702696	55.46
ऊधमसिंह नगर	122686	165250	287936	303522	591458	48.68
हरिद्वार	93660	103115	196775	381346	578121	34.04
मैदानी जनपद का योग	216346	268365	484711	684868	1169579	41.44
उत्तराखण्ड	1580423	403301	1983724	1888551	3872275	51.23

स्रोतः–जनगणना 2011

सारणी 10.3 के विश्लेषण से स्पष्ट है कि पर्वतीय जनपदों में जनपद नैनीताल एवं देहरादून जो कि आंशिक मैदानी है को छोड़कर शेष जनपदों में लगभग 60 प्रतिशत से भी अधिक कर्मकर कृषि कार्यो से जीविका अर्जन करते है। जिनमें जनपद उत्तरकाशी, रूद्रप्रयाग, बागेश्वर तथा अल्मोड़ा में उक्त आंकड़ा 73 प्रतिशत से भी अधिक है। समस्त पर्वतीय जनपदों में कृषि कर्मकर लगभग समस्त कर्मकरों का आधे से भी अधिक (55.46 प्रतिशत) है। मैदानी जनपदों में उक्त औसत काफी कम (41.44प्रतिशत)है।जनपद नैनीताल, देहरादून, ऊधमसिंह नगर एवं हरिद्वार को छोड़कर शेष जनपदों में कृषि श्रमिकों की संख्या अपेक्षाकृत नगण्य है। मैदानी जनपदों तथा आंशिक मैदानी जनपद नैनीताल तथा देहरादून मे ही कृषि श्रमिक अपेक्षाकृत बेहतर संख्या में दृष्टिगोचर होते हैं। हालांकि जनपद नैनीताल तथा देहरादून में कृषकों के सापेक्ष उनकी संख्या काफी कम है। कृषि जोत के सन्दर्भ में पर्वतीय एवं मैदानी क्षेत्र के मध्य निम्नवत असमान विवरण मिलता है–

1. प्रदेश में कुल 4.52 लाख हे. क्षेत्रफल खेती के लिए उपलब्ध नहीं है जिसमें से 3.59 लाख हे. पर्वतीय क्षेत्र में तथा 0.93 लाख हे. मैदानी क्षेत्र में है।
2. परती भूमि के अतिरिक्त अकृष्य भूमि 8.97 लाख हे. है जिसमें से 8.78 लाख हे. पर्वतीय क्षेत्र एवं 0.19 लाख हे. मैदानी क्षेत्र में है।
3. प्रदेश में कुल 1.44 लाख हे. क्षेत्रफल परती रहा जिसमें से 1.10 लाख हे. पर्वतीय क्षेत्र में तथा 0.34 लाख हे. मैदानी है। वर्तमान परती भूमि के अन्तर्गत 0.57 लाख हे. भूमि रही जिसमें से 0. 44 लाख हे. पर्वतीय क्षेत्र में तथा 0.13 लाख हे. मैदानी क्षेत्र में है।
4. प्रदेश का वास्तविक बोया गया क्षेत्रफल 7.00 लाख हे. रहा जिसमें से 3.91 लाख हे. (55. 86प्रतिशत) पर्वतीय क्षेत्र में एवं 3.09 लाख हे. (44.14 प्रतिशत) मैदानी क्षेत्र में है। एक बार से अधिक बोया गया क्षेत्रफल 3.97 लाख हे. रहा जिसमें से 2.11 लाख हे. (53.15प्रतिशत) पर्वतीय क्षेत्र में तथा 1.86 लाख हे. (46.85प्रतिशत) मैदानी है।

5. प्रदेश में 3.31 लाख हे. वास्तविक सिंचित क्षेत्रफल है जो कि बोये गये क्षेत्रफल का (47.30:) है। वास्तविक सिंचित क्षेत्रफल में से 0.41 लाख हे. (12.39प्रतिशत) पर्वतीय क्षेत्र में तथा 2.90 लाख हे. (87.61प्रतिशत) मैदानी क्षेत्र में है।
6. प्रदेश का कुल बोया गया क्षेत्रफल 10.97 लाख हे. रहा जिसमें से 5.96 लाख हे. पर्वतीय क्षेत्र में तथा 5.01 लाख हे. मैदानी क्षेत्र में है। राज्य में कुल बोये गये क्षेत्रफल के अन्तर्गत खरीफ का कुल बोया गया क्षेत्रफल 6.38 लाख हे. है, जिसमें से 3.70 लाख हे. पर्वतीय एवं 2.68 लाख हे. मैदानी क्षेत्रों में है। रबी में कुल बोया गया क्षेत्रफल 4.25 लाख हे. है, जिसमें से 2.26 लाख हे. पर्वतीय एवं 1.99 लाख हे. मैदानी क्षेत्रों में है। मैदानी क्षेत्रों में जायद का कुल बोया गया क्षेत्रफल 0.33 लाख हे0 है।
7. प्रदेश में कुल बोया गया सिंचित क्षेत्रफल 5.42 लाख हे. रहा जिसमें से 0.77 लाख हे. पर्वतीय क्षेत्र में तथा 4.65 लाख हे. मैदानी क्षेत्र में है। राज्य में कुल बोये गये सिचिंत क्षेत्रफल के अन्तर्गत खरीफ का कुल बोया गया सिंचित क्षेत्रफल 2.81 लाख हे. है, जिसमें से 0.40 लाख हे. पर्वतीय एवं 2.41 लाख हे. मैदानी क्षेत्रों में है। रबी में कुल बोया गया सिंचित क्षेत्रफल 2.31 लाख हे. है, जिसमें से 0.37 लाख हे. पर्वतीय एवं 1.94 लाख हे. मैदानी क्षेत्रों में है। मैदानी क्षेत्रों में जायद का कुल बोया गया सिंचित क्षेत्रफल 0.32 लाख हे0 है।
8. प्रदेश की फसल सघनता 156.65 प्रतिशत रही। पर्वतीय क्षेत्र की फसल सघनता 152.80 प्रतिशत एवं मैदानी क्षेत्र की फसल सघनता 161.49 प्रतिशत रही।

10.5. क्षेत्रीय असमानता के कारण

आर्थिक सुधारों से पहले उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था के विकास की दर औसतन 3.5 प्रतिशत थी, जो 2015–16 में बढ़कर 7.65 प्रतिशत हो गयी। स्पष्ट है कि उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था निम्न विकास की दर से उच्च विकास की दर के स्तर पर पहुॅच गयी। विकास का सर्वाधिक लाभ मैदानी क्षेत्रों को प्राप्त हुआ। जबकि संरचनात्मक समस्याओं के कारण पर्वतीय क्षेत्रों का विकास की दौड़ में पीछे छूट गये।उत्तराखण्ड में पाई जाने वाली क्षेत्रीय असमानता का प्रारम्भिक मुख्य कारण जमींदारी प्रथा के फलस्वरूप भूमि के स्वामित्व में विद्यमान असमानता है । स्वतन्त्रता से पूर्व उत्तराखण्डमें जमींदारी प्रथा पाई जाती थी। इसके फलस्वरूप भू–स्वामित्व में भारी असमानता पाई जाती थी। स्वतंत्रता के पश्चात् जमींदारी प्रथा समाप्त कर दी गई परन्तु भूमि के स्वामित्व की असमानता में कोई विशेष कमी नहीं हुई है । इस समय प्रदेश के मैदानी संभाग की जनसंख्या के पास कृषि कार्य योग्य भूमि का 56 प्रतिशत भाग है तथा पर्वतीय संभाग की जनसंख्या के पास केवल 14 प्रतिशत भाग है । भूमि के स्वामित्व में पाई जाने वाली असमानता पर्वतीय क्षेत्र में पाई जाने वाली आय की असमानता का मुख्य कारण है । पर्वतीय क्षेत्र में भूमिहीन कृषि श्रमिकों तथा छोटे किसानों की आय बहुत कम है । वे बड़ी कठिनाई से अपना जीवन निर्वाह कर पाते हैं । इसके विपरीत मैदानी क्षेत्र के किसानों की आय बहुत अधिक है तथा इसमें लगातार वृद्धि हो रही है । इन किसानों के पास पूंजी अधिक होती है इसलिए ये ट्रैक्टर, ट्यूबवैल, रासायनिक खाद, उत्तम बीज आदि का प्रयोग करके अधिक उत्पादन करते हैं । इससे इनकी आय में और अधिक वृद्धि हो जाती है । इसके विपरीतपर्वतीय क्षेत्र के छोटे किसान पूंजी के अभाव में अपने खेतों से अधिक उत्पादन नहीं कर पाते। वे पिछड़े तथा निर्धन रह जाते हैं । इस प्रकार पर्वतीय क्षेत्र में भूस्वामित्व की असमानता के कारण आय तथा सम्पत्ति की असमानता में वृद्धि होती है ।

उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था में क्षेत्रीय असमानताओं के कई कारण है । वैयक्तिक आय में भिन्नता, योग्यता, अवसर कुशलता एवं सम्पत्ति स्वामित्व पर निर्भरता प्रमुख हैं,इसके अतिरिक्त कई अन्य कारणों से क्षेत्रीय असमानता बढी हैं, उनमें से प्रमुख कारण इस प्रकार हैं–

- इन क्षेत्रों के विकास की प्रमुख बाधा हिमालय की अपनी भौगोलिक स्थिति है। आयताकार उत्तराखण्ड की भू–गर्भीय संरचना और धरातलीय विन्यास में विभिन्न प्रकार की विविधता पायी जाती है। उच्च हिमालय का पर्वतीय भाग, जो 4800 से 6000 मीटर तक ऊँचा है, सदैव हिमाच्छादित रहता है। उत्तराखण्ड में वर्षा में विभिन्नता, प्राकृतिक वनस्पति एवं जैव विविधता में भिन्नता के कारण क्षेत्रीय एवं मानवीय क्रिया–क्लापों में भी भिन्नता होना स्वाभाविक है।

- उत्तराखण्ड नदियों का जाल बिछा होने के बावजूद पर्वतीय क्षेत्रों में पीने का पानी एवं कृषि कार्य हेतु सिंचाई एक समस्या का निराकरण नहीं हो सका है।

- उत्तरकाशी, चमोली, रूद्रप्रयाग और पिथौरागढ़ में जनसंख्या घनत्व पूरे देश की तुलना में सर्वाधिक निम्नतम है। 80 प्रतिशत से भी अधिक ऐसे पर्वतीय गांव है जिनकी जनसंख्या 500 से भी कम है और पर्वतीय क्षेत्र में मात्र 0.5 प्रतिशत से भी कम ऐस गांव है जिनकी जनसंख्या 200 से अधिक है।

- पर्वतीय क्षेत्रों के गांवों में कम जनसंख्या का जो अधिक फैलाव है; के विकास हेतु न्यूनतम स्तर की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बाजार एवं उद्यम, वित्तीय संस्थाओं की कमी है। जिसके कारण इनके आर्थिक और सामाजिक विकास की गति में भी कमी आयी है।

- पर्वतीय क्षेत्र में बिखरी और छोटी बस्तियों के समक्ष सामाजिक एवं आर्थिक अधोसंरचना की दृढ़ चुनौतियां है। गांव एवं कृषि क्षेत्र न केवल बिखरें है बल्कि सड़क और बाजार से भी दूर है।

- सड़कों की कमी और परिवहन एवं संचार सुविधाओं की कमी इस समस्या को अधिक गम्भीर बना देती है। वर्तमान समय में परिवहन कठिन एवं महंगा है।

- पर्वतीय क्षेत्र की अद्यो संरचनात्मक समस्या, मशीनीकरण और आदान आधारित कृषि मार्ग में बाधा है। यहाँ तक कि इन क्षेत्रों में जो थोड़ी बहुत जो नकद फसलें होती है, परिवहन और लेन–देन की लागत अधिक होने के कारण छोटे किसानों के लिए लाभकारी नही रह जाती है। इन पिछड़े क्षेत्रों में नकद फसलों के लिए अधिक पूंजी निवेश की आवश्यकता होती है, जो उनके लिए वित्तीय सुविधा के अभाव के कारण दुर्लभ है।

- वित्तीय संस्थाओं द्वारा इन किसानों की सुरक्षा एवं विकास हेतु ऋण सुविधाएं उपलब्ध करवायी जाती है, वह पर्याप्त नहीं है। खाद्य सुरक्षा की स्थिति भी बहुत बेहतर नही है। अधिकांश खेती योग्य भूमि का जीवन–निर्वाह योग्य कृषि में प्रयुक्त होती है। कृषि का अलाभकारी होना, रोजगार के अवसरों को सीमित कर देता है। यहीं कारण है कि इन पर्वतीय क्षेत्रों के युवा अन्य शहरों की ओर रोजगार हेतु पलायन हो रहा है। अपने परिवारों के पोषण हेतु मनीआर्डर भेजते है। जिसके कारण ही उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था को **मनीआर्डर अर्थव्यवस्था** भी कहते है।

10.6. क्षेत्रीय असमानता को दूर करने के उपाय

उत्तराखण्ड में क्षेत्रीय असमानताओं को दूर करने

इस प्रकार हम देखते हैं कि उत्तराखण्ड में क्षेत्रीय असमानता को कम करने के प्रयास किये जा रहे हैं, पर उत्तराखण्ड में प्रजातान्त्रिक मित्रित अर्थव्यवस्था में काला धन, भ्रष्टाचार, भाई–भतीजावाद, रिश्वतखोरी, प्रशासनिक अकुशलता, गरीबी निवारण की असफलता तथा राजनीतिक इच्छा–शक्ति के अभाव में क्षेत्रीय असमानताघटने के बजाय बढ़ती जा रही है ।क्षेत्रीय असमानता के कारणों को जब तक प्रभावी ढंग से नियन्त्रित नहीं किया जाता, क्षेत्रीय समानता की कल्पना एक राजनीतिक नारा बनकर रह जायेगी ।

- उत्तराखण्ड में क्षेत्रीय असमानता एवं गरीबी मिटाने के लिए सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत अधिक अतिरिक्त लोगों को रोजगार दिया है । गरीबी हटाओ कार्यक्रम के अन्तर्गत भी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार तथा ग्रामीण भूमिहीन श्रमिक रोजगार गारन्टी योजना द्वारा रोजगार दिया जा रहा है । पलायन पर रोक लगे इस हेतु मनरेगा जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से 100 दिन के रोजगार की गारन्टी प्रदान की गई।जिसे दीर्घकालीन रूप में और बढाने की आवश्यकता है।
- सरकार ने सार्वजनिक क्षेत्र का तेजी से विकास करने की नीति को अपनाया है । इस क्षेत्र के विकास के मुख्य उद्देश्य पलायन पर रोक एवं आय तथा सम्पत्ति की असमानता को कम करना है ।
- उत्तराखण्ड के ग्रामीण हिमालय क्षेत्रों के आर्थिक एवं सामाजिक विकास हेतु नियोजन की दीर्घकालीन रणनीति बनानी होगी जिससे इन क्षेत्रों की समस्याओं का स्थनीय रूप निराकरण हो सके। इसके लिए सर्वप्रथम उन क्षेत्रों का विकास करना होगा जिनमें तुलनात्मक रूप से अधिक लाभ हो। बागवानी तथा पर्यटन दो ऐसे क्षेत्र है जिसमें तुलनात्मक रूप सेअधिक लाभ है।
- उत्तराखण्ड में क्षेत्रीय असमानता को कम करने के लिए जनकल्याण कार्यक्रमों में निरन्तर वृद्धि की है ताकि गरीबों का आर्थिक स्तर ऊपर उठे। इस दिशा में समाज कल्याण विभाग द्वारा सहायता, अनुदान, बेकारी भत्ता, चिकित्सा सुविधायें, न्यायिक सहायता, निःशुल्क शिक्षा, 20–सूत्रीय कार्यक्रम द्वारा आय एवं रोजगार में वृद्धि महत्वपूर्ण है, किन्तु कुल व्यय जनसंख्या को देखते हुए नगण्य है, अतः स्थिति में विशेषकर सुधार नहीं हुआ है ।
- आधारिक संरचना में सिंचाई, विद्युत, सड़क आदि का विकास इन पर्वतीय पिछड़े क्षेत्रों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर सकता है। आर्थिक आधारिक संरचना के अन्तर्गत सड़क और परिवहन व्यवस्था, विद्युत, सिंचाई, बाजार तंत्र और वित्तीय संस्थाओं का विकास सुदृढ़ता के साथ होना चाहिए। पहाड़ पर रेल से जाने की कल्पना को साकार रूप देने की दिशा में तीव्रता से प्रयास होना चाहिए। विभिन्न पर्वतों को आपस में जोड़ते हुए रोपवें बनाये जाने चाहिए जिससे किसानों की अपने खेतों, विभिन्न गांवो और मण्डियों तक पहुँच आसानी से हो जायेगी। परिवहन, ऊर्जा और तकनीकी संसाधनों का विकास पर्यावरण के हितों और हिमालय क्षेत्र की विशिष्टताओं को ध्यान में रखते हुए आधारिक एवं सामाजिक संरचना का विकास किया जाना चाहिए।
- लघु तथा कुटीर उद्योगों के विकास को प्रोत्साहन देने की नीति को अपनाया गया है । इन उद्योगों को प्रोत्साहन देने से पर्वतीय क्षेत्रों से पलायन को रोकने में सहायता प्रापत होगी, सम्भावना है

। इस नीति के फलस्वरूप बेरोजगार मजदूरों को रोजगार दिया जा सकेगा। इस प्रकार निर्धन लोगों की आय में वृद्धि होगी। इसके परिणामस्वरूप क्षेत्रीय असमानता कम होगी। कुटीर उद्योगों के विकास के फलस्वरूप निम्न आय वाले लोगों को अपनी आय में वृद्धि करने के अवसर प्राप्त हो सकेंगें ।

- भारी वर्षा के कारण छोटी सिंचाई परियोजनाओं हेतु टैंक तथा जलाशय बनाये जाने चाहिए। हिमालय की नदियां एवं जलप्रपात जल विद्युत परियोजनाओं के असीमित अवसर प्रदान करते है।
- बागवानी का विकास इन पर्वतीय क्षेत्रों हेतु अत्यन्त उपयोगी है। इन क्षेत्रों की जलवायु फलों, फूलों और सब्जियों जैसे बागवानी उत्पादों की उत्पादकता एवं उनकी विविधता के लिए अत्यन्त उपयोगी है। यहाँ तक कि यह पर्वतीय क्षेत्र बे–मौसम की सब्जियों के उत्पादन के अत्यन्त योग्य है, जिनकी विभिन्न क्षेत्रों में अत्यधिक मांग होती है। विशेषकर दिल्ली, नोएडा और मेरठ के जैसे बड़े शहरों में फलों एवं सब्जियों की बढ़ती मांग का सापेक्षिक तुलनात्मक लाभ लिया जा सकता है।
- उत्तराखण्ड में पर्यटन का विकास अभी आंशिक रूप से ही हुआ है, जबकि पर्वतीय क्षेत्रों में पर्यटन का विकास अतिरिक्त आय एवं रोजगार का स्रोत बन सकता है। पर्यटन की विभिन्न प्रकारो के रूप में विकसित किया जा सकता है। जैसे–

- अवकाश पर्यटन।
- धार्मिक पर्यटन, अवकाश पर्यटन,
- पर्यावरण एवं वन्य जीवन आधारित पर्यटन।
- साहसिक पर्यटन।
- धार्मिक यात्राएं आधारित पर्यटन।
- मेंलें व त्यौहार।

- विभिन्न पर्यटन एजेन्सियों को राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर से प्रदेश के टूर आयोजित करने हेतु छूट देकर प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। साक्षरता दर का अधिक होना भी इस क्षेत्र के विकास के लिए अत्यन्त लाभकारी होगा।
- मानव विकास हेतु उत्तराखण्ड सरकार द्वारा शिक्षा, स्वाथ्यय एवं कौशल विकास पर विशेष बल दिया गया है। अब आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षण अद्गिम की गुणवत्ता परक उपादेयता पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।
- सोलह वर्षीय राज्य उत्तराखण्ड विकास का एक पड़ाव पार कर चुका है परन्तु सन्तुलित विकास हेतु अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है।

अभ्यास प्रश्न 1

लघुउत्तरीय प्रश्न

1. **क्षेत्रीय असमानता आशय क्या है ?**

.....

.....

.....

.....

2. उत्तराखण्ड में क्षेत्रीय असमानता की स्थिति पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

.....

3. उत्तराखण्ड में क्षेत्रीय असमानता के कारण की संक्षिप्त व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

.....

4. उत्तराखण्ड में क्षेत्रीय असमानता को दूर करने के उपायो की संक्षिप्त विवेचना कीजिए।

.....

.....

.....

.....

10.7 जनजातीय विकास का आशय

भारत में जनजातियों की परिकल्पना मख्य रूप से वृहत भारतीय समाज से उनके भौगालिक और सामाजिक अलगाव के रूप में की जाती है और इसमें उनके सामाजिक रूपांतरण के चरण को ध्यान में नहीं रखा जाता है। यही वजह है कि सामाजिक रूपातंरण केविभिन्न स्तरों पर समूहों और समुदायों का एक विस्तृत दायरा जनजातियों के रूप में वर्गीकृत किया गया। इस तथ्य को देखते हुए कि जनजातियां बृहत्तर भारतीय समाज से पृथक रहती रही हैं, अपने परिवास के प्रदेश पर शासन में उनकी स्वायत्तता है। उनका भूमि, वन और अन्य ससांधनों पर नियत्रंण है और वे स्वयं के कानूनों, परपंराओं और रीति–रिवाजों से शासित है। औपनिवेशिक शासन के उद्भव ने जनजातियों और गैर–जनजातियों को एकल राजनीतिक और प्रशासनिक ढाचें के अंतर्गत खड़ा किया। उन्होंने इसके लिए युद्ध, फतह और कब्जा करने जैसे तरीकों का इस्तेमाल किया। इसके बाद नये और एक समान नागरिक तथा आपराधिक काननूों की शुरुआत हुई और साथ ही एक एसो प्रशासनिक ढाचां कायम हुआ जो जनजातीय परपंरा और लाकोचार से भिन्न था।डॉ भीमराव अंबेडकर ने 26 जनवरी, 1950 को संविधान के तहत राज्य व्यवस्था को चलाए जाने की घोषणा से पूर्व संविधान के उद्देश्य और भारतीय समाज में दलितों और आदिवासियों के हालात के अंतर्विरोधों पर एक टिप्पणी की थी। उनके अनुसार, यह संविधान जहां देश वेफ प्रत्येक नागरिक को एक समान अधिकार देता है वहीं भारतीय समाज में दलित और आदिवासी समेत पिछड़ी जातियां सदियों से आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक स्तर पर गहरे असमानता का जीवन जी रहे हैं। भारत में अनुसूचित जनजातियों की तादाद 7.5 प्रतिशत के आसपास आंकी जाती है। संवैधानिक अनुसूचित जातियों आदेश 1950 के अनुसार देश में अनुसूचित जातियों के समूह में कुल 1,108 जातियां और अनुसूचित जनजातियों में 744 समूहों की पहचान की गई थी। सरकारी आंकड़ों के

अनुसार इनमें से 426 जनजातियां ही मान्य हैं। यह 200 से अधिक 'डी–नोटीफायड' आदिवासी हैं यह एक बड़ा सवाल है।

जनजातियों को विशिष्ट समदुाय के सदस्य के नाते कुछ विशेष अधिकार भी प्रदान किए गए है। ऐसे अधिकारों में अन्य बातों के अलावा, साविधिक मान्यता (अनुच्छदे 342); ससंद और राज्य विधानमडंलों में समानपुातिक प्रतिनिधित्व (अनुच्छेद 330 और 332); विशेष क्षेत्रों में सामान्य नागरिकों के मुक्त रूप से घूमने–फिरने या बसने अथवा सपंत्ति अर्जित करने पर प्रतिबधं (अनुच्छदे 19 (5)); जनजातीय भाषाओं, बोलियों और सस्ंकृति आदि का सरंक्षण (अनुच्छेद 29), जैसे प्रावधान शामिल हैं। सविधान में एक ऐसा खडं भी शामिल किया गया है। जिसके अतंर्गत राज्य, जनजातीय समदुायों के लिए सामान्य आरक्षण के प्रावधान (अनुच्छेद 14 (4)) और विशेष रूप से, नौकरियों और नियुक्तियों में उनके लिए आरक्षण (अनुच्छेद 16 (4)) की व्यवस्था कर सकते हैं। सविधान में एक ऐसा निर्देशक सिद्धांत भी है जिसके अनुसार जनजातियों सहित समाज के कमजोर वर्गों के शैक्षिक और आर्थिक हितों को विशेष रूप से प्रोत्साहित (अनुच्छेद 46) किया जाना चाहिए। इसके अलावा सविधान (अनुच्छेद 244 आरै 244 (क)) की पाचंवी और छठी अनुसूची में ऐसे प्रावधान है। जिनमें राज्य को यह अधिकार दिया गया है कि वह जनजातीय क्षेत्रों में विशेष प्रशासनिक व्यवस्था कर सकता है।

10.8 उत्तराखण्ड में जनजातियां

उत्तराखण्ड सामान्य रूप में कुमाऊंनी और गढ़वाली समाज में बंटा दिखाई देता है।लेकिन समाज के इन दो परतो के बीच अनेक संस्कृतियां फल–फूल रही है। ये भाषा, बोली,रहन–सहन,कद–काठी,विवीह व्यवस्था आदि में एक दूसरे से काफी अलग है।राज्य की ये जनजातियों का गैर–जनजातियों के सम्पर्क में आने के बाद भी अपनी सभ्यता, संस्कृति, परम्परा और रीति–रिवाज़ को बनाए हुए हैं। साथ ही सुदूर क्षेत्रों में रहने वाले जनजाति समूह सामजिक–आर्थिक स्तर पर पिछड़ेपन के बावजूद आज भी समाज में अपनी विशिष्ट पहचान बनाये हुए है। उत्तराखण्ड में निवास करने वाली प्रमुख जनजातियों का विवरण निम्न है–

1. **जौनसारी जनजाति**– यह जनजाति उत्तराखण्ड व गढ़वाल की सबसे बडा जनजातीय समुदाय है। यह मुख्य रूप से भाबर क्षेत्र में रहते है। यह देहरादून का चकराता,त्यूनी,लाखांमडल एवं कालसी ब्लॉक एवं उत्तरकाशी के परग नेकाना क्षेत्र और टिहरी गढ़वाल के जौनपुर क्षेत्र में भी निवास करते है।
2. **थारू जनजाति–** थारू उत्तराखण्ड की दूसरी व कुमांऊ का प्रमुख जनजातीय समूह है।यह जनजाति उत्तराखण्ड के अलावा उत्तर प्रदेश के तराई इलाको में भी निवास करती है।उत्तराखण्ड में यह जनजाति नैनीताल से लेकर टनकपुर, किच्छा,नानकमत्ता और सितारगंज तक फैली है।
3. **बुक्सा जनजाति–य**ह उत्तराखण्ड की प्रमुख जनजाति है।नैनीताल के जिले के विभिन्न विकास खण्डों मे इनकी संख्या सर्वाधिक है।देहरादून के डोईवाला, सहसपुर तथा विकास नगर खण्डों, पौड़ी गढ़वाल के दुगड्डा विकास खण्ड, ऊधमसिहं नगर के बाजपुर, काशीपुर, रामनगर तथा गदरपुर विकास खण्डों में निवास करती है।जिस इलाके में ये लोग रहते है, उसे बोक्सार कहते है।
4. **भोटिया जनजाति**– इस जनजाति को अलग–अलग क्षेत्रों में भूट, भोट,भोटा आदि नामों से जाना जाता है। यह अल्मोड़ा, पिथौरागढ़,उत्तरकाशी एवं चमोली जनपदों में रहते है।

5. **खस जनजाति**– इस जनजाति का नामकरण खस नामक पहाड़ से हुआ है। देहरादून मसूरी के आस–पास ग्रामीण क्षेत्रों में मुख्य रूप से निवास करते है।
6. **राजी जनजाति**– इस जनजाति को बनरौत के नाम से भी जाना जाता है। यह जनजाति पिथौरागढ़ जिले के धारचूला, कनाली छीना एवं डिडीहाट विकास खण्ड के सात गॉवो एवं चंपावत के एक गॉव व कुछ संख्या में नैनीताल जिले में निवास करती है। उत्तराखण्ड में इस जनजाति के मात्र 130 परिवार है।

उल्लेखनीय है कि बुक्सा एवं राजी जनजातियों सरकार द्वारा आदिम जनजाति समूह में रखा गया है।

10.9 उत्तराखण्ड में जिलेवार जनजातियों की संख्या

उत्तराखण्ड में अनुसूचित जनजातियों की संख्या राज्य की कुल जनसंख्या का 2.9 प्रतिशत है। सर्वाधिक जनसंख्या वाली जनजाति जौनसारी है, जबकि सबसे कमजनसंख्या वाली जनजाति राजी है । राज्य विधानसभा में इनके लिए दोक्षेत्र (चकराता एवं खटीमा) आरक्षित है। त्रिस्तरीय पंचायतों में भी आरक्षण दिया गया है।

सारणी 10.4जिलावार अनुसूचित जनजाति की स्थिति

	2001		2011	
जिला	**संख्या**	**प्रतिशत**	**संख्या**	**प्रतिशत**
उत्तरकाशी	2,685	0.91	3,512	1.06
चमोली	10,484	2.83	12,260	3.13
रूद्रप्रयाग	186	0.08	386	1.60
टिहरी गढ़वाल	691	0.11	875	0.14
छेहरादून	99,329	7.78	1,11,663	6.58
गढ़वाल	1,594	0.23	2,215	0.32
पिथौरागढ़	19,279	4.17	19,535	4.04
बागेश्वर	1,943	0.78	1,982	0.76
अल्मोड़ा	878	0.14	1,281	0.20
चम्पावत	740	0.33	1,339	0.51
नैनीताल	4,961	0.65	7,495	0.78
ऊधमसिहं नगर	1,10,220	8.92	1,23,037	7.46
हरिद्वार	3,139	0.22	6,323	0.33

स्रोतः जनगणना 2001–2011

2011 की जनगणना के अनुसार उत्तराखण्ड में अनुसूचित जनजातियों का विवरण सारणी 10.4 में व्यक्त किया गया है। संख्या रूप में सर्वाधिक जनजातियों की जनसंख्या ऊधम सिंह नगर (1,23,037) में एवं सबसे कम जनजातियों की जनसंख्या रूद्रप्रयाग (386) जिलें में निवास करती है।प्रतिशत रूप मेंसर्वाधिक जनजातियों की जनसंख्या ऊधम सिंह नगर (7.46) में एवं सबसे कम जनजातियों की जनसंख्या टिहरी (0.14) जिलें में निवास करती है।

10.10 उत्तराखण्ड में जनजातीयों में साक्षरता की स्थिति

2011 की जनगणना के अनुसार राज्य की जनजातियों की औसत साक्षरता दर 73.9 प्रतिशत है। महिला साक्षरता दर 62.5 प्रतिशत एवं पुरूष साक्षरता दर 83.8 प्रतिशत है। जिलेवार साक्षरता दर का विवरण सारणी 10.5 में दिया गया है।

सारणी 10.5 जिलावारअनुसूचित जनजाति की साक्षरता का विवरण

जिला	औसत साक्षरताप्रतिशत	पुरूष साक्षरताप्रतिशत	महिला साक्षरताप्रतिशत
उत्तरकाशी	76.8	91कृ2	64.5
चमोली	85.7	95.3	76.8
रूद्रप्रयाग	86.3	89.4	82.1
टिहरी गढ़वाल	78.4	84.0	72.2
छेहरादून	73.7	84.4	72.2
पौढ़ी गढ़वाल	79.3	88.7	68.4
पिथौरागढ़	84.4	93.5	75.8
बागेश्वर	82.8	93.1	75.8
अल्मोड़ा	82.6	93.1	73.2
चम्पावत	77.3	86.1	64.5
नैनीताल	76.2	84.0	68.2
ऊधमसिहं नगर	62.1	71.4	51.4
हरिद्वार	70.6	79.7	60.7
उत्तराखण्ड	**73.9**	**83.8**	**62.5**

स्रोतः जनगणना 2011

सर्वाधिक साक्षरता रूद्रप्रयाग एवं सबसे कम ऊधम सिंह नगर व हरिद्वार जिले की है।

10.11 उत्तराखण्ड में जनजातीय कल्याण कार्यक्रम

उत्तराखण्ड राज्य के अस्तित्व में आने के बाद से भारतीय संविधान के प्रति अपनी प्रतिबद्धता व्यक्त करते हुए राज्य सरकार द्वारा अनुसूचित जनजातियों के कल्याण एवं उनके जीवन स्तर में सुधार को उच्च प्राथमिकता दी है। राज्य सरकार जनजातीय लोगो के आर्थिक, सामाजिक एवं शैक्षिक उत्थान हेतु शिक्षा, गरीबी रेखा से ऊपर उठाना, कौशल सुधार तथा स्वरोजगार के लिए सहायता आदि योजनाओं के द्वारा इनके सर्वागीण विकास हेतु केन्द्र सरकार के साथ मिलकर प्रयास कर रही है। सरकार द्वारा चलाई जाने वाली विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं का मुख्य उद्देश्य सदियों से पिछड़े तथा उपेक्षित, असहाय एवं दुर्बल लोगों के विकास की मुख्य धारा से जोड़ना है।उत्तराखण्ड अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति आयोग अधिनियम, 2003 द्वारा एक आयोग का गठन किया गया है। यह आयोग संविधान के अन्तर्गत अनुसूचित जनजातियों को दिये गये विभिन्न संरक्षणों के कार्यान्वयन का अवलोकन

करता है। वर्ष 2001 में उत्तराखण्ड बहुद्देशीय वित्त एंव विकास निगम का गठन किया गया। यह निगम अनुसूचित जनजातियों के अतिरिक्त अनुसूचित जातियों व अन्य पिछड़े वर्गों, विकलांगो एवं सफाई कर्मचारियों को स्वरोजगार एवं आय सृजन के अवसर प्रदान करता है।आर्थिक एवं शैक्षिक स्तर में सुधार हेतु विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम संचालित करता है। मानव संसाधन विकास सम्बन्धी योजनाओं को क्रियान्वित कर रोजगार के अवसर सुलभ कराता है।

सरकार द्वारा संचालित जनजातीय कल्याण कार्यक्रम

उत्तराखण्ड सरकार द्वारा जनजातियों के सर्वागीण विकास के लिए निम्न कार्यक्रम चलाये जा रहे है। जिनमें केन्द्र सरकार की मदद भी शामिल है।प्रमुख योजनाएं/कार्यक्रम इस प्रकार हैं–

- **गौरा कन्याधन योजना**–अनुसूचित जनजाति एवं जनजाति के गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवार की बालिकाओं को इण्टरमीड़िएट परीक्षा उत्तीर्ण करने पर ''गौरा देवी'' कन्याधन'' के रूप में 25,000.00 की धनराशि राष्ट्रीय बचत पत्र के रूप में प्रदान की जाती है।

- **अटल आवास योजना**–अनुसूचित जनजाति के गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले आवासहीन परिवारों को आवासीय सहायता उपलब्ध कराये जाने हेतु वर्ष 2008–09 से **अटल आवास योजना** का प्रारम्भ किया गया। इस योजना के लिए ऐसे अनुसूचित जनजाति के परिवार पात्र होगें जिनकी समस्त स्रोतों से वार्शिक आय रू0 32000.00 अथवा इससे कम होगी (इस हेतु तहसीलदार द्वारा प्रदत्त आय प्रमाण पत्र ही मान्य होगा) अथवा अनुसूचित जनजाति के बी. पी.एल. परिवार भी योजना के लिए पात्र होगे। पर्वतीय क्षेत्रों में आवास की लागत रू0 38500. 00 तथा मैदानी क्षेत्रों में रू0 35000.00 निर्धारित की गई है।

- **छात्रावृत्ति योजना** –अनुसूचित जनजाति के सभी पात्र विद्यार्थियों को जिसमें मान्यता प्राप्त संस्थानों में मैट्रिक के बाद अपनी शिक्षा को जारी रखने, जिसमें व्यवसायिक, स्नातक तथा स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम शामिल है, के लिए छात्रवृत्ति प्रदान की जाती है।

- **जीविका अवसर प्रोत्साहन योजना** –इस **योजना** के तहत अनुसूचित जनजाति के बेरोजगार युवकों को विभिन्न व्यवसायों हेतु रोजगारपरक प्रशिक्षण दिया जाता हैं।

- **शिल्पी ग्राम योजना**–इस योजना के तहत विभिन्न शिल्पों से जुड़े अनुसूचित जनजाति के ग्रामों का चयन कर उन्हें विभिन्न प्रकार की सुविधाएं दी जाती हैं।

- इसके अतिरिक्त ऐसे स्वैच्छिक संगठन/ गैर सरकारी संगठन जो अनुसूचित जनजाति के बच्चों की शिक्षा में गहरी रूचि लेते है और प्राईमरी पाठशालाओं को संचालित कर शिक्षा देते है एवं ऐसी संस्थायें जो अनुसूचित जनजातियों में शिक्षा के प्रचार प्रसार के हेतु वाचनालयों/पुस्तकालायों एवं छात्रावासों की भी सुविधायें देते है, उन्हे भी अनुदान दिया जाता है। अनुदान के लिए स्वैच्छिक संगठनों द्वारा संचालित विद्यालयों में इस बात पर विशेष ध्यान दिया जाता है कि इसमें अनुसूचित जनजाति के छात्रों की संख्या अनुपात में 50 प्रतिशत से कम न हो।

- **सर्व शिक्षा अभियान** के तहत जनजाति विकास की उपयोजनाओं के अन्तर्गत अनुसूचित जनजाति के विद्याार्थियों हेतु न सिर्फ विद्यालयों का उच्चीकरण किया जायेगा बल्कि अनुसूचित जनजाति प्रधान क्षेत्रों में नये माध्यमिक विद्यालय स्वीकृत हो चुके है।

- प्रदेश में निवास करने वाली अनुसूचित जनजातियों की जीविका का प्रमुख साधन कृषि है। उनकी आर्थिक दशा सुधारने के उद्देश्य से कृषि एवं बागवानी हेतु राष्ट्रीय बागवानी मिशन के अंतर्गत अनुदान प्रदान किये जाते है।

- **तकनीकी हस्तांतरण कार्यक्रम**– इस योजना के अन्तर्गत अनुसूचित जनजाति के किसानों को प्रशिक्षण भी दिया जाता है जिसके अन्तर्गत परम्परागत कृषि में किस प्रकार सुधार किया जाये।

- **निःशुल्क कोचिंग योजना** –अनुसूचित जनजाति के छात्र/छात्राओ को लोक सेवा आयोग एवं राज्य लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं हेतु केन्द्र एवं राज्य सरकारों द्वारा दिल्ली एवं देहरादून में निःशुल्क कोचिंग प्रदान की जाती है।

- **कला और संस्कृति प्रोत्साहन** –संस्कृत कला केन्द्र, हल्द्वानी, अनुसूचित जनजातियों की कला और संस्कृति को बनाये एवं संवर्द्धन रखने हेंतु प्रयत्नशील है। इनके मेलो, प्रर्दशनी एवं वाद्ययंत्रों को प्रोत्साहन हेतु सरकार द्वारा वार्षिक योजना में मदद भी दी जाती है।

सरकार की नीतियों एवं कार्यक्रमों का ही परिणाम है कि आज जनजाति के लोग विभिन्न उच्च पदों पर आसीन है। जौनसारी, भोटिया जनजाति सहित अन्य जनजातियों का आर्थिक एवं सामाजिक विकास स्तर ऊँचा उठा है, परन्तु यह विकास कुछ सीमित क्षेत्रों एवं लोगो तक ही सीमित है। राजि एवं बुक्सा जनजातियों इक्कीसवीं सदी में भी विकास से बहुत दूर है। अनुसूचित जनजातियों के विकास योजनाओं को अधिक संवेदनशीलता, गम्भीरता एवं कडाई से लागू करना होगा जिससे विकास का लाभ अतिन्म व्यक्ति तक पहुँच सके।

अभ्यास प्रश्न 2

1. उत्तराखण्ड की प्रमुख जनजातियां कौन–कौन सी संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए ?

   .....

   .....

   .....

2. उत्तराखण्ड की जनजातियों की साक्षरता कीसंक्षिप्तविवेचना कीजिए ?

   .....

   .....

   .....

3. देहरादून, पिथौरागढ़ और ऊधमसिहं नगर जनपदों में कौन–कौन सी जनजातियां निवास करती है?

   .....

   .....

   .....

4. जनजातियों की संख्या दृष्टिकोण से सर्वाधिक एवं न्यूनतम जनजातियों वाले जिले कौन–कौन से है।

.....

.....

.....

5. उत्तराखण्ड सरकार द्वारा संचालित जनजातीय कल्याण कार्यक्रमों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

10.12 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान चुके है किकिसी भी प्रदेश का आर्थिक विकास केवल सकल घरेलू आय एवं उत्पादन में वृद्धि में ही निहित नहीं, वरन् उसका एक महत्वपूर्ण पहलू आय एवं उत्पादन का न्यायोचित वितरण भी है।आय तथा सम्पत्ति के असमान वितरण से अभिप्राय अर्थव्यवस्था की उस परिस्थितियों से है जिसमें कि कुछ लोगों क आय, औसत आय से बहुत अधिक तथा अधिकांश लोगों की आय, औसम आय से बहुत कम होती है । आय तथा सम्पत्ति के असमान वितरण की समस्या का सम्बन्ध मुख्य रूप से व्यक्तिगत आय के वितरण में विषमताओं से होता है । इससे अभिप्राय यह है कि कुछ व्यक्तियों की आय बहुत अधिक है जबकि अधिकतर लोगों की आय बहुत कम है ।उत्तराखण्ड के असंतुलित विकास के कारण पर्वतीय क्षेत्र आर्थिक और सामाजिक रूप में मैदानी क्षेत्र से पिछड़ चुके है। इससे क्षेत्रीय असमानताएं उत्पन्न हो गयी है। क्षेत्रीय असमानताओं के कारणों की पहचान की जा चुकी है जिसके निराकरण हेतु उत्तराखण्ड सरकार असंतुलित विकास से संतुलित विकास के मार्ग की ओर बढ़ी है। इसी क्रम में समाज के सबसे पिछड़े वर्ग अनुसूचित जनजातियों के विकास के लिए कल्याणकारी कार्यक्रम संचालित हो रहे है जिससे इन्हें भी विकास की मुख्य धारा में लाया जा सके। इस इकाई के अध्ययन से आप क्षेत्रीय असमानताओं एवं जनजातीय विकास के संदर्भ में अपने मत को उत्तराखण्ड के लिए सही रूप में अभिव्यक्त कर सकेगें।

10.12 शब्दावली

आर्थिक विकास : आर्थिक विकास की धारणा, आर्थिक संवृद्धि की धारणा से अधिक ब्यापक है। आर्थिक संवृद्धि उत्पादन की वृद्धि से सम्बन्धित है जबकि आर्थिक विकास सामाजिक, आर्थिक, गुणात्मक एवं परिमाणात्मक सभी परिवर्तनों से सम्बन्धित है। जहां आर्थिक संवृद्धि परिमाणात्मक परिवर्तनों से सम्बन्धित है तथा आर्थिक विकास परिमाणात्मक एवं गुणात्मक दोनों प्रकार के परिवर्तनों से सम्बन्धित है अर्थात राष्ट्रीय उत्पाद तथा साथ ही जीवन की गुणवत्ता में सुधार ।

आर्थिक संवृद्धि : आर्थिक संवृद्धि से अभिप्राय किसी समयावधि में किसी अर्थव्यवस्था में होने वाली वास्तविक आय की वृद्धि से है । सामान्यतया यदि सकल राष्ट्रीय उत्पाद, सकल घरेलू उत्पाद तथा प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि हो रही है तो हम कहते है कि आर्थिक संवृद्धि हो रही है।

आगत : आगत किसी भी उत्पादन प्रक्रिया में उत्पादन के साधन होते है जैसे जमीन, श्रम, पूँजी तथा उद्यम।

निर्गत : निर्गत उत्पादन प्रक्रिया में सभी उत्पादन के साधनों का प्रयोग करने के बाद उत्पादित अन्तिम वस्तुएँ तथा सेवाये है।

प्राथमिक क्षेत्र : प्राथमिक क्षेत्र में मुख्यतः कृषि (वानिकी एवं पशुपालन), खनन तथा मछली व्यवसाय को शामिल किया जाता है।

द्वितीयक क्षेत्र : द्वितीयक क्षेत्र में सभी प्रकार के उद्योग आते है।

तृतीयक क्षेत्र : तृतीयक क्षेत्र में सेवाएं जैसे बैंकिग, परिवाहन, व्यापार इत्यादि को शामिल किया जाता है।

पूँजी निर्माण : व्यक्तियों एवं घरेलू क्षेत्र की बचतों को व्यवसायिक क्षेत्र में निवेश किया जाता है।

सकल घरेलू उत्पाद (जी. डी.पी.) : किसी देश की घरेलू सीमा के भीतर स्थित निवासी उत्पादक तथा गैर निवासी उत्पादक इकाइयों द्वारा उत्पादित अन्तिम वस्तुओं तथा सेवाओं के कुल मूल्य का योग होता है।

उत्पादन : उत्पादन का सम्बन्ध किसी क्षेत्र में उत्पादन की कुल मात्रा से है ।

उत्पादकता : उत्पादकता का सम्बन्ध प्रति इकाई भूमि में कुल उत्पादन से है।

कम लोचदार माँग : जब एक वस्तु की माँग में आनुपातिक परिवर्तन कीमत में आनुपातिक परिवर्तन की अपेक्षा कम होता है तो इसे कम लोचदार माँग कहते है।

कम लोचदार माँग : जब एक वस्तु की माँग में आनुपातिक परिवर्तन कीमत में आनुपातिक परिवर्तन की अपेक्षा कम होती है, तो इसे कम लोचदार माँग कहते है।

अधिक लोचदार माँग : जब एक वस्तु की माँग में आनुपातिक परिवर्तन कीमत में आनुपातिक परिवर्तन की अपेक्षा ज्यादा होता है तो इसे अधिक लोचदार माँग कहते है।

अधोसंरचनाः एक देश की आन्तरिक सुविधा जो कि ब्यवसायिक क्रियाओं को सम्भव बनाती है जैसे कि दूरसंचार, परिवहन, वित्तीय संस्थाए, उर्जा पूर्ति इत्यादि सेवाएं ।

घटते प्रतिफल का नियम : यदि साधनों को जिस अनुपात में बढाया जाता है, उत्पादन उससे कम अनुपात में बढ़ता है तो इसे घटते प्रतिफल का नियम कहते है। जैसे यदि सभी साधनों को 10%बढ़ाया जाता है, लेकिन उत्पादन 8%बढ़ता है तो इसे घटते प्रतिफल का नियम कहते है।

संयुक्त उत्पाद : संयुक्त उत्पाद दो या दो से अधिक वें उत्पाद है जो एक ही उत्पादन प्रक्रिया से एक साथ उत्पादिक किए जाते है जैसे दूध से दही, घी इत्यादि ।

10.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1.देखिए 10.3, **2.** देखिए 10.4, 3. देखिए 10.5, 4. देखिए 10.6।

अभ्यास प्रश्न 2

1.देखिए 10.8, **2.** देखिए 10.10, 3. देखिए 10.9, 4. देखिए 10.9, 5. देखिए 10.10।

10.14 सन्दर्भ सूची

- अर्थ एवं सांख्यिकीय निदेशालय (2015), सांख्यिकीय डायरी 20015–16, उत्तराखण्ड सरकार ।
- अग्रवाल, चन्द्र मोहन (सम्पादक) (2004), *उत्तरांचल के सानिध्य में,* इंडियन पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली
- उत्तराखण्ड शासन (2010), *उत्तराखण्डः उत्कर्ष की ओर,* सूचना एवं लोक सम्पर्क विभाग, देहरादून।
- उत्तराखण्ड शासन (2010), *नई सोच, नई दिशा,* सूचना एवं लोक सम्पर्क विभाग, देहरादून।
- मेहता, जी0एस0, डेवलपमेन्ट ऑफ उत्तराखण्डः इश्यूज़ एन्ड प्रेसपेक्टिवस (1999), ए0पी0एच0 पब्लिशिंग कॉरपोरेशन, नई दिल्ली।
- बिष्ट डॉ0 नारायण सिंह;(2003) उत्तरांचल हिमालयी राज्यः पर्वतीय क्षेत्र में औद्योगिकरण डॉ0 नारायण संस्थान, शोध नियोजन एवं विकास, गोपेश्वर चमोली.
- उत्तराखण्ड इयर बुक 2016, विनसर पब्लिशिंग कम्पनी, देहरादून।
- Aggarwal, S.P. (ed.) (1995), *Uttarakhand: Past, Present and Future,* Concept Publishing Company, New Delhi.
- Dewan, M.L. & Jagdish Bahadur (eds.) (2005), *Uttaranchal: Vision and Action Programme*, Concept Publishing Company, New Delhi.
- Mehta, G.S. (1999), *Development of Uttarakhand: Issues and Perspectives*, APH Publishing Corporation, New Delhi.
- Pangtey, Yatendra Singh and others (2011), *Uttarakhand at a Glance 2010-11*, Directorate of Economics and Statistics, Dehradun.
- Planning Commission, Government of India (2009), *Uttarakhand Development Report*, Academic Foundation, New Delhi.
- Sati, V.P. & Kamlesh Kumar (2004), *Uttaranchal: Dilemma of Plenties and Scarcities*, Mittal Publications, New Delhi.

10.15 सहायक उपयोगी सामग्री

- ओझा,शिव कुमार, (2016), उत्तराखण्डः एक समग्र अध्ययन् , बौद्धिक प्रकाशन, इलाहाबाद।
- ठाकुर, सुदीप व अन्य (सम्पादक) (2010), *उत्तराखंड उदयः एक दशक की यात्रा (2000 से 2010),* अमर उजाला पब्लिकेशन्स लिमिटेड, नोएडा।
- बलूनी, विद्या दत्त, *उत्तराखण्डः एक सम्पूर्ण अध्ययन,* अरिहन्त पब्लिकेशन्स (इ) प्रा लि, मेरठ।
- पाण्डेय, अशोक कुमार, *उत्तरांचलः सम्पूर्ण अध्ययन,* उपकार प्रकाशन, आगरा।
- सविता मोहन (2007), *उत्तराखण्डः समग्र अध्ययन,* तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली।
- अर्थ एवं सांख्यिकीय निदेशालय (2016), सांख्यिकीय डायरी 20015–16, उत्तराखण्ड सरकार
- कुरूक्षेत्र (विभिन्न अंक), ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
- योजना (विभिन्न अंक) योजना आयोग, नई दिल्ली।

10.16 निबन्धात्मक प्रश्न

1. क्षेत्रीय असमानता क्या आशय है ? इन असमानताओं को दूर करने के उपाय उत्तराखण्ड के सन्दर्भ में स्पष्ट कीजिए?
2. क्षेत्रीय असमानता आप क्या समझतें है ?उत्तराखण्ड में क्षेत्रीय असमानता की स्थिति स्पष्ट करते हुए इन्हें दूर करने के उपाय बताइये।
3. उत्तराखण्ड की जनजातियों के कल्याण हेतु राज्य सरकार द्वारा चलाये गये कार्यक्रमों की आलोचनात्मक विवेचना कीजिए?
4. उत्तराखण्ड की प्रमुख जनजातियां कौन–कौन सी है? उनकी आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति को आलोचनात्मक विवेचना कीजिए?

इकाई ग्यारह : उत्तराखण्ड : प्राकृतिक संसाधन

11.1 प्रस्तावना

11.2 उद्देश्य

11.3 प्राकृतिक संसाधन– अर्थ, प्रकार व आर्थिक विकास से सम्बन्ध

11.4 प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता

11.4.1 भू संसाधन

11.4.2 वन संसाधन

11.4.3 जल व मत्स्य संसाधन

11.4.4 खनिज संसाधन

11.5 सारांश

11.6 शब्दावली

11.7 अभ्यास प्रश्न व उत्तर

11.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

11.9 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री

11.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

आधुनिंक उत्तराखण्ड में समाज और अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित यह ग्यारहवीं इकाई है। इससे पहले की इकाईयों से आप उत्तराखण्ड की जनसंख्या एवं मानवीय संसाधन,गरीबी एवं बेरोजगारी और क्षेत्रीय असमानता एवं जनजातीय विकास के बारे में आप अध्ययन कर चुके है।

प्राकृतिक संसाधन एक देश के समग्र विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन संसाधनों पर मनुष्य अपनी अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु निर्भर करता है।ये प्राकृतिक संसाधन भूमि, वन, जल व खनिज आदि के रूप में पाये जाते हैं। क्षेत्र में पर्याप्त भूमि, कृषि के लिए विभिन्न प्रकार की उपजाऊ मिट्टियाँ व अच्छी जलवायु, पर्याप्त वन क्षेत्र, वनों में विविध प्रकार के उत्पाद, नदियाँ व झीलों व खनिजों के पाये जाने पर उस क्षेत्र का विकास तेजी से हो सकता है। प्रस्तुत इकाई में विविध प्रकार के प्राकृतिक संसाधन एवं उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था में इनके महत्व से सम्बन्धित बिन्दुओं का विस्तार से विश्लेषण प्रस्तुत है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप विभिन्न प्राकृतिक संसाधनों की उत्तराखण्ड में उपलब्धता, इनके उपयोग एवं उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था में इसके महत्व को समझ सकेंगें तथा इनकीविशेषताओं व इनसे जुड़ी समस्याओं, नीतियों व कार्यक्रमों विश्लेषण कर सकेंगे।

10.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप –

- बता सकेंगे कि प्राकृतिक संसाधनों से क्या तात्पर्य है।
- प्राकृतिक संसाधनों की उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था में भूमिका को बता सकेंगें।
- प्राकृतिक संसाधनों के विदोहन की जानकारी का वर्णन कर सकेंगें ।
- प्राकृतिक संसाधन का अर्थ, प्रकार व इनका आर्थिक विकास से सम्बन्धों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- बता सकेंगे कि विभिन्न प्राकृतिक संसाधनों की उत्तराखण्ड में क्या स्थिति है।
- समझा सकेंगे कि उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था हेतु प्राकृतिक संसाधन क्यों महत्वपूर्ण हैं।
- इन प्राकृतिकसंसाधनों से जुड़ी समस्याओं का विश्लेषण कर सकेंगे।
- यह बता सकेंगे कि प्रदेश में इन संसाधनों के दोहन से जुड़ी समस्याओं के निराकरण हेतु राज्य सरकार की क्या नीतियाँ व कार्यक्रम हैं।

11.3 प्राकृतिक संसाधन– अर्थ, प्रकार व आर्थिक विकास से सम्बन्ध

प्राकृतिक संसाधनों का तात्पर्य उन उपहारों से है जो मानव को प्रकृति द्वारा (बिना कोई मूल्य चुकाए) प्रदान किये जाते हैं । प्राकृतिक साधनो में भूमि, मिट्टी, जल, वन, खनिज, समुद्री साधन, जलवायु, वर्षा आदि का समावेश किया जाता है। इन साधनों को मनुष्य अपने प्रयत्नों से उत्पन्न नहीं कर सकता। अन्य शब्दों में, प्राकृतिक संसाधन भौतिक पर्यावरण का वह भाग है जिन पर मनुष्य अपनी अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु निर्भर रहता है। नवीनीकरण होने या नवीनीकरण न होने के आधार पर प्राकृतिक संसाधन दो प्रकार के होते हैं – एक वे जिनका लगातार नवीनीकरण होता रहता है जैसे

भूमि, वन जल व मत्स्य, दूसरे वे जिनका नवीनीकरण नहीं होता है अर्थात् लगातार उपयोग होते रहने से ये संसाधन समाप्त हो जाते हैं जैसे विभिन्न प्रकार के खनिज व खनिज तेल।

प्राकृतिक संसाधन एक देश एवं प्रदेश के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्राकृतिक संसाधनों की सामूहिक शक्ति ही प्रदेश की अर्थिक प्रगति को निर्धारित करती है। जो प्रदेश इन संसाधनों का उपयोग उचित प्रकार से करते हैं वे तीव्र गति से विकास करने में सफल होते हैं जबकि जिन प्रदेशों में विभिन्न कारणों से प्राकृतिक संसाधनों का उचित उपयोग नहीं हो पाता है, वे प्रदेश तेजी उन्नति नहीं कर पाते हैं। स्पष्टतः प्राकृतिक संसाधन एक प्रदेश के आर्थिक विकास को प्रभावित करते हैं। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री प्रो. रिचार्ड टी0 गिल का भी मानना है कि ''प्राकृतिक साधनों का आर्थिक विकास को सीमित करने या प्रोत्साहित करने में निर्णायक महत्व है। आर्थिक विकास के उच्च स्तर पर पहुँचे हुए अमेरिका व कनाडा आदि देश प्राकृतिक साधनों में भी सम्पन्न हैं।'' वास्तव में, विश्व के जिन देशों में प्राकृतिक संसाधन प्रचुर मात्रा में विद्यमान हैं, उन देशों में आर्थिक विकास की सम्भावनाएं अधिक तीव्र हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि आर्थिक विकास के लिए प्राकृतिक साधनों का प्रचुर मात्रा में पाया जाना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि उनका उचित तकनीक एवं कुशल मानव शक्ति द्वारा उपयोग किया जाना भी आवश्यक है।

आर्थिक विकास की प्रक्रिया में वस्तुओं व सेवाओं के उत्पादन के लिए इन प्राकृतिक संसाधनों की आवश्यकता होती है। यदि किसी देश अथवा प्रदेश में ये संसाधन आवश्यकता से कम मात्रा में पाये जाते हैं तो दूसरे क्षेत्रों से इनके आयात द्वारा ही आर्थिक विकास किया जा सकता है। इसका यह अर्थ है कि प्राकृतिक संसाधनों का बहुत अधिक मात्रा में होना विकास के लिए अच्छा तो है परन्तु इन साधनों के कम होने पर आयात द्वारा इस समस्या को सुलझाया जा सकता है।

आप जानते हैं कि अधिक भूमि, विविध प्रकार की उपजाऊ मिट्टियाँ, अनुकूल जलवायु व जल कृषि फसलों के अधिक उत्पादन के लिए अति आवश्यक हैं। जल की पर्याप्त उपलब्धता कृषि उत्पादन के साथ पेय जल की समस्या को भी हल करने में सहायक है। नदियों में प्रवाहित जल से हम विद्युत का भी उत्पादन कर सकते हैं। वनों से हमें प्राकृतिक सौन्दर्य, अनेक प्रकार के वन्य जीव, प्राण वायु, ईंधन, इमारती लकड़ी, जड़ी–बूटियाँ व अन्य उत्पाद प्राप्त होते हैं, भू–क्षरण रुकता है, पशुओं को चारा मिलता है तथा जलवायु समशीतोष्ण हो जाती है। खनिजों की उपलब्धता उद्योगों के विकास को बढ़ावा देती है। खनिजों की विविधता व अधिकता क्षेत्र की समृद्धि को बढ़ाने में सहायक है। एक अर्थ में यह कहा जा सकता है कि प्राकृतिक संसाधनों से अर्थव्यवस्था के अनेक क्षेत्रों जैसे कृषि, उद्योग, व्यापार, आदि का विकास होता है जिससे क्षेत्र में रोजगार व आय में वृद्धि होती है। पर यहाँ यह ध्यान देना आवश्यक है कि आर्थिक विकास की गति को बहुत तीव्र करने के लिए इन संसाधनों का सीमा से अधिक दोहन अनेक प्रकार की समस्याओं को जन्म देता है। इन समस्याओं में प्रमुख हैं – भूमि का बंजर होना, भू–क्षरण, जलवायु में विनाशकारी परिवर्तन, बाढ़, सूखा, उपजाऊ मिट्टियों की कमी, इत्यादि। इसलिए प्राकृतिक संसाधनों के लगातार अधिक विदोहन से आर्थिक विकास की गति में दीर्घकाल में सतत् वृद्धि नहीं की जा सकती।

11.4 प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता

उत्तराखण्ड में अनेक प्रकार के प्राकृतिक संसाधन पाये जाते हैं। प्राकृतिक संसाधनों को निम्नलिखित भागों में बाँटा जा सकता है :

- भूमि संसाधन
- वन संसाधन
- जल संसाधन
- खनिज संसाधन

11.4.1 भू संसाधन

प्राकृतिक संसाधनो में भूमि सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। मनुष्य एवं समाज का सारा अस्तित्व और विकास इसी पर आश्रित है। विभिन्न आर्थिक क्रियाएं भूमि पर ही संचालित की जाती हैं। एक प्रदेश में भूमि की उपलब्धता, उसकी भौगोलिक स्थिति एवं उसका उपयोग बहुत महत्व रखता है। उत्तराखण्ड 53483 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल में फैला हुआ एक छोटा राज्य है। भू क्षेत्रफल की दृष्टि से यह भारत के क्षेत्रफल का मात्र 1.69 प्रतिशत है एवं 18वॉ सबसे बड़ा राज्य है। इसकी स्थलाकृति अत्यन्त विविध व कठिन है। हरिद्वार, उधमसिंह नगर तथा देहरादून व नैनीताल के कुछ भागों को छोड़कर शेष क्षेत्र पर्वतीय है। राज्य का लगभग 86.07 प्रतिशत भाग पर्वतीय (46035 वर्ग किलामीटर) तथा शेष भाग 13.93 प्रतिशत भाग (7448 वर्ग किलामीटर) मैदानी है। क्षेत्रफल की दृष्टि से राज्य का सबसे बडा जिला चमोली(8030 वर्ग किलामीटर) तथा सबसे छोटा जिला चम्पावत (1766 वर्ग किलामीटर) है। उत्तर में वृहत्त हिमालय,पश्चिम में टॉस नदी, दक्षिण–पश्चिम में शिवालिक श्रेणियां, दक्षिण–पूर्व में तराई क्षेत्र तथा पूर्व में काली नदी राज्य की प्राकृतिक सीमा का निर्धारण करते है।

धरातलीय विन्यास, स्तर शैलक्रम तथा उच्चावच स्वरूपों के आधार पर उत्तराखण्ड राज्य को आठ भौगोलिक या भौतिक क्षेत्रों में बांटा जाता है।

1. गंगा का मैदानी क्षेत्र,
2. तराई क्षेत्र,
3. भाबर क्षेत्र,
4. शिवालिक क्षेत्र,
5. दूनद्धार क्षेत्र,
6. लधु या मध्य हिमालयी क्षेत्र,
7. वृहत्त या उच्च हिमालयी क्षेत्र व
8. ट्रांस हिमालयी क्षेत्र।

किसी भी प्रदेश की जलवायु वहॉ के देशान्तरीय एवं अक्षांशीय स्थिति,जल और स्थल का वितरण, समुद्र तट से दूरी, समुद्र तल से ऊॅचाई, उच्चावच, वायुदाब आदि अनेक कारकों पर निर्भर करता है। उत्तराखण्ड के तापमान में मौसमी परिवर्तन बहुत हैं। मई व जून तक तापमान सर्वाधिक रहता हैं।ये उष्ण कटिबन्धीय मानसून से भी प्रभावित होते हैं जबकिदिसम्बर व जनवरी माह प्रायः बहुत ठंडे होते हैं शीत ऋतु में यह तापमान कुछ क्षेत्रों में शून्य से भी बहुत कम हो जाता है। जुलाई से सितम्बर माह तक दक्षिण–पश्चिम मानसून सक्रिय रहने के कारण इस अवधि में बाढ़ व भूस्खलन की समस्या रहती है। डॉ0 एस.सी. खर्कवाल ने ऊॅचाई,ताप व वनस्पतियों के अनुसार राज्य को 6 जलवायु क्षेत्रों में बांटा है,जो निम्न प्रकार है–

1. उपोष्ण जलवायु–900मीटर तक ऊॅचाई का क्षेत्र–यथा भाभर,तराई व दून क्षेत्र।
2. गर्म शीतोष्ण जलवायु–900मीटर से 1800 मीटर तक ऊॅचाई का क्षेत्र।

3. शीत शीतोष्ण जलवायु– 1800 मीटर से 3000 मीटर तक ऊँचाई का क्षेत्र।
4. एल्पाइन जलवायु – 3000 मीटर से 4200 मीटर तक ऊँचाई का क्षेत्र।
5. हिमानीजलवायु– 4200 मीटर से ऊपर का क्षेत्र।
6. शीत शुष्कजलवायु– 2500 मीटर से 35000 मीटर तक ऊँचाई वाले ट्रांस हिमालयी क्षेत्र।

भू उपयोग की दृष्टि से यदि वर्ष 2014–15 के आँकड़ो को देखा जाये तो आप पायेंगे कि प्रदेश में भूमि के कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल (5992604 हैक्टेयर) में 63.41 प्रतिशत वन क्षेत्र, 5.29 प्रतिशत कृषि योग्य बेकार भूमि, 2.40 प्रतिशत परती भूमि, 3.81 प्रतिशत ऊसर व खेती के अयोग्य भूमि, 3.73 प्रतिशत खेती के अतिरिक्त अन्य उपयोग में आने वाली भूमि, 3.21 प्रतिशत स्थायी चरागाह व अन्य चराई की भूमि, 6.47 प्रतिशत अन्य वृक्षों, झाड़ियों आदि की भूमि व 11.68 प्रतिशत शुद्ध बोयी गयी भूमि (सारणी 11.1) है।

राज्य की अर्थव्यवस्था में कृषि रीढ़ के समान है। राज्य के 70 प्रतिशत व्यक्तियों की आजीविका कृषि या उससे जुड़े क्षेत्रों पर आधारित है। यहाँ दो प्रकार की खेती पायी जाती है – मैदानी व पर्वतीय। पर्वतीय क्षेत्रों में खेतों की सीढ़ी–नुमा संरचना का पायें जातें है। मैदानी क्षेत्रों में खेती आधुनिक विधि से एवं पर्वतीय क्षेत्रों में परम्परागत विधि से की जाती हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि कार्य के लिए आधुनिक तकनीक व आदाओं का अपनाया जाना सम्भव नहीं है। मैदानी क्षेत्र की कृषि पर हरित क्रान्ति का स्पष्ट प्रभाव है जबकि पर्वतीय कृषि भू–क्षरण की समस्या से ग्रस्त है।

सारणी 11.1 उत्तराखण्ड में भूमि उपयोगिता का वर्गीकरण

क्रम	विवरण	2004–05	2010–11	2014–15
1.	भूमि उपयोगिता के लिए प्रतिवेदित क्षेत्रफल	5670110	5672636	5992604
2.	वन	3465057	3484803	3799953
3.	ऊसर और खेती के अयोग्य भूमि	311817	224764	228200
4.	खेती के अतिरिक्त अन्य उपयोग में आने वाली भूमि	152180	217648	223792
5.	कृष्य बेकार भूमि	386288	310390	316984
6.	स्थाई चरागाह तथा अन्य चराई की भूमि	228944	198526	192077
7.	अन्य वृक्ष झाडियो,बागों आदि का क्षेत्रफल जो वास्तविक बोयें गये क्षेत्रफल में सम्मिलित नहीं है।	248979	385548	387817
8.	वर्तमान परती	41683	43295	57276
9.	अन्य परती	68432	84498	86334
10.	बोया गया वास्तविक क्षेत्रफल	766730	723164	701171
11.	एक बार से अधिक बोया गया क्षेत्रफल	467809	446533	396663

12.	सम्पूर्ण बोया गया क्षेत्रफल		1234539	1169697	1096834
13.	फसल गहनता(प्रतिशत में)		161.01	161.75	156.65
14.	सम्पूर्ण बोया गया क्षेत्रफल	खरीफ	726303	678469	638023
		रबी	479260	453934	425094
		जायद	27982	36631	33213
		गन्ने के लिए प्रयुक्त क्षेत्रफल	994	663	504
15.	योग		1234539	1169697	1096834

स्रोत–Directorate of Economics and Statistics, Dehradun

मृदा वह प्राकृतिक पिण्ड है जो विच्छेदित एवं अपक्षयित चट्टानों व कार्बनिक पदार्थों के विगलन से निर्मित पदार्थों के परिवर्तनशील मिश्रण से बनती है।जिसमें खनिज, जैव पदार्थ, जल व वायु के अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म जीव पाये जाते है। भिन्न जगहों की मृदाओं में इन के अनुपात अलग–अलग पायें जातें है।इस आधार पर भारत में मृदा को आठ भागों (जलोढ, लाल, काली, लैटराइट, मरूस्थलीय, पर्वतीय, पीट व दलदलीय तथा लवणीय एवं क्षारीय) में विभक्त है। उत्तराखण्ड की मृदा पर्वतीय है जो अभी अविकसित अवस्था में है।जिसमें जीवांश की अधिकता एवं फास्फोरस व चूना की कमी है।जिसें धरातलीय एवं जलवायु की भिन्नता के आधार पर निम्न भागों में विभाजित करतें है–

1. तराई मिट्टी
2. चारागाही मिट्टी
3. टर्शियरी मिट्टी
4. क्वार्ट्ज मिट्टी
5. ज्वालामुखी मिट्टी
6. दोमट मिट्टी
7. भूरी लाल–पीली मिट्टी
8. लाल मिट्टी
9. वन की भूरी मिट्टी
10. भस्मी मिट्टी
11. उच्चतम पर्वतीय छिछली मिट्टी
12. उच्च मैदानी मिट्टी
13. उप– पर्वतीय मृदा।

10.4.2 वन संसाधन

प्राकृतिक संसाधनों की श्रृंखला में वन संसाधनों का महत्वपूर्ण स्थान है। वन संसाधन एक राष्ट्र की अमूल्य सम्पत्ति होते हैं जो इसके विकास को आगे बढ़ाने में योगदान करते हैं। उत्तराखण्ड के लिए तो यह संसाधन विशेष महत्व रखते हैं। वन संसाधनों के महत्व के सम्बन्ध में श्री के0 एम0 मुन्शी ने लिखा है कि 'वृक्षों का अर्थ है जल, जल का अर्थ है रोटी और रोटी से हम जीवित रहते हैं।' पं0

जवाहरलाल नेहरू का कहना है कि 'एक उगता हुआ वृक्ष राष्ट्र की प्रगति का जीवित प्रतीक होता है।' भगवद्गीता में भी लिखा है कि 'वृक्ष हम सब लोगों को जीवन प्रदान करते हैं, इसलिए वृक्षों की रक्षा करनी चाहिए।'

प्रदेश में लगभग 64.8 प्रतिशत भाग (क्षेत्रफल – 34,651 वर्ग किलोमीटर) अभिलेखित वन क्षेत्र है, जबकि हरित आवरण केवल 45.79(क्षेत्रफल – 24,496 वर्ग किलोमीटर)प्रतिशत है।अभिलेखित वन क्षेत्रके 34,651 वर्ग किलोमीटर के अर्न्तगत तीन प्रकार के वनों– आरक्षित वन 71.11 प्रतिशत भाग (क्षेत्रफल – 24,643 वर्ग किलोमीटर),संरक्षित वन 28.30 प्रतिशत भाग (क्षेत्रफल – 9,885 वर्ग किलोमीटर) एवं शेष अवर्गीकृत वन 0.35 प्रतिशत भाग (क्षेत्रफल – 123 वर्ग किलोमीटर) में विभाजित किया जाता है। वनों के कारण उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था वन सम्पदा से भरपूर है। प्रदेश के वनों में विविध प्रकार की वनस्पतियाँ व वन्य जीव पाये जाते हैं।राज्य में सर्वाधिक वन क्षेत्रफल पौढ़ी और सबसे कम वन क्षेत्रफल उधम सिंह नगर का है।

राज्य में ऊँचाई बढ़ने के साथ–साथ वनों का क्षेत्र तथा उनका प्रतिशत पहले बढ़ता है फिर एक निश्चित ऊँचाई के बाद पुनः घटने लगता है।

- 300 मीटर से नीचे ऊँचाई वाले भागों में वनों का प्रतिशत 12.8 है।
- 300–600 मीटर के मध्य भागों में वनों का प्रतिशत 12.3 है।
- 600–1200 मीटर में वनों का प्रतिशत 16.3 है।
- 1200–1800 मीटर में वनों का प्रतिशत 22.3 है।
- 1800–3000 मीटर में वनों का प्रतिशत 28.8 है।
- 3000 मीटर से अधिक ऊँचाई पर केवल 7.5 प्रतिशत।

राज्य में वनों को आठ वर्गो में विभाजित किया गया है।

1. उपोष्ण कटिबन्धीय वन–ये वन 750 या 1200 मीटर से कम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में पाये जातें है, जिसमें साल,सेमल, हल्दू, खैर सीसू और बांस प्रमुख वृक्ष है।
2. उष्ण कटिबन्धीय शुष्क वन–ये वन 1500 मीटर से कम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में पाये जाते है जहां कम वर्षा होती है,जिसमें ढाक, सेमल, गूलर, जामुन व बेर प्रमुख वृक्ष है।
3. उष्ण कटिबन्धीय आर्द्र पतझड़ वन–ये वन 1500 मीटर तक ऊँचाई वाले शिवालिक श्रेणियों तथा दून घाटी क्षेत्रों में पाये जाते है, इन्हे मानसूनी वन भी कहा जाता है।सागौन,शहतूत, पलाश,अंजन,बहेडा प्रमुख वृक्ष है।
4. कोणधारी वन –ये वन 900 से 1800 मीटर ऊँचाई वाले क्षेत्रों में पाये जातें है, जिसमें चीड़ प्रमुख वृक्ष है।इन वनों में शुष्कता रहती है।
5. पर्वतीय शीतोष्ण वन –ये वन 1800 से 2700 मीटर ऊँचाई वाले क्षेत्रों में पाये जातें है, जिसमें स्प्रूस, सिलवर, फर, देवदार, साइप्रस तथा बांज प्रमुख वृक्ष है।
6. उप–एल्पाइन तथा एल्पाइन वन –ये वन 2700 मीटर से अधिक ऊँचाई वाले क्षेत्रों में पाये जातें है,जिनमें सिल्वर फर, ब्लू पाइन,दमवदारख बुरॉस तथा कम्पानुलाटस प्रमुख प्रजातियॉ है।ये वृक्ष तेल युक्त होते है तथा कच्चे भी जल जातें है।

7. एल्पाइन झाड़ियॉ तथा घास के मैदान –ये वनस्पतियॉ 3000 से 3600 की ऊॅचाई में पाई जाती है।झाड़ियों के साथ एल्पाइन वनस्पति भी बिखरे रूप में पाई जाती है, अधिक ऊॅचाई पर घास के मैदान मिलते है जिन्हें बुग्याल, पयार, मीडो या एल्पाइन पाश्चर कहा जाता है।
8. टुण्ड्रा तुल्य वनस्पातियॉ – 3600 से 4800 मीटर तक की ऊॅचाई में टुण्ड्रा तुल्य वनस्पातियॉ (घास, काई, लिचेन आदि)उगती है, जबकि इससे अधिक ऊॅचाई पर सदैव बर्फाच्छादन रहता है।

राज्य में वनों का प्रबन्धन चार विधियों से किया जाता है –

- वन विभागाधीन –राज्य के कुल वनों का 70.46 प्रतिशत भाग इसके आधीन आता है।
- राजस्व विभागाधीन –राज्य के कुल वनों का 13.76 प्रतिशत भाग इसके आधीन आता है।इन वनों में पशु वराने तथा लकड़ी कटाने की छूट होती है।
- वन पंचायताधीन –राज्य के कुल वनों का 15.32 प्रतिशत भाग इसके आधीन आता है।इन पर स्थानीय वन पंचायतों का नियंत्रण होता है।
- निजी व अन्य संस्थाधीन –राज्य के कुल वनों का 0.46 प्रतिशत भाग इसके आधीन आता है।

उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था में वनों का महत्व अथवा लाभ

उत्तराखण्ड में प्राप्त होने वाले वन अर्थव्यवस्था के लिए अति महत्वपूर्ण एवं लाभदायक हैं। इन वनों के विभिन्न लाभों को दो भागों में बॉटा जा सकता है :

(1) वनों के प्रत्यक्ष लाभ

- वन बहुमूल्य लकड़ियों के भण्डार हैं। इनसे हमें ईधन के लिए आवश्यक लकड़ी भी प्राप्त होती है।
- वन कागज, दियासलाई, कत्था आदि उद्योगों हेतु कच्चा माल उपलब्ध कराते हैं।
- वनों से सहायक उत्पादन के रूप में रबड़, तारपीन, गोंद, चन्दन, औषधियॉं, लाख आदि प्राप्त होती हैं।
- सरकार को वनों से राजस्व प्राप्त होता है जिससे राज्य आय में वृद्धि होती है।
- वनों से रोजगार एवं निर्यात में वृद्धि होती है जिससे विदेशी मुद्रा भी प्राप्त होती है।
- वनों से कृषि हेतु खाद एवं पशुओं हेतु चारा प्राप्त होता है।
- पशु–पक्षी विहार के लिए अनुकूल स्थान उपलब्ध होता है।

(2) वनों के अप्रत्यक्ष लाभ

- वन मिट्टी का कटाव एवं तेज हवाओं के वेग को रोकने में सहायक होते हैं।
- वन वर्षा में सहायक होते हैं। यह हवा में नमीं भी पहुंचाते हैं।
- वन भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि करते हैं।
- वन बाढ़ नियन्त्रण में सहायक होते हैं।
- वन जलवायु को शुद्ध रखते हैं एवं मानव जीवन की रक्षा करते हैं।
- वन पर्यावरण प्रदूषण को सन्तुलित बनाने में भी उपयोगी हैं।

- वन रेगिस्तान के प्रसार को रोकते हैं।
- वनों से प्राकृतिक सौन्दर्य में विस्तार होता है।

10.4.3 जल संसाधन

जल संसाधनों की आवश्यकता घरेलू (पीने व स्वच्छता के लिए), कृषि (सिंचाई), उद्योग, आदि में उपयोग के लिए होती है। इन जल संसाधनों की आवश्यकता सभी क्षेत्रों के लिए अपरिहार्य विद्युत उत्पादन के लिए भी होती है। प्रदेश में जल संसाधन प्रचुर मात्रा में होने के कारण यहाँ जल विद्युत परियोजनाओं को बढ़ावा दिया जा रहा है।

हिमनद प्रदेश की उन प्रमुख नदियों के स्रोत हैं जो निरन्तर जल प्रवाह बनाये रखती हैं। प्रदेश के प्रमुख हिमनद हैं –

- गंगोत्री हिमनद –उत्तरकाशी जिले में स्थित यह राज्यका सबसे बड़ा हिमनद है।यह 30 किमी. लम्बा व 2 किमी. चौड़ा है।इस हिमनद के गोमुख नामक स्थान से भागीरथी नदी निकलती है।
- पिण्डारीहिमनद –बागेश्वर , पिथौरागढ़ एवं चमोली जिले में स्थित राज्य का दूसरा बड़ा हिमनद है। यह 30 किमी. लम्बा व 400 मी. चौड़ा है। अलकनन्दा की सहायक पिण्डार नदी इसी से निकलती है।
- मिलन हिमनद –पिथौरागढ़ के मुनस्यारी तहसील में स्थित इस हिमनद की लम्बाई 16 किमी. है।इस हिमनद से पिण्डर की सहायक नदी मिलन व काली की सहायक गौरीगंगा नदियां निकलती है।
- खतलिंग हिमनद –केदारनाथ से लगभग 10 किमी. पश्चिम स्थित यह हिमनद जोगिन,स्फटिक प्रिस्वार, बार्त कौटर व कीर्ति स्तंभ चोटियों के मध्य में स्थित है। भिलंगना नदी इसी से निकलती है।
- चौराबाड़ी हिमनद –केदारनाथ मंदिर से लगभग से लगभग तीन किमी. पूर्व में स्थित इस हिमनद की लम्बाई 14 किमी. है।इस हिमनद सेअलकनन्दा की सहायक मदांकिनी नदी इसी से निकलती है।
- बंदरपुंछ हिमनद –यह हिमनद उत्तरकाशी जिले में बंदरपुंछ पर्वत के उत्तरी ढाल पर है। इसकी लम्बाई 12 किमी. है।

इसके अतिरिक्त रालम, सतोपंथ, यमुनोत्री, बद्रीनाथ, केदारनाथ,कफनी आदि अनेको हिमनद अवस्थित है।

उत्तराखण्ड अपार जल संसाधन से सम्पन्न राज्य है। भारत के सन्दर्भ में राज्य की सभी नदियां गंगा तंत्र का अंग है, परन्तु राज्य के सन्दर्भ में कई नदी तंत्र आते हैं, जिनमें प्रमुख हैं– गंगा तंत्र, यमुना तंत्र तथा काली तंत्र। प्रदेश की प्रमुख नदियाँ हैं – गंगा, यमुना, शारदा, रामगंगा, गोमती, भागीरथी, अलकनन्दा, मन्दाकिनी, भिलंगना, काली, कोसी, पश्चिमी रामगंगा, टोंस, सरयू, पिण्डर, धौलीगंगा, सौंग, घाघरा।

जल के प्रमुख स्रोत के रूप में यहाँ अनेक ताल,झीलें और खाल व कुण्ड हैं। यह प्रदेश झीलों व तालों के लिए प्रसिद्ध हैं, नैनीताल को झीलों की नगरी व सरोवर नगरी कहते है। प्रदेश के कुछ प्रमुख

ताल व झीलें हैं – नैनीताल, भीमताल, नौकुछियाताल, देवरीताल, मोहनताल, बेनीताल, सुखताल, सिद्धताल, द्रोणताल, केदारताल, कागभुसुंड ताल, शत्रुताल, वसूकी ताल, मालवा ताल, गिरीताल, सतोपंथ ताल, सहस्रताल, हेमकुण्ड लोकपाल, रूपकुण्ड, टिहरी झील, द्रोण सागर, गाँधी सागर, आदि।

जल संसाधनों का महत्व

उत्तराखण्ड के आर्थिक व सामाजिक विकास में जल संसाधन अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। मानव जीवन, कृषि, उद्योग, जहाजरानी आदि क्षेत्रों में भी जल संसाधनों का विशेष महत्व है। जल संसाधन के महत्व को समझते हुए उत्तराखण्ड सरकार के जल संसाधन विकास मंत्रालय ने अपने ई–मैसेज में लिखा है कि उत्तराखण्ड में प्राकृतिक संसाधनों प्रचुर एवं विविधपूर्ण भंडार है और जल भी उसमें से एक है। इसका विकास एवं प्रबन्धन कृषि उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। गरीबी में कमी, पर्यावरणीय और निरन्तर आर्थिक विकास के लिए जल प्रबन्धन महत्पूर्ण है। जल संसाधनों के महत्व को निम्नलिखित बिन्दुओं द्वारा बताया जा सकता है :

कृषि में महत्व : उत्तराखण्ड जैसे कृषि प्रधान प्रदेश में जल संसाधन बहुत महत्वपूर्ण हैं। यहां की लगभग 64 प्रतिशत आबादी रोजगार हेतु प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। कृषि के उत्पादन हेतु जल संसाधनों का होना अति आवश्यक है। परन्तु यहां मानसून निश्चित नहीं हैं। देश में प्रायः सूखा अथवा बाढ़ आने की सम्भावना बनी रहती है। ऐसे में जल का उचित प्रबन्धन एवं जल के अन्य स्रोतों का विकास किया जाना आवश्यक है जिससे कृषि उत्पादकता में वृद्धि सम्भव हो सके।

हरित क्रान्ति में महत्व : हरित क्रान्ति के अन्तर्गत विभिन्न फसलों के उत्पादन को बढ़ाने के लिए कृषि में यन्त्रीकरण, गहन खेती, बहु–फसली खेती आदि को अपनाया जाता हैं। इन सभी प्रयासों की सफलता हेतु सिंचाई के लिए जल साधनों का समुचित विकास किया जाना आवश्यक है। इस प्रकार, कहा जा सकता है कि हरित क्रान्ति की सफलता हेतु जल संसाधन महत्वपूर्ण हैं।

शक्ति के क्षेत्र में महत्व : वर्तमान दौर में विभिन्न कार्यों को सम्पन्न करने एवं विभिन्न आधुनिक सुविधाओं का उपभोग करने हेतु शक्ति की आवश्यक होती है। जल एक ऐसा संसाधन है जिसक उपयोग शक्ति के उत्पादन में भी किया जाता है। जल द्वारा शक्ति का उत्पादन करना अन्य शक्ति उत्पादन स्रोतों की तुलना में अधिक सस्ता होता है। स्वतन्त्रता के बाद से ही नदियों पर बड़े–बड़े बाँध (बहुउद्देशीय नदी परियोजनाएं) बनाकर शक्ति का उत्पादन किया जाता है।

उद्योगों के लिए महत्व : जल–विद्युत शक्ति के उपलब्ध हो जाने से शक्ति–चालित आधुनिक मशीनों, उपकरणों एवं यन्त्रों का प्रयोग सम्भव हुआ है। इससे कुटीर, लघु, एवं वृहद उद्योगों का तेजी से विकास करना सम्भव हुआ है। साथ ही कम समय और लागत में जल–विद्युत शक्ति को हजारों किलोमीटर दूर भेज सकना सम्भव होने के कारण उद्योगों के विकेन्द्रीकरण को प्रोत्साहन मिला है।

रोजगार के क्षेत्र में महत्व : जल संसाधन के कारण प्रदेश में रोजगार के अवसरों में वृद्धि होती है। जल संसाधन के उचित प्रबन्धन से कृषि उत्पादन बढ़ता है एवं उद्योगों को पर्याप्त मात्रा में कच्चा माल प्राप्त होता है जिससे उद्योग भी विकास करते हैं। इन सबके परिणामस्वरूप प्रदेश में रोजगार के अवसरों में वृद्धि होती है।

10.4.4 खनिज संसाधन

एक प्रदेश के आर्थिक विकास हेतु खनिज संसाधन बहुत महत्व रखते हैं। इसके महत्व को दृष्टिगत करते हुए खनिज संसाधनों को आधुनिक सभ्यता के विकास का आधार माना जाता है। खनिज संसाधन विभिन्न उद्योगों का आधार हैं साथ ही यह शक्ति में वृद्धि एवं सुरक्षा में सहायता करते हैं। मनुष्यों को प्राप्त होने वाली विभिन्न वस्तुओं में प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से खनिज संसाधनों का ही उपयोग किया जाता है। उत्तराखण्ड खनिज संसाधन की दृष्टि से एक मध्यम श्रेणी का राज्य है।यहॉ शिवालिक व लधु हिमालय श्रेणी के शैलों, दून तथा नदी घाटियों में खनिजव उपखनिज पाये जाते है।यद्यपि यहाँ खनिजों की उपलब्धता बहुत अधिक नहीं है, तथापि कुछ खनिज प्रचुर मात्रा में अवश्य पाये जाते हैं। राज्य में खनिजों के खोज, सर्वेक्षण आदि हेतु भूतत्व एवं खनिज कर्म निदेशालय का गठन किया गया है। राज्य में पाये जाने वाले प्रमुख खनिज व उपखनिज का विवरण सारणी 10.2 में व्यक्त किया जा रहा हैं, जों निम्नवत है–

सारणी 11.2 –उत्तराखण्ड के विभिन्न जिलों में पाये जाने वाले प्रमुख खनिज

जिला	पाये जाने वाले प्रमुख खनिज
चमोली	फॉस्फोराइट, टिन, जिप्सम, चूना–पत्थर।
छेहरादून	मैग्नेसाइट, सोप स्टोन, बेराइट्स, एंडालूसाइट, रॉक फास्फेट, सेलखड़ी, चूना–पत्थर, ताँबा, लौह अयस्क, डोलोमाइट, संगमरमर, फॉस्फोराइट।
हरिद्वार	फॉस्फोराइट।
पौड़ी गढ़वाल	मैग्नेसाइट, सोप स्टोन, चूना–पत्थर, ताँबा, लौह अयस्क, संगमरमर, फॉस्फोराइट, एस्बेस्टस।
रुद्रप्रयाग	फॉस्फोराइट।
टिहरी गढ़वाल	मैग्नेसाइट, सोप स्टोन, रॉक फास्फेट, सेलखड़ी, चूना–पत्थर, ताँबा, लौह अयस्क, डोलोमाइट, संगमरमर, फॉस्फोराइट, एस्बेस्टस, यूरेनियम, जिप्सम।
उत्तरकाशी	फॉस्फोराइट।
अल्मोड़ा	सेलखड़ी, ताँबा, फॉस्फोराइट, एस्बेस्टस, चाँदी।
चम्पावत	फॉस्फोराइट।
नैनीताल	मैग्नेसाइट, सोप स्टोन, सीसा, चूना–पत्थर, ताँबा, लौह अयस्क, फॉस्फोराइट।
पिथौरागढ़	सेलखड़ी, चूना–पत्थर, ताँबा, फॉस्फोराइट, संगमरमर, जिप्सम।
उधमसिंह नगर	फॉस्फोराइट,।

सारणी 11.2 में दिये गये खनिजों के अतिरिक्त भी अन्य खनिज यहाँ पाये जाते हैं। ये हैं – अभ्रक, ग्रेफाइट, शिलाजीत, पारा, सोना, गन्धक, आदि। प्रदेश के टिहरी गढ़वाल में यूरेनियम के भी संकेत प्राप्त हुए हैं। इन सबके अतिरिक्त रोड़ा, बजरी, रेता व पत्थर भी वनों के उप–खनिज के रूप में उपलब्ध होते हैं जिनका प्रयोग निर्माण उद्योग, कांच निर्माण उद्योग, सड़क निर्माण व जल संशोधन में किया जाता है।नवम्बर, 2000 में गठन के पश्चात राज्य सरकार ने 4 अप्रैल, 2001 को राज्य खनन

नीति घोषित की जिसके अनुसार, वन क्षेत्र में स्थित खदानों में खनन कार्य 'उत्तरांचल वन विकास निगम' तथा अन्य क्षेत्रों में खनन कार्य 'गढ़वाल मण्डल विकास निगम'तथा 'कुमाऊ मण्डल विकास निगम' द्वारा किया जाएगा।

अभ्यास प्रश्न

(अ) लघुउत्तरीय प्रश्न

1. प्राकृतिक संसाधनों से क्या आशय है ?

.....

.....

.....

.....

2. उत्तराखण्ड में जल संसाधन के महत्व को रेखांकित कीजिए।

.....

.....

.....

.....

3. उत्तराखण्ड में वन संसाधन पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

.....

4. उत्तराखण्ड में खनिज संसाधन की उपादेयता स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

5. उत्तराखण्ड में भू संसाधन पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

.....

6. राज्य में वनों का प्रबन्धनपर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

.....

7. उत्तराखण्ड मेंजल संसाधनों का महत्व पर प्रकाश डालिए।

.....

.....

.....

.....

(ब) रिक्त स्थान भरिए–

1. उत्तराखण्ड में लगभग .....प्रतिशत भाग मैदानी है।
2. उत्तराखण्ड का सर्वोच्च पर्वत शिखर.....है।
3. उत्तराखण्ड का राजकीय वन्य जीव है.....।
4. राज्य खनन नीति के अनुसार, वन क्षेत्र में स्थित खदानों में खनन कार्य ..... किया जाता है।
5. उत्तराखण्ड का राजकीय पक्षी है.....।
6. उत्तराखण्ड का राजकीय पुष्प है.....।

(स) सत्य/असत्य बताइए–

1. जल संसाधनों का नवीनीकरण होता है।
2. खनिज संसाधन प्रकृति की देन नहीं हैं।
3. 'हिमाद्रि' सर्वाधिक ऊँचाई पर स्थित क्षेत्र है।
4. उत्तराखण्ड जैव विविधता पूर्ण प्रदेश है।
5. बजरी व रेता वनों के उप–खनिजों के रूप में उपलब्ध होते हैं।
6. उत्तराखण्ड खनिज संसाधन की दृष्टि से एक मध्यम श्रेणी का राज्य है।
7. गंगोत्री राज्यका सबसे बड़ा हिमनद है।

(द) बहुविकल्पीय प्रश्न–

1. निम्न में से कौन सा संसाधन प्राकृतिक है?
   (अ) वन; (ब) खनिज; (स) जल; (द) उपर्युक्त सभी;
2. उत्तराखण्ड में मध्य हिमालय के वन कितनी ऊँचाई पर पाये जाते हैं?
   (अ) 600 से 1500 मीटर तक; (ब) 1500 से 2000 मीटर तक; (स) 2000 से 2500 मीटर तक; (द) 2500 मीटर से अधिक;
3. उत्तराखण्ड में कितने राष्ट्रीय उद्यान हैं? (अ)
   4; (ब) 5; (स) 6; (द) इनमें से कोई नहीं;
4. निम्नलिखित में से किस नदी का उद्गम उत्तराखण्ड में है?
   (अ) गोदावरी; (ब) गंगा; (स) ब्रह्मपुत्र; (द) इनमें से किसी का नहीं;
5. निम्न में से कौन सा राष्ट्रीय उद्यान उत्तराखण्ड में स्थित है?
   (अ) राजाजी; (ब) कार्बेट; (स) फूलों की घाटी; (द) उपर्युक्त सभी;
6. राज्य की प्रथम खनन नीति कब घोषित की गई।
   (अ) 4 मई, 2001 (ब) 4 जनवरी, 2001 (स) 4 जून, 2001 (द) 4 अप्रैल, 2001

10.7 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप यह जान चुके हैं किप्राकृतिक संसाधन, जो प्रकृति द्वारा मनुष्यों को निशुल्क प्राप्त होते हैं, एक प्रदेश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन संसाधनों की उपलब्धता ही प्रदेश की प्रगति को निर्धारित करती है। जो प्रदेश अच्छी तकनीक एवं

कुशल मानव शक्ति के सहयोग से प्राकृतिक संसाधनों का समुचित उपयोग करते हैं वे तीव्र गति से विकास करने में सफल होते हैं और जिन प्रदेशों में प्राकृतिक संसाधनों का उचित उपयोग नहीं हो पाता है, वे तेजी उन्नति नहीं कर पाते हैं। उत्तराखण्ड में विविध प्रकार के प्राकृतिक संसाधन पाये जाते हैं जैसे– भूमि संसाधन, वन संसाधन, जल संसाधन, खनिज संसाधन आदि। यह संसाधन कृषि कार्यों, सड़क, मकान, पार्क आदि के निर्माण में, विभिन्न उद्योगों में, औषधियों में, खाद एवं पशुओं के चारे में, बाढ़ नियन्त्रण में, मानव जीवन की रक्षा में, पर्यावरण प्रदूषण के सन्तुलन में आदि में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। इस आधार पर कहा जा सकता है कि प्राकृतिक संसाधन उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था के विकास की सुदृढ़ पृष्ठभूमि तैयार करते हैं।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् यह जान चुके हैं कि उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था को गतिशीलता प्रदान करने में प्राकृतिक संसाधनों की भूमिका काफी महत्वपूर्ण रही है । आज भारत की अर्थव्यवस्था में, उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था को उच्च स्थान पर विद्यमान है, तो इसका प्रमुख कारण है, यहां पर प्राकृतिक संसाधनों की प्रचुर मात्रा में उपलब्धता और उन प्राकृतिक संसाधनों का समुचित विदोहन करके अर्थव्यवस्था का विस्तार करना है।यहाँ ऊँचे हिमाच्छादित पर्वत शिखरों के साथ गहरी घाटियाँ व मैदान हैं। अनेक प्रकार के वनों के पाये जाने से यह प्रदेश जैव विविधता से भरपूर है। इनमें से कुछ स्थल राष्ट्रीय उद्यानों व वन्य जीव विहारों के रूप में संरक्षित हैं। प्रदेश में अनेक हिमनद, नदियाँ, ताल व झीलें हैं जो जल के प्रमुख स्रोत हैं ही, साथ में विद्युत उत्पादन में भी सहायक हैं। प्रदेश में अनेक प्रमुख खनिज भी पाये जाते हैं। यदि भूमि, वन, जल जैसे प्राकृतिक संसाधन न केवल अर्थव्यवस्था, अपितु हमारे जीवन का प्राणतत्व है । कोयला, पैट्रोलियम तथा विभिन्न प्रकार की धातुएं जैसे खनिज औद्योगिक क्षेत्र को संजीवनी प्रदान करते हैं ।इस आधार पर कहा जा सकता है कि उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था को बेहतर आकार प्रदान करने में यहां के प्राकृतिक संसाधनों की उपयोगिता स्वयंसिद्ध है ।

10.8 शब्दावली

अधः संरचना–यह आधार संरचना का समानार्थी है । प्रत्येक प्रदेश की अर्थव्यवस्था की उन्नति अधो–संरचनात्मक ढांचे की प्रगति पर ही निर्भर करती है ।

प्राकृतिक संसाधन–प्रकृति द्वारा प्रदान की गयी सुविधाओं (जिनके लिए हमें कोई मूल्य नहीं चुकाना पड़ता है) को प्राकृतिक संसाधन की संज्ञा दी जाती है । इस श्रेणी में भूमि, जलवायु, खनिज पदार्थ जैसे– पैट्रोलियम, कोयला, लोहा, तांबा, जस्ता, सोना, हीरा, चांदी आदि सम्मिलित हैं ।

नवीनीकरण होने योग्य प्राकृतिक संसाधन –प्रकृति में जिनका लगातार नवीनीकरण स्वयं होता रहता है।

नवीनीकरण न होने योग्य प्राकृतिक संसाधन – प्रकृति में जिनका नवीनीकरण नहीं होता है अर्थात् लगातार उपयोग होते रहने से ये संसाधन समाप्त हो जाते हैं।

खनिज–खनन से खनिज शब्द बना है । खनन का अर्थ है– खोदना। अतः जमीन की खुदाई करके प्राप्त किये जाने वाले पदार्थों को खनिज पदार्थ या खनिज तत्व कहा जाता है । पैट्रोलियम, धातुएं आदि को मूल रूप से जमीन को खोदकर ही निकाला जाता है । धरती के भीतर अनेक प्रकार के खनिज तत्व जगह–जगह भरे पड़े हैं । इसी आधार पर धरती को रत्नगर्भा भी कहा जाता है । ऐसा कोई स्थान नहीं जहां कोई न कोई तत्व धरती के अन्दर न हो ।

11.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

(अ) लघुउत्तरीय प्रश्न

1. देखिए 11.4, 2. देखिए 11.4.3, 3.देखिए 11.4.2, 4.देखिए 11.4.4, 5. देखिए 11.4.1, 6. देखिए 11.4.2,7.देखिए 11.4.3।

(ब) रिक्त स्थान भरिए–(1) 14, (2) नन्दा देवी, (3) कस्तूरी मृग, (4)'उत्तरांचल वन विकास निगम'(5) मोनाल, (6) ब्रह्मकमल,

(स) सत्य/असत्य बताइए– (1) सत्य, (2) असत्य, (3) सत्य, (4) सत्य, (5) सत्य,(6) सत्य,(7) सत्य।

(द) बहुविकल्पीय प्रश्न– (1) द, (2) स, (3) स, (4) ब, (5) द,(6) द।

10.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची व ई–लिंक्स

- Aggarwal, S.P. (ed.) (1995), *Uttarakhand: Past, Present and Future,* Concept Publishing Company, New Delhi.
- Dewan, M.L. & Jagdish Bahadur (eds.) (2005), *Uttaranchal: Vision and Action Programme*, Concept Publishing Company, New Delhi.
- Mehta, G.S. (1999), *Development of Uttarakhand: Issues and Perspectives*, APH Publishing Corporation, New Delhi.
- Pangtey, Yatendra Singh and others (2011), *Uttarakhand at a Glance 2010-11*, Directorate of Economics and Statistics, Dehradun.
- Planning Commission, Government of India (2009), *Uttarakhand Development Report*, Academic Foundation, New Delhi.
- Sati, V.P. & Kamlesh Kumar (2004), *Uttaranchal: Dilemma of Plenties and Scarcities*, Mittal Publications, New Delhi.
- अर्थ एवं सांख्यिकीय निदेशालय (2015), सांख्यिकीय डायरी 20015–16, उत्तराखण्ड सरकार ।
- अग्रवाल, चन्द्र मोहन (सम्पादक) (2004), *उत्तरांचल के सानिध्य में,* इंडियन पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली
- उत्तराखण्ड शासन (2010), *उत्तराखण्डः उत्कर्ष की ओर,* सूचना एवं लोक सम्पर्क विभाग, देहरादून।
- उत्तराखण्ड शासन (2010), *नई सोच, नई दिशा,* सूचना एवं लोक सम्पर्क विभाग, देहरादून।

10.11 सहायक उपयोगी/पाठ्य सामग्री

5. ओझा,शिव कुमार,(2016), उत्तराखण्डः एक समग्र अध्ययन् , बौद्धिक प्रकाशन, इलाहाबाद।

6. ठाकुर, सुदीप व अन्य (सम्पादक) (2010), *उत्तराखंड उदयः एक दशक की यात्रा (2000 से 2010),* अमर उजाला पब्लिकेशन्स लिमिटेड, नोएडा।

7. बलूनी, विद्या दत्त, *उत्तराखण्डः एक सम्पूर्ण अध्ययन,* अरिहन्त पब्लिकेशन्स (इ) प्रा लि, मेरठ।

8. पाण्डेय, अशोक कुमार, *उत्तरांचलः सम्पूर्ण अध्ययन*, उपकार प्रकाशन, आगरा।
9. सविता मोहन (2007), *उत्तराखण्डः समग्र अध्ययन,* तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली।

10.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. आर्थिक विकास व प्राकृतिक संसाधनों के मध्य सम्बन्ध की आलोचनात्मक विवेचना कीजिए।
2. उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था में प्राकृतिक संसाधनों की भूमिका को दर्शाइये।
3. उत्तराखण्ड के आर्थिक विकास में प्राकृतिक संसाधनों के महत्व की विवेचना कीजिए।
4. वनों के क्या लाभ हैं ? उत्तराखण्ड में वनों के वर्गीकरण पर प्रकाश डालिए।
5. 'उत्तराखण्ड में जल संसाधन' विषय पर एक निबन्ध लिखिए।
6. 'खनिज संसाधन आधुनिक सभ्यता के विकास का आधार हैं।' उत्तराखण्ड के सन्दर्भ में व्याख्या कीजिए।
7. उत्तराखण्ड में प्राकृतिक संसाधनों के संवर्द्धन व संरक्षण के लिए गए सरकारी प्रयासों कीआलोचनात्मक विवेचना कीजिए।

इकाई बारह : उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था की विशेषताएं

12.1 प्रस्तावना

12.2 उद्देश्य

12.3 उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था एक सामान्य परिचय

12.4 उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था मुख्य विशेषताएँ

12.4.1 आर्थिक प्रगति सम्बन्धी विशेषताएँ

12.4.2 कृषि सम्बन्धी विशेषताएँ

12.4.3 उद्योगों सम्बन्धी विशेषताएँ

12.4.4 अधोसंरचना सम्बन्धी विशेषताएँ

12.4.5 जनांककीय विशेषताएँ

12.4.6 पर्यटन सम्बन्धी विशेषताएँ

12.4.7 प्राकृतिक संसाधनों सम्बन्धी विशेषताएँ

12.4.8 अन्य विशेषताएँ

12.5 सारांश

12.6 शब्दावली

12.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

12.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

12.9 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री

12.10 निबन्धात्मक प्रश्न

12.1 प्रस्तावना

आधुनिंक उत्तराखण्ड में समाज और अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित यह बारहवीं इकाई है। इससे पहले की इकाईयों से आप उत्तराखण्ड की जनसंख्या एवं मानवीय संसाधन,गरीबी एवं बेरोजगारी, क्षेत्रीय असमानता एवं जनजातीय विकास और प्राकृतिक संसाधन के बारे में आप अध्ययन कर चुके है।

उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था देश की एक प्रमुख अर्थव्यवस्था है। इसका स्वरूप अत्यन्त व्यापक है तथा इसकी विविध विशेषताएं है। प्रस्तुत इकाई में उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित इन बिन्दुओं का विस्तार से विश्लेषण प्रस्तुत है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था की संरचना, स्वरूप, विशेषताओं एवं महत्व को समझ सकेंगें तथा उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था का समग्र विश्लेषण कर सकेंगे।

12.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप –

- बता सकेंगे कि उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था की संरचना किस प्रकार की है और समय के साथ इसमें क्या परिवर्तन आ रहें हैं।
- समझा सकेंगे कि आर्थिक विश्लेषण में उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था अर्थव्यवस्था का अध्ययन क्यों महत्वपूर्ण है।
- उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था की परम्परागत एवं नवीन विशेषताओं को श्रेणीबद्ध कर सकेंगे।
- समझा सकेंगे कि उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था कौन–कौन से परिवर्तन हुए है।

12.3 उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था : एक सामान्य परिचय

प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में होने वाली आर्थिक गतिविधियों का अध्ययन अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत किया जाता है। वास्तव में, अर्थव्यवस्था एक ऐसा ढ़ांचा है जिसके अन्तर्गत प्रदेश की आर्थिक क्रियाओं का संचालन किया जाता है। इसमें सभी क्षेत्रों द्वारा वस्तुओं एवं सेवाओं का उत्पादन करना, प्रदेश के लोगों द्वारा इनका उपभोग करना, लोगों को रोजगार प्रदान करना, निर्यात करना आदि को सम्मिलित किया जाता है।

आप जानते हैं कि 9 नवम्बर, 2000 ई0 को भारत के 27वे राज्य व 10वे हिमालय राज्य के रूप में उत्तरांचल का उदय हुआ। जिसे बाद में बदल कर उत्तराखण्ड कर दिया गया।

इस राज्य के उत्तर में चीन व पूर्व में नेपाल राष्ट्र स्थित हैं। भारत में इसकी सीमायें पश्चिम में हिमाचल प्रदेश तथा दक्षिण में उत्तर प्रदेश की सीमाओं से मिलती हैं। प्रशासनिक दृष्टि से राज्य में दो मंडल – गढ़वाल व कुमाऊँ हैं। गढ़वाल मंडल में कुल 7 जिले – चमोली, देहरादून, हरिद्वार, पौड़ी गढ़वाल, रुद्रप्रयाग, टिहरी गढ़वाल व उत्तरकाशी हैं जबकि कुमाऊँ मंडल में 6 जिले – अल्मोड़ा, बागेश्वर, चम्पावत, नैनीताल, पिथौरागढ़ व उधमसिंह नगर हैं। राज्य के अर्थ व सांख्यिकी निदेशालय के अनुसार, इस राज्य में 100 तहसील, 95 विकास खण्ड, 670 न्याय पंचायत, 7541 ग्राम पंचायत, 1 नगर निगम, 32 नगर पालिका परिषद्, 30 नगर पंचायत व 9 कैंटोनमेंट बोर्ड हैं।

12.4 उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्थाः मुख्य विशेषताएँ

अर्थव्यवस्था की संरचना से आशय एक अर्थव्यवस्था का उत्पादन के विभिन्न क्षेत्रों में वितरण से है। प्रदेश की अर्थव्यवस्था में विभिन्न क्षेत्रों जैसे– कृषि, उद्योग, बैंक, बीमा, परिवहन एवं अन्य सेवाओ आदि से सम्बन्धित क्रियाओं का संचालन होता है। उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था को अध्ययन की दृष्टि से क्रियाओं के आधार पर निम्नलिखित तीन भागों में बांटा जा सकता है :

प्राथमिक क्षेत्र (कृषि एवं सम्बद्व क्षेत्र)

उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था के प्राथमिक क्षेत्र के अन्तर्गत कृषि एवं कृषि से सम्बन्धित कार्यों को सम्मिलित किया जाता है। जैसे– पशुपालन, मछली पालन (मात्स्यिकी), वानिकी आदि।

द्वितीयक क्षेत्र (उद्योग क्षेत्र)

अर्थव्यवस्था के द्वितीयक क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के उद्योग (निवेश के आधार पर – लघु, मध्यम एवं वृहद उद्योग; स्वामित्व के आधार पर – सार्वजनिक एवं निजी उद्योग), निर्माण, गैस तथा विद्युत उत्पादन आदि को शामिल किया जाता है।

तृतीयक क्षेत्र (सेवा क्षेत्र)

तृतीयक क्षेत्र में विभिन्न प्रकार की सेवाओं जैसे– बैंक, बीमा, परिवहन, संचार, व्यापार, होटल, लोकप्रशासन, सामाजिक एवं वैयक्तिक सेवाएं आदि को सम्मिलित किया जाता है, इसी कारण से इसे सेवा क्षेत्र भी कहा जाता है। यह क्षेत्र अर्थव्यवस्था के प्राथमिक एवं द्वितीयक क्षेत्र के संचालन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था की संरचना को निम्नलिखित चित्र द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है:

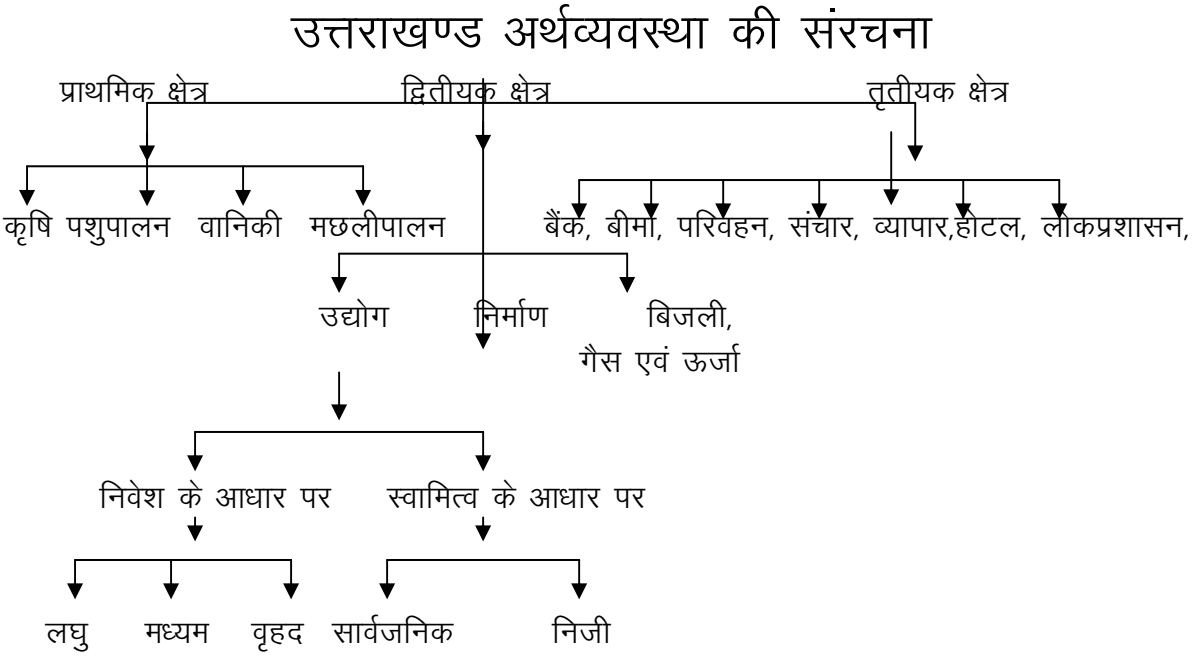

उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक परिवर्तन

जब प्रदेश में आर्थिक विकास की प्रक्रिया चलती है तो उसकी अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक परिवर्तन आते हैं। विकास की प्रारम्भिक अवस्था में प्रदेश की अधिकांश जनसंख्या प्राथमिक क्षेत्र में कार्य करती रहती है। जैसे–जैसे अर्थव्यवस्था का विकास होने लगता है, वैसे–वैसे जनसंख्या का अनुपात प्राथमिक क्षेत्र में कम तथा द्वितीयक एवं तृतीयक क्षेत्र में बढ़ने लगता है साथ ही राष्ट्रीय आय में द्वितीयक एवं तृतीयक क्षेत्र का योगदान में वृद्धि होती जाती है।

उत्तराखण्ड एक कृषि प्रधान प्रदेश है परन्तु आर्थिक नियोजन के कारण उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक परिवर्तन आये हैं। प्रदेश की प्रादेशिक कुल आय में प्राथमिक क्षेत्र के भाग में कमी हुई है जबकि द्वितीयक एवं तृतीयक क्षेत्र के भाग में बढ़ोत्तरी हुई है। इसे निम्नलिखित तालिका में देखा जा सकता है।

तालिका 12.1 : उत्तराखण्ड के सकल घरेलू उत्पाद में विभिन्न क्षेत्रों का योगदान(प्रतिशत में)

वर्ष	प्राथमिक क्षेत्र	द्वितीयक क्षेत्र	तृतीयक क्षेत्र
1999–2000	30.10	18.79	51.11
2009–10	16.97	33.86	49.17
2011–12	13.97	52.03	34.00
2012–13	13.18	53.17	33.65

2013–14	13.05	52.20	34.75
2014–15	11.74	52.19	36.07
2015–16	11.56	51.24	37.21

स्रोत–**Directorate of Economics and Statistics, Dehradun**

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि उत्तराखण्ड के सकल घरेलू उत्पाद में प्राथमिक क्षेत्र का योगदान अधिक था, परन्तु समयकाल में प्राथमिक क्षेत्र (कृषि एवं सम्बद्ध क्षेत्र) का भाग घटता जा रहा है जबकि द्वितीयक (उद्योग) एवं तृतीयक क्षेत्र (सेवा) का भाग बढ़ता चला जा रहा है। वर्ष 1999–2000 से 2009–10 की अवधि में उत्तराखण्ड के सकल घरेलू उत्पाद में प्राथमिक क्षेत्र का योगदान 30.10 प्रतिशत से कम होकर 16.97 प्रतिशत रह गया जबकि इसी अवधि में द्वितीयक एवं तृतीयक क्षेत्र का योगदान क्रमशः 18.79 प्रतिशत एवं 51.11 प्रतिशत से बढ़कर 33.86 प्रतिशत एवं कम होकर 49.17 प्रतिशत हो गया। यह उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था में होने वाले संरचनात्मक परिवर्तन को परिलक्षित करता है। अब आगे के अध्ययन में आप राज्य की अर्थव्यवस्था की मुख्य विशेषताओं को वर्गीकृत रूप में समझ सकेंगे।

12.4.1 आर्थिक प्रगति सम्बन्धी विशेषताएँ

राज्य में स्थापना के समय से ही आर्थिक विकास की ऊँची दर पाये जाने की प्रवृत्ति है। प्रदेश की आर्थिक विकास दर वर्ष 2000 में 2.9 प्रतिशत, 2012–13 में 7.42 प्रतिशत, 2013–14 में 7.25 प्रतिशत तथा 2014–15 में 7.33 प्रतिशत थी जबकि वर्ष 2015–16 में यह बढ़कर 7.65 प्रतिशत हो गयी।[1]जो यह व्यक्त कर रही है कि प्रदेश की विकास दर बढी परन्तु आगे चलकर वह स्थिर हो गयी।उत्तराखण्ड में प्रति व्यक्ति आय वर्ष 2000 में रुपया 15000, 2010–11 में रुपया 101128, 2012–13 में रुपया 114878, 2013–14 में रुपया 127861, 2014–15 में रुपया 139184 थी जबकि वर्ष 2015–16 में यह बढ़कर रुपया 154818 हो गयी।

प्रदेश में सभी क्षेत्रों का आर्थिक विकास में समान रुप से नहीं हुआ है। विशेषकर मैदानी व पर्वतीय क्षेत्रों में विकास की दृष्टि से भिन्नता पायी जाती है। देहरादून, हरिद्वार, उधमसिंह नगर व नैनीताल जिलों के आर्थिक विकास का स्तर अन्य पर्वतीय जिलों के विकास स्तर से बहुत अधिक है।
सकल राज्य घरेलू उत्पाद में क्षेत्रवार हिस्सेदारी की दृष्टि से आप सारणी 12.1 के विश्लेषण से यह स्पष्ट कर सकते हैं कि उत्तराखण्ड में प्राथमिक क्षेत्र की भागीदारी पहले की तुलना में लगातार घट ही रही है। वर्ष 1999–2000 में प्राथमिक क्षेत्र की हिस्सेदारी 30.10 से कम होकर 2015–16 में 13.07 रह गयी । द्वितीयक क्षेत्र की भागीदारी पहले की तुलना में तेजी से बढ़ी है। यह वर्ष 1999–2000 में 18.79, वर्ष 2009–10 में 33.86, वर्ष 2011–12 में 51.73, वर्ष 2014–15 में कम होकर 48.36 एवं 2015–16 में 46.48 रह गयी। तृतीयक क्षेत्र की भागीदारी पहले की तुलना में थोड़ी सी ही घटी है 2015–16 में यह 40.44 है।

सारणी 12.1 –उत्तराखण्ड के सकल राज्य घरेलू उत्पाद में विभिन्न क्षेत्रों की हिस्सेदारी (प्रतिशत में)

	1999–2000	2009–010	2011–12	2014–15	2015–16
प्राथमिक क्षेत्र	30.10	16.97	14.48	12.84	13.07
द्वितीयक क्षेत्र	18.79	33.86	51.73	48.36	46.48
तृतीयक क्षेत्र	51.11	49.17	33.80	38.80	40.44

स्रोत–Directorate of Economics and Statistics, Dehradun

12.4.2 कृषि सम्बन्धी विशेषताएँ

राज्य की अर्थव्यवस्था में कृषि रीढ़ के समान है। राज्य के 70 प्रतिशत व्यक्तियों की आजीविका कृषि या उससे जुड़े क्षेत्रों पर आधारित है। यहाँ दो प्रकार की खेती पायी जाती है – मैदानी व पर्वतीय। पर्वतीय क्षेत्रों में खेतों की सीढ़ी–नुमा संरचना का पायें जातें है। मैदानी क्षेत्रों में खेती आधुनिक

विधि सेएवं पर्वतीय क्षेत्रों में परम्परागत विधि से की जाती हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि कार्य के लिए आधुनिक तकनीक व आदाओं का अपनाया जाना सम्भव नहीं है। मैदानी क्षेत्र की कृषि पर हरित क्रान्ति का स्पष्ट प्रभाव है जबकि पर्वतीय कृषि भू–क्षरण की समस्या से ग्रस्त है।

सारणी 12.2 उत्तराखण्ड में भूमि उपयोगिता का वर्गीकरण

क्रम	विवरण		2004–05	2010–11	2014–15
16	भूमि उपयोगिता के लिए प्रतिवेदित क्षेत्रफल		5670110	5672636	5992604
17	वन		3465057	3484803	3799953
18	ऊसर और खेती के अयोग्य भूमि		311817	224764	228200
19	खेती के अतिरिक्त अन्य उपयोग में आने वाली भूमि		152180	217648	223792
20	कृष्य बेकार भूमि		386288	310390	316984
21	स्थाई चरागाह तथा अन्य चराई की भूमि		228944	198526	192077
22	अन्य वृक्ष झाडियो,बागों आदि का क्षेत्रफल जो वास्तविक बोयें गये क्षेत्रफल में सम्मिलित नहीं है।		248979	385548	387817
23	वर्तमान परती		41683	43295	57276
24	अन्य परती		68432	84498	86334
25	बोया गया वास्तविक क्षेत्रफल		766730	723164	701171
26	एक बार से अधिक बोया गया क्षेत्रफल		467809	446533	396663
27	सम्पूर्ण बोया गया क्षेत्रफल		1234539	1169697	1096834
28	फसल गहनता(प्रतिशत में)		161.01	161.75	156.65
29	सम्पूर्ण बोया गया क्षेत्रफल	खरीफ	726303	678469	638023
		रबी	479260	453934	425094
		जायद	27982	36631	33213
		गन्ने के लिए प्रयुक्त क्षेत्रफल	994	663	504
30	योग		1234539	1169697	1096834

स्रोत–**Directorate of Economics and Statistics, Dehradun**

सारणी 12.3 से स्पष्ट है कि यदि उत्तराखण्ड में कृषि क्षेत्र की विकास दर की तुलना राष्ट्रीय दर से की जाये तो आप पायेंगे कि राज्य की कृषि विकास दर राष्ट्रीय दर से बहुत कम है। परन्तु रोचक विशेषता यह है कि वर्ष 1999–2000 की तुलना में वर्ष 2008–2009 में राज्य की कृषि विकास दर में वृद्धि हुई है जबकि राष्ट्रीय कृषि विकास दर में भारी गिरावट हुई है।

सारणी 12.3–उत्तराखण्ड में विकास दर चालू मूल्य पर

	2012–13	2013–14	2014–15	2015–16
कृषि एवं सम्बद्व क्षेत्र	18.17	15.77	–7.94	14.70
राज्य घरेलू उत्पाद	14.42	12.75	10.05	12.63
प्रति व्यक्ति आय	12.90	11.25	8.58	11.73

स्रोत–**Directorate of Economics and Statistics, Dehradun**

बाजार दबावों के कारण पर्वतीय क्षेत्रों की परम्परागत कृषि पर आत्मनिर्भरता कम होती जा रही है। मैदानी क्षेत्रों में उत्पन्न होने वाले कृषि पदार्थों पर पर्वतीय व्यक्तियों की निर्भरता बढ़ती जा रही है। राज्य के हिमालय की तराई से बर्फ की पहाड़ियों तक फैला होने के कारण जलवायु में अत्यधिक विविधता पायी जाती है। इसलिए यहाँ जैव–विविधता भी अधिक है। उत्तराखण्ड कृषि जलवायु की दृष्टि से भारत सरकार द्वारा वर्गीकृत जोन–9 और जोन–14 का भाग है।

सारणी 12.4 – उत्तराखण्ड में राज्य घरेलू उत्पाद में धान्य दलहन तिलहन फसलों का योगदान (2004–05 के स्थिर मूल्यों पर)(लाख रु0 में)

फसल	2010–11	2011–12	2012–13	2013–14	2014–15
गेहूँ	77614	76603	74865	74021	79054
धान	53308	57650	57943	57510	60081
मण्डुवा	8576	9302	8433	8248	9061
सावा	3399	3903	3368	3217	3504
श्रामदाना	155	145	174	187	355
कुल धान्य	147977	152407	149588	148066	158443
कुल दालें	7777	8742	7845	10053	9705
कुल खाद्यान्न	155754	161149	157432	158118	168148
कुल तिलहन	3917	5001	5047	5213	5516
कृषि एवं कृषि से सम्बद्व घटक	837377	850144	885523	847709	871446

स्रोत–**Directorate of Economics and Statistics, Dehradun**

प्रदेश में अनाज, दालों, तिलहन, गन्ना फसलों के अतिरिक्त अनेक प्रकार की साग–सब्जियाँ, मसालें, फूल–फल व जड़ी–बूटियाँ उत्पादित किये जाते हैं। स्पष्ट है कि प्रदेश में अनाज सर्वाधिक क्षेत्रफल में उगाये जाते हैं। इसके बाद क्षेत्रफल की दृष्टि से गन्ना का स्थान है। दालों व तिलहन के बुआई क्षेत्रफल का स्थान क्रमशः तीसरा व चौथा है। प्रमुख अनाजों में मंडवा सर्वाधिक क्षेत्र में उगाया जाता है। दालों में बुआई क्षेत्रफल की दृष्टि से पहला स्थान उड़द का, दूसरा स्थान मसूर का व तीसरा स्थान कुल्थी का है। प्रमुख तिलहन फसलों में सरसों का बुआई क्षेत्रफल पहले स्थान पर व सोयाबीन का बुआई क्षेत्रफल दूसरे स्थान पर है। उत्पादकता की दृष्टि से गेहूँ की उत्पादकता पहले स्थान पर, चावल की उत्पादकता दूसरे स्थान पर व मक्का की उत्पादकता तीसरे स्थान पर है। चौथे स्थान पर मँडुआ की उत्पादकता है।पर्वतीय क्षेत्रों में परम्परागत फसलों की अधिकता है। यहाँ पर रासायनिक खादों का प्रयोग भी बहुत कम होता है। साथ ही पर्वतीय क्षेत्रों में यन्त्रीकरण भी अधिक नहीं किया जा सकता है। इसके बावजूद भी खाद्यान्न उत्पादन के मामले में उत्तराखण्ड आत्मनिर्भर है और कृषि एवं बागवानी से जुड़े उद्योगों में लगभग पाँच लाख लोगों को रोजगार दिया जा रहा है।[1]

12.4.3 उद्योगों सम्बन्धी विशेषताएँ

यद्यपि उत्तराखण्ड के अधिकाँश भाग में पर्वत होने के कारण पहले उद्योगों की दृष्टि से अधिक विकास नहीं हो सका था, अब उत्तराखण्ड के उद्योग प्रदेश के आर्थिक ढाँचे का महत्त्वपूर्ण आधार हैं। अलग राज्य बनने के बाद प्राकृतिक और मानव संसाधनों के बेहतर प्रयोग द्वारा उत्तराखण्ड ने औद्योगिक विकास की दिशा में कदम बढ़ाने की शुरूआत की है। पिछले 17 वर्षों की निवेश की स्थिति पर नजर डालें, तो उत्तराखण्ड निवेशकों के लिए पंसदीदा स्थान बनकर सामने आया है।राज्य में सबसे ज्यादा निवेश बिजली उत्पादन तथा सेवा क्षेत्र में हुआ। कुल निवेश का 66 प्रतिशत बिजली में 23 प्रतिशत निर्माण तथा 11 प्रतिशत सेवा विनिर्माण तथा सिंचाई जैसे क्षेत्रों में किया गया।

नये राज्य के गठन के बाद उत्तराखण्ड में निवेश व उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए केन्द्र सरकार द्वारा उत्तराखण्ड को 1 अप्रैल 2001 में विशेष राज्य का दर्जा प्रदान किया गया। वर्ष 2002 में सिडकुल, उत्तराखण्ड इंफ्रास्ट्रक्चर विकास कम्पनी लिमिटेड, उत्तराखण्ड उद्योग संघ की स्थापना की गई और 2003 में टैक्स हॉलीडे जैसी नीतियों के कारण राज्य में औद्योगिक विकास की रफ्तार में तेजी आई। पंतनगर, हरिद्वार, कोटद्वार, सितारगंज आदि क्षेत्र नये औद्योगिक केन्द्रों के रूप में विकसित हुए। वर्ष 2002 में उत्तराखण्ड के औद्योगीकरण की गति तेज करने के लिए सरकारी उपक्रम के रूप में स्टेट इन्फ्रास्ट्रक्चर कॉर्पोरेशन ऑफ उत्तराखण्ड लिमिटेड (सिडकुल) अस्तित्व में आया। सिडकुल एकल खिड़की सुविधा प्रदान करने के लिए मॉडल एजेन्सी के रूप में भी कार्य करता है। इस समय प्रदेश में तीन एकीकृत औद्योगिक आस्थान (आई.आई.ई.) हैं जो हरिद्वार, पंतनगर और सितारगंज में स्थापित हैं।

इनके अतिरिक्त देहरादून में फार्मा सिटी व कोटद्वार में ग्रोथ सेन्टर भी स्थापित किया गया है। परिणामस्वरूप उत्तराखण्ड की औद्योगिक विकास दर जो वर्ष 2001–02 में 1.9 प्रतिशत थी, वर्ष 2015–16 में बढ़कर 6.52 प्रतिशत हो गयी। राज्य में उद्योगों व सरकार के बीच समन्वय का कार्य करने के लिए व औद्योगिक विकास को बढ़ावा देने के लिए 'कुमाऊँ गढ़वाल चैम्बर ऑफ कॉमर्स एण्ड इण्डस्ट्रीज' महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

केन्द्र सरकार द्वारा जनवरी 2003 में उत्तराखण्ड के लिए दिए गए टैक्स हॉलीडे पैकेज से आकर्षित होकर अनेक प्रमुख फर्मों ने उत्तराखण्ड में अपनी इकाईयाँ स्थापित की, यद्यपि इससे पहले उत्तराखण्ड में हरिद्वार के रानीपुर क्षेत्र में भारत हैवी इलैक्ट्रिकल्स लिमिटेड पहले ही स्थापित हो चुका था। वर्तमान में उत्तराखण्ड की ऑटो मोबाइल हब व फार्मा सिटी के रूप में पहचान बन चुकी है। एकीकृत औद्योगिक क्षेत्र हरिद्वार तथा उधमसिंहनगर जिला का पंतनगर औद्योगिक क्षेत्र निवेशकों का प्रमुख स्थान बनता जा रहा है। राज्य सरकार द्वारा एग्रो पार्क व खाद्य पार्क बनाने के लिए सहायता प्रदान की जा रही है। राज्य सरकार ने प्रदेश में सूचना एवं संचार तकनीक को बढ़ावा देने के लिए इसे उद्योग का दर्जा दिया है। भीमताल में एक आईटी इक्यूवेशन सेंटर विकसित किया जा रहा है। पंतनगर और रूड़की में भी आईटी पार्क विकसित किए जाने की योजना है। देहरादून में विश्व में पहले माईक्रोसॉफ्ट आईटी अकादमी की स्थापना की गई है।

इस प्रकार राज्य का औद्योगिक ढाँचा तीव्र गति से बदलाव के दौर से गुजर रहा है। राज्य में समुचित औद्योगिक वातावरण का विकास हो रहा है, साथ ही अन्य सुविधाओं जैसे, सस्ती बिजली, करो में छूट, सस्ते श्रम आदि के कारण अन्य निवेशक भी उत्तराखण्ड में निवेश हेतु प्रयास कर रहे है। जो प्रदेश की औद्योगिक संरचना के निर्माण में निर्णायक भूमिका अदा करेगें।

उत्तराखण्ड के औद्योगीकरण में खाद्य प्रसंस्करण बॉयोटेक्नोलॉजी, कृषि व सम्बन्धित, हस्तशिल्प, मिनरल वाटर, इलैक्ट्रानिक्स, इत्यादि से सम्बन्धित उद्योगों की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। उत्तराखण्ड में अनेक प्रकार के ग्रामीण व कुटीर उद्योग भी हैं जिनमें जूता–चप्पल उद्योग, दियासलाई उद्योग, गुड़ व खाण्डसारी उद्योग, ऊनी शॉल व अन्य वस्त्र उद्योग, रेशम उद्योग, मधुमक्खी पालन उद्योग आदि प्रमुख हैं।

12.4.4 अधोसंरचना सम्बन्धी विशेषताएँ

अधोसंरचना मुख्य रूप से दो प्रकार की होती हैं–सामाजिक व आर्थिक(भौतिक)। सामाजिक अधोसंरचना में शिक्षा व स्वास्थ्य से सम्बन्धित अधोसंरचना को सम्मिलित किया जाता है, जबकि भौतिक अधोसंरचना में संचार व यातायात, ऊर्जा, वित्तीय आदि सम्मिलित किये जाते हैं। ये अधोसंरचनाएँ आर्थिक विकास के लिए आधारभूत होती हैं। प्रदेश में विभिन्न क्षेत्रों में अधोसंरचनाओं की स्थिति लगातार सुधार रही है।

परिवहन व संचार

प्रदेश की पर्वतीय प्रकृति होने के कारण यहाँ सड़क यातायात मुख्य है। उत्तराखण्ड सड़कों की लम्बाई वर्ष 2014–15 में 40686 किमी है। प्रति लाख जनसंख्या पर 381.46किमी है।प्रदेश में सड़क परिवहन मुख्य रूप से उत्तराखण्ड परिवहन निगम, जे.एन.यू.आर.एम., जी.एम.ओ.यू. व के.एम.ओ.यू. द्वारा संचालित किया जाता है। सड़क यातायात में विभिन्न निजी पर्यटन एजेन्सियों के निजी वाहन व टैक्सियों की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। सड़क यातायात के अतिरिक्त रेल परिवहन व वायु परिवहन की सुविधा भी उपलब्ध है। प्रदेश में देहरादून, हरिद्वार, हल्द्वानी व काठगोदाम प्रमुख रेल स्टेशन हैं, जबकि जौलीग्राण्ट एवं पंत नगर प्रदेश का प्रमुख एयरपोर्ट है। संचार की दृष्टि से उत्तराखण्ड में बी.एस.एन.एल. व अन्य निजी संस्थाओं के टेलीफोन नेटवर्क का जाल बिछा हुआ है।

साक्षरता एवं शिक्षा

(1) (बेसिक व सैकेण्ड्री शिक्षा) स्कूल व कॉलेजों की संख्या – 22379; (2) (उच्च शिक्षा) स्नातक व स्नाकोत्तर कॉलेजों की संख्या – 106; केन्द्रीय विश्वविद्यालयों की संख्या – 01; राज्य विश्वविद्यालय – 06; निजी विश्वविद्यालय – 05; डीम्ड विश्वविद्यालय 04; आईआईटी – 01; (3) (व्यावसायिक व तकनीकी शिक्षा) औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों की संख्या – 06, पॉलीटैक्निक्स – 37; शिक्षा प्रशिक्षण के जिला संस्थानों की संख्या – 13 है।

साक्षरता (2011 में)	78.8
छात्र शिक्षक अनुपात(2014–15 में)	
प्राथमिक	19
बेसिक	19
हॉयर सेकेन्डरी	33
उच्च शिक्षा	116
प्रति लाख जनसंख्या विद्यालय की संख्या	
प्राथमिक	145
बेसिक	45
हॉयर सेकेन्डरी	32
उच्च शिक्षा	1

प्रदेश में देहरादून में भारतीय सैन्य अकादमी, भारतीय पैट्रोलियम संस्थान, भारतीय वानिकी संस्थान, नैनीताल में आर्य भट्ट अनुसंधान संस्थान, मसूरी में लाल बहादुर शास्त्री अकादमी, ऊधमसिंहनगर में में जी.बी. पंत विश्वविद्यालय, रूड़की में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान जैसे विशिष्ट शैक्षिक संस्थाएँ स्थापित हैं। विशेष बात यह है कि उत्तराखण्ड के शिक्षा हब में बदलने के बावजूद आवश्यकता की दृष्टि से इस अधोसंरचना में और अधिक सुधार किये जाने की आवश्यकता है।

स्वास्थ्य व परिवार कल्याण के क्षेत्र में वर्ष 2014 की स्थिति

प्रदेश में जिला अस्पतालों की संख्या – 12; जिला महिला अस्पतालों की संख्या – 07; बेस अस्पतालों की संख्या – 03; प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या – 258; सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या – 59; राज्य एलोपैथिक अस्पतालों की संख्या – 390; कुष्ठ रोगियों की लिए अस्पतालों की संख्या – 03; टी.बी. रोगियों के लिए अस्पतालों की संख्या – 18; आयुर्वेदिक व यूनानी अस्पतालों की संख्या – 545; होम्योपैथिक अस्पतालों व डिस्पैंसरी की संख्या – 107; महिला व बाल कल्याण केन्द्रों की संख्या – 02; व उपकेन्द्रों की संख्या – 1765; जबकि परिवार–कल्याण के मुख्य केन्द्रों की संख्या – 84;सरकारी अस्पतालों में प्रति लाख जनसंख्या पर उपलब्ध बेड की संख्या 86 है। इसके अतिरिक्त प्रदेश में सचल चिकित्सा व्यवस्था में आपातकालीन सेवा–108 भी उपलब्ध है।

स्वास्थ्य के क्षेत्र में यहाँ योग व आयुर्वेद के प्रचलन को देखते हुए उत्तराखण्ड 'आयुष प्रदेश' कहलाता है। परन्तु जनसंख्या व पर्वतीय क्षेत्र में चिकित्सा व स्वास्थ्य सम्बन्धी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए यह अधोसंरचना भी अपर्याप्त है।

ऊर्जा

अनेक छोटी–बड़ी जल–विद्युत परियोजनाओं व ऊर्जा उत्पादन की अपार सम्भावनाओं के कारण यह प्रदेश 'ऊर्जा–प्रदेश' कहलाता है। प्रदेश में विद्युत उत्पादन की स्थापित क्षमता वर्ष 2014–15 में 1290.10 मेगावाट थी। जिसके द्वारा 4348.95 मिलियन यूनिट विद्युत का उत्पादन किया गया। जो कि प्रदेश के विद्युत उपभोग 9184.36 मिलियन यूनिट से कम है। विद्युत की दृष्टि से उत्तराखण्ड अन्य प्रदेशों की तुलना में अधिक अच्छी स्थिति में है। प्रदेश में लगभग सभी क्षेत्रों में बिजली की सुविधा उपलब्ध है। उत्तराखण्ड में अनेक नदियों पर बड़े व छोटे बाँध बने हुए हैं। इनमें टिहरी बाँध सबसे बड़ा है। जिससे वर्ष 2006 में बिजली का उत्पादन प्रारम्भ हुआ। उत्तराखण्ड में विद्युत उत्पादन व वितरण के लिए उत्तरांचल पावर कार्पोरेशन लिमिटेड संस्था कार्य करती है।

वित्तीय क्षेत्र में– वर्ष 2009–10 में प्रदेश में राष्ट्रीयकृत बैंकों की 885 शाखायें, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की 184 शाखायें, अन्य निजी बैंकों की 112 शाखायें, 10 जिला सहकारी बैंक व इनकी 203 शाखायें कार्य कर रही थी।2014–15 में साख जमा अनुपात 34.12 है।

प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में– प्रदेश सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र में अग्रणी स्थान रखता है। विभिन्न शिक्षण संस्थाओं के माध्यम से कम्प्यूटर शिक्षा के लिए 'शिखर' व 'आरोही' परियोजनायें चलायी जा रही हैं तथा साथ ही यहाँ ई–गवर्नेंस पर बल दिया जा रहा है। विश्व की पहली माइक्रोसोफ्ट आई.टी. अकादमी देहरादून में स्थापित की गयी है।

12.4.5 जनांककीय विशेषताएँ

आप इस तथ्य से परिचित होंगे कि उत्तराखण्ड राज्य की स्थापना हुई तो वर्ष 1991 के ऑकडो के आधर पर राज्य की जनसंख्या 71,13,483 थी।यह उस समय भारत की कुल जनसंख्या (84,64,21,039) का 0.84 प्रतिशत थी।वर्ष 2001 में हुई जनगणना के अनुसार राज्य की जनसंख्या 84,89,349 थी। यह उस समय भारत की कुल जनसंख्या (1,02,87,37,436) का 0.83 प्रतिशत थी। परन्तु वर्ष 2011 में हुई जनगणना के अनन्तिम परिणामों के अनुसार राज्य की जनसंख्या 1,01,16,752 हो गयी जो भारत की कुल जनसंख्या (1,21,01,93,422) का 0.84 प्रतिशत है। यह जानने योग्य तथ्य है कि कुल जनसंख्या की दृष्टि से भारत के सभी राज्यों में उत्तराखण्ड के 20वें स्थान में अभी कोई परिवर्तन नहीं हुआ है।

उत्तराखण्ड में जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर भारत की औसत दर से भी अधिक है।जबकि यह 1961–71 ,1981–91 एवं 1991–2001 मेंसम्पूर्ण भारत से कम रही। उत्तराखण्ड राज्य में दशकीय गिरावट सर्वाधिक 1981–1991 के दशक में (–4.32 प्रतिशत) थी जो 1991–2001 के दशक में (–2.74 प्रतिशत), 2001–2011 के दशक में (–1.24 प्रतिशत) रही ।सारणी 8.3 से यह जानकारी प्राप्त होती है कि दशक 2001–2011 में उत्तराखण्ड राज्य की जनसंख्या की औसत वार्षिक वृद्धि दर (1.77 प्रतिशत) दशक 1991–2001 में दर (1.87 प्रतिशत) की तुलना में कम रही। परन्तु यह गिरावट सम्पूर्ण भारत से कम रही। जहॉ दशक 2001–2011 में जनसंख्या की औसत वार्षिक वृद्धि दर (1.64 प्रतिशत) दशक 1991–2001 में दर (1.97 प्रतिशत) थी।

उत्तराखण्ड में दो मैदानी (हरिद्वार, ऊधमसिंह नगर), दो पर्वतीय–मैदानी (देहरादून, नैनीताल) व शेष नौ जिले पर्वतीय हैं। प्रदेश की लगभग आधी से अधिक जनसंख्या हरिद्वार, देहरादून व ऊधमसिंह नगर में निवास करती है। सभी 9 पर्वतीय जिलों में रहने वाली जनसंख्या का प्रदेश की कुल जनसंख्या से प्रतिशत वर्ष 1991 की तुलना में 2001 में तथा 2001 की तुलना में 2011 में कम हो रही है जो पर्वतीय क्षेत्रों से मैदानी क्षेत्रों की ओर पलायन को दर्शाता है। इसके अनेक कारण हैं, जैसे –भौतिक अद्योसंरचना का विकसित न होना, पर्वतीय क्षेत्रों में अत्यन्त कठिन व विषम भौगोलिक परिस्थितियाँ, भू–स्खलन व भू–क्षरण की समस्या में लगातार वृद्वि होना, अच्छे रोजगार व व्यवसाय के अवसर का समाप्त होना, कृषि की लाभदेयता का समाप्त होना व कुटीर ग्राम उद्योगों का समाप्त होना, स्वास्थ्य व चिकित्सा, यातायात, पेयजल आदि सुविधाओं का बहुत कम होना।

वर्ष 2011 की जनगणना के आधार पर उत्तराखण्ड की ग्रामीण जनसंख्या कुल जनसंख्या का 69.77 प्रतिशत है जोकि वर्ष 2001 में 74.41 प्रतिशत अर्थात 4.66 प्रतिशत कमी तथा नगरीय जनसंख्या वर्ष 2011 कुल जनसंख्या 30.23 प्रतिशत है जोकि वर्ष 2001 में 25.59 प्रतिशत थी, अर्थात 4.64 प्रतिशत की वृद्वि हुई।सारणी 8.7 में वर्ष 2011 एवं 2001 में उत्तराखण्ड के नगरीय व ग्रामीण जनसंख्या का कुल जनसंख्या से प्रतिशत एवं महिला पुरुष हिस्सेदारी को दर्शया गया है।

धर्म के आधार पर वितरण की दृष्टि से उत्तराखण्ड में हिन्दुओं की बहुत अधिकता है। जिनकी प्रतिशत संख्या वर्ष 2001 में 84.89 प्रतिशत से कम होकर वर्ष 2011 में 82.97 प्रतिशत ही रह गयी।वही मुस्लिम प्रतिशत जनसंख्या में वृद्वि हुई जो 2001 में 11.92 प्रतिशत से बढकर वर्ष 2011 में 13.95

प्रतिशत हो गयी। अर्थात हिन्दू जनसंख्या में 2001–2011 के दशक में 1.99 प्रतिशत की कमी तथा मुस्लिम जनसंख्या में 2001–2011 के दशक में 2.03 प्रतिशत की वृद्वि हुई। 2001–2011 के दशक में इसाई एवं अन्य व अवर्णित धर्म जनसंख्या के प्रतिशत में वृद्वि हुई।वही 2001–2011 के दशक में सिक्ख, बौद्ध एवं जैन की जनसंख्या के प्रतिशत में कमी हुई।

लिंगानुपात की दृष्टि से राज्य में वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार प्रति 1000 पुरूषों पर 963 स्त्रियाँ पायी गयी, जो कि सम्पूर्ण भारत के लिंगानुपात 940 स्त्रियाँ प्रति 1000 पुरूष से अधिक है।

प्रदेश में प्रभावी साक्षरता दर जो वर्ष 2001 में 71.62 प्रतिशत थी, वर्ष 2011 में बढ़कर 79.63 प्रतिशत(8.01 प्रतिशत की वृद्वि) हो गयी। परन्तु साक्षरता की स्थिति के आधार पर प्रदेश सम्पूर्ण देश में 14वें स्थान से खिसककर 17वें स्थान पर आ गया है। प्रदेश की साक्षरता दर देश की औसत साक्षरता दर से अधिक तो है परन्तु प्रदेश की स्त्रियों की साक्षरता दर पुरूषों की साक्षरता दर की तुलना में अभी भी कम है। सारणी 2.9 में प्रदेश की जिलेवार पुरूष व महिलाओं की साक्षरता दरों को दर्शाया गया है। वर्ष 2011 में सर्वाधिक साक्षरता जिला देहरादून (85.25 प्रतिशत), जबकि उधम सिंह नगर जिलें में न्यूनतम साक्षरता (74.44 प्रतिशत) दर्ज की गयी है।वर्ष 2011 में सर्वाधिक महिला साक्षरता जिला देहरादून (79.61 प्रतिशत), जबकि टिहरी गढवाल जिलें में न्यूनतम साक्षरता (61.77 प्रतिशत) दर्ज की गयी है।वर्ष 2011 में सर्वाधिक पुरुष साक्षरता जिला रुद्धप्रयाग (94.97 प्रतिशत), जबकि हरिद्वार जिलें में न्यूनतम साक्षरता (82.26 प्रतिशत) दर्ज की गयी है।

12.4.6 पर्यटन सम्बन्धी विशेषताएँ

उत्तराखण्ड में पर्यटन उद्योग की अपार एवं असीम सम्भावनायें है तथा पर्यटन उद्योग राज्य में आय के नये अवसरों को पैदा करने, रोजगार प्रदान करने, वाणिज्य तथा व्यापार में नई तीव्रता लाने के लिये, राज्य के राजस्व में त्रीव वृद्धि करने के साथ–साथ सामाजिक सांस्कृतिक ज्ञान के आदान–प्रदान का मुख्य माध्यम बनकर राज्य के आर्थिक विकास को नवीन गति प्रदान कर सकता है।उत्तराखण्ड में पर्यटन की प्रत्येक प्रकार की गतिविधियाँ पायी जाती हैं।ये मुख्य रुप से इस प्रकार हैं – धार्मिक पर्यटन, अवकाश पर्यटन, पर्यावरण एवं वन्य जीवन आधारित पर्यटन, साहसिक पर्यटन,धार्मिक यात्राएं आधारित पर्यटन, मेले व त्यौहार।

धार्मिक पर्यटन– देवभूमि के रूप में प्रसिद्ध यह राज्य ऐसी विशेषताओं को भी समेटे हुए है जो धार्मिक पर्यटन से सम्बन्धित हैं।यदि उत्तराखण्ड के पर्यटन की सम्भावनाओं पर विचार किया जाये तो सर्वप्रथम धार्मिक तथा तीर्थो के भ्रमण हेतु उत्तराखण्ड की ऐतिहासिक महत्व सामने आता है। राज्य में चार धाम बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री, यमनोत्री अनादि काल से यात्रियों एवं पर्यटकों का केन्द्र रहा है। पंचप्रयाग– देवप्रयाग, नन्दप्रयाग, रुद्रप्रयाग, कर्णप्रयाग और विष्णुप्रयाग अवस्थित है। अनेक मैदानी हरिद्वार, ऋषिकेश, पिरान–कलियर, लाखामण्डल आदि एवं पर्वतीय धार्मिक स्थलों हेमकुण्ड साहेब, मीठा रीठा साहिबा, नन्दा देवी, सोमेश्वर, बैजनाथ, कटारमल्ल सूर्य मन्दिर, चितई गोलू देवता, गणनाथ, जागेश्वर, बागनाथ, नैना देवी, श्रीपूर्णागिरी, नीलकण्ठ, आदि की यात्रा यहाँ के पर्यटन व्यवसाय का आधार है।

अवकाश पर्यटन– बर्फबारी के आकर्षण, प्राकृतिक सौन्दर्य व ग्रीष्म काल में ठंडे मौसम पाये जाने के कारण भारत का स्विटजर लैण्ड कौसानी, मुक्तेश्वर, विनसर, ग्वालदम, लोहाघाट, औली, पहाड़ों की रानी मसूरी, सरोवर नगरी नैनीताल, अल्मोड़ा, देहरादून, रानीखेत, पिथौरागढ़, आदि स्थल अवकाश के दौरान पर्यटकों के लिए आकर्षण का केन्द्र हैं।

राज्य में सरोवर नगरी नैनीताल, पहाड़ों की रानी मसूरी, भारत का स्विटजर लैण्ड कौसानी, अल्मोड़ा, फूलों की घाटी, पिथौरागढ़, रानीखेत, धनौल्टी जैसे कई विश्वविख्यात पर्यटन स्थल है जहाँ वर्ष भर सैलानी सामान्य तौर पर मनोरंजन एवं घूमने के दृष्टिकोण से आते है इसके अतिरिक्त राज्य में प्रथम वन्य जीवों के लिए विश्व प्रसिद्ध राष्ट्रीय उद्यान तथा टाईगर रिजर्व जिम कार्वेट राष्ट्रीय उद्यान समेत छः

राष्ट्रीय उद्यान अवस्थित है साथ ही अनेक वन जीव अभयारण्य है जिसमें दुर्लभ प्रजाति के पशु–पक्षी एवं पेड़–पौधे मौजूद है जो कि वर्ष भर सैलानियो के आकर्षण का केन्द्र बने रहते है।

पर्यावरण व वन्य जीवन पर आधारित पर्यटन– प्रदेश में प्रकृति व वन्य जीवन पर आधारित पर्यटन भी प्रमुख है। वन्य जीवों के लिए विश्व प्रसिद्ध राष्ट्रीय उद्यान तथा टाईगर रिजर्व जिम कार्वेट राष्ट्रीय उद्यान समेत छः राष्ट्रीय उद्यान अवस्थित है साथ ही अनेक वन जीव अभयारण्य है जिसमें दुर्लभ प्रजाति के पशु–पक्षी एवं पेड़–पौधे मौजूद है जो कि वर्ष भर सैलानियो के आकर्षण का केन्द्र बने रहते है। बड़ी संख्या में पर्यटक जिम कार्बेट पार्क, राजाजी नेशनल पार्क, फूलों की घाटी, आदि स्थलों की यात्रा करते हैं।

साहसिक पर्यटन(एडवेंचर टूरिज्म) – उत्तराखण्ड में पर्वतारोहण, रिवर राफ्टिंग, स्कींईग जैसे साहसिक पर्यटनों स्थलों की भरमार है। रिवर–राफ्टिंग, स्कीइंग, ट्रैकिंग, पैरा ग्लाइडिंग, आदि साहसिक खेल प्रदेश के पर्यटन में अपनी भूमिका निभा रहे हैं। हाल के वर्षों में, विश्वप्रसिद्ध स्कीईग केन्द्र औली एक महत्त्वपूर्ण पर्यटन स्थल के रूप में उभरा है। अलकनन्दा नदी में रिवर–राफ्टिंग पर्यटकों को अपनी और आकर्षित करती है।नेहरू पर्वतारोहण केन्द्र उत्तरकाशी, रिवर राफ्टिंग केन्द्र शिवपुरी अवस्थित है जो कि साहसिक पर्यटन एवं शीतकालीन खेलों के लिए विश्वविख्यात हैं। औली में प्रथम दक्षिण एशियाई शीतकालीन खेलों के आयोजन से राज्य की छवि साहसिक खेलों के क्षेत्र में पुनः प्रतिष्ठित हुयी है।

धार्मिक यात्राएं आधारित पर्यटन –कैलाश मानसरोवर यात्रा,नन्दा राजजात यात्रा,हिलजात्रा,द्यवोरा देव यात्रा, खतलिंग–रुद्रा देवी महायात्रा, सहस्र ताल–महाश्र ताल यात्रा और पंवाली कांठा–केदार यात्रा आदि।

मेले और पर्व – राज्य में नियमित रूप से आयोजित होने वाले अनेक बड़े व छोटे मेले तथा पर्व जहाँ एक ओर धार्मिक व सांस्कृतिक छटा बिखेरते हैं, वहीं दूसरी ओर उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था को व्यावसायिक दृष्टि से गति भी प्रदान करते हैं। जो मुख्य रुप में इस प्रकार है–नन्दा देवी मेला, जागेश्वर का श्रावणी मेला, उत्तरायणी मेला, श्रीपूर्णागिरी मेला ,बग्वाल मेला, जौलजीवी मेला, थल मेला, बिस्सू मेला, काशीपुर का चैती मेला, दनगल मेला, हरियाली पूडा मेला और जौनसार का नुणाई मेला प्रसिद्ध है। मेलों व पर्वों के दौरान पर्यटकों की संख्या बहुत अधिक बढ़ जाती है।

उत्तराखण्ड लोक गीत–संगीत, लोक नृत्यों जैसे झोड़ा, चौफला, छोलिया, रम्माण, चौचरी आदि सुदूर तक विख्यात है। यहाँ का परम्पारगत पहाड़ी खान–पान, वेश–भूषा, भाषा बोली आदि सभी अपने आप में आद्वितीय है जोकि पर्यटन को नया आयाम देकर विकास के नये अवसरों का मार्ग प्रशस्त कर सकता है। उत्तराखण्ड ईको टूरिज्म, बायोटूरिज्म की अपार संम्भावनायें हैं, चूँकि राज्य की स्वास्थ्यवर्धक जलवायु, वन तथा औषधीय उत्पाद एवं यहाँ की संस्कृति व आध्यात्मिकता के कारण राज्य योग, आयुर्वेद तथा प्राकृतिक चिकित्सा के केन्द्र के रूप में देशी ही नहीं बल्कि विदेशियों के मध्य तीव्रता के साथ आर्कषण का केन्द्र बनकर उभर रहा है। बाबा रामदेव द्वारा स्थापित पंतजलि योगपीठ हरिद्वार एवं महर्षि योगी द्वारा उत्तरकाशी में स्थापित योगपीठ का इस दिशा में उल्लेख किया जा सकता है।

उत्तराखण्ड पर्यटन विकास परिषद के अनुसार, वर्ष 2002–03 के दौरान प्रदेश के कुल 264 पर्यटन (तीर्थों सहित) स्थलों पर भारतीय पर्यटकों की संख्या 129.30 लाख व विदेशी पर्यटकों की संख्या 0.63 लाख थी। जो 2014–15 में भारतीय पर्यटकों की संख्या 293.74 लाख व विदेशी पर्यटकों की संख्या 1.11 लाख हो गयी। जबकि राष्ट्रीय पार्कों व वन्य–जीव विहारों में वर्ष 2002–03 के दौरान भारतीय पर्यटकों की संख्या 92 हजार थी। जो 2014–15 में भारतीय पर्यटकों की संख्या 323 हजार हो गयी।एक अध्ययन के आधार पर यह पाया गया है कि घरेलू पर्यटकों की संख्या के आधार पर उत्तराखण्ड हिमालयी राज्यों में प्रथम स्थान पर तथा देश के सभी राज्यों में सातवें स्थान पर है।

पर्यटन से जुड़ें क्षेंत्रो में होटल, रेस्टोरेन्ट, पर्यटन वाहन, टैन्टनुमा आवासीय योजनायें, टूरिस्ट गाईड, पर्वतारोहण के संस्थान एवं प्रशिक्षक, साहसिक खेलों की परियोजनायें तथा उक्त के लिये मानव

संसाधनों का विकास आदि ऐसे क्षेत्र है जिनसे न केवल स्थानीय लोगों को आय तथा रोजगार के नये अवसर मिल सकते है अपितु यहाँ पर पलायन जैसी समस्या को भी नियत्रिंत किया जा सकता है। उत्तराखण्ड में पर्यटक सुविधाओं की स्थिति का वर्ष 2014 के ऑकडों के आधार पर विश्लेषण करे तो पता चलता है कि उत्तराखण्ड में विकसित पर्यटक स्थल 3217 , पर्यटक विश्राम गृह 175 तथा रैन बसेरों की संख्या 32 थी। उत्तराखण्ड के समान भौगोलिक, सांस्कृतिक परिवेश वाले पड़ोसी राज्य हिमाचल में पर्यटन की स्थिति उत्तराखण्ड की तुलना में काफी बेहतर है। अतः यदि राज्य को पर्यटन के माध्यम से आर्थिक विकास को तीव्र करना है तो पर्यटन हेतु बुनियादी सुविधाओं का विस्तार नितान्त आवश्यक होगा।

12.4.7 प्राकृतिक संसाधनों सम्बन्धी विशेषताएँ

प्राकृतिक संसाधनों में मुख्य रूप से भूमि, वन, जल, मत्स्य, खनिज आदि को सम्मिलित किया जाता है। इस राज्य का कुल भूमि क्षेत्रफल 53483 वर्ग किलोमीटर है। राज्य का लगभग 86 प्रतिशत भाग पर्वतीय (क्षेत्रफल – 46035 वर्ग किलामीटर) तथा शेष भाग मैदानी होने के कारण यह राज्य प्रमुख रूप से पर्वतीय है। भू क्षेत्रफल की दृष्टि से यह भारत का 18वा सबसे बड़ा राज्य है। इसकी स्थलाकृति अत्यन्त विविध व कठिन है। हरिद्वार, उधमसिंह नगर तथा देहरादून व नैनीताल के कुछ भागों को छोड़कर शेष क्षेत्र पर्वतीय है। राज्य का लगभग 86 प्रतिशत भाग पर्वतीय (क्षेत्रफल – 46035 वर्ग किलामीटर) तथा शेष भाग मैदानी है। यहाँ एक ओर ऊँचे पर्वत, वहीं दूसरी ओर गहरी घाटियाँ भी हैं। अनेक हिमनद, गहरी नदियाँ व तेज गति से बहती धाराएँ हैं। बर्फीली चोटियों के साथ गर्म मैदानी स्थल हैं।

भू–संरचना, धरातल की ऊँचाई, आदि के आधार पर प्रदेश को निम्न भागों में विभाजित किया जा सकता है – तराई, भावर व शिवालिक (संयुक्त औसत धरातलीय ऊँचाई – 300 से 3000 मीटर), हिमाचल (औसत धरातलीय ऊँचाई – 2000 से 3000 मीटर), हिमाद्रि (औसत धरातलीय ऊँचाई – 3000 से 7600 मीटर)। शिवालिक, हिमाचल व हिमाद्रि भागों को मिलाकर यह भाग कुमाऊँ हिमालय कहलाता है। शिवालिक के दक्षिण में निचले चपटे व गहरे क्षेत्र को दून कहते हैं। विश्व की सर्वोच्च पर्वत शिखरों में से कुछ इस प्रदेश में पाये जाते हैं। इनमें से प्रमुख हैं – नन्दा देवी (7817 मीटर), कामेट (7756 मीटर), बद्रीनाथ (7138 मीटर)।राज्य में बर्फीले क्षेत्रों के कारण हिम–नद भी पाये जाते हैं। ये हिम–नद राज्य की उन प्रमुख नदियों के स्रोत हैं जो निरन्तर जल प्रवाह बनाये रखते हैं।अधिकांश भू–भाग पर्वतीय होने के कारण पर्वतीय क्षेत्रों में न तो कृषि उत्पादन के लिए आधुनिक तकनीक व आदाओं का अपनाया जाना सम्भव है और न ही बड़े उद्योगों को स्थापित किया जा सकता है।कुल क्षेत्र का 12.81 भाग पर कृषि की जाती है।जिसके 46.27 प्रतिशत भाग पर ही सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है। फसल गहनता 161 प्रतिशत से अधिक है।

सारणी 12.5 –उत्तराखण्ड के विभिन्न जिलों में पाये जाने वाले प्रमुख खनिज

जिला	पाये जाने वाले प्रमुख खनिज
चमोली	फॉस्फोराइट, जिप्सम, चूना–पत्थर
छेहरादून	मैग्नेसाइट, सोप स्टोन, बेराइट्स, एंडालूसाइट, रॉक फास्फेट, सेलखड़ी, चूना–पत्थर, ताँबा, लौह अयस्क, डोलोमाइट, संगमरमर, फॉस्फोराइट
हरिद्वार	फॉस्फोराइट
पौड़ी गढ़वाल	मैग्नेसाइट, सोप स्टोन, चूना–पत्थर, ताँबा, लौह अयस्क, संगमरमर, फॉस्फोराइट, एस्बेस्टस
रुद्रप्रयाग	फॉस्फोराइट
टिहरी गढ़वाल	मैग्नेसाइट, सोप स्टोन, रॉक फास्फेट, सेलखड़ी, चूना–पत्थर, ताँबा, लौह अयस्क, डोलोमाइट, संगमरमर, फॉस्फोराइट, एस्बेस्टस, जिप्सम
उत्तरकाशी	फॉस्फोराइट
अल्मोड़ा	सेलखड़ी, ताँबा, फॉस्फोराइट, एस्बेस्टस, चाँदी

चम्पावत	फॉस्फोराइट
नैनीताल	मैग्नेसाइट, सोप स्टोन, सीसा, चूना–पत्थर, ताँबा, लौह अयस्क, फॉस्फोराइट,
पिथौरागढ़	सेलखड़ी, चूना–पत्थर, ताँबा, फॉस्फोराइट, संगमरमर, जिप्सम
उधमसिंह नगर	फॉस्फोराइट,

स्रोतः बलूनी, विद्या दत्त, *उत्तराखण्डः एक सम्पूर्ण अध्ययन,* अरिहन्त पब्लिकेशन्स (इ) प्रा लि, मेरठ

सारणी 12.5 में दिये गये खनिजों के अतिरिक्त भी अन्य खनिज यहाँ पाये जाते हैं। ये हैं – अभ्रक, ग्रेफाइट, शिलाजीत, पारा, सोना, गन्धक, आदि। प्रदेश में यूरेनियम के भी संकेत प्राप्त हुए हैं। इन सबके अतिरिक्त रोड़ा, बजरी, रेता व पत्थर भी वनों के उप–खनिज के रूप में उपलब्ध होते हैं जिनका प्रयोग निर्माण उद्योग, कांच निर्माण उद्योग, सड़क निर्माण व जल संशोधन में किया जाता है।देहरादून में भारतीय खान ब्यूरो का प्रादेशिक कार्यालय भी है।

प्रदेश में लगभग 63.41 प्रतिशत भाग (क्षेत्रफल – 3799953 हेक्टेयर) अभिलेखित वन क्षेत्र है, जबकि हरित आवरण केवल 45.7 प्रतिशत है। शेष क्षेत्र बर्फ से ढका हुआ, बुग्यालों के अधीन, चट्टानी बलुवी नदी तट, जलमग्न होने के कारण वनों से आच्छादित नहीं है। वनों के कारण उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था वन सम्पदा से भरपूर है। वन क्षेत्र सभी को प्राण वायु भी देता है। इसलिए प्रदेश में इतने भू–भाग के वन क्षेत्र होने के कारण उत्तराखण्ड का पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से देश मे प्रथम स्थान है। इतना होते हुए भी, विकास की अंधी दौड़ के कारण वनों के अत्याधिक कटान से प्रदेश में भू–क्षरण की गंभीर समस्या उत्पन्न हो गयी है।

अभ्यास प्रश्न

लघुउत्तरीय प्रश्न

1. उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था की संरचना को स्पष्ट कीजिए।

   .....

   .....

   .....

   .....

2. उत्तराखण्ड के सकल राज्य घरेलू उत्पाद में क्षेत्रवार हिस्सेदारी की संक्षिप्त विवेचना कीजिए।

   .....

   .....

   .....

   .....

3. उत्तराखण्ड की कृषि सम्बन्धी विशेषताएँ पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

   .....

   .....

   .....

   .....

4. उत्तराखण्ड की सामाजिक अधोसंरचनाकी संक्षिप्त विवेचना कीजिए।

   .....

   .....

   .....

   .....

5. उत्तराखण्ड की जनांककीय विशेषताओं की संक्षिप्त विवेचना कीजिए।

.....

.....

.....

.....

6. उत्तराखण्ड कीपर्यटन सम्बन्धी विशेषताएँपर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

.....

रिक्त स्थान भरिए।

1. उत्तराखण्ड के सकल राज्य घरेलू उत्पाद में वर्ष 2015–16 में प्राथमिक क्षेत्र का योगदान ..... है।
2. उत्तराखण्ड में सबसे बड़ा बाँध ..... है।
3. प्रदेश का सबसे बड़ा हवाई अड्डा ..... में स्थित है।
4. उत्तराखण्ड में तीर्थों सहित कुल पर्यटन स्थलों की संख्या ..... है।
5. उत्तराखण्ड में चार धामों के नाम हैं ..... ।
6. उत्तराखण्ड में हरित आवरण प्रदेश के कुल क्षेत्रफल का ..... .प्रतिशत है।

बहुविकल्पीय प्रश्न।

1. वर्ष 2015–16 में उत्तराखण्ड में प्रति व्यक्ति आय है–

(क) 154818 (ख) 123410 (ग) 101218 (घ) इनमें से कोई नहीं

2. उत्तराखण्ड में कृषि व उससे जुड़े क्षेत्रों में आजीविका के लिए निर्भर रहने वाले व्यक्तियों का प्रतिशत है–

(क) 82 प्रतिशत (ख) 65 प्रतिशत (ग) 67 प्रतिशत (घ) 70 प्रतिशत

3.वर्ष 2010–11 में उत्तराखण्ड में औद्योगिक विकास दर थी–

(क) 24 प्रतिशत (ख) 32 प्रतिशत (ग) 51 प्रतिशत (घ) 26 प्रतिशत

4.उत्तराखण्ड की जनसंख्या का देश की जनसंख्या में निम्न में से कौन सा स्थान है–

(क) 17वा (ख) 20वां (ग) 25वा (घ) इनमें से कोई नहीं

5.वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार, उत्तराखण्ड में प्रभावी साक्षरता दर है–

(क) 46.32 प्रतिशत (ख) 74.04 प्रतिशत (ग) 79.63 प्रतिशत (घ) इनमें से कोई नहीं

सत्य–असत्य बताइए।

1. देहरादून, हरिद्वार, उधमसिंह नगर व नैनीताल जिलों के आर्थिक विकास का स्तर अन्य पर्वतीय जिलों के विकास स्तर से बहुत अधिक है।(सत्य/असत्य)
2. उत्तराखण्ड के कृषि क्षेत्र की विकास दर राष्ट्रीय दर से कम है। (सत्य/असत्य)
3. भारत हैवी इलैक्ट्रिकल्स लिमिटेड रानीपुर, हरिद्वार में स्थित है। (सत्य/असत्य)
4. विभिन्न प्रकार के उद्योग उत्तराखण्ड में मैदानी व पर्वतीय क्षेत्रों में समान रूप से स्थापित हैं। (सत्य/असत्य)
5. घरेलू पर्यटकों की संख्या के आधार पर उत्तराखण्ड हिमालयी राज्यों की तुलना में प्रथम स्थान पर है। (सत्य/असत्य)
6. मुख्य रुप से उत्तराखण्ड राज्य पर्वतीय है। (सत्य/असत्य)

एक शब्द में उत्तर दीजिए–

1. वर्ष 2002 में उत्तराखण्ड में उद्योगों की गति तेज करने के लिए कौन सा सरकारी उपक्रम अस्तित्व में आया ?
2. उत्तराखण्ड को 'ऊर्जा प्रदेश' क्यों कहते हैं ?

12.5 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान चुके हैं कि उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था एक मिश्रित व विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था है। अच्छे भौगोलिक वातावरण, प्राकृतिक संसाधनों, यथा– भूमि तथा मिट्टियां; वन संसाधन, जल संसाधन, खनिज संसाधन, शक्ति के संसाधनों, मानव संसाधन, कृषि व सिंचाई, उद्योग एवं परिवहन आदि के कारण प्रदेश को विकसित राज्य का स्वरूप प्रदान करते है। दूसरी ओर बेरोजगारी, गरीबी, कृषि पर निर्भरता, प्रति व्यक्ति निम्न आय, ग्रामीण अर्थव्यवस्था, औद्योगिक पिछड़ापन, पूंजी का अभाव, तथा रूढ़िवादिता ऐसी प्रमुख विशेषताएं हैं जो इससे पिछडा राज्य बनाए हुए हैं।प्रदेश की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार पर्यटन है।मुख्य रूप से इस पर्वतीय राज्य में प्रति व्यक्ति आय अधिक होने के बावजूद विकास के लाभ पर्वतीय क्षेत्रों को कम मिले हैं। व्यावसायिक संरचना उद्योग व सेवा क्षेत्रों के पक्ष में है। अर्थव्यवस्था के मुख्य आधार कृषि में अनेक मुख्य फसलें हैं। परन्तु अधिकतर जोतों का आकार छोटा है। प्रदेश में अनेक छोटे–बड़े उद्योगों हैं यद्यपि ये मैदानी क्षेत्रों में ही अधिक स्थापित हुए हैं। इस आयुष प्रदेश में विविध प्रकार के प्राकृतिक संसाधन हैं जिसमें वन, जल व खनिज प्रमुख हैं।देवताओं के निवास कहे जाने वाले इस प्रदेश में धार्मिक यात्रायें व मेंले अर्थव्यवस्था को गति प्रदान करते हैं। सम्पूर्ण देश की तुलना में प्रदेश की जनसंख्या वृद्धि दर अधिक होते हुए भी जनसंख्या घनत्व राष्ट्रीय स्तर से कम है परन्तु साक्षरता दर अधिक है। जनसंख्या वास्तविक सम्पदा के क्षेत्र में आशातीत प्रगति हुई है। रोजगार की तलाश में सुरक्षा बलों में जाने व मैदान की ओर स्थानान्तरण करने से पर्वतीय अर्थव्यवस्था अभी भी मनीऑर्डर अर्थव्यवस्था कहलाती है। इस इकाई के अध्ययन से आप उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था के स्वरूप एवं इसकी विभिन्न विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे।

12.6 शब्दावली

वर्ग किलोमीटरः–1 किलोमीटर लम्बा तथा 1 किलोमीटर चौड़ाई वाला वर्गाकार क्षेत्र।

जनसंख्या का घनत्वः–इसका तात्पर्य है कि 1 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में निवास करने वाले लोगों की संख्या।

सकल घरेलू राज्य उत्पादः– राज्य की भौगोलिक सीमाओं के अन्दर एक वित्तीय वर्ष में उत्पादित अन्तिम वस्तुओं व सेवाओं का मौद्रिक मूल्य से है।

सकल घरेलू उत्पाद :– सकल घरेलू उत्पाद राष्ट्रीय आय लेखांकन का एक रूप है। किसी देश में किसी वर्ष में उत्पादित समस्त अन्तिम वस्तुओं और सेवाओं के मौद्रिक मूल्य के योग को सकल घरेलू उत्पाद कहा जाता है। इसमें विदेशों से अर्जित आय शामिल नहीं है।

प्रति व्यक्ति आय :– प्रति व्यक्ति आय से अर्थ देश के लोगों की औसत आय से है। यह एक देश की राष्ट्रीय आय में उस देश की कुल जनसंख्या का भाग देकर निकाली जाती है। इसके आधार पर उस देश के लागों के जीवन–स्तर का अनुमान लगाया जाता है।

समावेशी विकास :– समावेशी विकास से आशय है कि देश की विकास प्रक्रिया में जो क्षेत्र एवं वर्ग छूट गये हैं, उन्हें प्राथमिकता देकर विकास की मुख्यधारा में लाना जिससे सभी क्षेत्रों एवं वर्गों का समान विकास सम्भव हो सके।

वैश्वीकरण :– वैश्वीकरण वह प्रक्रिया है जिसमें विश्व की विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं का आपस में जुढ़ाव हो जाता है। इससे विश्व के विभिन्न देशों के बीच वस्तुओं एवं सेवाओं, पूंजी, तकनीक एवं श्रम का निर्बाध प्रवाह होने लगता है।

12.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

लघुउत्तरीय प्रश्न

1–12.4 देखिए, 2–12.4.1 देखिए, 3–12.4.2 देखिए, 4–12.4.4 देखिए, 5–12.4.5 देखिए, 6–12.4.6 देखिए,

रिक्त स्थान भरिए। 1– 11.56, 2–टिहरी बाँध, 3–जौलीग्राण्ट, 4– 264, 5–बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री, यमनोत्री, 6–45.7 प्रतिशत से अधिक।

बहुविकल्पीय प्रश्न।

1. क.154818, 2. ख–70 प्रतिशत, 3.घ–26 प्रतिशत 4.ख– 20 वां 5. ग–79.63 प्रतिशत।

सत्य–असत्य बताइए।

1.सत्य 2.सत्य 3.सत्य 4.असत्य 5.असत्य 6.सत्य।

एक शब्द में उत्तर दीजिए–

(1) स्टेट इन्फ्रास्ट्रक्चर कॉर्पोरेशन ऑफ उत्तराखण्ड लिमिटेड (सिडकुल);

(2) बहुत अधिक संख्या में जल–विद्युत परियोजनाओं व ऊर्जा उत्पादन की अपार सम्भावनाओं के कारण यह प्रदेश 'ऊर्जा प्रदेश' कहलाता है।

12.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- Aggarwal, S.P. (ed.) (1995), *Uttarakhand: Past, Present and Future,* Concept Publishing Company, New Delhi.
- Dewan, M.L. & Jagdish Bahadur (eds.) (2005), *Uttaranchal: Vision and Action Programme*, Concept Publishing Company, New Delhi.
- Mehta, G.S. (1999), *Development of Uttarakhand: Issues and Perspectives*, APH Publishing Corporation, New Delhi.
- Pangtey, Yatendra Singh and others (2011), *Uttarakhand at a Glance 2010-11*, Directorate of Economics and Statistics, Dehradun.
- Pant, J.C., (2001), Uttaranchal: A perspective; Bureaucratic Constraints vs Health, Population and Development, India Literacy Board, Lucknow.
- Planning Commission, Government of India (2009), *Uttarakhand Development Report*, Academic Foundation, New Delhi.
- Sati, V.P. & Kamlesh Kumar (2004), *Uttaranchal: Dilemma of Plenties and Scarcities*, Mittal Publications, New Delhi.
- अग्रवाल, चन्द्र मोहन (सम्पादक) (2004), *उत्तरांचल के सानिध्य में,* इंडियन पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली।
- उत्तराखण्ड शासन (2010), *उत्तराखण्डः उत्कर्ष की ओर,* सूचना एवं लोक सम्पर्क विभाग, देहरादून।
- उत्तराखण्ड शासन (2010), *नई सोच, नई दिशा,* सूचना एवं लोक सम्पर्क विभाग, देहरादून उत्तराखण्ड सरकार।

12.9 सहायक/उपयोगी पाठ्यसामग्री

- ठाकुर, सुदीप व अन्य (सम्पादक) (2010), *उत्तराखंड उदयः एक दशक की यात्रा (2000 से 2010),* अमर उजाला पब्लिकेशन्स लिमिटेड, नोएडा।
- बलूनी, विद्या दत्त, *उत्तराखण्डः एक सम्पूर्ण अध्ययन,* अरिहन्त पब्लिकेशन्स (इ) प्रा लि, मेरठ।
- पाण्डेय, अशोक कुमार, *उत्तरांचलः सम्पूर्ण अध्ययन,* उपकार प्रकाशन, आगरा।
- सविता मोहन (2007), *उत्तराखण्डः समग्र अध्ययन,* तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली।

12.10 निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 1 : उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था की प्रमुख विशेषताओं की विस्तार से व्याख्या कीजिए।

प्रश्न 2 : उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था के संरचनात्मक परिर्वतन को समझाते हुए इसकी नवीन विशेषताओं की व्याख्या कीजिए।

प्रश्न 3 : उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था की संरचना को स्पष्ट करते हुए इसके पिछड़ेपन के कारणों पर प्रकाश डालिए।

प्रश्न 4 : '' उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था एक विकासशील अर्थव्यवस्था है।'' इस कथन की विवेचना कीजिए।

प्रश्न 5 : उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था की मूल विशेषताओं की व्याख्या कीजिए। आर्थिक नियोजन के फलस्वरूप उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था में क्या मूल परिवर्तन दिखाई देते हैं ?

इकाई–तेरह : उत्तराखण्डः पर्यटन उद्योग एवं पर्यावरण

13.1 प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 उत्तराखण्ड में पर्यटन उद्योग

- 13.3.1 धार्मिक पर्यटन
- 13.3.2 अवकाश पर्यटन
- 13.3.3 पर्यावरणव वन्य जीवन आधारित पर्यटन
- 13.3.4 साहसिक पर्यटन
- 13.3.5 धार्मिक यात्राएं
- 13.3.6 मेले और पर्व

13.4 पर्यटनउद्योग तथा आय के अवसर

13.5 पर्यटनउद्योग के विकास हेतु सरकारी प्रयास

13.6 पर्यटनउद्योगनीति

13.7 पर्यटन उद्योग की समस्यायें

13.8 पर्यटनउद्योगतथा पर्यावरण

13.9 पर्यावरण एवं विकास में अन्तर सम्बन्ध

13.10 पर्यावरण समस्यायें

13.11 सारांश

13.12 शब्दावली

13.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

13.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

13.15 सहायक उपयोगी सामग्री

13.16 निबन्धात्मक प्रश्न

13.1 प्रस्तावना

आधुनिंक उत्तराखण्ड में समाज और अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित यह 13वीं इकाई है। पूर्व कीइकाई से आपउत्तराखण्ड की जनसंख्या एवं मानवीय संसाधन,गरीबी एवं बेरोजगारी,क्षेत्रीय असमानता एवं जनजातीय विकास,उत्तराखण्ड प्राकृतिक संसाधनों औरउत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था के बारे में सामान्य जानकारी प्राप्त कर चुके है।

वर्तमान इकाई में हम पर्यटन उद्योग तथा पर्यावरण के विभिन्न आयामों के बारे में अध्ययन करेंगे। इकाई के प्रथम भाग में पर्यटन उद्योग तथा द्वितीय भाग में पर्यावरण के बारे में अध्ययन किया जायेगा। पर्यटन उद्योग राज्य में आय के नये अवसरों को पैदा करने, रोजगार प्रदान करने, वाणिज्य तथा व्यापार में नई तीव्रता लाने के लिये, राज्य के राजस्व में त्रीव वृद्धि करने के साथ–साथ सामाजिक सांस्कृतिक ज्ञान के आदान–प्रदान का मुख्य माध्यम बनकर राज्य के आर्थिक विकास को नवीन गति प्रदान कर सकता है।पर्यटन व इससे जुड़ी गतिविधियाँ इस राज्य की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार हैं।

उत्तराखण्ड मेंपर्यटन उद्योग की संरचना किस प्रकार की है और समय के साथ इसमें क्या परिवर्तन आ रहें हैं।उत्तराखण्ड के आर्थिक विकासहेतु पर्यटन उद्योग का अध्ययन क्यों महत्वपूर्ण है, इसकी जानकारी होगी।साथ हीपर्यटन उद्योग का विकास किस प्रकार हो रहा है यह बता सकेगें।पर्यटन उद्योग की मुख्य समस्यायें कौन सी है तथा सरकार की पर्यटन नीति क्या है इसकी विवेचना की गई है। पर्यावरण की विभिन्न आयामों के आधार पर चर्चा के साथ में पर्यटन एवं पर्यावरण में अन्तर सम्बन्धों का प्रस्तुतीकरण किया गया है।

13.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप –

- बता सकेंगे कि उत्तराखण्ड मेंपर्यटन उद्योग की संरचना किस प्रकार की है और समय के साथ इसमें क्या परिवर्तन आ रहें हैं।
- समझा सकेंगे किउत्तराखण्ड के आर्थिक विकासहेतु पर्यटन उद्योग का अध्ययन क्यों महत्वपूर्ण है।
- समझा सकेंगे कि उत्तराखण्ड मेंपर्यटन उद्योगके द्वारा रोजगार तथा आय के अवसर कैसे प्राप्त किये जा सकते है।
- पर्यटन उद्योग से विकास की क्या सम्भावनाओ की चर्चा कर सकेगें।
- पर्यटन एवं पर्यावरण में अन्तर सम्बन्धों को स्पष्ट कर सकेगें।
- पर्यटन उद्योग की मुख्य समस्यायें कौन सी है तथा सरकार की पर्यटन नीति क्या है इसकी विवेचना कर सकते है।
- पर्यावरण की विभिन्न आयामों के आधार पर चर्चा कर सकेगें।

13.3 उत्तराखण्ड में पर्यटन उद्योग

उत्तराखण्ड में पर्यटन उद्योग की अपार एवं असीम सम्भावनायें है तथा पर्यटन उद्योग राज्य में आय के नये अवसरों को पैदा करने, रोजगार प्रदान करने, वाणिज्य तथा व्यापार में नई तीव्रता लाने के लिये, राज्य के राजस्व में त्रीव वृद्धि करने के साथ–साथ सामाजिक सांस्कृतिक ज्ञान के आदान–प्रदान का मुख्य माध्यम बनकर राज्य के आर्थिक विकास को नवीन गति प्रदान कर सकता है।पर्यटन व इससे जुड़ी गतिविधियाँ इस राज्य की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार हैं। यहां पर्यटन उद्योग राजस्व ही नहीं रोजगार का भी जारिया है। उत्तराखण्ड में पर्यटन की प्रत्येक प्रकार की गतिविधियाँ

पायी जाती हैं।ये मुख्य रुप से इस प्रकार हैं – धार्मिक पर्यटन, अवकाश पर्यटन, पर्यावरण एवं वन्य जीवन आधारित पर्यटन, साहसिक पर्यटन,धार्मिक यात्राएं आधारित पर्यटन,मेंलें व त्यौहार।

13.3.1 धार्मिक पर्यटन

देवभूमि के रूप में प्रसिद्ध यह राज्य ऐसी विशेषताओं को भी समेटे हुए है जो धार्मिक पर्यटन से सम्बन्धित हैं।यदि उत्तराखण्ड के पर्यटन की सम्भावनाओं पर विचार किया जाये तो सर्वप्रथम धार्मिक तथा तीर्थो के भ्रमण हेतु उत्तराखण्ड की ऐतिहासिक महत्व सामने आता है। राज्य में चार धाम बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री, यमनोत्री अनादि काल से यात्रियों एवं पर्यटकों का केन्द्र रहा है। पंचप्रयाग– देवप्रयाग,नन्दप्रयाग,रुद्रप्रयाग,कर्णप्रयाग और विष्णुप्रयाग अवस्थित है। अनेक मैदानी हरिद्वार, ऋषिकेश, पिरान–कलियर,लाखामण्डल आदिएवं पर्वतीय धार्मिक स्थलों हेमकुण्ड साहेब,मीठा रीठा साहिबा,नन्दा देवी,सोमेश्वर,बैजनाथ,कटारमल्ल सूर्य मन्दिर, चितई गोलू देवता,गणनाथ,जागेश्वर,बागनाथ, नैना देवी,श्रीपूर्णागिरी, नीलकण्ठ, आदि की यात्रा यहाँ के पर्यटन व्यवसाय का आधार है।

13.3.2 अवकाश पर्यटन

बर्फबारी के आकर्षण, प्राकृतिक सौन्दर्य व ग्रीष्म काल में ठंडे मौसम पाये जाने के कारणभारत का स्विटजर लैण्ड कौसानी, मुक्तेश्वर, विनसर, ग्वालदम, लोहाघाट, औली,पहाड़ों की रानी मसूरी, सरोवर नगरीनैनीताल, अल्मोड़ा, देहरादून, रानीखेत, पिथौरागढ़, आदि स्थल अवकाश के दौरान पर्यटकों के लिए आकर्षण का केन्द्र हैं।

राज्य में सरोवर नगरी नैनीताल, पहाड़ों की रानी मसूरी, भारत का स्विटजर लैण्ड कौसानी, अल्मोड़ा, फूलों की घाटी, पिथौरागढ़, रानीखेत, धनौल्टी जैसे कई विश्वविख्यात पर्यटन स्थल है जहाँ वर्ष भर सैलानी सामान्य तौर पर मनोरंजन एवं घूमने के दृष्टिकोण से आते है इसके अतिरिक्त राज्य में प्रथम वन्य जीवों के लिए विश्व प्रसिद्ध राष्ट्रीय उद्यान तथा टाईगर रिजर्व जिम कार्वेट राष्ट्रीय उद्यान समेत छः राष्ट्रीय उद्यान अवस्थित है साथ ही अनेक वन जीव अभयारण्य है जिसमें दुर्लभ प्रजाति के पशु–पक्षी एवं पेड़–पौधे मौजूद है जो कि वर्ष भर सैलानियो के आकर्षण का केन्द्र बने रहते है।

13.3.3 पर्यावरण व वन्य जीवन पर आधारित पर्यटन

प्रदेश में प्रकृति व वन्य जीवन पर आधारित पर्यटन भी प्रमुख है। वन्य जीवों के लिए विश्व प्रसिद्ध राष्ट्रीय उद्यान तथा टाईगर रिजर्व जिम कार्वेट राष्ट्रीय उद्यान समेत छः राष्ट्रीय उद्यान अवस्थित है साथ ही अनेक वन जीव अभयारण्य है जिसमें दुर्लभ प्रजाति के पशु–पक्षी एवं पेड़–पौधे मौजूद है जो कि वर्ष भर सैलानियो के आकर्षण का केन्द्र बने रहते है।बड़ी संख्या में पर्यटक जिम कार्बेट पार्क, राजाजी नेशनल पार्क, फूलों की घाटी, आदि स्थलों की यात्रा करते हैं।

13.3.4 साहसिक पर्यटन(एडवेंचर टूरिज्म)

उत्तराखण्ड में पर्वतारोहण, रिवर राफ्टिंग, स्कींईग जैसे साहसिक पर्यटनों स्थलों की भरमार है। रिवर–राफ्टिंग, स्कीइंग, ट्रैकिंग, पैरा ग्लाइडिंग, आदि साहसिक खेल प्रदेश के पर्यटन में अपनी भूमिका निभा रहे हैं। हाल के वर्षों में, विश्वप्रसिद्ध स्कीईग केन्द्र औली एक महत्त्वपूर्ण पर्यटन स्थल के रूप में उभरा है। अलकनन्दा नदी में रिवर–राफ्टिंग पर्यटकों को अपनी और आकर्षित करती है।नेहरू पर्वतारोहण केन्द्र उत्तरकाशी, रिवर राफ्टिंग केन्द्र शिवपुरी अवस्थित है जो कि साहसिक पर्यटन एवं शीतकालीन खेलों के लिए विश्वविख्यात हैं। औली में प्रथम दक्षिण एशियाई शीतकालीन खेलों के आयोजन से राज्य की छवि साहसिक खेलों के क्षेत्र में पुनः प्रतिष्ठित हुयी है।

13.3.5 धार्मिक यात्राएं आधारित पर्यटन

कैलाश मानसरोवर यात्रा,नन्दा राजजात यात्रा,हिलजात्रा,द्यवोरा देव यात्रा, खतलिंग–रुद्रा देवी महायात्रा, सहस्र ताल–महाश्र ताल यात्रा और पंवाली कांठा–केदार यात्रा आदि।

13.3.6 मेले और पर्व

राज्य में नियमित रूप से आयोजित होने वाले अनेक बड़े व छोटे मेले तथा पर्व जहाँ एक ओर धार्मिक व सांस्कृतिक छटा बिखेरते हैं, वहीं दूसरी ओर उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था को व्यावसायिक दृष्टि से गति भी प्रदान करते हैं।जो मुख्य रुप में इस प्रकार है–नन्दा देवी मेला, जागेश्वर का श्रावणी मेला, उत्तरायणी मेला, श्रीपूर्णागिरी मेला,बग्वाल मेला, जौलजीवी मेला,थल मेला, बिस्सू मेला, काशीपुर का चैती मेला,दनगल मेला, हरियाली पूडा मेला और जौनसार का नुणाई मेला प्रसिद्ध है। मेलों व पर्वों के दौरान पर्यटकों की संख्या बहुत अधिक बढ़ जाती है।

उत्तराखण्ड लोक गीत–संगीत, लोक नृत्यों जैसे झोड़ा, चौफला, छोलिया, रम्माण, चौचरी आदि सुदूर तक विख्यात है। यहाँ का परम्पारगत पहाड़ी खान–पान, वेश–भूषा, भाषा बोली आदि सभी अपने आप में आद्वितीय है जोकि पर्यटन को नया आयाम देकर विकास के नये अवसरों का मार्ग प्रशस्त कर सकता है। उत्तराखण्ड ईको टूरिज्म, बायोटूरिज्म की अपार संम्भावनायें हैं चूँकि राज्य की स्वास्थ्यवर्धक जलवायु, वन तथा औषधीय उत्पाद एवं यहाँ की संस्कृति व आध्यात्मिकता के कारण राज्य योग, आयुर्वेद तथा प्राकृतिक चिकित्सा के केन्द्र के रूप में देशी ही नहीं बल्कि विदेशियों के मध्य तीव्रता के साथ आर्कषण का केन्द्र बनकर उभर रहा है। बाबा रामदेव द्वारा स्थापित पंतजलि योगपीठ हरिद्वार एवं महर्षि योगी द्वारा उत्तरकाशी में स्थापित योगपीठ का इस दिशा में उल्लेख किया जा सकता है।

13.4 पर्यटनउद्योग तथा आय के अवसर

उत्तराखण्ड की भौगोलिक तथा जलवायुवीय परिस्थितियॉ विषम प्रकार की है जो राज्य में आय के अवसरों की तीव्रता से गति प्रदान करने के लिये तीव्र औद्योगीकरण एवं विनिमार्ण सम्बन्धी गतिविधियाँ पर ज्यादा जोर नहीं दिया जा सकता है। ऐसे में यहाँ के पर्यावरण के अनुरूप तथा राज्य की पर्यटन की दिशा में तुलनात्मक बढ़त को देखते हुए पर्यटन उद्योग राज्य में आयएवं रोजगार के नये अवसरों को पैदा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह कर सकता है।

उत्तराखण्ड पर्यटन विकास परिषद के अनुसार, वर्ष 2002–03 के दौरान प्रदेश के कुल 264 पर्यटन (तीर्थों सहित) स्थलों पर भारतीय पर्यटकों की संख्या 129.30 लाख व विदेशी पर्यटकों की संख्या 0.63 लाख थी। जो 2014–15 में भारतीय पर्यटकों की संख्या 293.74 लाख व विदेशी पर्यटकों की संख्या 1.11 लाख हो गयी। जबकि राष्ट्रीय पार्कों व वन्य–जीव विहारों में वर्ष 2002–03 के दौरान भारतीय पर्यटकों की संख्या 92 हजार थी। जो 2014–15 में भारतीय पर्यटकों की संख्या 323 हजार हो गयी।एक अध्ययन के आधार पर यह पाया गया है कि घरेलू पर्यटकों की संख्या के आधार पर उत्तराखण्ड हिमालयी राज्यों में प्रथम स्थान पर तथा देश के सभी राज्यों में सातवें स्थान पर है।

सारणी 13.1 उत्तराखण्ड में पर्यटकों की संख्या

(तीर्थयात्रियों सहित) (लाख में)

वर्ष	भारतीय	विदेशी	योग
2002–03	129.30	0.63	129.93
2003–04	138.30	0.75	139.05
2004–05	162.80	0.93	163.73
2005–06	193.58	0.96	194.54
2006–07	221.54	1.05	222.60

2007–08	230.64	1.12	231.76
2008–09	231.54	1.18	232.72
2009–10	309.72	1.36	311.08
2010–11	266.66	1.45	263.09
2011–12	282.93	1.41	284.34
2012–13	200.25	0.90	201.15
2013–14	225.25	1.10	226.35
2014–15	293.74	1.11	294.85

स्रोतः– उत्तराखण्ड पर्यटन विकास परिषद्

पर्यटन से जुड़ें क्षेंत्रो में होटल, रेस्टोरेन्ट, पर्यटन वाहन, टैन्टनुमा आवासीय योजनायें, टूरिस्ट गाईड, पर्वतारोहण के संस्थान एवं प्रशिक्षक, साहसिक खेलों की परियोजनायें तथा उक्त के लिये मानव संसाधनों का विकास आदि ऐसे क्षेत्र है जिनसे न केवल स्थानीय लोगों को आय तथा रोजगार के नये अवसर मिल सकते है अपितु यहाँ पर पलायन जैसी समस्या को भी नियत्रिंत किया जा सकता है। उत्तराखण्ड में पर्यटक सुविधाओं की स्थिति का वर्ष 2014 के ऑकडों के आधार पर विश्लेषण करे तो पता चलता है कि उत्तराखण्ड में विकसित पर्यटक स्थल 3217 , पर्यटक विश्राम गृह 175 तथा रैन बसेरों की संख्या 32 थी। उत्तराखण्ड के समान भौगोलिक, सांस्कृतिक परिवेश वाले पड़ोसी राज्य हिमाचल में पर्यटन की स्थिति उत्तराखण्ड की तुलना में काफी बेहतर है। अतः यदि राज्य को पर्यटन के माध्यम से आर्थिक विकास को तीव्र करना है तो पर्यटन हेतु बुनियादी सुविधाओं का विस्तार नितान्त आवश्यक होगा।

सारणी 13.2 उत्तराखण्ड पर्यटक सुविधाओं की स्थिति

विकसित पर्यटक स्थल	3217
पर्यटक विश्राम गृह	175
रैन बसेरा	32
पर्यटक विश्राम गृह में शैय्याएं	6142
रैन बसेरा में शैय्याए	1560
होटल तथा पेइंग गेस्ट हाउस	4436

स्रोतः– उत्तराखण्ड पर्यटन विकास परिषद्

उत्तराखण्ड में रिंगाल, बाँस, भगेंल, भॉग, ताँबे तथा काष्ठ से बने हस्त शिल्प उत्पाद एवं सीमावर्ती जिलों में ऊन से बने उत्पाद जिनमें कालीन, पश्मीना, कम्बल आदि अत्यधिक प्रसिद्ध है। साथ ही राज्य के स्थानीय जड़ी बूटी तथा फल–फूलों से तैयार परम्परागत खाद्य एवं पेय पदार्थ बोरॉस आदि काफी लोकप्रिय है। राज्य सरकार द्वारा स्थानीय कला कौशल से तैयार उत्पादों को बढ़ावा देने हेतु एवं उन्हे पर्यटन से जोड़ने के लिये महत्वपूर्ण पर्यटक स्थलों पर शिल्प ग्राम, पर्यटक हॉट विकसित किये जा रहे है तथा देहरादून में शहरी हॉण्ट को विकसित किया जा रहा है। राज्य में तथा राज्य के बाहर जैसा दिल्ली, सूरजकुंड(हरियाणा),पंजाब आदि स्थलों पर उत्तराखण्ड महोत्सव के माध्यम यहां के उत्पादों को

प्रचारित एवं प्रसारित किया जा रहा है, तथा उत्कृष्ट उत्पादों की छवि हेतु ''हिमाद्री'' ब्रांड को स्थापित किया जा रहा है।

13.5 पर्यटन उद्योग के विकास हेतु प्रयास

प्रदेश में पर्यटन की अपार संभावनाओं को विदोहित करने हेतु ठोस बुनियादी ढाँचें तथा सुविधाओं जैसे सड़क, रेल एवं वायु परिवहन तथा उत्तम विश्राम ग्रहों, संचार सुविधाओं आदि के विस्तार की नितांत आवश्यकता है। सरकार पर्यटन नीति के अनुरूप प्रदेश के पर्यटन विकास में विभिन्न विषयों के लिए ख्याति प्राप्त विषेशज्ञों का सहयोग लिया जा रहा है। प्रदेश में उत्तरांचल अवस्थापना विकास कम्पनी(U-DEC)देहरादूनएवं उत्तराखण्ड अवस्थापना विकास कम्पनी (UIDC) के माध्यम से उत्तराखण्ड में अवस्थापना सुविधाओं के सृजन हेतु पूँजी निवेशको को आमत्रित किया जा रहा है।जिसके लियें सरकारी प्रयास के साथ–साथ निजी क्षेत्रों की भागीदारी सुनिश्चित करने की आवश्यकता है।प्रदेश में पर्यटन के सुनियोजित एवं समेकित विकास हेतु विभिन्न क्षेत्रों के निए मास्टर प्लान तैयार करवाया गया जो निम्नवत है–

- चारधाम मास्टर प्लान
- पिथौरागढ–मुन्स्यारी पर्यटन सर्किट का मास्टर प्लान
- द्यारा बुग्याल का मास्टर प्लान
- टिहरी डैम के आस पास पर्यटन विकास हेतु मास्टर प्लान
- पौडी–खिर्सू–लैन्सडाउन पर्यटन सर्किट का मास्टर प्लान
- फूलों की घाटी एवं हेमकुण्ड साहिब की पर्यटन सर्किट का मास्टर प्लान

उसके अतिरिक्त विभिन्न वर्षों में इस दिशा में प्रदेश सरकार द्वारा निम्न प्रयास किये गयें है –

➢ स्थानीय जनता को पर्यटन की गतिविधियों जोड़ने एवं पर्यटकों के लिये गुणवत्तापरक सुविधाओं के विस्तार हेतु ''वीर चन्द्र सिंह गढवाली पर्यटन स्वरोजगार योजना'' 01 जून 2002 को आरम्भ की गयी है। इसके तहत् पर्यटन से जुड़ी योजनाओ जैसे होटल, रेस्तरां, टेन्टनुमा आवास, वाहन तथा अन्य सुविधाओं के विकास हेतु उद्यमियों को रू 10 लाख तक का ऋण पर्यटन विभाग बैकों के माध्यम से उपलब्ध करायेगा। जिसमें स्वीकृत धनराशि पर 20 प्रतिशत राजकीय सहायता भी प्रदान की जायेगी। विभिन्न वर्षों में योजना से सहायता प्राप्त उद्यमियों का विवरण तालिका 13.4 में दिया गया है।

तालिका 13.4 योजना में सहायता उद्यमियो की संख्या

वर्ष	उद्यमियो की संख्या
आरम्भ से वर्ष 2010 तक	2771
2012–13	342
2013–14	286
2014–15	228
2015–16	280

स्रोतः– उत्तराखण्ड पर्यटन विकास परिषद्

➢ राज्य में पर्यटन के विकास हेतु तथा पर्यटन उद्योग के नियमन के लिये पर्यटन विकास बोर्ड का गठन अधिनियम के तहत किया गया है।

➢ बेहतर सम्पर्क स्थापित करने हेतु गौचर(चमोली), चिन्याली सौड़(उत्तरकाशी), नैनी सैनी(पिथौरागढ़) में हवाई पटट्यिों को क्रियाशील कर विस्तारित किया गया है। पंतनगर तथा

जौलीग्रांट(देहरादून) हवाई अड्डो से उड़ानों को नियमित करने के साथ–साथ सुविधाओं का विस्तार किया जा रहा है।

- वर्ष 2012–13 में नई टिहरी में राजीव गॉधी साहसिक खेल अकादमी का शिलान्यास किया गया।
- वर्ष 2012–13 में औली में राष्ट्रीय स्कीइंग प्रतियोगिता का आयोजन किया गया।
- मई 2013 में ऋषिकेश में आफ मैराथन प्रतियोगिता का आयोजन किया गया।
- मई 2014 में ऋषिकेश एवं हरिद्वार में अन्तर्राष्ट्रीय योग महोत्सव का आयोजन किया गया।
- वर्ष 2014 एवं 2016 में ऋषिकेश में गंगा कयांकिगं उत्सव का आयोजन किया गया।
- विभिन्न पर्यटन स्थलों में अवस्थापना की सुविधाओं की सुविधओं के लिये 13 वें वित आयोग के माध्यम से अगले पाँच सालों में रू 100 करोड़ प्राप्त होगा तथा एशियन डेबलपमेन्ट बैंक से पर्यटन योजनाओं तथा सुविधओं के विस्तार हेतु रू 350 करोड़ की सहायता पर सैद्धान्तिक सहमति दी है।
- चार धाम विकास के लिये चार धाम विकास परिषद का गठन किया गया है।
- केदारनाथ तथा यमुनोत्री के पैदल मार्ग का सुद्दढीकरण एवं विस्तारीकरण तथा पूर्णगिरी, जानकी चट्टी, यमुनोत्री एवं मसूरी में रज्जू मार्गो का निर्माण किया जा रहा है।
- निजी क्षेत्र की भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु पर्यटन महायोजना पर आधारित रू 2000 करोड़ के पूँजी निवेश के माध्यम से पर्यटन योजनाओं की एक–एक श्रंखला तैयार की गयी है।
- पर्यटकों को उच्चस्तर की मार्गीय सुविधा उपलब्ध कराने के लिए लगभग 50 पर्यटन सूचना केन्द्र स्थापित किए जा चुके है।
- बृहद पर्यटन हबों की स्थापना जिसके अन्तर्गत रामनगर के निकट 802 एकड़ भूमि पर लगभग रू 500 करोड़ की कार्बेटइन्ट्री नामक ईको सिटी, मसूरी में ईको पार्क रिर्जोट टिहरी में पर्यटन झील स्थापना एवं नौकायन की सुविधा, दयारा बुग्याल में अर्न्तराष्ट्रीय स्तर का स्की रिर्जोट विकसित किया गया।
- कुभ की तर्ज पर आगामी ''नंदा देवी राजजात'' का आयोजन किया गया।
- भारत सरकार की सहायता से विभिन्न पर्यटन परिपथों का विस्तार किया जायेगा जिससे हरिद्वार–ऋषिकेश–मुनी की रेती–स्वर्गाश्रम में मेगा पर्यटन सर्किट सहित देहरादून–हरिद्वार पर्यटन सर्किट, गोविन्द घाट–धांधरिया–फूलों की घाटी–हेमकुण्ड सहित निर्मल गंगोत्री पर्यटन सर्किट पुरोला–नैटवाड़, खिर्सू–लैन्सडाउन–पौड़ी तथा कुमाऊ में भिकिया सैण–नीलेश्वरमंदिर,चौखुटिया–द्वारहाट,कौसानी–बागेश्वर,मुक्तेश्वर–भीमताल–सातताल–नैवकुचिय ाताल– हल्द्वाएनी, पिथोरागढ़–मुनस्यारी पर्यटन सर्किट तथा औली ईको टूरिज्म् के केन्द्र के रूप में विकसित किया गया है।
- तीर्थाटन, साहासिक पर्यटन, कला तथा संस्कृतिक पर्यटन तथा ईको पर्यटन पर विशेष समितियाँ गठित की गयी है।
- हैली सर्विसेज द्वारा देहरादून से हिमालय दर्शन एवं हल्द्वानी से झील दर्शन हेलीकाप्टर द्वारा कराया जा रहा है।
- नंदादेवी बायोस्फियर को इको टूरिज्म के तहत लाया गया।
- उत्तराखंड को पर्यंटन के मानचित्र पर लाने हेतु व्यापक प्रचार प्रसार किया जा रहा है। जिसके लिये प्रजार स्मारिका, इंटरनेट, बेवसाइट, सीडी रोम, प्रिंट तथा इलैक्ट्रोनिक मीडिया का

सहारा लिया जा रहा है साथ ही विभिन्न स्थानों जैसे दिल्ली, चेन्नई, सूरजकुंड में उत्तराखंड के महोत्सवों का आयोजन किया जा रहा है।

➢ देहरादून तथा अल्मोडा में राष्ट्रीय स्तर के कला एवं पर्यटन मेलों का आयोजन किया जाता है।

13.6 पर्यटन नीति

उत्तरांखण्ड में पर्यटन की अपार संभावनाओं को देखते हुये राज्य गठन के समय ही अंतरिम सरकार ने पर्यटन को सुनियोजित रूप से विकसित करने हेतु 26 अप्रैल 2001 को उत्तराखण्ड पर्यटन नीति की घोषणा किया। राज्य की पर्यटन नीति का मुख्य उद्देश्य विश्व के मानचित्र में उत्तरांखण्ड को महत्वपूर्ण पर्यटन स्थल के रूप में स्थापित करना है, इस नीति के मुख्य बिन्दु निम्नवत् है।

- उत्तरांखण्ड को पर्यटन प्रदेश के रूप में विकसित करना।
- पर्यटकों को आकर्षित करने के लिये यहाँ की सांस्कृतिक विविधताओं और सम्भावनाओ को सामने लाना।
- पर्यटन को पर्यावरण के अनुकूल एवं प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के अनुरूप बनाने के लिये ईको टूरिज्म् को बढावा देना।
- पर्यटको के लिए उनकी अभिरूचि तथा आर्थिक क्षमता के अनुरूप सुविधाओं के विस्तार हेतु निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्र की सहभागिता में लगातार वृद्वि करना।
- प्रदेश के पर्यटन स्थलो का राष्ट्रीय तथा अर्न्तराष्ट्रीय स्तर तक प्रचार प्रसार करने के लिए सूचना तथा तकनीकी प्रौद्योगिकी का प्रयोग को लगातार बढावा देना।
- पर्यटन के विकास में तीव्रता लाने हेतु पूंजी निवेश में वृद्वि हेतु लगातार प्रयास करना।
- मनोरंजन पर्यटन के साथ–साथ संस्थागत एवं साहसिक पर्यटन को बढावा देना।
- पर्यटन मंत्री की अध्यक्षता में पर्यटन नीति की कार्य योजनाओं के सुदृढीकरण के लिये पर्यटन विकास परिषद् गठन किया गया है।
- पर्यटन के विकास हेतु गढवाल तथा कुमाऊ मंडल विकास निगमों में परस्पर समन्वय स्थापित कर कार्य योजना का निर्माण करना।
- पर्यटकों की सुविधा हेतु सड़क परिवहन के साथ–साथ रेल तथा वायु परिवहन की सुविधा उपलब्ध कराना।
- पर्यटन के क्षेत्रों में स्वरोजगार के उद्देश्य से ''उत्तरांखड पर्यटन विकास योजनाओं'' को ''क्रियान्वित करने में तेजी लाना।
- तीर्थ यात्रियों को पर्यटकों के रूप में आकर्षित करने के लिये प्रबन्धन व्यवस्था में सुधार करना तथा तीर्थटन एवं पर्यटन का समेकित विकास करना, तनाव से मुक्ति के उद्देश्य से उत्तरांखण्ड के प्राकृतिक स्थलों को विश्रामत्मक पर्यटन स्थलों के रूप में विकसित करना।

13.7 पर्यटन उद्योग की समस्यायें

यद्यपि उत्तराखण्ड में पर्यटन उद्योग में व्यापार क्षमतायें है परन्तु अभी भी यह उद्योग अपनी पूरी क्षमता के साथ विकास नहीं कर पा रहा है। पर्यटन मंत्राालय द्वारा किए गए अनेक प्रयासों के बावजूद आज भी भारत पयर्टन में उत्तराखण्ड की भागीदारी बहुत कम है। अंतरार्ष्ट्रीय पयर्टकों की संख्या में उत्तराखण्ड की हिस्सेदारी अति अल्प मात्रा है। पर्यटन से होने वाली आय में इस राज्य घरेलू उत्पाद की हिस्सेदारी अति अल्प है। इतनी कम भागीदारी व हिस्सेदारी के अनेक कारण हैं जो चुनौती के रूप में पर्यटन क्षेत्रा के विकास में बाधा पहुंचाते हैं जिनका उल्लेख आगे किया जा रहा है। इस दिशा में निम्न समस्यायें एवं चुनौतियां सामने आ रही है।

1. निम्न स्तर की सड़क सेवा ना केवल पर्यटकों के लिए समस्या उत्पन्न करती है बल्कि प्रदेश की छवि को भी प्रभावित करते है। सड़क मार्ग अन्य सेवा अन्य सेवाओं से जैसे वायु सेवा व रेल सेवा की तुलना मे ज्यादा विस्तृत भूमिका निभाते है।उच्च स्तर की बसें, पर्यटकों के लिए विशेष सुविधाओं से लैस बसें, उच्च दर्जे के सड़क मार्गों का निर्माण, महिलाओं के बसों मे विशेष सुविधाएं, महिला पर्यटकों के लिए सुरक्षित बसें व टैक्सी आदि ऐसे पहलू है जिन पर सरकार द्वारा विशेष ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है।
2. पर्यटन हेतु गुणवत्तापरक बुनियादी सुविधाओं का अपेक्षित स्तर का ना होना तथा बुनियादी सुविधाओं की उपलब्धता प्रत्येक पर्यटन क्षेत्र एवं प्रत्येक पर्यटक तक ना हो पाना सबसे प्रमुख समस्या है।
3. पर्यटन के नये–नये क्षेत्रों को विकसित करना एवं नये क्षेत्रों में पर्यटकों को आकर्षित करने हेतु आकर्षक एवं पेशेवर रणनीति का विकसित न कर पाना।
4. एक अन्य महत्वपूर्ण समस्या पयर्टकों की सुरक्षा की है। आए दिन महिला सैलानियों के साथ बढ़ते यौन हिंसा के मामले पर्यटन क्षेत्रा के लिए एक गंभीर समस्या है। साथ ही यह समस्या प्रदेश की प्रसिद्ध छवि को भी खराब करता है। इस समस्या से निपटने के लिए आवश्यक है कि सेना व पुलिस का एक विशेष दल बनाया जाए, उनको विशेष प्रशिक्षण दिया जाए। साथ ही एक हैल्पलाइन जो सरलता व सुगमता के साथ पर्यटकों मदद करने के लिए सदैव तत्पर रहें।
5. आज के आधुनिक उत्तराखण्ड में आज भी ऐसे प्रशिक्षण संस्थाओं की कमी है जो उत्तराखण्ड की परंपरा, खान–पान, संस्कृति, नृत्य, शिल्प, पाक कला आदि संबंधित ज्ञान व प्रशिक्षण प्रदान करते हैं जबकि आज के समय की मांग है कि ऐसे युवक युवतियां तैयार की जाएं जो उत्तराखण्ड की परंपरा व संस्कृति से ओतप्रोत हों, और देशी व विदेशों से आने वाले पर्यटकों को संपूर्ण उत्तराखण्ड के बारे मे बता सकें। इसके अतिरिक्त माउंटेनियरिंग, रटिंग, ट्रैकिंग, कुकिंग ;उत्तराखण्ड परंपरागत भोजन,वॉटर स्पोर्ट आदि संबंधी सर्टिफिकेट कोर्स भी चलाए जाने चाहिए। ये कोर्स एक सप्ताह से लेकर साल भर के भी हो सकते हैं। इस प्रकार के कोर्स ना केवल उत्तराखण्ड शिल्प, पाक कला, संस्कृति, नृत्य आदि को बनाए रखने मे मदद करेंगे बल्कि कई सैलानियों को भी अपनी ओर आकर्षित करेंगे व साथ ही आर्थिक रूप से पर्यटन मंत्राालय को मदद करेंगे। जैसे मनाली मे माउंटनियरिंग इंस्टीट्यूट माउंटेनियरिंग, रटिंग, ट्रेकिंग से संबंधित बेसिक व एडवांस प्रशिक्षण पाठ्यक्रम आयोजित करता है।
6. निजी क्षेत्र एवं स्थानीय जनता की भागीदारी का कुछ ही वस्तुओं तथा सेवाओं की आपूर्ति तक ही सीमित रहना एक गम्भीर समस्या बन जा रही है।
7. सलौनियों के सम्मुख एक अन्य महत्वपूर्ण समस्या यह भी आती है कि उनके पास ठहरने के लिए सरुक्षित व किफायती स्थानों के चयन कोलेकर अधिक विकल्प नहीहोते पयर्टन क्षेत्रों को प्रभावित करने में यह समस्या भी प्रमुख भूमिका निभाती है। इस समस्या के निदान के लिए यह आवश्यक है कि सरकार पयर्टन क्षेत्रों के विकास का प्रमुखता दे ऐसे सरुक्षित होटलों, रैस्तारों, क्लब हाउस आदि के निर्माण में पयर्टन मत्रांालय की बढ़ चढक़र आर्थिक मदद उत्तराखंड को अन्तर्राष्ट्रीय पर्यटन मानचित्र पर प्रचारित प्रसारित करने के लिये राज्य की छवि बेहतर पर्यटन सेवा प्रस्तुत करने वाली होनी चाहिये परन्तु अभी भी राज्य की छवि पर्यटन के सन्दर्भ में अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप नहीं है।
8. राज्य का पर्यावरण अत्यधिक नाजुक तथा प्राकृतिक आपदाओं के प्रति संवेदनशील है। पर्यटन के साथ साथ भीड़ भाड़ बढ़ने से राज्य में प्रदूषण एवं पर्यटक स्थलों के आसपास व्यापक गंदगी। पर्यटन क्षेत्र के विकास में यह समस्या ऐसी है जिसका निवारण किसी नीति का

निर्माण कर देने या व्यापक स्तर पर आर्थिक मदद कर देने से नहीं हो सकता। यह समस्याऐसी है जिसके लिए प्रत्येक नागरिक को साफ–सफाई के प्रति जागरूक होना होगा।

पयर्टन को उत्तराखण्ड के विकास की बढ़ी ताकत बनाने के लिए आवश्यक है कि पयर्टन विकास में सहयोग देने वाले सगंठन जैसे पयर्टन मत्रांालय, भारतीय पयर्टन तथा यात्राप्रबधंन सस्थान, राष्ट्रीय हाटेल प्रबधंन तथा खान–पान टेक्नोलॉजी परिषद्, पयर्टन विकास निगम लिमिटेड, स्कीइंग तथापवर्तारोहण सस्थान और राष्ट्रीय जल–क्रीड़ा सस्थान आदि का सयुंक्त सहयोग हो इन प्रयासों केअतिरिक्त पयर्टन विश्व विद्यालय खाले जाने की सभांवना कोशक्ति प्रदान की जानी चाहिए। परतुं यहा इन समस्त सभांवनाओं व प्रयासों दौरान यह ध्यान रखा जाना आवश्यक हैकि पयर्टन विकास पयार्वरण के प्रति सवंदेनशील होना चाहिए। पर्यावरण व पर्यटन के मध्य जिस प्रकार का द्वंद है उसे भी समझा जाना आवश्यक है व पर्यटन विकास संबंधी प्रत्येक निर्णय व प्रयास द्वारा इको पर्यटन को प्राप्त किए जाने का लक्ष्य रखा जाना चाहिए। इन प्रयासों के द्वारा ही पर्यावरण के प्रति संवेदशील, रोजगार व आर्थिक विकास करने वाले तथा संस्कृति व परंपरा को उत्कृष्ट करते हुए उत्तराखण्ड के पयर्टन क्षेत्रों को विश्व का सबसे पसदीदा पयर्टन क्षेत्र बनाया जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न 1

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. धार्मिक पर्यटन के बारे में संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

.....
.....
.....
.....

2. पर्यावरण एवं वन्य जीवन आधारित पर्यटन का उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था में योगदान को स्पष्ट कीजिए।

.....
.....
.....
.....

3. साहसिक पर्यटन का स्पष्ट कीजिए।

.....
.....
.....
.....

4. वीर चन्द्र सिंह गढवाली पर्यटन स्वरोजगार योजनाके बारे में संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

.....
.....
.....
.....

5. उत्तराखण्ड की पर्यटन नीति को स्पष्ट कीजिए।

.....
.....

.....

.....

संक्षिप्त उत्तरीय प्रश्न

1. स्थानीय जनता के पर्यटन के माध्यम से रोजगार देने के लिये कौन सी योजना चलाई जा रही है।
2. राज्य में ईको पार्क कहां स्थापित किया गया है।
3. राज्य में गंगा की सफाई के लिये कौन सा अभियान चलाया जा रहा है।
4. राज्य के किस शहर को ग्रीन सिटी के तौर पर विकसित किया जा रहा है।
5. शहरों को स्वच्छ पर्यावरण रखने के लिये कौन सा पुरस्कार दिया जा रहा है।
6. राज्य में कितने प्रतिशत भू –भाग पर वन है।
7. उत्तराखंड भूकंप के कौन से जोन में आता है।
8. घराट को कौन से उद्योग का दर्जा दिया गया है।
9. राज्य में चिपको आंदोलन किसके द्वारा चलाया गया।
10. पोषणीय विकास की अवधारणा को किसने दिया।
11. तदर्थ कैम्पा योजना किस क्षेत्र के संरक्षण के लिये है।
12. राज्य का सबसे प्राचीन राष्ट्रीय पार्क कौन सा है?

13.8 पर्यटन उद्योग तथा पर्यावरण

उत्तराखंड का पर्यावरण अत्यधिक समृद्ध परन्तु संवेदनशील है। अतः विकास की प्रक्रिया में राज्य में पर्यावरण संतुलन का ध्यान रखना एक महत्वपूर्ण चुनौती है।पिछले कुछ वर्षों में पर्यटन का लगातार विकास हुआ है और आधुनिक युग में मानव कार्यकलापों में पर्यटन महत्वपूर्ण होता जा रहा है। आज राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यटन उद्योग बहुत तीवव्रा से विकसित हो रहा है और एक प्रमुख आर्थिक शक्ति के रूप में उभर रहा है। पर्यटन में इतनी शक्ति है कि यह उत्तराखण्ड के भविष्य को परिवर्तित कर सकता है। आधुनिक पर्यटन काफी हद तक पर्यावरण आधारित है। हम कह सकते हैं कि पर्यटन में दो अन्योन्य क्रियाशील घटक सम्मिलित हैं–पर्यटक और पर्यावरण। पर्यटन एक ऐसा शब्द है जो कुछ विशिष्ट उद्देश्यों को लेकर लोकजन यात्रा और देश–विदेश के विभिन्न भागों के भ्रमण से जुड़े सभी प्रक्रमों एवं संबंधों को निरुपित करता है। पर्यटन का उद्देश्य कितना भी सौम्य क्यों न हो फिर भी स्थानीय पर्यावरण पर उसका कुछ–न–कुछ प्रभाव अवश्य पड़ता है। पर्यटक यदि कहीं भी जाकर भू–दृश्यों एवं वन्यजीवों का अवलोकन कर आनंद प्राप्त करना चाहते हैं तो सामान्यतः वहां जाकर रुकते भी हैं।पर्यटकों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कुछ मूलभूत सुविधाओं जैसे आवास, परिवहन सुगमता एवं संपूर्ण आपूर्ति से संबंधित अवसंरचना की उचित व्यवस्था आवश्यक है। पर्यटकों के व्यवहार सहित ये सभी प्रक्रियाएं पर्यावरण पर किसी–न–किसी प्रकार का दबाव डालती हैं। अतः प्रयास यह होना चाहिए कि इस दबाव के स्तर को न्यूनतम रखा जा सके ताकि पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी में स्थाई परिवर्तन न होने पाए। अतः यह आवश्यक है कि हम पर्यटन एवं पर्यावरण के मध्य अन्योन्य क्रियाओं को ठीक से समझें और उसके अनुसार अपने क्रियाकलापों में परिवर्तन करें। राज्य में विकास के साथ साथ पर्यावरण के साथ सामंजस्य बनाने के लिये सरकार के साथ साथ आम जनता की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है तभी विकास टिकाऊ एवं दीर्घकालिक होता है।

पर्यटन के उत्तरदायी होने के लिए, पर्यटन के परिमाण एवं पर्यटन गतिविधियों तथा उपभोग में लाए जा रहे और विकसित किए जा रहे संसाधनों की संवेदनशीलता और वहन क्षमता के बीच

संतुलन अवश्य स्थापित होना चाहिए। इसमें भौतिक एवं जैविक पर्यावरण दोनों के संसाधन सम्मिलित होते हैं। इस विषय में वहन क्षमता सर्वाधिक महत्वपूर्ण अवधारणा है। संसाधनों पर हानिरहित प्रभाव, पर्यटक संतुष्टि को कम किए बिना या उस क्षेत्र के समाज, अर्थव्यवस्था एवं संस्कृति पर प्रतिवूफल प्रभाव डाले बिना किसी स्थान का अधिकतम उपयोग में लाया जाना उस स्थान की वहन क्षमता कहलाती है। उत्तरदायी पर्यटन एक ऐसा पर्यटन है जो यात्राके अनुभवों की रक्षा करने के अतिरिक्त लोगों के मध्य आपसी समझ को भी बढ़ाता है, पर्यावरणीय एवं सांस्कृतिक ह्रास और इनसे भी अधिक स्थानीय जनसंख्या केशोषण और मानवीय मूल्यों के ह्रास को रोकता है। इसे हम वैकल्पिक पर्यटन भी कहते हैं। वैकल्पिक या उत्तरदायी पर्यटन के द्वारा पर्यटन से पैदा हुई समस्याओं को नियंत्रित किया जा सकता है।पर्यटन विकसित करते समय पर्यावरण की उत्कर्षता बनाए रखना न केवल वांछनीय है अपितु पर्यटक का संतोष कायम रखने के लिए भी आवश्यक है। यदि पर्यटन उत्पाद के स्तर में गिरावट आती है तो वह अन्ततोगत्वा पर्यटन अर्थव्यवस्था में ही गिरावट लाएगा। पयार्वरणीय पयर्टन या पारिस्थितिकी पयर्टन प्रकृति पर आधारित पर्यटन है जो प्रकृति से सीधे लिए जा सकने वाले आनंद अर्थात् प्रकृति के अवलोकन से मिलने वाले आनंद से संबंधित है। इसके पर्यावरणीय उत्तरदायित्व के लिए स्थान विशेष की उपयुक्तता आवश्यक है। साथ ही इसे प्राकृतिक पर्यावरण में स्थाई ह्रास का साधन नहीं बनना चाहिए।

उत्तरांखण्ड का प्राकृतिक पर्यावरण एवं जलवायु पर्यटकों हमेशा आकर्षित करता है। सरकार ने भी ईकों टूरिज्म को बढावा देने के लिये विशेष प्रयास किये है। पयर्टन की परियोजनाओं को बढावा देने हेतु सरकार द्वारा निजी क्षेत्र की भागीदारी को प्रोत्साहित किया गया है। रामनगर में ईको सिटी एवं मसूरी में सर जार्ज एवरेस्ट ईको पार्क बनाया गया है साथ ही साथ सरकार द्वारा प्रदेश के नगरों को सुन्दर, स्वच्छ तथा हरा–भरा बनाने हेतु हर्बल वाटिकाओं, हर्बल पार्को को विभिन्न नगरों में स्थापित करने की योजना है। देहरादून को ग्रीन सिटी के तौर पर विकसित किया जा हरा है।

उत्तरांखण्ड का पर्यावरण समृद्ध परन्तु संवेदनशील है अतः अत्याधिक पर्यटको की आवाजाही से वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, कूड़े–कचरे एवं अपशिष्टों की समस्याये गहराती हैं। अतः सरकार द्वारा चारों धामों समेत देहरदून, हरिद्वार, नैनीताल आदि में सुव्यवस्थित कूड़ा निस्तारण विधि अपनायी गयी है। नैनीताल समेत प्रदेश की महत्वपूर्ण झीलों, सरोवरों की साफ सफाई का प्रावधान किय गया है तथा पतित पावन गंगा समेत उसकी सहायक नदियों की सफाई तथा स्वच्छता हेतु ''स्पर्श गंगा'' एवं "नमांति गंगे" अभियान आरम्भ किया गया है।

पर्यटक तथा पर्यावरण में बड़ा ही नाजुक अन्तरसम्बन्ध है। अतः पर्यटन के विकास में उत्तरांखण्ड के समृद्ध किन्तु संवेदनशील पर्यावरण का ध्यान रखकर ही इस दिशा में विकास नीति बनाने की आवश्यकता है। संतुलित परिस्थितिकीय पर्यटन के प्रयास इसके लिए सरकार ने कई कदम भी उठाए हैं,जिसमें शामिल हैं–

- पर्यावरणीय समेकन का अनुरक्षण स्थानीय समुदाय को शामिल करना ताकि क्षेत्र का समग्र आर्थिक विकास हो सके।
- इको पर्यटन के लिए संसाधनों का उपयोग और स्थानीय निवासियों की आजीविका के मध्य संभावित संघर्ष की पहचान करना एवं ऐसे संघर्षों को न्यून करना।
- पारिस्थितिकी पर्यटन के विकास के प्रकार एवं पैमाने पर्यावरण तथा स्थानीय समुदाय की सांस्कृतिक–सामाजिक विशेषताओं के अनुरूप करना।

इसका नियोजन समग्र क्षेत्र विकास नीति के रूप में करना पारिस्थितिकी पर्यटन से लाभ आर्थिक लाभः उफपर दिए गए उदाहरणों से यह स्पष्ट है कि पारिस्थितिकी पर्यटन से सीधा आर्थिक लाभ हो सकता है, जिसका उपयोग जैव–विविधता एवं पारिस्थितिकी तंत्रा के संवर्धन एवं संरक्षण के

लिए किया जा सकता है। प्रत्यक्ष लाभ में सरकार को विदेशी मुद्रा की आमदनी तो होती ही है साथ ही अप्रत्यक्ष लाभ में विभिन्न प्रकार के करों एवं शुल्कों के द्वारा भी आमदनी होती है। अर्थात् इको पर्यटन न केवल पर्यावरण के संवर्धन एवं संरक्षण में योगदान देता है बल्कि प्रदेश की अर्थव्यवस्था में भी सीधा योगदान देता है। बेहतर पर्यावरण प्रबंधन एवं योजनाः इसके द्वारा समय से प्रबंधन योजना बनाकर भविष्य में आने वाली समस्याओं को रोका जा सकता है जैसे हाल ही में माननीय न्यायालय द्वारा गिर वन के पास ताज होटल को बंद करने का आदेश जारी किया गया। अगर पहले से इको पर्यटन को ध्यान में रखते हुए योजना बनाई गई होती तो यह समस्या नहीं आती। पर्यावरणीय चेतना का विकासः इको पर्यटन के द्वारा लोगों में पर्यावरणीय चेतना का विकास किया जा सकता है क्योंकि इसके द्वारा जन एव ंपयार्वरण कोपास लाने का प्रयास हो सकता है, जिससे लोगों में पर्यावरण से होने वाले लाभों की जानकारी होगी और वे ज्यादा बेहतर ढंग से संरक्षण कार्यों में सहयोग कर पाएंगे। पयार्वरण की सरुक्षा एव सरंक्षण अपने आकषर्ण के कारण प्रकृति एव ंपयार्वरण का सरंक्षण महत्वपर्ण होगा ताकि इससे इनके अमल्य होने की वास्तविकता सामने आएगी आरै सरंक्षण के प्रयास ज्यादा तेज होगें। साथ ही इसमें जन भागीदारी भी सुनिश्चित की जा सकेगी।

13.9 पर्यावरण एवं विकास में अन्तर सम्बन्ध

पर्यावरण 'परि' तथा 'आवरण' दो शब्दों से मिल कर बना है, जिसका सीधा अर्थ है पृथ्वी के चारों ओर का आवरण। पर्यावरण के विभिन्न घटक जल, वनस्पतियॉ, मृदा, वायु आदि आपस में परस्पर अर्न्तक्रियायें करके जटिल एवं नाजुक तंत्र का निर्माण करते हैं। पर्यावरण के घटकों की यही परस्पर क्रिया प्रतिक्रिया पर्यावरण में एक समायोजन क्षमता प्रदान करते हुये पर्यावरण को संतुलित बनाये रखती हैं, यदि किसी कारणवश पर्यावरण में असंतुलन पैदा हो जाता है तो पर्यावरण की यही अन्तः समायोजन क्षमता पर्यावरण को पुनः संतुलन में ला देती है परन्तु आधुनिक समय में जनसंख्या विस्फोट, आर्थिक विकास, औद्योगीकरण, नगरीकरण, अत्याधिक उपभोक्तावाद, लाभ की लालसा आदि के चलते मानव ने पर्यावरण में इस कदर हस्तक्षेप किया है कि पर्यावरण की समायोजन क्षमता निरन्तर क्षीण होती जा रही है तथा पर्यावरण संकट का गंभीर खतरा पूरे विश्व के सामने गहराने लगा है। पर्यावरण तथा विकास पर बने ''विश्व आयोग'' की ''ऑवर कॉमन फ्यूचर'' रिर्पोट 1987 के अनुसार ''आधुनिक प्रगति ने पर्यावरण को भी उत्पाद बना दिया है'' एवं ''पर्यावरण अवनयन समस्त विश्व के अस्तित्व हेतु सबसे बड़ा संकट है।''

उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था के विकास में औद्योगिक क्षेत्र के उम्दा प्रदर्शन का महत्वपूर्ण योगदान है। इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी सहित समूचा विनिर्माण क्षेत्र, वस्त्राोद्योग, औषधि और प्राथमिक रसायन क्षेत्रों की प्रभावशाली प्रगति की वृद्धि दर में उल्लेखनीय भूमिका रही है। त्वरित आर्थिक विकास ने देश की उपभोग शैली को भी प्रभावित किया है। इस परिवर्तन का देश के पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों पर भी व्यापक प्रभाव पड़ा है। उच्च विकासदर के लिए इन पर बेतहाशा जोर बढ़ा है। अतःएव, उत्तराखण्ड के स्थायी विकास के मार्ग की सबसे बड़ी चुनौती जनसंख्या घनत्व, संवेदनशील पारिस्थितिकी की चरम जलवायु और प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भरता है। इस प्रकार आर्थिक और सामाजिक विकास के लक्ष्यों को सभी देशों में संपोषणीयता के लिहाज से परिभाषित किया जाना चाहिए। मानवीय आवश्यकताओं और आकांक्षाओं का संतोष विकास का प्रमुख उद्देश्य है। उत्तराखण्ड के अधिकतर लोगों की रोटी, कपड़ा, मकान और रोजगार की आवश्यकताएं पूरी नहीं हो रहीं और प्राथमिक आवश्यकताओं के आगे वे यदि बेहतर जीवन की अपेक्षा करते हैं तो उनका ऐसा सोचना उचित है। एक ऐसा संसार जिसमें निर्धनता और असमानता व्याप्त हो, वह पर्यावरणीय और अन्य संकटों के प्रति सदैव संवेदनशील बना रहेगा। संपोषणीय विकास की दरकार है कि सभी की बुनियादी जरूरतें पूरी हों और सभी की बेहतर जीवन की तमन्ना को पूरा करने का अवसर मिल सके।जहाँ तक उत्तराखण्ड राज्य के

पर्यावरण का प्रश्न है, राज्य पूर्णतया हिमालय के पर्वतों, घाटियों तथा तराई क्षेत्र में अवस्थित है, सम्पूर्ण हिमालय क्षेत्र एवं विशेषतौर पर उत्तराखण्ड राज्य पर्यावरणीय दृष्टिकोण से अत्यन्त समृद्ध एवं विविधता पूर्ण है। जहॉ स्थित हिमालय पर्वत न सिर्फ भारत की जलवायु को नियत्रित करता है अपितु यहॉ के हिमनदों द्वारा जो सदानीरा सरितायें निकलकर प्रवाहित होती है वह सम्पूर्ण उत्तर भारतीय मैदानों का निर्माण एवं पोषण करती है लेकिन उत्तराखण्ड का यह समृद्ध पर्यावरण बड़ा ही नाजुक तथा संवेदशील है तथा राज्य पूरी तरह से भूकम्प के अत्याधिक जोखिम वाले क्षेत्रों में आता है। समय–समय पर उत्तराखण्ड में बाढ़, बादल फटना, भूस्खलन तथा भूकम्प जैसी प्राकृतिक आपदायें आती रही है जिसके कारण उत्तराखण्ड में हमेशा से ही जनसमुदाय न सिर्फ पर्यावरण संरक्षण एवं प्रबन्धन में सक्रिय रहा है अपितु यहाँ कई जन आंदोलन पर्यावरण के बचाव के लिए मशहूर हुये है। सत्तर के दशक में गौरा देवी,चंडीप्रसाद भटट् एवं सुन्दरलाल बहुगुणा के नेतृत्व में वनो के बचाव तथा अनियंत्रित कटाई के विरूद्ध जो '' चिपको ''आंदोलन हुआ वह शीघ्र ही पूरे विश्व में मशहूर हो गया, बड़ी बाँध परियोजना जैसे टिहरी बाँध परियोजना, खान तथा खनन् के विरूद्ध भी सम्पूर्ण उत्तराखण्ड में जनव्यापी आंदोलन हुये हैं, वनों के संरक्षण तथा संवर्द्धन हेतु कल्याण सिंह रावत द्वारा ''मैती'' आन्दोलन चलाया गया जोकि अब एक संस्कार का रूप ले चुका है। इसके अतिरक्ति रक्षासूत्र आन्दोलन तथा वृद्ध मानव वीरेन्द्र सकलानी द्वारा चलाये गये वृक्षा रोपण के आन्दोलन राज्य में बेहद लोकप्रिय हुये हैं।

पर्यावरण का संरक्षण आज हमारी सबसे बड़ी आवश्यकताओं में से एक है। आज इस बात की पहले से कहीं अधिक जरूरत है कि विकास की प्रक्रिया को इस प्रकार संशोधित किया जाए कि मनुष्य को सुख–सुविधा के साधन उपलब्ध कराने के साथ–साथ पर्यावरण का संरक्षण भी होता रहे। राष्ट्रीय योजनाएं बनाते समय पर्यावरणीय वास्तविकताओं को ध्यान में रखा जाए। हमें प्रदेश के आर्थिक विकास के प्रयत्नों के साथ–साथ जीवन को धारण करने वाली प्रणालियों और स्रोतों जैसे– मृदा, जल और आनुवंशिक विविधता के संरक्षण पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है। आर्थिक सुधारों के बाद उद्योगों में रोजगार का सृजन तेज हुआ एवं लोगों ने ग्रामीण क्षेत्राों से शहरों की ओर प्रस्थान करना प्रारंभ किया। इसवेफ परिणामस्वरूप धीरे–धीरे उपभोक्तावाद में वृद्धि होने के कारण प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग निर्माण, उद्योग, परिवहन एवं अन्य उपभोगों के लिए किया जाने लगा और शहरों में बढ़ती जनसंख्या से पर्यावरण प्रदूषण की समस्या उत्पन्न हो गई। शहरीकरण सामाजिक विकास एवं आर्थिक परिवर्तन का एक स्वाभाविक प्रतिफल है। इससे व्यक्ति एवं स्थान दोनों प्रभावित होते हैं। तीव्र गति से बढ़ते औद्योगीकरण तथा मानवीय क्रिया–कलापों द्वारा संपूर्ण उत्तराखण्ड में पर्यावरण प्रदूषण एवं पारिस्थितिकी असंतुलन की स्थिति भयावह होती जा रही है। विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों यथा– जल, वायु, मृदा प्रदूषण इत्यादि की समस्या के अतिरिक्त आज वैश्विक तपन और जलवायु परिवर्तन जैसी समस्याएं उत्तराखण्डके साथ संपूर्ण विश्व के लिए चिंता का विषय बन गई हैं। अक्सर यह देखा गया है कि प्रदूषण के प्रभावों की शुरुआत तो पर्यावरण के किसी एक घटक विशेष से होती है, परंतु अंततोगत्वा उनका प्रभाव अन्य दूसरे घटकों पर भी पड़ता है।

पर्यावरण प्रबंधन के लिए यह आवश्यक है कि पर्यावरण में विद्यमान सभी घटकों के विषय में अधिकाधिक जानकारी प्राप्त की जाए। पर्यावरण से जुड़े सभी विषयों जैसे भूमि निर्माण, जलवायु विज्ञान, भूमिगत जल, मृदा अपरदन, जैव विविधता, पारिस्थितिकी वानिकी इत्यादि से संबंधित समुचित आंकड़े एकत्रित किए जाएं। इस तरह के आंकड़ों के बिना पर्यावरण का सफल संरक्षण एवं प्रबंधन संभव नहीं हो पाता। पर्यावरण के सभी घटक परस्पर एक–दूसरे से अंतर्संबंधित हैं और एक–दूसरे पर प्रभाव डालते हैं। अतः पर्यावरण संरक्षण एवं प्रबंधन की योजनाओं में समन्वित दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। संसाधनों के इष्टतम उपयोग के लिए जनसाधारण को जागरूक बनाकर ही पर्यावरण संरक्षण की दिशा में पहल की जा सकती है। पर्यावरण का प्रबंधन संगठित प्रयासों से ही संभव है।

इसके लिए सरकारी एवं गैर–सरकारी संगठन, उद्योगपतियों, कृषकों तथा आम जनता सभी की सहभागिता जरूरी है।

13.10पर्यावरण समस्यायें

उत्तराखंड में पर्यावरण के सामने मुख्य समस्यायें निम्नवत हैः–

- तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या के कारण राज्य के पर्यावरण पर दवाब बढ़ता ही जा रहा है।
- औद्योगीकरण तथा शहरीकरण से राज्य में पर्यावरण प्रदूषण में वृद्धि को बढा़ दिया है।
- ऊर्जा परियोजना , सड़क निर्माण, औद्योगिक निर्माण, खान–खनन आदि के कारण राज्य के पर्यावरण पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ रहा है। साथ ही स्थानीय जनता का भी पलायन हो रहा है।
- पर्यटन में वृद्धि के कारण से भारी पैमाने पर गतिशील जनसंख्या राज्य में आवाजाही करती रहती है। जिसके कारण से राज्य के पर्यावरण पर अतिरिक्त दवाब पड रहा है।
- राज्य में प्राकृतिक आपदाओ जैसे भूकंप, भूस्खलन, हिमस्खलन, दावानल आदि के घटित होने से राज्य में जान माल की क्षति के साथ साथ पर्यावरण पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है।
- आर्थिक विकास की तीव्रता हेतु प्राकृतिक संसाधनों के अविवेकपूर्ण दोहन एवं समुचित प्रबन्धन ना होने से राज्य के पर्यावरण पर ऋणात्मक प्रभाव पड़ रहा है।
- केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकार तथाराज्य सरकार एवं स्थानीय जनता के मध्य सामंजस्य ना होने से पर्यापरण का संरक्षण एवं प्रबन्धन समुचित नहीं हो पा रहा है।

अभ्यास प्रश्न 2

लघुउत्तरीय प्रश्न

1. पर्यटन और पर्यावरण के अर्न्तसम्बन्ध पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

   .....
   .....
   .....
   .....

2. पर्यावरण एवं विकास एक सिक्के के दो पहलू है विवेचन कीजिए।

   .....
   .....
   .....
   .....

3. उत्तराखंड में पर्यावरण समस्याओं पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

   .....
   .....
   .....
   .....

13.11 सारांश

इस इकाई को पढने के बाद आप यह जान चुके हैं उत्तराखंड राज्य में आर्थिक विकास को तीव्र करने के लिये व्यापक पैमाने पर पर्यटन उद्योग को गतिशील करना होगा साथ ही राज्य में विकास के अनुकूल दशाओं का निर्माण एवं संवर्धन करना होगा। इसके लिये पर्यटन उद्योग के विभिन्न प्रकारों की विकास की आवश्यकता है। चूँकि उत्तराखंड एक नवोदित एवं आर्थिक तौर पर उपेक्षित

राज्य रहा है एवं राज्य की भौगोलिक एवं पर्यावरणीय परिस्थितियां ऐसी रही है कि यहां पर व्यापक औद्योगिक एवं विनिर्माण सम्बन्धी गतिविधियों के माध्यम से आर्थिक विकास को संवेग देना अल्प काल में उचित नहीं है। इसलिये यहां पर पर्यटन उद्योग आर्थिक विकास में ना सिर्फ महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाहन कर सकता है बल्कि स्थानीय स्तर पर ही आय के अवसरों को पैदा कर राज्य की प्रमुख समस्यायें जैसे – बेरोजगारी एवं पलायन को भी नियंत्रित कर सकता है साथ ही साथ पर्यटन उद्योग उत्तराखंड राज्य की सकारात्मक छवि को राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित कर सकता है। इस दिशा में सरकार एवं निजी क्षेत्र की भागीदारी के साथ साथ विवेकपूर्ण नीतियों को क्रियान्वित करने की आवश्यकता है तभी यह उद्योग अपनी क्षमता के अनुसार राज्य के विकास में योगदान कर पायेगा।

राज्य में आर्थिक विकास की प्रक्रिया को तीव्र करने के लिये इस प्रकार से रणनीति बनानी होगी कि राज्य का पर्यावरण न सिर्फ संरक्षित रह सके बल्कि उसका संवर्धन भी निरंतर होता रहे। पर्यावरण का संरक्षण आज हमारी सबसे बड़ी आवश्यकताओं में से एक है। आज इस बात की पहले से कहीं अधिक शरूरत है कि विकास की प्रक्रिया को इस प्रकार संशोधित किया जाए कि मनुष्य को सुख–सुविधा के साधन उपलब्ध कराने के साथ–साथ पर्यावरण का संरक्षण भी होता रहे।उत्तराखण्ड में पर्यावरण प्रदूषण एवं पारिस्थितिकी असंतुलन की स्थिति भयावह होती जा रही है। विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों यथा– जल, वायु, मृदा प्रदूषण इत्यादि की समस्या के अतिरिक्त आज वैश्विक तपन और जलवायु परिवर्तन जैसी समस्याएं उत्तराखण्डके साथ संपूर्ण विश्व के लिए चिंता का विषय बन गई हैं। अक्सर यह देखा गया है कि प्रदूषण के प्रभावों की शुरुआत तो पर्यावरण के किसी एक घटक विशेष से होती है, परंतु अंततोगत्वा उनका प्रभाव अन्य दूसरे घटकों पर भी पड़ता है।

पर्यावरण प्रबंधन के लिए यह आवश्यक है कि पर्यावरण में विद्यमान सभी घटकों के विषय में अधिकाधिक जानकारी प्राप्त की जाए। पर्यावरण से जुड़े सभी विषयों जैसे भूमि निर्माण, जलवायु विज्ञान, भूमिगत जल, मृदा अपरदन, जैव विविधता, पारिस्थितिकी वानिकी इत्यादि से संबंधित समुचित आंकड़े एकत्रित किए जाएं। इस तरह के आंकड़ों के बिना पर्यावरण का सफल संरक्षण एवं प्रबंधन संभव नहीं हो पाता। पर्यावरण के सभी घटक परस्पर एक–दूसरे से अंतर्संबंधित हैं और एक–दूसरे पर प्रभाव डालते हैं। अतः पर्यावरण संरक्षण एवं प्रबंधन की योजनाओं में समन्वित दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। संसाधनों के इष्टतम उपयोग के लिए जनसाधारण को जागरूक बनाकर ही पर्यावरण संरक्षण की दिशा में पहल की जा सकती है। पर्यावरण का प्रबंधन संगठित प्रयासों से ही संभव है। इसके लिए सरकारी एवं गैर–सरकारी संगठन, उद्योगपतियों, कृषकों तथा आम जनता सभी की सहभागिता जरूरी है। वर्तमान समय में स्थानीय जनता की संवेदनशीलता के साथ साथ उनके आर्थिक सरोकारों को भी पर्यावरण एवं पर्यटन उद्योग से जोड़कर देखने की आवश्यकता है तभी टिकाऊ एवं दीर्घकालिक सतत् विकास की संकल्पना साकार किया जा सकेगा।

13.12 शब्दावली

अधो संरचना–यह आधार संरचना का समानार्थी है । प्रत्येक देश की अर्थव्यवस्था की उन्नति अधो–संरचनात्मक ढांचे की प्रगति पर ही निर्भर करती है ।

प्राकृतिक संसाधन–प्रकृति द्वारा प्रदान की गयी सुविधाओं (जिनके लिए हमें कोई मूल्य नहीं चुकाना पड़ता है) को प्राकृतिक संसाधन की संज्ञा दी जाती है । इस श्रेणी में भूमि, जलवायु, खनिज पदार्थ जैसे– पैट्रोलियम, कोयला, लोहा, तांबा, जस्ता, सोना, हीरा, चांदी आदि सम्मिलित हैं ।

खनिज–खनन से खनिज शब्द बना है । खनन का अर्थ है– खोदना। अतः जमीन की खुदाई करके प्राप्त किये जाने वाले पदार्थों को खनिज पदार्थ या खनिज तत्व कहा जाता है । पैट्रोलियम, धातुएं आदि को मूल रूप से जमीन को खोदकर ही निकाला जाता है ।

सामाजिक वानिकी –समाज की भागीदारी के माध्यम से वनों के संरक्षण एवं संवर्द्धन के प्रयास को सामाजिक वानिकी कहते है।

आर्थिक संवृद्धिः–प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि को संवृद्धि कहते हैं ।

आर्थिक विकास–सामाजिक न्याय के साथ संवृद्धि को आर्थिक विकास कहते हैं ।

13.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

लघु उत्तरीय प्रश्न 1. देखिए – 13.3.1,2. देखिए – 13.3.3, 3. देखिए – 13.3.4,4. देखिए – 13.5, 4. देखिए – 13.6।

संक्षिप्त उत्तरीय प्रश्न

1. वीर चन्द्र सिंह गढवाली योजना
2. मसूरी
3. स्पर्श गंगा
4. देहरादून
5. श्यामा प्रसाद मुखर्जी निर्मल पुरस्कार
6. 63.5 प्रतिशत
7. भूकंप के चौथे और पांचवे जोन में
8. कॉटेज उद्योग
9. श्रीमती गौरा देवी
10. वर्टलैण्ड
11. 9 सितम्बर
13. जिम कार्बेट नेशनल पार्क

अभ्यास प्रश्न 2

लघु उत्तरीय प्रश्न 1. देखिए – 13.8, 2. देखिए – 13.9, 3. देखिए – 13.10।

13.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- बिष्ट डॉ0 नारायण सिंह;(2003) उत्तरांचल हिमालयी राज्यः पर्वतीय क्षेत्र में औद्योगिकरण डॉ0 नारायण संस्थान, शोध नियोजन एवं विकास, गोपेश्वर चमोली.
- Aggarwal, S.P. (ed.) (1995), *Uttarakhand: Past, Present and Future,* Concept Publishing Company, New Delhi.
- Dewan, M.L. & Jagdish Bahadur (eds.) (2005), *Uttaranchal: Vision and Action Programme*, Concept Publishing Company, New Delhi.
- Mehta, G.S. (1999), *Development of Uttarakhand: Issues and Perspectives*, APH Publishing Corporation, New Delhi.
- Pangtey, Yatendra Singh and others (2011), *Uttarakhand at a Glance 2010-11*, Directorate of Economics and Statistics, Dehradun.
- Planning Commission, Government of India (2009), *Uttarakhand Development Report*, Academic Foundation, New Delhi.
- Sati, V.P. & Kamlesh Kumar (2004), *Uttaranchal: Dilemma of Plenties and Scarcities*, Mittal Publications, New Delhi.

13.15 सहायक उपयोगी सामग्री

- अर्थ एवं सांख्यिकीय निदेशालय (2016), सांख्यिकीय डायरी 20015–16, उत्तराखण्ड सरकार
- आर्थिक सर्वेक्षण(विभिन्न अंक),वित मंत्रालय भारत सरकार, नई दिल्ली।
- कुरूक्षेत्र (विभिन्न अंक), ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
- योजना (विभिन्न अंक) योजना आयोग, नई दिल्ली।
- उत्तराखण्ड इयर बुक 2016 विनसर पब्लिशिंग कम्पनी, देहरादून।

- ठाकुर, सुदीप व अन्य (सम्पादक) (2010), *उत्तराखंड उदयः एक दशक की यात्रा (2000 से 2010)*, अमर उजाला पब्लिकेशन्स लिमिटेड, नोएडा।
- बलूनी, विद्या दत्त, *उत्तराखण्डः एक सम्पूर्ण अध्ययन*, अरिहन्त पब्लिकेशन्स (इ) प्रा लि, मेरठ।
- पाण्डेय, अशोक कुमार, *उत्तरांचलः सम्पूर्ण अध्ययन*, उपकार प्रकाशन, आगरा।
- सविता मोहन (2017), *उत्तराखण्डः समग्र अध्ययन,* तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली।

13.16 निबन्धात्मक प्रश्न

1. उत्तराखण्ड में पर्यटन उद्योग की सम्भावनाओं एवं चुनौतियों की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।
2. उत्तराखण्ड में पर्यटन उद्योग आवश्यकताओ की विवेचना करते हुए आर्थिक विकास में इसके महत्व को रेखांकित कीजिए।
3. उत्तराखण्ड में पर्यटन उद्योग की क्या समस्यायें है तथा इस दिशा में सरकार द्वारा किए जा रहें प्रयासो को स्पष्ट कीजिए ?
4. पर्यावरण तथा आर्थिक विकास में अन्तरसंबंधों की विवेचना करते हुए। उत्तराखण्ड के पर्यावरणीय प्रबन्धन के प्रारूप को समझाइए ?

इकाई 14 उत्तराखण्ड : लघु , ग्रामोद्योग का विकास एवं प्रमुख समस्याएँ

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 ग्रामोद्योग का आशय

14.4 उत्तराखण्ड में ग्रामोद्योग का विकास

14.5 उत्तराखण्ड में ग्रामोद्योग की प्रमुख समस्याएँ

14.6 लघु उद्योग का आशय

14.7 उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था में लघु क्षेत्र उद्योग का महत्व

14.8 उत्तराखण्ड में लघु उद्योग का विकास

14.9 लघु उद्योग की प्रमुख समस्याएँ

14.10 लघु उद्योगों की समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव

14.11 सारांश

14.12 शब्दावली

14.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

14.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

14.15 सहायक/उपयोग पाठ्य सामग्री

14.16 निबंधात्मक प्रश्न

14.1 प्रस्तावना

आधुनिंक उत्तराखण्ड में समाज और अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित यह 14वीं इकाई है। पूर्व की इकाई से आप उत्तराखण्ड की जनसंख्या एवं मानवीय संसाधन,गरीबी एवं बेरोजगारी, क्षेत्रीय असमानता एवं जनजातीय विकास,उत्तराखण्ड प्राकृतिक संसाधनों ,उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्थाऔर पर्यटन उद्योग तथा पर्यावरण के बारे में सामान्य जानकारी प्राप्त कर चुके है।

वर्तमान इकाई में हम उत्तराखण्ड : लघु , ग्रामोद्योग का विकास एवं प्रमुख समस्याएँ के विभिन्न आयामों के बारे में अध्ययन करेंगे। इस इकाई में इस बात का विस्तार से चर्चा की गयी है कि ग्रामोद्योग और लघु उद्योग किसे कहते हैं तथा इसका विकास उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था के लिए कितना महत्वपूर्ण है। इसके विकास के लिए सरकार द्वारा क्या प्रयत्न किये जा रहे हैं तथा ग्रामोद्योग और लघु उद्योगों की मूलभूत समस्यायें क्या हैं ?

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप ग्रामोद्योग और लघु उद्योगों के बारे में जान सकेंगे तथा विकास उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था में किस प्रकार किया जा रहा है यह बता पायेंगे तथा उनकी प्रमुख समस्याओं से अवगत हो जायेंगे।

14.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप –

- ग्रामोद्योग व लघु उद्योग के अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगें।
- ग्रामोद्योग व लघु उद्योगों के विकास की आवश्यकता का अध्ययन कर सकेंगे।
- ग्रामोद्योग व लघु उद्योगों का उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था के विकास में भूमिका स्पष्ट कर सकेंगें।
- लघु उद्योगों के लिए सरकार द्वारा बनायी गयी नीतियों का अध्ययन कर सकेंगे।
- ग्रामोद्योग व लघु उद्योगों के समक्ष उत्पन्न समस्याओं का अध्ययन कर सकेंगे।

14.3 ग्रामोद्योग का आशय

खादी ग्रामोद्योग आयोग द्वारा 4 जनवरी 1990 को ग्रामीण उद्योग को निम्न रूप में परिभाषित किया गया है – ''ग्रामीण उद्योग का अभिप्राय किसी ऐसे उद्योग से है जो ग्रामीण क्षेत्र में स्थित हो और जिसकी जनसंख्या 10 हजार अथवा ऐसी किसी संख्या से अधिक न हो तथा जो कोई उद्योग बिना शक्ति की सहायता के अथवा शक्ति के प्रयोग में वस्तुओं या सेवाओं की आपूर्ति करता है और जिस उद्योग में स्थायी पूंजी निवेश प्लांट, मशीनरी तथा भूमि व भवन में 15 हजार रूपये प्रति कारीगर से अधिक न हो।'' इस परिभाषा के अनुसार किसी ग्रामीण उद्योग में तीन विशेषताओं का पाया जाना जरूरी है –

- एक वह उद्योग गावं में स्थित हो और उस गांव की जनंसख्या 10 हजार से अधिक न हो।
- उस उद्योग में यांत्रिक शक्ति या विद्युत प्रयोग हो रहा है या नहीं।
- इस उद्योग के प्लांट, मशीनरी, भवन व भूमि में स्थायी पूंजी निवेश 15 हजार रूपय से अधिक न हो।

खादी ग्रामोद्योग के ज्ञापन 1996 में ग्रामीण क्षेत्र की अवधारणा को स्पष्ट किया और कहा गया कि ''ग्रामीण क्षेत्र ऐसा क्षेत्र है, जिसमें गांव अथवा नगरीय क्षेत्र सम्मिलित हो जिसकी जनंसख्या 20 हजार से ज्यादा न हो।'' खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग द्वारा दी गई इन कार्य रूपी परिभाषा ने ग्रामोद्योग व लघु उद्योगों को अस्पष्ट कर दिया है। सामान्यता ग्रामीण उद्योगों तथा कुटीर उद्योगों को समानार्थी माना जाता है। जबकि कुटीर उद्योग स्पष्टतः किसी कारीगर द्वारा अपने परिवार के सदस्यों की सहायता से घर से ही चलाये जाने वाला उद्योग है। क्योंकि इस उद्योग में घर के मुखिया के अतिरिक्त परिवार

के सदस्य भी उत्पादन कार्य में सहयोग करते है, इसलिए इसे पारिवारिक उद्योग के नाम से भी जाना जाता है।

वर्तमान समय में ग्रामोद्योग का तात्पर्य यह है कि जो उद्योग नगर निगम/नगर पंचायत क्षेत्र के बाहर ग्रामीण क्षेत्र में हो तथा जहां की आबादी 20 हजार से अधिक न हो वहां स्थापित हो, जिसके उत्पादन व सेवा कार्य करने में विद्युत शक्ति का प्रयोग हो अथवा न हो एवं 50 हजार रूपये प्रति व्यक्ति पूंजी विनियोग से अधिक न हो ऐसी इकाईयों को ग्रामोद्योग माना जायेगा।

भारतीय केन्द्रीय बैकिंग जांच समिति को रिपोर्ट के अनुसार ''कुटीर उद्योग वह है, जो ग्रामीण क्षेत्र में पाये जाते है। जिनको ग्रामीण या घरेलू उद्योगों के नाम से पुकारा जा सकता है और कृषको के सहायक व्यवसाय प्रदान करता है।'' इस प्रकार से ग्रामीण क्षेत्र में विद्यमान कुटीर व पारिवारिक उद्योगों को ही ग्रामीण उद्योग की श्रेणी में रखा जाता है।

ग्रामोद्योगों को मुख्य रूप से 7 वर्गों में बांटा गया है –

(1) खनिज आधारित उद्योग,
(2) वनाधारित उद्योग,
(3) कृषि आधारित और खाद्य उद्योग,
(4) बहुलक और रसायन आधारित उद्योग,
(5) इंजीनियरिंग और गैर परम्परागत ऊर्जा,
(6) वस्त्रोद्योग (खादी को छोड़कर),
(7) सेवा उद्यम उद्योग।

14.4 उत्तराखण्ड में ग्रामोद्योग का विकास

उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान है आैर कृषि की परम्परागत व्यवस्था के कारण किसानों में छिपी बेरोजगारी, अर्द्ध बेरोजगारी व मौसमी बेरोजगारी बड़ी मात्रा में पाई जाती है। इसलिए ऐसे क्षेत्र में ग्रामोद्योग की स्थापना होना स्वभाविक है। जिनका विवरण निम्नवत है –

घराट उद्योग –घराट का स्थानीय नाम घट है, जो पानी से चलित होते है। यह मुख्य रूप से कृषि आधारित उद्योग ही है, जिससें गेंहू, मडुवा, चुवा, दालें आदि की पिसाई की जाती है। पहाड़ों में स्थायी पैतृक सम्पत्ति की भांति पुत्रों में घराट का भी बटवारा होता है। घराट स्थानीय गाड़–गधेरों पर स्थापित किये जाते है, और पानी की उपलब्धतानुसार स्थायी या मौसमी होते है। यद्यपि आधुनिक तकनीक को अपनाने से इसका उपयोग न के बराबर रह गया है।

चमड़ा व जूता उद्योग :–पर्वतीय क्षेत्र से मरे हुए जानवरों की खाल निकालने और उसका चमड़ा बनाकर जूते बनाने वाले कारीगर बाडे या बाड़ी कहलाते थे। ग्रामीण क्षेत्र में अनाज के बदले जूते लिये जाते थे। गढ़वाल क्षेत्र के चन्दपुरी, मजोठी तथा कौब गांव तथा कुमांऊं क्षेत्र के लोहाघाट तथा पिथौरागढ़ के निकटवर्ती गांव में बड़ी संख्या में बाड़े निवास करते थे। जूते के अलावा ये चमड़े के थेले व मस्सक बनाकर पूरे क्षेत्र में व्यापार करते थे। धीरे–धीरे यह कुटीर उद्योग बन्द होने लगे।

काष्ठ कला उद्योग :–उत्तराखण्ड के अधिकांश भाग में वनों की अधिकता है। जिससे लकड़ी की उपलब्धता से घरेलू लकड़ी कारीगरो को रोजगार प्राप्त होता है। पर्वतीय क्षेत्रों में मकान व गौशाला निर्माण में लकड़ी के स्लीपर व बल्लियों का प्रयोग किया जाता था। लकड़ी के सामान बनाने वाले कारीगरों को बढई कहा जाता था। जो विभिन्न लकड़ियों से प्रवेश द्वार, खिड़कियाँ, छज्जा, स्तम्भ, जंगले, आलमारियाँ, लकड़ी के सन्दूक, फर्नीचर, मूर्तिया व घराट के उपकरण बनाते थे। इसके अतिरिक्त यह कृषि कार्य में उपयोग होने वाले उपकरणों जैसे हल, पलटा आदि बनाने का काम करते थे।

हस्त निर्मित कागज उद्योग :–गढ़वाल व कुमाऊं क्षेत्र में हाथ से कागज उत्पादन का कार्य काफी पुराने समय से किया जाता रहा है। भोज पत्रों के बाद हाथ से बने कागज का प्रयोग कब से शुरू हुआ उसका कोई प्रमाण नहीं है। वाल्टन ने पर्वतीय क्षेत्र में हाथ से बने कागज के प्रयोग का वर्णन किया था। जिस घास से यह कागज बनाया जाता था गढ़वाल में उसे सतपूड़ा या सतबडुआ और कुमाऊं में बडुआ कहा जाता है। कुमाऊं क्षेत्र में हस्त निर्मित कागज बढ़ी मात्रा में बनता था। इस कागज का उपयोग मुख्य रूप से जन्म कुण्डली, धार्मिक ग्रन्थ, राजस्व लेखे, जन्म–मृत्यु का लेखा आदि रखने में किया जाता था।

रेशा उद्योग :–उत्तराखण्ड के अधिकांश पर्वतीय क्षेत्रों में मोटा घास भीमल (भिमू), मालू, जंगली कंडाली तथा बाबड़ जैसे रेशेदार घास तथा वृक्ष होते है। जिनका रेशा निकाल कर रस्सियां बनाई जाती है गाय, बैल, भैंस, घोड़े आदि जानवरों को बांधने के लिए प्रयोग में लाई जाती थी। साथ ही इन रस्सियों को प्रयोग चटाई बनाने हेतु के लिए भी किया जाता है। भांग व सेल (भीमल के रेशे) से बनी रस्सियां बाहरी बाजारों में बेची जाती थी।

रिंगाल बर्तन उद्योग :–इस उद्योग को स्थानीय भाषा में रूडियागिरी कहाजाता है तथा इसमें काम करने वाले कारीगरों को रूड़िया कहा जाता है। गढ़वाल तथा कुमाऊं में रिंगाल (निंगाल) और बांस की उपज जंगलों में होती है। कुमाऊं का दानपुर, गढ़वाल का चोपता रामणी, वाण, सुतोल, कनोल, पाणा, इराणी, डुमक कंगलोट, बूढ़ा केदार आदि स्थान उच्च किस्म के रिंगाल के लिए प्रसिद्ध है। वनों के पास के गांव के कारीगर (रूड़िया) रिंगाल के बर्तनों का निर्माण करके ग्रामीण क्षेत्रों की मांग को पूरा करते थे।

मधुमक्खी पालन :–कुमाऊं और गढ़वाल की पर्वतीय चट्टानों पर भोरों का शहद बड़ी मात्रा में पाया जाता था। इन मक्खीयों को घर में नहीं पाला जाता था। इनका शहद अधिक नशीला व गुणकारी होता है। गांव के लगभग सभी घरों में एक छोटा स्थान मौन पालन के लिए बनाया जाता था। ऊँचाई वाले क्षेत्रों में जहां वनों की अधिकता थी या फसलों की बहुलता होती थी मौन पालन अधिक होता था। वनों में पेड़ की गुफाओं में मौन द्वारा एकत्रित शहद निकाला जाता था। जिससे बाहरी क्षेत्र में बेचा जाता था। कुमाऊं क्षेत्र में यह व्यापार अधिक प्रचलित था।

जड़ी– बूटी आधारित उद्योग :–गढ़वाल व कुमाऊं के पर्वतीय क्षेत्रों के ग्रामीणों वैद्य को जड़ी बूटियों की अच्छी जानकारी होती थी। यह कहा जाता है कि गढवाल क्षेत्र के वैद्यों को ऐसी जड़ी बूटियों का ज्ञान था जो पारे से सोना तथा स्वर्ण भष्म तैयार करते थे। लेकिन विकास के साथ क्षेत्र की जड़ी बूटियां बड़ी मात्रा में बाहरी मण्डियों में जाने लगी। कुछ विशेष जड़ी बूटियों की जानकारी वैद्य लोग दूसरे व्यक्ति को जीवन के अन्त सयम तक नही बताते थे। जिस कारण भी यह उद्योग प्रभावित हुआ। सामान्यता गुलबनप्सा, दालचीनी, दारू हल्दी, कुटगी, चिरायता, समोया, कुटज, कुलाड़कटी, पत्थरचट्टा हिंगोल आदि का प्रयोग घरेलू इलाज में होता रहा है।

लौहारगिरी :–लोहे के कृषि औजार व बर्तन बनाने वाले कारीगरों को लौहार कहा जाता था। जो मुख्य रूप से खेती के औजारों के अतिरिक्त, तलवार, खुकंरी, फर्सा, मूर्तियों सहित देवी देवताओं के निशान बनाते थे। लौहार लगभग सभी गांव में पाये जाते थे और ये अपनी वस्तुए अनाज के बदले बेचते थे।

लीसा उद्योग :–चीड़ के पेड़ों से लीसा निकालने का कार्य ब्रिटिश काल में कुमाऊं क्षेत्र से प्रारम्भ हुआ था। सबसे पहले अंग्रेजों ने भवाली में लीसा से रोजिन व तारपीन का तेल बनने का कारखाना स्थापित किया था। जिसे बाद में बेरली स्थानान्तरित कर दिया गया। बाद में गढ़वाल क्षेत्र में भी यह कार्य प्रारम्भ हो गया। वन विभाग की सांख्यिकीय पत्रिकानुसार उत्तराखण्ड के वनों से 1930–31 में 30,556 क्विंटल लीसा उत्पादन हुआ था जो 1950–51 में 54,536 क्विंटल हो गया।

स्वर्णकारी उद्योग :–उत्तराखण्ड के गढ़वाल क्षेत्र के विषय में वाल्टन (1910) में लिखा कि अलकनन्दा नदी से सोना धोकर निकाला जाता था और अनुमान है कि औसत श्रमिक द्वारा चार आना सोना तैयार

किया जाता था। राय बहादुर पातीराम परमार (1916) ने लिखा कि स्वर्ण मिश्रित रेत अलकनन्दा एवं मंदाकिनी घाटियों में पाया जाता है। सोने के आभूषण बनाने वाले कारीगरों को सुनार अर्थात सोनार कहा जाता था। गढ़वाल में सोना अलकनन्दा की रेत था तिब्बती व्यापार से आता था। कुमाऊं में सोना चांदी की आपूर्ति तिब्बत तथा बाहरी बाजारों से होती थी। पर्वतीय अंचल में सोने चांदी के जेवर की मांग यही सोनार पूरी करते थे।

ऊन उद्योग :–प्रत्येक परिवार में जहाँ भेड़ बकरी पालन होता था। वहां ऊन की कताई–बुनाई का कार्य होता था। ऊन से बनी वस्तुएँ जैसे ओढ़ने–बिछाने के थुलमा, कोट, दन, ऊनी, कपड़ा, अंगरखा, पैजामा, कम्बल आदि पारिवारिक उपयोग हेतु तैयार किये जाते थे। गढ़वाल क्षेत्र में ऊनी वस्त्रो का व्यापार माणा तथा नीति घाटी (चमोली) के निवासी, भोटिया परिवार के सदस्य सर्दीयों में अलकनन्दा घाटी तथा हर्षित आदि क्षेत्रों में आकर करते थे। इसी प्रकार कुमाऊं के भोटिया दानपुर जोहार एवं दारमा पिथौरागढ़ में भी ऊन वस्त्र बनते थे। जिनका धारचूला व मुनस्यारी द्वारा तिब्बत से व्यापार होता था। उत्तर प्रदेश उद्योग विभाग द्वारा पर्वतीय क्षेत्र में ऊन उद्योग के बढ़ाने हेतु प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना प्रारम्भ की गई जो टीसी योजना के नाम से थी। प्रारम्भ में पिथौरागढ़ अल्मोड़ा, बागेश्वर, धारचुला, माणा–गोपेश्वर, नीति भीमतला, दुगड्डा तथा पौड़ी में प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किये गये। बाद में टिहरी, नैनीताल, अल्मोड़ा, उत्तरकाशी, चमोली को इसमें सम्मिलित कर लिया गया और इस उद्योग का भी तेजी से विकास हुआ।

हस्तकला उद्योग :–हस्तकला उद्योग उत्तराखण्ड के ग्रामीण क्षेत्रों में आदिकाल से चले आ रहे है। विशेष रूप से अल्मोड़ा व श्रीनगर गढवाल में स्थानीय कारीगर ताम्बे तथा पीतल की विभिन्न सजावटी व घरेलू उपयोगी वस्तुओं का निर्माण करते थे। इसके अतिरिक्त लकड़ी की कलात्मक वस्तुओं की भी निर्माण होता था। पर्वतीय क्षेत्रों में ऊनी कालीन, रंगीन शॉल, हौजरी, पापड़ी काष्ठकला की वस्तुएं पत्थर की मूर्तियां आदि का निर्माण किया जाता था। क्षेत्र की हस्तकलाओं को बढ़ावा देने हेतु विभिन्न प्रोत्साहन व प्रशिक्षण योजनाओं की शुरूआत की गई।

काशीपुर, जसपुर में प्रिटिंग, स्क्रीन प्रिटिंग, ब्लॉक कटिंग आदि के प्रशिक्षण की व्यवस्था प्रारम्भ हुई। उत्तरकाशी, पौड़ी, चमोली, पिथौरागढ़ में शॉल बुनाई प्रशिक्षणकेन्द्रों, श्रीनगर गढ़वाल, टिहरी, उत्तरकाशी, चमोली, पिथौरागढ़ व बड़कोट में पापड़ी काष्ठकला केन्द्रों को स्थापना की गई। मुनस्यारी, धारचुला, डीडीहाट अल्मोड़ा, चमोली, गुप्तकाशी आदि के दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्रों में कालीन बुनाई प्रशिक्षण केन्द्रो की स्थापना की गई।

रेशम उद्योग विकास :–कुमाऊं का इतिहास इस तथ्य को उजागर करता है कि राजा इन्द्र चन्द (758–778) के शासन कक्ष में रेशम कीट पालन का काम होता था। इस राजा ने नेपाल से रेशम कीट लाकर रेशम उत्पादन प्रारम्भ किया था। 1958 में देहरादून में शहतूत रेशम किट पालन कार्य की स्थापना की गई। पर्वतीय क्षेत्र में रेशम विकास कार्यक्रम 1961 में अल्मोड़ा से प्रारम्भ किया गया था। जो बाद में चमोली, उत्तरकाशी व पिथौरागढ़ में भी प्रारम्भ हो गया। शहतूत रेशम कीट पालन केन्द्र की सहायता से उत्तराखण्ड के नौ पर्वतीय जिलों में रेशम कीट पालन से दो फसलें मई तथा अक्टूबर में ली जाने लगी। राज्य में लगभग 65 रेशम फर्म तथा एक रीलिंग केन्द्र तथा एक प्रशिक्षण केन्द्र कार्यरत है। शहतूत रेशम उत्पादन के साथ–साथ बांज टसर विकास परियोजना 1968 में चमोली जनपद में प्रारंम्भ की गई। उसके बाद रानीखेत तथा नैनीताल के भीमताल में टसर कीट पालन हेतु परीक्षण किया गया और इसमें सफलता मिली। वन विभाग के सर्वेक्षण के अनुसार पर्वतीय क्षेत्रों के 5.5 लाख हेक्टेयर क्षेत्र पर बांज के वृक्ष है। इसलिए यहां बांज टसर पालन को बढ़ावा मिला।

उत्तराखण्ड राज्य की ग्रामीण उद्योगों की वास्तविक स्थिति के विश्लेषण हेतु कोई विश्वसनीय आंकड़े उपलब्ध नहीं है क्योंकि राज्य स्थापना से पहले इस क्षेत्र का विधिवत आर्थिक सर्वेक्षण नही किया

गया। इसलिए इन उद्योगों की स्थिति तथा विकास का विश्लेषण जनगणना के आंकड़ों के आधार पर किया जाता रहा है। जिसमें उत्तराखण्ड राज्य के सभी जनपदों के आंकड़े नहीं हैं, क्योंकि उस समय उत्तराखण्ड राज्य अस्तित्व में नहीं आया था और जो आंकड़े है उसमें मुख्य रूप से प्रमुख पर्वतीय जिले ही सम्मलित है।तालिका (14.1) में 1971 से 2011 की जनगणना के आधार पर उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार ग्रामीण (पारिवारिक) उद्योग में कार्यरत कर्मचारियों को आधार बनाकर उनकी स्थिति को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

तालिका (14.1) ग्रामोद्योग या पारिवारिक उद्योगों में कार्यरत कर्मचारियों का विवरण

(मुख्य कर्मचारियों से प्रतिशत में)

क्र0सं0	जनपद	1971	1981	1991	2001	2011
1	उत्तरकाशी	0.73	1.08	1.71	1.63	1.07
2	चमोली	1.71	1.70	1.16	1.02	0.87
3	टिहरी	1.09	0.60	0.30	0.28	0.27
4	पौड़ी	0.83	0.71	0.50	0.42	0.36
5	देहरादून	2.47	1.20	0.86	0.80	0.67
6	**गढवाल मण्डल**	**1.37**	**1.18**	**0.71**	**0.71**	**0.69**
7	अल्मोड़ा	1.20	1.99	0.71	0.68	0.47
8	पिथौरागढ़	1.70	1.80	1.62	1.54	1.34
9	नैनीताल	2.05	1.90	0.94	0.86	0.64
10	**कुमाऊं मण्डल**	**1.65**	**1.60**	**1.02**	**0.92**	**0.74**
11	**पर्वतीय क्षेत्र**	**1.47**	**1.60**	**0.86**	**0.76**	**0.65**

स्रोत– जनगणना रिपोर्ट विभिन्न वर्ष

तालिका से स्पष्ट है कि गढ़वाल मण्डल में 1971–2011 के दौरान इन उद्योगों में कुमाऊं मण्डल की तुलना में अधिक कमी आई है। यद्यपि गढ़वाल मण्डल के उत्तरकाशी जिले में 1971 से 2011 के दौरान इन उद्योगों में तेजी से विकास हुआ और इनमें कार्यरत लोगों की संख्या बढ़ी। लेकिन टिहरी गढवाल में इन उद्योगों में कार्यरत लोगों में तेजी से कमी देखी गई। इसी प्रकार कुमाऊं मण्डल में भी यद्यपि इन उद्योगों के विकास में कमी आई, किन्तु नैनीताल में यह गिरावट सर्वाधिक थी लेकिन वह भी टिहरी–गढ़वाल से कम ही थी। इस प्रकार पर्वतीय क्षेत्र में 1971 से 2011 के दौरान कुल मिलाकर ग्रामीण उद्योगों में कार्यरत कारीगरों की संख्या लगभग स्थिर रही।

14.5 ग्रामोद्योग की प्रमुख समस्याएँ

गांधी जी ने कहा था कि भारत की प्रगति ग्रामीण तथा कुटीर उद्योगों के विकास में निहित है। आज के आधुनिक तकनीक के युग में इन उद्योगों का महत्व और भी बढ़ गया है क्योंकि पूंजीवाद के कारण श्रम प्रतिस्थापन की तकनीक ने श्रम बाजार में बेकारी फैला दी है। ऐसे में कृषि के साथ चलने वाले इन उद्योगों का महत्व और बढ़ा है। लेकिन आर्थिक विकास के इस युग में विभिन्न उद्योगों को कड़ी प्रतियोगिता का सामना करना पड़ रहा है। उत्तराखण्ड के ग्रामीण व कुटीर उद्योग भी इससे अछूते नहीं है। पिछले दो दशकों में इन उद्योगें में ह्रासमान गति रही है। जो एक विचारणीय तथ्य है क्योंकि ये उद्योग स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ बेरोजगारी को रोकने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। किन्तु वर्तमान वैश्वीकरण के युग में इनको अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। जिनमें से प्रमुख समस्याएँ इस प्रकार है :–

कच्चे माल की समस्या :–ये उद्योग कृषि व वन आधारित कच्चेमाल पर निर्भर करते है। जैसे काष्ठ कला उद्योग– लकड़ी पर, लीसा उद्योग चीड़ के वन पर, अगरबत्ती व धूप निर्माण भी वनों पर तथा जड़ी बूटी खनन भी वनों पर आधारित है। काष्ठ उद्योग का मुख्य कच्चामाल लकड़ी है, लेकिन वर्तमान

वन नीति के अन्तर्गत वन वृक्षों का कटान कार्य वन विभाग द्वारा किया जाता है, और उनका भण्डारन पर्वतीय क्षेत्र से दूर रायवाला (देहरादून) कोटद्वार, टनकपुर व काठगोदाम के लकड़ी डिपो में किया जा रहा है। जिससे यातायात व्यय की अधिकता से कारीगरों को दुगने मूल्य पर लकड़ी मिलती ह, जिसके परिणाम स्वरूप जोशीमठ, गोपेश्वर, उत्तरकाशी, नई टिहरी, चकराता, पिथौरागढ़ तथा रानीखेत जैसे दूरस्थ क्षेत्रों की काष्ठकला उद्योग इकाई बन्द हो गई है।

अगरबत्ती तथा धूतबत्ती निर्माण उद्योग में उपयोग होने वाले सुगन्धित पौधे जैसे– देवदार, सुराई की पत्ती, कुटज, समोया, जटामालसी आदि जड़ी–बूटी तथा खनन पर भी वन विभाग ने जिला भेषज संघों को एकाधिकार दे दिया है। जो कच्चे मालों के उपयोग में बाधा बने हुए है।

लीसा उद्योग पर्वतीय क्षेत्र में प्रमुख रोजगार सृजन उद्योग है। लीसा से पेंट–वार्निश तथा तारीपन का तेल जैसे उत्पादन बनते है। इसके अतिरिक्त अन्य उत्पादन बनाने की तकनीक विकसित नहीं की गई। साथ ही दूरस्थ लीसा डिपो की स्थापना के कारण कच्चेमाल की नियमित व निरन्तर प्राप्ति में अनेक बाधाएँ है।

रिंगाल उद्योग का कच्चामाल रिगांल है, रिंगाल की बाहरी क्षेत्र में अवैध बिक्री के कारण कच्चेमाल में कमी आती जा रही है। साथ ही कारीगरों के निर्मित माल को केवल ग्रामीण व स्थानीय क्षेत्र में ही बिक्री का अधिकार दिया गया है, किन्तु वाह्य क्षेत्र में बिक्री पर प्रतिबन्ध है। ग्रामीण कारीगरों को रिगांल के परमिट दिये जाने की व्यवस्था नहीं है।

ऊन उत्पादन उद्योग भी भेड़ पालन तक की सीमित है, क्योंकि ऊन भण्डारन, धुलाई, कार्डिंग व गुणवत्ता निर्धारण की समुचित व्यवस्था न होने के कारण कालीन व शॉल उद्योग को कच्चेमाल (तागें) के लिए उद्योगों पर निर्भर रहना पड़ता है।

वित्तीय साधनों का अभाव :–ग्रामीण क्षेत्र में यद्यपि सहकारी व राष्ट्रीयकृत बैकों की अनेक शाखाएँ स्थापित हो चुकी है। लेकिन जटिल ऋण प्रक्रिया व जमानत की कमी के कारण ग्रामीण इनका समुचित लाभ नही उठा पाते। बैंक भी किसी प्रकार का जोखिम नहीं उठाना चाहते, क्योंकि अधिकांश ग्रामीण कारीगर भूमिहीन है और उनके मकान भी पत्थर के है। जिन्हें बैंक जमानत के रूप में स्वीकार नहीं करता। इसलिए इन कारीगरों को ऊँची ब्याज दर पर अन्य स्रोत से ही पूंजी प्राप्त करनी पड़ती है।

परम्परागत उत्पादन तकनीक :–सबसे बड़ी समस्या कारीगरों द्वारा उपयोग की जाने वाली पिछड़ी उत्पादन तकनीक है, जिससे कम उत्पादन, कम उत्पादकता, कम अधिक्य तथा कम आय का कुचक्र चलता रहता है। जो इन उद्योगों के विकास में सबसे बड़ी बाधा है। परम्परागत तकनीकी को अपनाने का प्रमुख कारण जानकारी का अभाव व विद्युत शक्ति की उचित व्यवस्था न होना आदि है।

मौन पालन में प्रशिक्षण की व्यवस्था न होना तथा मार्गदर्शन न दिया जाना। मौन बक्सों की अनुपलब्धता तथा सम्बन्धित संयंत्रों व औजारों की कमी मुख्य समस्या है। चूना उद्योग वन विभाग की नीतियों के कारण मृत होता जा रहा है; क्योंकि ईधन के लिए लकड़ी प्रयोग पर प्रतिबन्ध लग गया है अन्य कोई उचित व्यवस्था अभी उपलब्ध नहीं है। रेशा उद्योग में यंत्रीकरण की समस्या वर्षों से बनी हुई है। रामबांस से रेशा निकालने व रेशे से रस्सी, आदि बनाने में मशीनों का सीमित उपयोग ही हो रहा है। साथ ही भांग, जंगली कण्डाली, बाबड तथा भेंकल के रेशों को भी पुरानी तकनीक द्वारा ही निकाला जा रहा है। जिस कारण ऊँची लागत व कम उत्पादन की समस्या से ये उद्योग जूझ रहे है।

उत्पादित माल की बिक्री की समस्या :–उत्तराखण्ड के ग्रामीण उद्योगों की प्रमुख समस्या उत्पादित माल की उचित बिक्री की है, क्योंकि राज्य के ग्रामीण उद्योग दूरस्थ व पर्वतीय क्षेत्र में स्थापित है जहां से अन्य स्थानों पर निर्मित माल को पहुँचाना आसान नहीं है, क्योंकि इससे यातायात लागत के कारण वस्तु का मूल्य ऊँचा हो जाता है और गुणवत्ता, डिजाइन, बाजार मांग व प्रतियोगिता के कारण वस्तु बिक्री में कठिनाई आती है। जिससे समय पर धन प्राप्ति न होने के कारण कारीगर ऋण लेकर अपना गुजारा

करने को मजबूर होते है और एक बार ऋण जाल में फंसने के कारण उद्योग का विकास भी प्रभावित होता है।

यातायात की समस्या :–राज्य के अधिकांश ग्रामोद्योग दूरस्थ पर्वतीय गांव में है। जहाँ यातायात की उचित सुविधाओं का अभाव है। जिससे कच्चेमाल व तैयार माल को एक स्थान से दूसरे स्थान पर लाने ले जाने में कारीगरों को अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है और समय पर माल की आपूर्ति न होने पर आगे के व्यवसाय पर बुरा प्रभाव पड़ता है। यद्यपि राज्य स्थापना के बाद इस ओर अनेक प्रयास किये गये है। परन्तु अभी भी ओर विकास की आवश्यकता है।

अंवाछित करारोपण की समस्या :–ग्रामोद्योग के कच्चेमाल, तैयार माल, मशीनों पर स्थानीय करों के लगने से उत्पादित वस्तु का मूल्य बढ़ जाता है। जिससे प्रतियोगिता में अन्य उद्योग की तुलना में ग्रामोद्योग के उत्पाद मंहगे होने के कारण नकार दिये जाते है। जैसे उत्तराखण्ड बनने से पहले हरिद्वार, देहरादून के आसपास तथा ऊधमसिंह नगर व नैनीताल के ग्रामीण क्षेत्र के उद्योग सहारनपुर तथा मुरादाबार से कच्चा माल मंगाते थे, परन्तु अलग राज्य बनने के बाद करो की मार के कारण अब इस क्षेत्र के ग्रामोद्योग बन्दी की कगार पर है।

सूचना व परामर्श का अभाव :–पर्वतीय क्षेत्र में संचार व यातायात सुविधाओं के अभाव के कारण इन क्षेत्रों में ग्रामोद्योग विकास की योजनाओं की जानकारी का अभाव है। साथ ही प्रशिक्षण व परामर्शदाता को जनपदों में रहने के कारण उद्योगों को कठिनाई के समय उचित मार्गदर्शन भी नहीं मिल पाता, जिससे उद्योग हानि उठाते हुए बन्दी की कगार पर पहुँच जाते है।

यदि राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों का विकास करना है तो ग्रामीण उद्योग के विकास की बाधाओं को दूर करना होगा, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के साथ–साथ ग्रामीण युवाओं के लिए स्थानीय रोजगार की प्राप्ति हो, और युवको के पलायन में कमी आये। यद्यपि उत्तराखण्ड बनने के बाद इस दिशा में सरकार द्वारा समय–समय पर अनेक नीतियों व अनुदानों की घोषणा की गई है परन्तु उनका परिणाम सामने आने में अभी समय लगेगा।

अभ्यास प्रश्न 1

लघु उत्तरीय प्रश्न –

1. उत्तराखण्ड में ग्रामोद्योग का क्या आशय हैं, संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए ?

.....
.....
.....
.....
.....
.....

2. उत्तराखण्ड में ग्रामोद्योग का विकास पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए ?

.....
.....
.....
.....
.....
.....

3. उत्तराखण्ड में ग्रामोद्योग की प्रमुख समस्याएँ क्या हैं, संक्षेप में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

14.6 लघु उद्योग का अर्थ

यद्यपि कुटीर उद्योगों को लघु उद्योग कहा जाता है लेकिन 1950 के राजकोषीय आयोग ने कुटीर तथा लघु उद्योगों में अन्तर स्पष्ट किया है। राजकोषीय आयोग के अनुसार कुटीर उद्योग वे उद्योग होते हैं जिनमें परिवार के सदस्य कार्य करते हैं। यह उद्योग पूर्णकालिक व्यवसाय के रुप में या अंशकालिक व्यवसाय के रुप में चलाये जाते हैं जिनमें परम्परागत विधियों एवं स्थानीय कच्चे माल का प्रयोग होता है तथा उत्पादित वस्तुओं को स्थानीय बाजार में बेचा जाता है। औद्योगिक विकास तथा विनियमन अधिनियम, 1955 में जिन उद्योगों को पंजीकरण से मुक्त रखा गया था उन उद्योगों को 'लघु अथवा छोटे पैमाने वाला क्षेत्र' कहा गया। जिन उद्योगों में विद्युत शक्ति का प्रयोग होता था, किन्तु मजदूरों की संख्या 50 से कम थी और जिन उद्योगों में विद्युत शक्ति का प्रयोग नहीं होता था तथा श्रमिक संख्या 100 से कम थी, उनका पंजीकरण आवश्यक नहीं था। इस क्षेत्र को लघु उद्योग कहा गया। औद्योगिक विकास तथा निनियमन अधिनियम, 1955 में पंजीकरण से मुक्त रखा। इस क्षेत्र की परिधि से बाहर वाले उद्योगों को 'बड़े पैमाने के उद्योग' की संज्ञा दी गयी। बड़े पैमाने के उद्योग के अन्तर्गत उन उद्योगों को रखा गया जिनमें विद्युत शक्ति सहित 50 या इससे अधिक मजदूर और विद्युत शक्ति के बिना 100 अथवा उससे अधिक मजदूर काम करते हैं।

लघु उद्योगों की परिभाषा में निवेश, समय तथा तकनीकी परिवर्तनों के अनुसार निरन्तर सुधार किये गये है, जिससे लघु उद्योगों के विकास में कोई कठिनाई न हो। स्वतन्त्र भारत में पहले प्रशुल्क आयोग ने अपनी 1950 की रिपोर्ट में कुटीर उद्योग तथा लघु उद्योग को पृथक रूप से परिभाषित करने की पहल की गई थी रिपोर्ट के अनुसार ''लघु स्तरीय उद्योग वे है जो साधारतया अपने कारीगरों को पूर्णकालिक व्यवसाय देते है और नगरीय अथवा उपनगरीय क्षेत्रों में स्थित है।'' द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956) प्रारूप में लघु उद्योग की कार्यकारी परिभाषा इस प्रकार दी गई, ''लघु स्तरीय उद्योग बोर्ड द्वारा एक कार्यकारी परिभाषा अपनाई गई, जिसके अन्तर्गत उन समस्त इकाइयों अथवा प्रतिष्ठानों को लघु स्तरीय उद्योगों की परिधि में लाया गया, जिसमें 5 लाख रूपये से कम पूंजी निवेश और विद्युत शक्ति का प्रयोग कर 50 से कम व्यक्तियों को रोजगार दिया जा रहा है।''

लघु स्तरीय उद्योग की इस कार्यकारी परिभाषा में 1975 में उल्लेखनीय परिवर्तन सामने आया और इसे अति लघु उद्योग जिनकी पूंजी निवेश सीमा एक लाख में कम हो, लघु उद्योग जिनकी पूंजी निवेश सीमा 10 लाख से कम हो और सहायक या मध्यम उद्योग जिनकी पूंजी निवेश सीमा 15 लाख से कम हो, के आधार पर वर्गीकरण किया गया। इनकी निवेश सीमा में समय–समय पर परिवर्तन होता रहा। वर्तमान में सूक्ष्म (अति लघु) उद्योग, लघु उद्योग तथा मध्यम (सहायक) उद्योग से अभिप्राय ऐसे उद्योग से है, जो सूक्ष्म, लघु तथा मध्यम उद्यम विकास अधिनियम 2006 के अध्याय 3 की धारा–7 में दी गई परिभाषा के अन्तर्गत उद्योगों को दो श्रेणियों में बॉटा गया है जिसे सारणी द्वारा दिखाया गया है–

क्र0 सं0	उद्यम	पूंजी निवेश (रूपये में) (सेवा प्रदान करने वाले)	पूंजी निवेश (रूपये में) (विनिर्माण एवं उत्पादन करने वाले)

1.	सूक्ष्म उद्यम	10 लाख से अधिक न हो	25 लाख से अधिक न हो
2.	लघु उद्यम	10 लाख से अधिक किन्तु 2 करोड़ से कम हो	25 लाख से अधिक किन्तु 5 करोड़ से कम हो
3.	लघु उद्यम	2 करोड़ से अधिक किन्तु 5 करोड़ से कम हो	5 करोड़ से अधिक किन्तु 10 करोड़ से कम हो

वर्तमान समय में उत्तराखण्ड में भी लघु (सेवा)उद्योग की श्रेणी में वह उद्योग आते है जिनकी पूंजी निवेश 10 लाख रूपये से अधिक किन्तु 2 करोड़ रूपये से कम हो।अब आप समझ गये होंगे कि विनिर्माण उद्योग एवं सेवा उद्योग में क्या अन्तर है।

14.7उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था में लघु उद्योग क्षेत्र का महत्व

अर्थव्यवस्था में लघु क्षेत्र के उद्योग आर्थिक, सामाजिक तथा राजनैतिक पहलुओं से औद्योगिक विकास की आधारशिला है। अतः सरकार को संतुलित अर्थव्यवस्था की दृष्टि से कुटीर तथा छोटे पैमाने के उद्योग के विकास को महत्व प्रदान करना चाहिए। लघु क्षेत्र उद्यम का महत्व निम्नलिखित है–

1. **रोजगार में वृद्धि–** उत्तराखण्ड जैसेप्रदेश में जहॉ श्रमिक अधिक मात्रा में वृद्धि हो रही है और पूंजी की कमी है। ऐसे पूंजी अभाव एवं श्रम प्रधान प्रदेश में लघु उद्योग उपयुक्त है क्योंकि इन उद्योगों द्वारा कम पूंजी के विनियोग से भी रोजगार में पर्याप्त वृद्धि की जा सकती है।
2. **आय वितरण में समानता–** बड़े उद्योगों की तुलना में लघु उद्योगों का स्वामित्व अधिक से अधिक हाथों में जाता है जिससे आर्थिक शक्ति का केन्द्रीकरण नहीं होता है फलस्वरुप राज्य आय का समान वितरण होता है।
3. **बड़े उद्योगों के लिए सहायक या पूरक–** लघु उद्योग बड़े उद्योगों को कच्चा माल प्रदान करते हैं जिससे उपभोग वस्तुओं का निर्माण होता है। इस तरह से ये उद्योग बड़े उद्योग के पूरक होते हैं।
4. **तकनीकी ज्ञान की कम आवश्यकता –** इन उद्योगों को चलाने के लिए आधुनिक तकनीकी की कम आवश्यकता होती है जिससे ग्रामीण व्यक्ति भी इस उद्योग को चला सकते हैं।
5. **आयात और निर्यात–** लघु उद्योग स्थानीय संसाधनों का एवं परम्परागत तकनीकी के प्रयोग से वस्तुओं का उत्पादन करते हैं जिससे आयात पर निर्भरता कम होती है। ये उद्योग कलात्मक वस्तुओं का उत्पादन करते हैं जैसे हाथी दांत पर काम, चन्दन की वस्तुएँ, पत्थर की मूर्तियॉ, धातु की मूर्तियॉ आदि तथा इनका निर्यात करते हैं जिससे विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है।
6. **वर्ग–संघर्ष से बचाव–** छोटे उद्योग में परिवार के सदस्य ही कार्य करते हैं या बहुत कम मात्रा में मजदूरी के बदले में श्रमिक रखे जाते हैं। लघु उद्योगों में मालिक व मजदूरों में परस्पर सम्बन्ध भी अच्छे रहते हैं। फलस्वरूप वर्ग संघर्ष की सम्भावनाएँ कम रहती है।
7. **कृषि पर जनसंख्या के भार में कमी–** जहॉ जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ रही है जिसके कारण कृषि पर दबाव भी बढ़ता जा रहा है ऐसी स्थिति में लघु उद्योग ही अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाते हैं।
8. **शीघ्र उत्पादक उद्योग–** लघु उद्योग में स्थापना के तुरन्त बाद वस्तुओं का उत्पादन शुरू हो जाता है इसलिए इनको शीघ्र उत्पादक उद्योग भी कहते हैं। भवस्तुओं की मॉग की तुलना में बड़े उद्योग वस्तुओं की पूर्ति करने में असफल होते हैं क्योंकि वृहद उद्योगों की स्थापना एवं उनके द्वारा उत्पादन करने के समय में वर्षों का अन्तर होता है इसलिए लघु उद्योग वस्तुओं की मॉग की पूर्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
9. **शहरीकरण और औद्योगीकरण के प्रभाव से सुरक्षा–** ये उद्योग सामान्यतः स्थानीय होते हैं इसलिए बड़े उद्योगों की समस्याओं जैसे– आवास की समस्या, यातायात, पानी, जल निकासी, दूषित वातावरण जैसी समस्याओं से मुक्ति मिल जाती है।

10. **विकेन्द्रीकरण–** लघु उद्योग विकेन्द्रीकरण का महत्वपूर्ण साधन है। देश में मिल उद्योग का अभी तक जो विकास हो पाया है, वह मुख्यतः मुम्बई, अहमदाबाद, नागपुर, कोलाकाता आदि कुछ नगरों तक ही सीमित रहा है। परिणामस्वरूप देश में आर्थिक एवं सामाजिक विषमताएँ उत्पन्न हुई है। ऐसी समस्याओं के समाधान हेतु लघु उद्योग महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।अत उत्तराखण्ड जैसे प्रदेश में लागत थोड़ी होने एवं आधारित संरचना जैसी सुविधाओं की कम जरुरत पड़ने के कारण ये उद्योग अपेक्षाकृत अधिक आसानी से प्रदेश के विभिन्न भागों में फैलाये जा सकते हैं।

इसके अतिरिक्त लघु उद्योग फूड प्रोसोसिंग क्षेत्र में भी अपना योगदान दे रहे हैं। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि लघु क्षेत्र उद्यम हमारी अर्थव्यवस्था की एक ऐसी महत्वपूर्ण इकाई है जिस पर उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था की एक संतुलित क्षेत्रीय विकास की नींव रखी जा सकती है।

14.8उत्तराखण्ड में लघु उद्योगों का विकास

रोजगार उपलब्धता, क्षेत्रीय सन्तुलन तथा आय के साधन स्थानीय बाजार की मांगी की पूर्ति में लघु उद्योगों का महत्वपूर्ण स्थान हैं। लघु उद्योग में पूंजी निवेश की तुलना में श्रम रोजगार की अधिकता होती है। जिससे स्थानीय युवाओं व कारीगरों को रोजगार प्राप्त होता है। उत्तराखण्ड एक नवीन राज्य है। इसलिए लद्यु उद्योग के विकास के जो आंकड़े उपलब्ध है उसमें उत्तराखण्ड के सभी जिले सम्मिलित नहीं है। मुख्य रूप से हरिद्वार व ऊधम सिंह नगर के आंकड़ों का इसमें समावेश नहीं है।

तालिका (14.2) पर्वतीय क्षेत्र में 1995,2000 तथा 2016 में लघु उद्योग इकाइयों तथा रोजगार की स्थिति

क्र.सं.	जनपद	1995– 2000 में इकाई में वार्षिक वृद्धि दर	1995 – 2000 में रोजगार में वार्षिक वृद्धि दर	2000 – 2016 में इकाई में वार्षिक वृद्धि दर	2000 – 2016 में रोजगार में वार्षिक वृद्धि दर
1	उत्तरकाशी	6.8	3.7	6.7	3.4
2	चमोली	6.8	6.9	7.0	7.1
3	टिहरी	5.5	9.9	5.8	10.2
4	पौड़ी	7.9	4.3	7.8	4.4
5	देहरादून	4.3	1.9	4.5	2.0
6	गढ़वाल मण्डल	6.0	3.6	6.9	3.9
7	अल्मोड़ा	7.1	2.7	7.3	2.9
8	पिथौरागढ़	9.3	4.2	9.2	3.9
9	नैनीताल	5.6	2.7	5.5	2.6
10	कुमाऊं मण्डल	6.8	2.9	6.9	3.0
11	पर्वतीय क्षेत्र	6.4	3.3	6.6	3.5

स्रोत – विकास आयुक्त कार्यालय, श्रीकोट, श्रीनगर, गढ़वाल के आंकड़ों से आंकलित

प्रदेश लघु उद्योग द्वारा उत्पादित किये जाने वाले मदों के आधार पर इकाइयों का विश्लेषण करते है। तो स्पष्ट होता हैं कि खादी व सम्बन्धित इकाईयां सबसे अधिक है। जबकि रेशम उद्योग की इकाईयाँ सबसे कम परन्तु यदि 1988–89 से 1991–92 और उसके बाद 2016 तक की वार्षिक वृद्धि को देखा जाये, तो प्रदेश में हथकरघा क्षेत्र में सबसे अधिक वृद्धि हुई हैं, जबकि खादी व संबंधित इकाईयों का स्थान दूसरा रहा 1988–89 से 1991–92 और 2016 के दौरान समस्त पर्वतीय क्षेत्र में वार्षिक वृद्धि दर 29 प्रतिशत रही, जो सन्तोष जनक कही जा सकती है।जबकि मैदानी क्षेत्र की वृद्धि दर संतोष जनक नहीं रही है।

तालिका (14.3) 2016 तक पंजीकृत सूक्ष्म, लघु व मध्यम इकाइयों का विवरण

जनपद	वर्ष 2000 सूक्ष्म, लघु व मध्यम उद्यम			वर्ष 2010 सूक्ष्म, लघु व मध्यम उद्यम			वर्ष 2016* सूक्ष्म, लघु व मध्यम उद्यम		
	संख्या	पूंजी निवेश (करोड़ रू0 में)	रोजगार	संख्या	पूंजी निवेश (करोड़ रू0 में)	रोजगार	संख्या	पूंजी निवेश (करोड़ रू0 में)	रोजगार
नैनीताल	816	158.36	3513	1665	144.23	5884	2456	289.13	8765
उधम सिंह नगर	804	233.71	4899	3133	2072.14	29522	4356	4022.34	34897
अल्मोड़ा	904	17.78	1846	1911	17.22	3399	2198	324.21	4353
पिथौरागढ़	534	5.85	1013	1416	19.08	3019	1543	28.75	3212
बागेश्वर	387	2.04	607	563	8.54	1100	687	10.21	1267
चम्पावत	147	4.95	322	600	10.25	1315	654	13.32	1523
देहरादून	2321	88.01	7232	3239	645.82	25119	4654	876.75	32087
पौड़ी	1720	28.39	4196	2127	97.02	5727	2312	104.76	6541
टिहरी	1025	14.44	2413	1941	50.26	4744	2132	64.21	5321
चमोली	844	5.45	1154	1423	26.54	2874	1521	32.67	3121
उत्तरकाशी	1734	10.60	2364	1359	18.66	2404	1532	24.92	2897
रूद्रप्रयाग	394	7.20	737	676	11.75	1577	789	14.97	1865
हरिद्वार	2533	123.51	8213	3564	2387.14	36153	5432	4326.92	54321
योग	14163	700.29	38509	23617	5508.65	122837	30270	10133.16	1,60,190

स्रोत– औद्योगिक विकास प्रगति रिपोर्ट, उद्योग निदेशालय, देहरादून। *– अनुमानित

तालिका (14.2) में पर्वतीय क्षेत्रों में 1995, 2000 तथा 2016 (अनुमानित) में विभिन्न जनपद में कार्यरत इकाईयों की संख्या सहित रोजगार की स्थिति को प्रदर्शित किया गया है। जिससे पता चलता है कि संख्या को दृष्टि से सर्वाधिक इकाइयाँ नैनीताल में कार्यरत थी जबकि देहरादून व अल्मोड़ा दूसरे व तीसरे स्थान पर थे। जबकि वृद्धि दर की स्थिति में 1995 से 2000 तथा 2000 से 2016 के दौरान पिथौरागढ़ में इकाईयों में वार्षिक वृद्धि दर सर्वाधिक थी। जबकि देहरादून में इस दौरान वृद्धि दर सबसे कम थी। रोजगार की दृष्टि से देखे तो टिहरी को 1995–2000 तथा 2000 से 2016 के दौरान वृद्धि दर सर्वाधिक थी जबकि देहरादून में रोजगार वृद्धि दर अति अल्प थी इस प्रकार रोजगार वृद्धि दर पर्वतीय क्षेत्र में 3.3प्रतिशतके लगभग थी जबकि इकाई वृद्धि दर इस दौरान 6.4 प्रतिशत के लगभग थी।

उद्योग निदेशालय के अनुसार उत्तराखण्ड राज्य गठन से पूर्व प्रदेश में 14,163 लघु स्तरीय औद्योगिक इकाईयाँ स्थाई रूप से पंजीकृत थी, जिनमें 700.29 करोड़ रूपये का पूंजी निवेश था और 38,509 लोगों को रोजगार उपलब्ध था। राज्य गठन के पश्चात् से माह फरवरी, 2011 तक 23,617 लघु, सूक्ष्म तथा मध्यम उद्यमों द्वारा लघु स्तरीय उद्योग के रूप में स्थाई पंजीकरण तथा जिनमें 5,508.65 करोड़ रूपये का पूंजी निवेश किये गया है और 1,22,837 लोगों को रोजगार दिया गया था। जो वर्ष 2016 में अनुमानित रूप में बढकर 30,270 लघु, सूक्ष्म तथा मध्यम उद्यमों द्वारा लघु स्तरीय उद्योग के रूप में स्थाई पंजीकरण तथाजिनमें 10,133.16 करोड़ रूपये का पूंजी निवेश किये गया है और 1,60,190 लोगों को रोजगार दिया गया है।

तालिका (14.3) में उत्तराखण्ड राज्य की स्थापना के समय पंजीकृत कार्यरत लघु उद्योग इकाईयों की संख्या, रोजगार व पूंजी निवेश को दर्शाया गया है और राज्य स्थापना के पश्चात पंजीकृत कार्यरत लघु उद्योग इकाईयों की संख्या, रोजगार व पूंजी निवेश का विवरण प्रस्तुत किया गया है

जिससे पता चलता है। सर्वाधिक लघु इकाईयाँ हरिद्वार जनपद में रही, रोजगार को स्थिति में भी हरिद्वार ही पहले स्थान पर रहा, जबकि देहरादून का दूसरा स्थान रहा और चम्पावत सबसे नीचा रहा। जबकि पूंजी निवेश में उधम सिंह नगर का दूसरा स्थान रहा। उत्तराखण्ड स्थापना के बाद लघु इकाइयों की संख्या में ढाई गुना से अधिक, रोजगार में चार गुनासे अधिक तथा पूंजी निवेश में नौ से अधिक गुना वृद्धि देखी गई।

14.9लघु उद्योगों की प्रमुख समस्याएँ

लघु एवं कुटीर उद्योगों को कई प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है जिनके परिणामस्वरुप कई इकाइयॉ बीमार हो जाती है तथा कई इकाइयॉ बन्द हो जाती है। लघु क्षेत्र उद्यम के विकास हेतु सरकार द्वारा पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाये गये हैं फिर भी ये उद्योग कुछ आधारभूत, वित्तीय एवं बाजार व्यवस्था जैसी समस्याओं से ग्रसित है जिनके कारण ये उद्योग प्रगति नहीं कर पा रहे हैं। इन उद्योगों की प्रमुख समस्याएँ निम्नलिखित है–

1. **कच्चे माल की समस्या**–अधिकांष कुटीर उद्योग कच्चे माल के लिए स्थानीय स्रोतों पर निर्भर हैं। हथकरघा उद्योग सूत की पूर्ति के लिए स्थानीय व्यापारियों पर निर्भर रहता है। ये व्यापारी बुनकरों को प्रायः इस षर्त पर कच्चा माल बेचते हैं कि बुनकर कपड़ा उन्हीं को बेचेंगे। प्रायः ये व्यापारी बुनकरों को दोहरा षोशण करते हैं। एक ओर तो ये बुनकरों से कच्चे माल की अधिक कीमत लेते हैं और दूसरी ओर उन्हें तैयार माल की कम कीमत देते हैं।लघु उद्योगों में पहले छोटी मोटी वस्तुओं का ही उत्पादन होता था जिनके लिए कच्चा माल प्राप्त कर पाना कोई समस्या नहीं थी। परन्तु जब से आधुनिक लघु उद्योगों का पर्याप्त विकास हुआ है और ये उद्योग नई वस्तुओं का उत्पादन करने लगे हैं, तब से इनके लिए कच्चे माल की व्यवस्था कर पाना कठिन हो गया है । अनेक लघु उद्योग आयात किए जाने वाले कच्चे पदार्थों का प्रयोग करते हैं । इन उद्योगों की सबसे बड़ी समस्या कच्चे माल की है जो उन्हें उचित समय तथा उचित मूल्य पर नहीं मिल पाता है। अधिकांश कुटीर उद्योग कच्चे माल के लिए स्थानीय स्रोतों पर निर्भर रहते हैं। हथकरघा उद्योग सूत की पूर्ति के लिए स्थानीय व्यापारियों पर निर्भर रहता है। ये व्यापारी बुनकरों को प्रायः इस शर्त पर कच्चा माल बेचते हैं कि बुनकर कपड़ा उन्हीं को बेचेंगे। इस तरह बुनकरों का दोहरा शोषण होता है। एक ओर तो ये बुनकरों से कच्चे माल की अधिक कीमत लेते हैं और दूसरी ओर उन्हें तैयार माल की कम कीमत देते हैं। वन आधारित उद्योग के लिए कच्चा माल लीसा व लकड़ी डिपो से प्राप्त होता है। जो पर्वतीय क्षेत्रों से दूर कोटद्वार, रायवाला टनकपुर आदि में स्थापित है। जिससे यातायात व्यय में वृद्धि होने से वस्तु की उत्पादन लागत बढ़ती है और इकाई को हानि का सामन करना पड़ता है।
2. **संगठित बाजार का अभाव**– लघु क्षेत्र उद्यम के पास कोई संगठन नहीं है। प्रायः इन उद्योगों को वस्तुओं को बेचने के लिए चालबाज मध्यस्थों पर निर्भर रहना पड़ता है जो उनका शोषण करते हैं।
3. **वित्त एवं साख की समस्या**–पूंजी तथा साख का अभाव लघु उद्योगों की प्रधान समस्या है। कुटीर और ग्राम उद्योगों की स्थिति ओर भी अधिक खराब है। लघु औद्योगिक इकाईयों का पूंजीगत आधार प्रायः काफी कमजोर होता है क्योंकि इनका संगठन साझेदारी अथवा अकेले स्वामित्व के आधार पर किया जाता है। घरेलू उद्योग को चलाने वाले कारीगर या तो अपनी थोड़ी सी पूंजी से काम चलाते हैं या फिर महाजन अथवा व्यापारी से (जो कच्चा माल देता है) ऋण लेते हैं। लघु उद्योगों की स्थिति थोड़ी अच्छी होती है। परन्तु इन उद्योगों के लिए भी लाभ के फिर से निवेश द्वारा पूंजी को बढ़ा पाना सम्भव नहीं होता। छोटे आकार के होने के कारण इन उद्योगों को वित्तीय कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। व्यापारिक बैंकों से ऋण लेने में उन्हें वैधानिक कार्यवाहियॉ करनी पड़ती है और तत्पश्चात समय–समय पर रिटर्न भेजने पड़ते हैं। अतः इन

कागजी समस्याओं से छुटकारा पाने के लिए साहूकारों पर निर्भर हो जाते हैं जो उनका शोषण करना शुरू कर देते हैं।

4. **प्रबन्धकीय क्षमता की कमी** :–पर्वतीय क्षेत्र में लघु उद्योगों की स्थापना तथा विकास में एक सबसे बड़ी समस्या उद्यमियों में प्रबन्धकीय क्षमता की कमी है। जिसके कारण नई इकाईयों की स्थापना तथा पुराने इकाईयों के घाटे में चलने की कठिनाई सामने आ रही है। उचित मार्गदर्शन व प्रशिक्षण की कमी के कारण स्थानीय युवा जोखिम उठाने को तैयार नहीं है।
5. **नवीन मशीनें और प्रौद्योगिकी का अभाव** – शिक्षा के अभाव, बाजार की समस्या एवं परम्पागत तकनीक के प्रयोग से इन उद्योगों की उत्पादन लागत अधिक होती है। ये उद्योग शिक्षा व वित्त के अभाव में नई प्रौद्योगिक/तकनीक का प्रयोग नहीं कर पाते हैं।
6. **बड़े उद्योगों से प्रतियोगिता**– बड़े पैमाने के उद्योग की तुलना में लघु क्षेत्र उद्योग के वस्तु महँगे होते हैं एवं इनकी कीस्म भी अच्छी नहीं होती है इसलिए लघु क्षेत्र उद्योग प्रतियोगिता में ठहर नहीं पाते।
7. **प्रमापीकरण का अभाव**– इन उद्योगों के द्वारा उत्पादित वस्तुओं में एकरुपता का अभाव रहता है। अतः प्रामाणिकता के अभाव के कारण इनके वस्तओं की कीमत में अन्तर पाया जाता है जिससे संगठित बाजार में इनकी बिक्री कठिन हो जाती हैं। लघु उद्योगों का माल किसी निश्चित प्रमाप या मानक के अनुरूप नहीं होता क्योंकि इनके द्वारा उत्पादित अधिकांश वस्तु के मानक निर्धारित नहीं किये गये है। जिस कारण मूल्य निर्धारण में समस्या आती है और कारीगरों और मलिकों को अपनी वस्तु व परिश्रम का उचित मूल्य भी नहीं मिल पाता। आज प्रतियोगिता के युग में प्रमापीकरण, एकरूपता, गुण स्तर आदि का ध्यान रखना आवश्यक हो गया है। प्रमापीकरण रण व गुणवत्ता के अभाव में लघु उद्योगों के निर्मित माल की मांग कम हो जाती है।
8. **परम्परागत तकनीकी शिक्षा व प्रशिक्षण का पाया जाना** :–राज्य की अधिकांश लघु इाकईयाँ ग्रामीण व पर्वतीय क्षेत्र में स्थित है जहां के युवकों को मशीनों तथा संयंत्रों को चलाने का अनुभव नहीं है। उत्पादन सबन्धी तकनीकी ज्ञान व प्रशिक्षण की व्यवस्था न होने के कारण श्रमिकों की कार्यकुशलता प्रभावित होती है। जिससे उत्पादित वस्तु की गुणवत्ता में कमी आ जाती है और इन उद्योगों की वस्तुए बड़े उद्योगों की वस्तुओं के साथ प्रतियोगिता में टिक नहीं पाती है।लघु क्षेत्र उद्योग परम्परागत तकनीक के प्रयोग से वस्तुओं का उत्पादन करते हैं। परिणामस्वरुप इनकी लागत अधिक होती है इसलिए इन वस्तुओं की मांग में कमी आ जाती है जिसके कारण इन उद्योगों के स्वामी न चाहते हुए भी उद्योग को बन्द करने के लिए विवश हो जाते हैं।
9. **औद्योगिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण की व्यवस्था**– इन उद्योगों के स्वामी प्रशिक्षित नहीं होते हैं एवं इनमें प्रशिक्षण की कमी होती है जिससे अपनी क्षमताओं का भरपूर प्रयोग करने में असमर्थ होते हैं।
10. **सूचना व परामर्श का अभाव**– इन उद्योगों की सबसे बड़ी समस्या यह है कि इनसे सम्बन्धित परामर्श देने वाली संस्थाओं की भी कमी है।
11. **यातायात की समस्या** :–लघु उद्योगों के कच्चे माल व तैयार माल को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने के लिए यातायात के साधनों की आवश्यकता होती है। उत्तराखण्ड राज्य का अधिकांश क्षेत्र पर्वतीय है। यहाँ सड़कों के साथ परिवहन साधनों का भी अभाव है। जिस कारण कई किमी0 तक पैदल चलना पड़ता है जिससे कच्चे माल की उपलबध दूर क्षेत्रों से होने के जहां उत्पादन लागत में वृद्धि होती है वही तैयार माल को बेचने के लिए अन्य स्थानों पर ले जाने में वस्तु का मूल्य ऊँचा हो जाता है। जो इन उद्योगों के लिए बड़ी समस्या है।
12. **विद्युत शक्ति की कमी**– लघु क्षेत्र उद्योगों को सस्ते दर पर बिजली न मिलने के कारण भी ये उद्योग दम तोड़ देते हैं।यद्यपि उत्तराखण्ड को ऊर्जा प्रदेश का दर्जा प्राप्त है। फिर भी राज्य के

अनेक पर्वतीय क्षेत्र ऐसे है। जहां अभी तक उचित विद्युत व्यवस्था का अभाव है। जो क्षेत्र के विकास में एक बहुत बड़ी बांधा है। असमय बिजली कटौती भी एक बड़ी समस्या है। जो लघु उद्योगों के विकास मार्ग में एक बाधा है। क्योंक उचित बिजली व्यवस्था ना होने के कारण ये उद्योग आधुनिक तकनीक को अपनाने में असमर्थ है जो एक बहुत बड़ी समस्या है।

13. **आर्थिक सुधारों तथा वैश्वीकरण के बुरे प्रभाव** –1990 के दशक में औद्योगिक अर्थव्यवस्था को खोलने की दिशा में कई प्रयास किए गए जैसे औद्योगिक लाईसेसिंग की समाप्ति, आरक्षण में कमी, देशीय व विदेशी उद्योगों के साथ प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहन, प्रशुल्कों में कमी, मात्रात्मक प्रतिबंधों को समाप्त करना, इत्यादि । इन सुधारों का लघु उद्योग क्षेत्र पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है । कई औद्योगिक क्षेत्रों (जैसे रसायन, रेशम, वाहनों के पुर्जे, खिलौने, खेल का सामान, जूता उद्योग आदि) में काम कर रही लघु इकाइयों को सस्ती व बेहतर आयातित वस्तुओं से गंभीर खतरा पैदा हो गया है सबसे गंभीर खतरा चीन से आ रहे सस्ते आयातों से हैं जिनकी कीमत इतनी कम है कि लघु उद्योगों के लिए अपना अस्तित्व बचाना मुष्किल हो रहा है । आज के युग में बड़े उद्योगों यहाँ तक की बहुर्राष्ट्रीय कम्पनियाँ भी लघु उद्योग द्वारा निर्मित उत्पादनों की बिक्री में बाध पहुँचा रही है। क्योंकि बडे उद्योगों द्वारा निर्मित वस्तुए कम कीमत तथा उच्च गुणवत्ता के साथ आकर्षक पैकिंग में होती है जिससे उपभोक्ता आकर्षित होते है और लघु उद्योगों द्वारा निर्मित वस्तु की तुलना बड़े उद्योगों की वस्तुओं को खरीदा पसन्द करते है। जिससे लघु इकाईयों को हानि होती है।
14. **बिक्री सुविधाओं का अभाव** :–लघु उद्योगों की बिक्री व्यवस्था सुव्यवस्थित नहीं है। एक तरफ तो यातायात व कच्चे माल की समस्या के कारण इनके उत्पाद का मूल्य अधिक होता है। साथ ही यह उपभोक्ताओं को आकर्षित करने मे असमर्थ रहते है। जिससे बड़े उद्योग द्वारा निर्मित माल के साथ प्रतियोगिता में इनके उत्पाद टिक नहीं पाते है। कई बार तो बड़े उद्योगों द्वारा समय पर भुगतान न करने के कारण भी आगे की विपणन व्यवस्था प्रभावित हो जाती है और इकाई को जारी रखना मुश्किल हो जाता है।
15. **लघु उद्योग में रुग्णता**–अस्वस्थ लघु इकाइयों के संदर्भ में दो मुख्य मुद्दे हैं – क. बहुत सी अस्वस्थ इकाइयां ऐसी हैं जिन्हें चला पाना व्यवहार्य नहीं रह गया है । ख. ऐसी अस्वस्थ लघु इकाइयों का पुनर्वास जिन्हें दोबारा चला सकने की संभावना है। लघु उद्योग की रुग्णता की समस्या अत्यन्त गंभीर है।
16. **समुचित औद्योगिक नीति का अभाव** :–उत्तराखण्ड बनने से पहले यह क्षेत्र उत्तर प्रदेश के अधीन था उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा इस क्षेत्र के लिए योजना की घोषणा तो की गई परन्तु उसे प्रभावी ढंग से लागू करने के प्रयास नहीं किये। यद्यपि उत्तराखण्ड की स्थापना के बाद सरकार ने इस दिशा में अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाये है। परन्तु उनके परिणाम अभी सामने आने बाकी है।
17. **अन्य समस्याएँ**– लघु क्षेत्र उद्योग के विकास में कई कारक बाधक है जैसे बाजार स्थिति के बारे में अपूर्ण जानकारी, प्रबन्धकीय एवं तकनीकी कौशल की कमी, परिवहन की सुविधाओं का अभाव, विज्ञापन की कमी, स्थानीय ऊँचे कर, सामान्य शिक्षा का अभाव, अनुसंधान की कमी, बीमार इकाइयॉ तथा उद्योगों के मध्य आपसी संगठन का अभाव आदि। इन उद्योगों के विकास के लिए जो एजेंसिया बनाई गयी है उनमें परस्पर सहयोग एवं तालमेल का अभाव है।

राज्य स्थापना के बाद लघु उद्योगों की ओर विशेष ध्यान देते हुए इनकी समस्याओं को दूर करने के लिए विभिन्न औद्योगिक नीति में अनेक व्यवस्थाएं की गई जैसे 2001 की नीति में इनके आधुनिकीकरण हेतु व्यवस्था की बात कही गई वर्ष 2003 की नीति में सरकारी खरीद में लघु उद्योग उत्पाद को प्राथमिकता देने की साथ, वित्तीय सहायता व ब्याज दर में रियायत की व्यवस्था की गई। वर्ष 2008 की विशेष औद्योगिक नीति में राज्य के 'ए' व 'बी' श्रेणी के जनपदों की लघु इकाइयों के लिए विशेष ब्याज

अनुदान प्रोत्साहन व्यवस्था, विपणन हेतु मेलों व प्रदर्शनियों के माध्यम से निःशुल्क व रियायती दरो की स्टॉल उपलब्ध करने की बात कहीं गई। 2015 में एक नवीन नीति लागू की गई।सरकार द्वारा की जा रही व्यवस्था का लाभ लघु उद्यमी तक पहुँचने लगा है। लेकिन अभी पूर्ण व्यवस्था के सुधार में समय लगेगा। उम्मीद की जा सकती है कि लघु इकाईयाँ सरकारी योजनाओं का लाभ प्राप्त कर राज्य के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभायेगी।

14.10लघु उद्योगों की समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव

लघु क्षेत्र उद्योग भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। ये उद्योग स्थानीय संसाधनों का दोहन करके रोजगार सृजन करते है तथा औद्योगिक विकेन्द्रीकरण को रोकने में मदद करते है। इसलिए इनकी समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव निम्नलिखित है–

1. **कच्चे माल की आपूर्ति–** लघु क्षेत्र उद्योगों को सस्ते दर पर कच्चे माल की आपूर्ति सुनिश्चित होनी चाहिए।
2. **बाजार की सुविधाएँ–** इन उद्योगों के उत्पादित माल के लिए बिक्री एवं विपणन जैसी सुविधाएँ सुनिश्चित होनी चाहिए। अतः इन उद्योगों के उत्पादों की बिक्री के लिए एक केन्द्रीय विक्रय संस्था की स्थापना की जानी चाहिए जो विभिन्न संस्थाओं से निश्चित प्रमाप के अनुसार माल तैयार कराएं एवं बेचने की व्यवस्था करें।
3. **साख सुविधाएँ–** लघु उद्योगों को साख की सुविधाएँ प्राप्त होनी चाहिए तथा इनकी प्रक्रिया सरल होनी चाहिए जिससे कि ये साहूकारों के चंगुल में न फँस सके।
4. **उत्पादन तकनीकी में सुधार–** अच्छी किस्म की वस्तुओं का उत्पादन एवं कम कीमत पर इनको उपलब्ध कराना तभी सम्भव है जब ये उद्योग अपनी उत्पादन तकनीक में सुधार लाए। इन उद्योगों के तकनीकों में सुधार लाकर इन्हें बड़े उद्योगों के प्रतियोगिता के लिए तैयार किया जा सकता है।
5. **लघु उद्योग प्रदर्शनियॉ** – लघु उद्योग के उत्पाद के लिए प्रदर्शनियों की व्यवस्था करनी चाहिए। इन प्रदर्शनियों को केवल बड़े नगर तक ही सीमित न रखकर देश के विभिन्न भागों में लगाया जाना चाहिए जिससे उपभोक्ता इन उद्योगों के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकें।
6. **विशाल एवं लघु उद्योगों में समन्वय** – लघु एवं वृहद उद्योगों में समन्वय स्थापित किया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए कागज उद्योग में लुगदी बनाने का कार्य लघु उद्योग क्षेत्रों को तथा कागज बनाने का कार्य विशाल उद्योगों को सौंपा जा सकता है।
7. **औद्योगिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण की व्यवस्था–** लघु उद्योग के स्वामियों को एवं उनमें कार्य करने वाले कर्मचारियों को औद्योगिक प्रशिक्षण एवं शिक्षा की व्यवस्था करनी चाहिए ताकि वे आधुनिक वैज्ञानिक विधियों का सहजता से प्रयोग कर सकें। इन सबके लिए गांवों एवं कस्बों में प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित करना चाहिए।
8. **उपयुक्त उद्योग का चयन–** लघु उद्योग के विकास के लिए ऐसे उद्योगों को चुनना चाहिए जिनके भावी विकास की संभावनाएं अधिक हो और जो अन्ततः सक्षम ढंग से चलने वाले हो। उदाहरण के लिए उन उद्योगों का चयन करना चाहिए जिसमें कला कौशल की आवश्यकता हो, स्थानीय कच्चे माल का प्रयोग करती हो, प्रत्यक्ष उपभोग की वस्तुएँ हो या बड़े उद्योगों के लिए आगत की वस्तुएँ तैयार करती हो, इत्यादि उद्योगों को प्रोत्साहित करना चाहिए।
9. **औद्योगिक सहकारी समितियों की स्थापना–** लघु उद्योग की सबसे बड़ी समस्या यह है कि इनका कोई संगठन नहीं है। ये अपना कार्य अलग–अलग करते हैं। इन उद्योगों में लगे हुए लोगों को माल के खरीदने–बेचने में, उसके उत्पादन तथा ऋण आदि की प्राप्ति में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। यदि ये लोग औद्योगिक सहकारी समितियों की स्थापना कर ले और

इसके द्वारा संगठित होकर कार्य करें तो उत्पादन, बिक्री एवं कच्चे माल सम्बन्धी अनेक कठिनाइयॉ अपने आप दूर हो सकती हैं।

10. **उच्च कोटि तथा नवीनतम डिजाइनों की वस्तुएँ** – इन लघु उद्योगों की उन्नति तभी संभव है जब ये उद्योग उच्च कोटि तथा नवीनतम डिजाइन की वस्तुओं का उत्पादन करे। इन उद्योगों के कारीगर कभी–कभी जानबूझकर घटिया किस्म का माल तैयार करते हैं। इससे लोगों का विश्वास इन उद्योगों से उठ जाता है और देश–विदेश की अनेक मण्डियॉ हाथ से निकल जाती है। इन सब कमियों को सरकार चाहे तो दूर कर सकती है। उच्चकोटी की शुद्ध वस्तुओं पर सरकारी मोहर लगाने की व्यवस्था करके। सरकारी मोहरों से चीजों की गुणवत्ता, कोटि एवं शुद्धता की गारण्टी हो जाती है। फलस्वरुप ये वस्तु बाजार में अपनी मॉग बना लेते हैं।

लघु उद्योग का प्रदेश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अतः ऐसे उपाय करना आवश्यक है जिससे संयुक्त रुप में सब कार्य एक योजना के आधार पर हो। यदि एक या दो ही कार्य को महत्त्व दिया गया तो लघु उद्योग कभी भी सफलता प्राप्त नहीं कर पायेंगे। यह भी ध्यान देना चाहिए कि लघु उद्योगों तथा बड़े पैमान के उद्योगों में प्रतियोगिता कम हो सके तथा इनमें समन्वय स्थापित हो सके। अगर समन्वय स्थापित करने में सफलता मिलती है तो देश में उत्पादन बढ़ेगा और क्षेत्रीय विकास होगा तथा रोजगार का सृजन होगा।

अभ्यास प्रश्न 2

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. लघु उद्योग आप का क्या आशय हैं, संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए ?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था में लघु उद्योग क्षेत्र का महत्व स्पष्ट कीजिए ?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3. उत्तराखण्ड में लघु उद्योग के विकास पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए ?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

4. लघु उद्योगों की प्रमुख समस्याओं का संक्षेप में उल्लेख कीजिए ।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

5. लघु उद्योगों की समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव दीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

सत्य/असत्य बताइये–

1. कृषि के बाद दूसरा बड़ा रोजगार लघु उद्योग प्रदान करता है ।
2. बड़े उद्योगों की अपेक्षा लघु उद्योगों का उत्पादन की वृद्धि दर कम है ।
3. उत्तराखण्ड में बेरोजगार की समस्या को हल करने में लघु उद्योग का बहुत सहारा है ।

14.11 सारांश

इकाई के अध्ययन के पश्चात् जान गये हैं कि उत्तराखण्ड औद्योगिक संरचना में ग्रामोद्योगतथा लघु उद्योगों का विकास बहुत महत्व रखता है। ग्रामोद्योग से अर्थ ऐसे उद्योग से है, जो 20 हजार तक कि आबादी वाले क्षेत्र में स्थित हो और उसमें 50 हजार तक का प्रति व्यक्ति पूंजी निवेश हो। ग्रामोद्योग को पारिवारिक या कुटीर उद्योग भी कहते है। इन उद्योगों को मुख्य रूप से 7 समूहों में बांटा गया है। उत्तराखण्ड में घराट, हाथ तेल पिराई, भांग वस्त्र निर्माण, ऊन, चमड़ा उद्योग, हस्तनिर्मित कागज, काष्ठकला, रेशा उद्योग, मधुमक्खी पालन तथा रिंगाल बर्तन निर्माण आदि अनेक ग्रामोद्योग पर्वतीय जनपदों के ग्रामीण क्षेत्र में कार्यरत है। राज्य के टिहरी, चमोली, पौड़ी, देहरादून, अल्मोड़ा नैनीताल व पिथौरागढ़ आदि जिलों के ग्रामीण क्षेत्र में ग्रामोद्योग रोजगार के प्रमुख स्रोत है।श्रम शक्ति पर आधारित यह क्षेत्र बड़े पैमाने पर रोजगार के अवसर उपलब्ध करता है और अधिक बेहतर ढंग से सम्पत्ति का समान वितरण के साथ साथ संतुलित क्षेत्रीय विकास को संवर्घन में भी समर्थ है। प्रदेश में बड़ी संख्या लघु उद्योग भी कार्यरत है। लघु (सेवा) उद्योग से अर्थ ऐसे उद्योग से है। जिसमें 10 लाख रूपये से अधिक किन्तु 2 करोड़ रूपये से कम पूंजी निवेश हो। यद्यपि लघु व ग्रामोद्योग आय वृद्धि, रोजगार सृजन व क्षेत्र संतुलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे है। फिर भी इन्हें अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। जैसे– कच्चामाल प्रति में कठिनाई, पूंजी, प्रशिक्षण, विपणन व्यवस्था यातायात सुविधा, सूचना व मार्गदर्शन का अभाव, बड़े उद्योग से प्रतियोगिता, स्थानीय करारोपण की समस्या तथा समुचित विकास नीति का अभाव आदि। इन उद्योगों के तीव्र विकास के लिए इन समस्याओं का समय रहते समाधान करना अत्यन्त आवश्यक है। लघु उद्योग विकास को आगे बढ़ाने वाले इंजन है और बाजार की कमियों से उनका विकास प्रभावित होता है। इसलिए इस क्षेत्र के विकास के लिए सरकारी समर्थन अनिवार्य और उचित है। इस क्षेत्र को अधिकाधिक स्पर्धात्मक बनाना और घरेलू एवं विदेशी दोनों

बाजारों में इसकी मौजूदगी बढ़ाने पर पूरा जोर दिया जाता रहा है। अपने प्रभावी प्रदर्शन के बाबजूद एम.एस.एम.ई. क्षेत्र को प्रदेश में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है।

14.12शब्दावली

आर्थिक विकास– इस अभिप्राय अधिक उत्पादन के साथ साथ तकनीकी एवं संस्थानात्मक व्यवस्था में हुए परिवर्तनों से है ।

श्रम प्रतिस्थापन – ऐसी व्यवस्था जहाँ श्रम के स्थान पर मशीनों का प्रयोग लगातार बढ रहा हो।

सकल राष्ट्रीय उत्पादन– एक वर्ष में उत्पादित होने वाली सभी वस्तुइओं और सेवाओं के बाजार मूल्य के योग से होता है ।

एकाधिकार – ऐसी व्यवस्था जहाँ किसी वस्तु की खरीदारी या बिक्री पर एक संस्था या व्यक्ति का ही अधिकार हो।

अवमूल्यन– यदि किसी मुद्रा का विनिमय मूल्य अन्य मुद्राओं की तुलना में कम कर दिया जाता है तो इसे अवमूल्यन कहते हैं । यह परिस्थितियों के अनुसार सरकार स्वयं करती है ।

औद्योगिक विकास– उद्योगों के नियमित एवं क्रमिक विकास से लगाया जाता है जिनमें उद्योगों में धीरे धीरे नवीनता एवं आधुनिकता का समावेश होता जाता है।

वैश्वीकरण – ऐसी व्यवस्था जहाँ विश्व के सभी देशों में वस्तुएँ लाने ले जाने की आजादी हो।

निवेश– पूँजी का वह भाग जो अतिरिक्त पूंजी उत्पादन के लिए प्रयोग किया जाता है ।

मुद्रास्फीति– उस अवस्था को कहते हैं जब कीमतें बढ़ती है तथा मुद्रा का मूल्य कम होता है

14.13 अभ्यास प्रश्न के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

लघु उत्तरीय प्रश्न –

उत्तर 1. देखिए 14.3, **2.**देखिए 14.4, **3.** देखिए 14.5।

अभ्यास प्रश्न 2

लघु उत्तरीय प्रश्न –

6 उत्तर 1. 14.6 देखिए, 2. 14.7 देखिए, 3. 14.8 देखिए, 4. 14.9 देखिए, 5. 14.10 देखिए।

सत्य/असत्य बताइये–

1.सत्य 2.सत्य 3. सत्य।

14.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- बिष्ट डॉ0 नारायण सिंह;(2003) उत्तरांचल हिमालयी राज्यः पर्वतीय क्षेत्र में औद्योगिकरण डॉ0 नारायण संस्थान, शोध नियोजन एवं विकास, गोपेश्वर चमोली.
- Aggarwal, S.P. (ed.) (1995), *Uttarakhand: Past, Present and Future,* Concept Publishing Company, New Delhi.
- Dewan, M.L. & Jagdish Bahadur (eds.) (2005), *Uttaranchal: Vision and Action Programme*, Concept Publishing Company, New Delhi.
- Mehta, G.S. (1999), *Development of Uttarakhand: Issues and Perspectives*, APH Publishing Corporation, New Delhi.
- Pangtey, Yatendra Singh and others (2011), *Uttarakhand at a Glance 2010-11*, Directorate of Economics and Statistics, Dehradun.
- Planning Commission, Government of India (2009), *Uttarakhand Development Report*, Academic Foundation, New Delhi.

- Sati, V.P. & Kamlesh Kumar (2004), *Uttaranchal: Dilemma of Plenties and Scarcities*, Mittal Publications, New Delhi.
- Mittal Surabhi, Gaurav Tripati and Deepti Sethi; (July 2008) *Development Strategy for the Hill District Uttarakhand*. Working paper no. 217 ICRER, New Delhi.
- Bisht Major D.S.;(2008); '*Uttarakhand Today*'; Trishul Publication, Dehradun.

14.15 सहायक / उपयोग पाठ्य सामग्री

- अर्थ एवं सांख्यिकीय निदेशालय (2016), सांख्यिकीय डायरी 20015–16, उत्तराखण्ड सरकार
- आर्थिक सर्वेक्षण(विभिन्न अंक),वित मंत्रालय भारत सरकार, नई दिल्ली।
- कुरूक्षेत्र (विभिन्न अंक), ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
- योजना (विभिन्न अंक) योजना आयोग, नई दिल्ली।
- उत्तराखण्ड इयर बुक 2016 विनसर पब्लिशिंग कम्पनी, देहरादून।
- ठाकुर, सुदीप व अन्य (सम्पादक) (2010), *उत्तराखंड उदयः एक दशक की यात्रा (2000 से 2010),* अमर उजाला पब्लिकेशन्स लिमिटेड, नोएडा।
- बलूनी, विद्या दत्त, *उत्तराखण्डः एक सम्पूर्ण अध्ययन,* अरिहन्त पब्लिकेशन्स (इ) प्रा लि, मेरठ।
- पाण्डेय, अशोक कुमार, *उत्तरांचलः सम्पूर्ण अध्ययन,* उपकार प्रकाशन, आगरा।
- सविता मोहन (2017), *उत्तराखण्डः समग्र अध्ययन,* तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली।
- Wesite--Uttara.gov.in,censusindia.gov.indistricts.nic.in, doink.org.

14.16 निबंधात्मक प्रश्न

1. लघु उद्योग से क्या आशय हैं ? उत्तराखण्ड स्थापना के बाद लघु उद्योगों की विकास की स्थिति पर प्रकाश डालिये।
2. ग्रामोद्योग से आप क्या समझते है ? उत्तराखण्ड में इनको किन प्रमुख समस्याओं का सामना करना पडता हैं वर्णन कीजिए।
3. उत्तराखण्ड में ग्रामोद्योग तथा लघु उद्योगों के विकास की प्रमुख समस्यायें क्या है ? विस्तार में बताईयें।
4. उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था में लघु उद्योगों का क्या योगदान की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए ?
5. उत्तराखण्ड में ग्रामोद्योग तथा लघु उद्योगों के विकास को प्रोत्साहन देने के लिए सरकार द्वारा किये गये कार्यों का वर्णन कीजिये।

इकाई पन्द्रह : उत्तराखण्डः औद्योगिक संरचना एवं औद्योगिक नीति

15.1 प्रस्तावना

15.2 उद्देश्य

15.3 औद्योगिक नीति का आशय

15.4 उत्तराखण्ड की औद्योगिक नीति 2001

15.5 उत्तराखण्ड की औद्योगिक नीति 2003

15.6 उत्तराखण्ड की औद्योगिक नीति 2008

15.7 औद्योगिक संरचना

15.8 उत्तराखण्ड स्थापना से पूर्व की औद्योगिक संरचना

15.9 उत्तराखण्ड स्थापना के पश्चात् से अब तक की औद्योगिक संरचना

15.10 सांराश

15.11 शब्दावली

15.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

15.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

15.14 सहायक/उपयोग पाठ्य सामग्री

15.15 निबंधात्मक प्रश्न

15.1 प्रस्तावना

आधुनिंक उत्तराखण्ड में समाज और अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित यह 15वीं इकाई है। पूर्व की इकाई से आप उत्तराखण्ड की जनसंख्या एवं मानवीय संसाधन,गरीबी एवं बेरोजगारी, क्षेत्रीय असमानता एवं जनजातीय विकास,उत्तराखण्ड प्राकृतिक संसाधनों, उत्तराखण्ड अर्थव्यवस्था और लघु व ग्रामीण उद्योगों का विकास किस दिशा में हो रहा है और उन उद्योगों को विकास हेतु किन समस्याओं का सामना करना पड़ रहा हैं, के बारे में सामान्य जानकारी प्राप्त कर चुके है।

किसी भी राज्य में औद्योगिक विकास के मार्ग की बाधाओं को दूर करने के लिए सरकार द्वारा आवश्यकतानुसार रियायतों व नियमों की घोषणा की जाती है। उत्तराखण्ड स्थापना के समय से अब तक सरकार ने तीन औद्योगिक नीतियों की घोषणा की है। इस इकाई के दूसरे खण्ड में उत्तराखण्ड सरकार द्वारा वर्ष 2001, 2003 तथा 2008 में घोषित नीतियों की विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की गई है। इस इकाई में उत्तराखण्ड की औद्योगिक संरचना की पूर्ण जानकारी प्रस्तुत की जा रही है कि उत्तराखण्ड स्थापना से पूर्व तथा पश्चात् राज्य की औद्योगिक संरचना में किन उद्योगों का प्रमुख स्थान रहा है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको राज्य की औद्योगिक नीतियों में की गई घोषणाओं व रियायतों की पूरी जानकारी प्राप्त हो जायेगी।साथ ही आप उत्तराखण्ड की सम्पूर्ण औद्योगिक संरचना को समझेंगे।

15.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपको :–

- समझा सकेंगे कि औद्योगिक नीति का क्या आशय है।
- औद्योगिक नीति 2001 की मुख्य विशेषताओं को बता सकेंगे।
- 2003 की नई नीति में उद्योगों को प्रदान की जानी वाली सुविधाओं से अवगत हो जायेंगे।
- समझा सकेंगे कि उत्तराखण्ड में औद्योगिक नीति में परिवर्तन द्वारा रोजगार तथा आय के अवसर कैसे प्राप्त किये जा सकते है।
- समझा सकेंगे कि उत्तराखण्ड के आर्थिक विकास हेतु औद्योगिक संरचना का अध्ययन क्यों महत्वपूर्ण है।
- 2008 में घोषित विशेष एकीकृत औद्योगिक प्रोत्साहन नीति में पर्वतीय क्षेत्र को दी जाने वाली विशेष सहायता को स्पष्ट कर सकेगें।
- बता सकेंगे कि उत्तराखण्डकी औद्योगिक संरचना किस प्रकार की है और समय के साथ इसमें क्या परिवर्तन आ रहें हैं।
- उत्तराखण्ड में कार्यरत विभिन्न उद्योगों की संक्षिप्त विवेचना कर सकते है।
- उत्तराखण्ड स्थापना से पूर्व की औद्योगिक संरचना की चर्चा कर सकेगें।
- उत्तराखण्ड के प्रमुख औद्योगिक क्षेत्रों में स्थापित उद्योगों की जानकारी प्रदान हो जायेंगी।

15.3 औद्योगिक नीति का आशय

किसी भी प्रदेश के आर्थिक विकास में उद्योग की महत्वपूर्ण भूमिका होता है। उद्योग व्यावसायिक क्रिया का वह अंग है जिसमें वस्तुओं का उत्पादन उत्पत्ति के साधन–भूमि, मजदूर, पूँजी एवं साहसी व संगठन के द्वारा किया जाता है। इन उद्योगों द्वारा उपभोक्ता पदार्थ एवं उत्पादन का पूँजीगत पदार्थ का उत्पादन किया जाता है। उपभोक्ता पदार्थ वे वस्तु होते है जिसका उपभोग उपभोक्ता स्वयं करता है जबकि पूँजीगत पदार्थ अन्य वस्तुओं के उत्पादन में मदद करते हैं। वस्तुओं के उत्पादन में लगाये गये विभिन्न आगतों जैसे– मशीन, कच्चा माल, बिजली इत्यादि के प्रयोग को औद्योगिक विकास कहा जाता है। औद्योगिक विकास के द्वारा कुल उत्पादन एवं रोजगार में वृद्धि होती है जो

संवृद्धि दर में वृद्धि करता है तथा संसाधनों का भरपूर उपयोग करने में मदद करता है। छात्रों को उद्योग सम्बन्धी क्रियाएँ एवं वाणिज्य सम्बन्धी क्रियाओं में अन्तर को समझना होगा। जो क्रियाएँ वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन से सम्बन्ध रखती है उन्हें उद्योग सम्बन्धी क्रियाएँ कहते हैं। इसके विपरीत उद्योग द्वारा उपलब्ध कराई गई वस्तुओं के वितरण को वाणिज्यिक कहते हैं जैसे– व्यापार, बैंक, परिवहन तथा बीमा सेवाएँ आदि। इन क्रियाओं को निम्नलिखित रेखाचित्र द्वारा भी स्पष्ट किया जा सकता है –

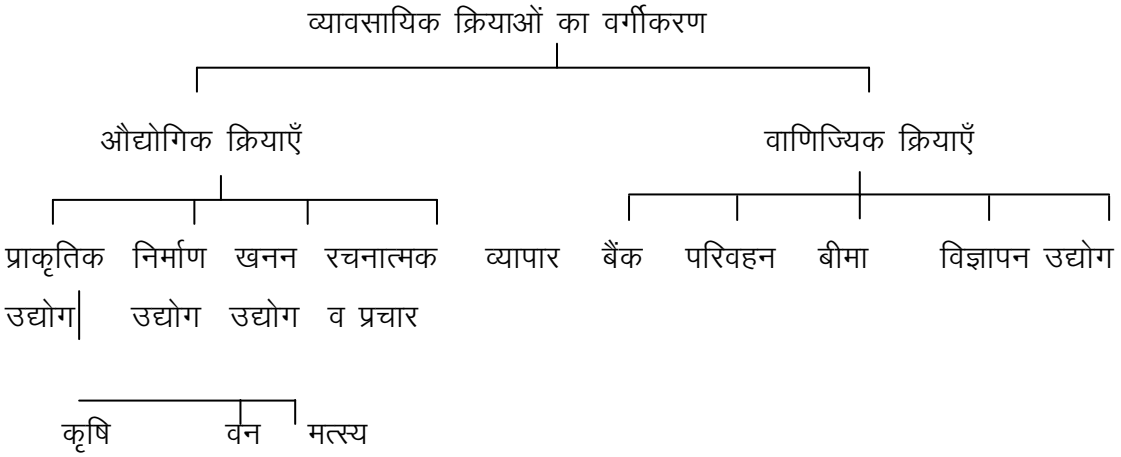

प्राकृतिक उद्योग में मुख्यतः वे उद्योग आते हैं जिनमें प्रत्यक्ष रूप से प्राकृतिक साधनों का विदोहन करके आवश्यक या आधारभूत वस्तु का उत्पादन किया जाता है। समुद्र व भूमि से पदार्थों को निकालना खनन कहलाता है। यह उद्योग के लिए कच्चे पदार्थ का काम करता है। कच्चे पदार्थों का रूप बदलकर वस्तुओं का निर्माण करना निर्माण उद्योग के अन्तर्गत आता है। उदाहरणार्थ– जूट, शक्कर, लोहा व इस्पात, कपड़ा इत्यादि उद्योग आते हैं। रचनात्मक उद्योग के अन्तर्गत पुल, बाँध, भवन व सड़क आदि शामिल किए जाते है।

औद्योगिक नीति की आवश्यकता

औद्योगिकरण प्रदेश के संसाधनों का भरपूर उपयोग कर आर्थिक और सामाजिक विकास करने में मदद करता है। उत्तराखण्ड जैसे प्रदेश में मिश्रित अर्थव्यवस्था प्रणाली में औद्योगीकरण के कार्य के संचालन के लिए औद्योगिक नीति की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से पड़ती है :

1. आधारभूत एवं भारी उद्योग की स्थापना बिना सम्यक नीति के नहीं कर सकते।
2. सामाजिक आधारिक संरचना जैसे स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास आदि के विकास के लिए।
3. आर्थिक आधारिक संरचना जैसे परिवहन, संचार इत्यादि का विकास।
4. निजी क्षेत्र को नियंत्रण करने व प्रोत्साहन करने के लिए।
5. यह सुनिश्चित करने के लिए कि निजी क्षेत्र नियोजन में निर्धारित दिशा की ओर ही अनुगमन करें, उनका विनिमय करना आवश्यक होता है।

घरेलू उद्योगों पर नीतियों का गहरा प्रभाव पड़ता है। वैश्वीकरण के युग में घरेलू उद्योगों को विदेशी उद्योगों से सुरक्षा एवं संरक्षण प्रदान करने के लिए नीति की आवश्यकता पड़ती है। इसके अलावा यह सुनिश्चित एवं विदेशी क्षेत्र विकास कार्यक्रमों के अनुरूप कार्य कर रहे है या नहीं। इन तीनों क्षेत्र के बीच परस्पर सम्बन्ध बनाए रखने हेतु औद्यागिक नीति की आवश्यकता पड़ती है।

औद्योगिक नीति से अर्थ सरकार की उस व्यवस्था से है जिसके अन्तर्गत औद्योगिक विकास का स्वरूप निर्धारित किया जाता है। इसे प्राप्त करने के लिए नियम व सिद्धान्तों को लागू किया जाता है। वास्तव में औद्योगिक नीति से अभिप्राय सरकार की उस औपचारिक घोषणा से लिया जाता है। जिसमें सभी प्रकार के उद्योगों के प्रति अपनायी जाने वाली नीतियों का उल्लेख होता है।

वर्ष 2000 में उत्तराखण्ड अस्तित्व में आया इससे पूर्व यह उत्तर प्रदेश का हिस्सा था। विषम भौगोलिक परिस्थितियों तथा अन्य अनेक कारणों से उत्तराखण्ड क्षेत्र प्राकृतिक संसाधनों की दृष्टि सें समृद्ध होने के बावजूद बड़े उद्योगों की दृष्टि में काफी पिछड़ा हुआ था।उत्तराखण्ड की स्थापना के पश्चात् राज्य सरकार ने प्रदेश के स्वावलम्बन हेतु औद्योगिक विकास को प्राथमिकता देते हुए उद्योगों के विकास के लिए एक सुनिश्चित व योजनाबद्ध नीति की आवश्यकता महसूस की, इस दिशा में सरकार द्वारा 8 जुलाई 2001 को राज्य की पहली औद्योगिक नीति घोषित की गई। इसके पश्चात् वर्ष 2003 में विस्तृत औद्योगिक नीति घोषित की गई और वर्ष 2008 में औद्योगिक प्रोत्साहन नीति घोषित की गई।

15.4 औद्योगिक नीति 2001

उत्तराखण्ड सरकार द्वारा सर्वप्रथम 8 जुलाई 2001 को औद्योगिक नीति घोषित की गई जिसका मुख्य उद्देश्य राज्य में तीव्रगति से औद्योगिक विकास हेतु ऐसा वातावरण तैयार करना था जिससे पर्यावरण संरक्षण के साथ सतत विकास को बढ़ाया जा सकें। इस नीति के निर्माण में उद्योग संघों, सम्बन्धित सरकारी विभागों व गैर–सरकारी संगठनों सहित विभिन्न प्रतिनिधियों को भी शामिल किया गया, ताकि राज्य की शक्तियों व क्षमताओं के अनुरूप औद्योगिक विकास हेतु संरचना को तैयार किया जा सके, जिससे द्वारा तीव्र, सन्तुलित एवं टिकाऊ विकास सुनिश्चित किया जा सके। इस नीति की मुख्य विशेषतायें इस प्रकार थी :–

- राज्य के प्राकृतिक संसाधनों का औद्योगिक उत्पादन कार्य में अधिकाधिक उपयोग को बढ़ाना।
- उद्योग विकास हेतु बुनियादी सुविधाओं जैसे – सड़क, ऊर्जा, जल आपूर्ति, व दूर संचार में निवेश बढ़ाना और निजी क्षेत्र की भागीदारी बढाने हेतु प्रोत्साहन सुनिश्चित करना।
- स्थानीय रूप में उपलब्ध कच्चेमाल व कौशल विकास को ध्यान में रखते हुए ऐसे क्षेत्रों की पहचान करना जिससे एकीकृत विकास योजनाओं पर आधारित उद्योगों की स्थापना की जा सकें, एवं बढावा दिया जा सकें।
- रोजगार के अतिरिक्त अवसरों का सृजन करना, घरेलू उत्पाद एवं संसाधनों में वृद्धि करना।
- राज्य में सूचना प्रौद्योगिकी, जीव प्रौद्योगिकी, खाद्य प्रसंस्करण, कृषि एवं वन आधारित उद्योग, चाय उद्योग तथा सुगंधित पादप आधारित उद्योग के विकास पर जोर दिया जायेगा।
- राज्य के सभी क्षेत्रों के सन्तुलित औद्योगिक विकास एक विस्तृत रोड़ मैप तैयार किया जायेगा एवं इस हेतु सभी सम्बन्धित विभागों के बीच समन्वय और सम्बन्धों को विकसित करना है।
- प्रति व्यक्ति आय के स्तर और जीवन स्तर को तीव्रता से बढ़ाना और नवीन आवश्यकताओ के अनुरूप मानव संसाधन के विकास हेतु शिक्षण प्रशिक्षण की व्यवस्था उपलब्ध करना।
- उत्तराखण्ड राज्य को विकास के उच्च सोपान पर ले जाने के लिए निजी क्षेत्र सहित विदेशी निवेशकों व अनिवासी भारतीयों को सहयोग हेतु आकर्षित करना।
- राज्य के दूरस्थ पर्वतीय क्षेत्रों के आर्थिक विकास हेतु विलुप्त होते जा रहें हथकरघा, हस्तशिल्प तथा खाद्य ग्रामोद्योग के पुर्नजीवित करने, कच्चे माल की व्यवस्था और आधुनिकीकरण तथा विपणन हेतु व्यवस्था की जायेगी।
- पर्यटन को ' **फोकस एरिया** ' के रूप में विकसित करना।
- राज्य की खनिज सम्पदा का नियोजित एवं वैज्ञानिक विधि से दोहन करना।

- आधारभूत सुविधाओं का विस्तार व विकास करने के अन्तर्गत देहरादून से नैनीताल के बीच एक्प्रेस हाईवे के विकसित करने की बात कहीं गई, साथ ही वायु यातायात को बढ़ावा देने हेतु हवाई अड्डों के साथ–साथ छोटी हवाई पट्टी का निर्माण किया जाए तथा दूर संचार तकनीकी व्यवस्था में सुधार व विस्तार के प्रयास की बात कहीं गई।
- राज्य में उद्योग स्थापना हेतु अनुकूल माहौल बनाने के प्रयास के साथ मजबूत विपणन सुविधाओं के विस्तार की बात कहीं गई।
- औद्योगिक इकाइयों में 70 प्रतिशत रोजगार स्थानीय लोगों को दिया जायेगा।

15.5 औद्योगिक नीति 2003

भारत के माननीय प्रधानमंत्री जी नैनीताल प्रवास के दौरान मार्च 2002 की घोषणा की कि उत्तराखण्ड राज्य में औद्योगिकरण को प्रोत्साहित करने हेतु एक विशेष प्रोत्साहन पैकेज प्रदान किया जायेगा ताकि राज्य के उद्योगोंकी प्रगति में बाधाओं को दूर किया जा सकेगा जिसको औपचारिक रूप से दिनांक 7 जनवरी 2003 को घोषित किया। इस पैकेज के सन्दर्भ में तथा नये उद्यमियों द्वारा दर्शायी गयी रूचि तथा आर्थिक सुधारों को ध्यान में रखते हुए प्रदेश शासन द्वारा एक नई औद्योगिक नीति बनाने की आवश्यकता महसूस की गई।

इस नीति का निर्माण करते समय राज्य की भौगोलिक एवं जलवायु विविधता, विद्युत ऊर्जा स्रोत की उपलब्धता, पर्यटन की सम्भावना, खाद्य प्रसस्करण एवं फल क्षेत्रों की उपलब्धता, राज्य के विभिन्न प्रमुख संस्थाओं की उपलब्धता की क्षमता को ध्यान में रखा गया।नई औद्योगिक नीति 2003 के रूप में जानी जायेगी तथा पांचवर्षों तक प्रभावी रहेगी की नीति को प्रमुख परिकल्पना निम्न प्रकार है–

- राज्य में विश्व स्तरीय अवस्थापना सुविधाएं उपलब्ध करना।
- एक खिड़की सम्पर्क सूचना एवं सुगमता व्यवस्था लागू करना जिससे औपचारिकताओं में लगने वाले समय की बचत हो तथा निवेशकों हेतु मैत्री पूर्ण वातावरण तैयार किया जा सके। इस प्रक्रिया में मुख्यमंत्री जी की अध्यक्षता में राज्य निवेश प्रोत्साहन बोर्ड का गठन किया जायेगा। मुख्य सचिव की अध्यक्षता में एक राज्य स्तरीय निवेश एवं आधारभूत सुविधा समिति की स्थापना की जायेगी। जिला स्तर पर एकल खिड़की निकासी प्रक्रिया के सहायतार्थ जिलाधिकारी की अध्यक्षता में एक समिति गठित की जायेगी।
- पिछडे क्षेत्र में उद्योग की स्थापना हेतु सहायता प्रदान की जायेगी।
- औद्योगिक इकाईयों एवं अवस्थापना सुविधा हेतु त्वरित गति से भूमि व्यवस्था की व्यवस्था करना।
- श्रमिकों के हितों को सुरक्षित रखते हुए श्रम कानूनों का सरलीकरण किया जायेगा जिससे औद्योगिकरण हेतु उचित वातावरण तैयार हो सके और उद्यमियों को असुविधा का सामना न करना पड़े।
- विद्युत ऊर्जा के उत्पादन, वितरण तथ पारेषण के सुदृढीकरण हेतु निजी क्षेत्रों की सहभागिता को प्रोत्साहित करना।
- राज्य में स्थापित होने वाले लघु उद्योगों के आधुनिक तकनीक अपनाने पर जोर दिया जायेगा तथा राज्य सरकार द्वारा किये जाने वाले क्रय–विक्रय में इस क्षेत्र को प्राथमिकता दी जायेगी। बीमार लघु इकाइयों के पुनर्निर्माण एवं पुर्नजीवन की व्यवस्था की जायेगी।
- औद्योगिक आस्थानों, विकास केन्द्रों, विशेष आर्थिक क्षेत्रों,पर्यटन अवस्थापना सुविधा, नये पर्यटक स्थलों के विकास, हवाई अड्डों, सडको, जैव प्रौद्योगिकी आदि के क्षेत्रों में प्रबन्धन हेतु निजी सहभागिता को बढावा दिया जायेगा।

- अन्य राज्य के उत्पाद की तुलना में भी उत्तरांचल राज्य में उत्पादित लघु इकाइयों के उत्पादन को वरीयता दी जायेगी।
- राज्य में नये सूर्योदय उद्योगों तथा उच्च तकनीकी उद्योगों को प्रोत्साहित किया जायेगा।
- उत्तराखण्ड में पैकिंग, छटाई, प्रसंस्करण, प्री–कूलिंग, कोल्ड चैन तथा विपणन जैसी सामान्य सुविधाओं वाले फ्लोरीकल्चर पार्कों के विकास पर जोर दिया गया।
- चाय की खेती का महत्व समझते हुए इसके विस्तारीकरण एवं चाय रोपाई के सघन प्रयास किया जायेगा।
- गैर काष्ठ आधारित उद्योगों जैसे कि बांस, लीसा, दियासलाई, कागज आधारित उत्पाद, प्लाई बोर्ड, फर्नीचर, खिलौना, पेन्सिल आदि को रोजगार उपलब्ध कराने हेतु प्रोत्साहन प्रदान किया जायेगा।
- उत्तरांचल में हर्बल, औषधीय पौधों तथा सुगन्धीय पौधों की दुर्लभ प्रजातियों का भण्डार है। इसलिए सरकार इनके शोध व विकास में सहायता देकर इसके वैज्ञानिक उत्पादन हेतु संविदा खेती को प्रोत्साहित किया जायेगा।
- उत्तराखण्ड में पर्यटन के विकास हेतु माननीय पर्यटन मंत्री की अध्यक्षता में एक वैधानिक शीर्ष संस्था ''उत्तरांचल पर्यटन परिषद'' का गठन नई पर्यटन इकाइयों को प्रारम्भ होने की तिथि से 5 वर्ष के लिए विलासिता कर में छूट प्रदान की जायेगी। रोप–वे की स्थापना पर पांच वर्ष तक मनोरंजन कर में छूट तथा नय मनोंरजन पार्को के पूर्ण रूप से स्थापित होने पर पांच वर्ष तक मंनोरंजन कर से छूट प्रदान की जायेगी।
- सूचना तकनीकी एवं सम्बन्धित सेवाओं को उद्योग का दर्जा दिया गया, देहरादून में एक समर्पित आई0टी0 पार्क स्थापित किया जा रहा है तथा राज्य के दूसरे क्षेत्रों में भी आई0टी0 पार्क स्थापित करना प्रस्तावित है।
- औद्योगिक नीति 2003 का एक मुख्य उद्देश्य रोजगार अवसर को बढ़ावा देना है। इसलिए स्वरोजगार अवसर, उद्यमिता विकास, औद्योगिकरण तथा पूरक इकाइयों का विकास एवं कौशल संवर्धन को प्रोत्साहित कर रोजगार के नये अवसर सृजित किये जायेंगे। युवकों में उद्यमिता विकसित करने हेतु राज्य के औद्योगिक एवं तकनीकी संगठनों की सहायता से उद्यमिता विकास कार्यक्रमों को प्रोत्साहित किया जायेगा।

15.6 औद्योगिक नीति 2008

राज्य के औद्योगिक रूप से पिछड़े पर्वतीय क्षेत्रों के विकास हेतु 1 अप्रैल 2008 को विशेष एकीकृत औद्योगिक प्रोत्साहन नीति 2008' लागू की गई। यह नीति दिनांक 1 अप्रैल 2008 से लागू होकर दिनांक 31 मार्च 2018 तक लागू रहेगी। इस नीति में निम्न प्रमुख वित्तीय प्रोत्साहन तथा छूट प्रदान करने का प्रावधान किया गया :–

- इस नीति में दूरस्थ व पर्वतीय क्षेत्रों को श्रेणी 'ए' तथा श्रेणी 'बी' में वर्गीकृत किया गया। विनिर्माण तथा सेवा क्षेत्र के उद्यमों को हरित तथ नांरगी श्रेणी में वर्गीकृत किया गया।
- नये उद्योगो को कार्यशाला, भवन निर्माण, मशीनरी, संयंत्र एवं उपकरणों में किये गये अंचल पूंजी निवेश पर जो 1 अप्रैल 2008 के पश्चात् स्थापित हो रहे है श्रेणी 'ए' के जनपद/क्षेत्र में 25 प्रतिशत अधिकतम् 30 लाख रूपये तथा श्रेणी 'बी' के जनपद/क्षेत्र में 20 प्रतिशत अधिकतम 25 लाख रूपये की अनुदान सहायता उपलब्ध करायी जायेगी।
- औद्योगिक इकाईयों को भूमि का आवंटन में प्राथमिकता प्रदान किया जायेगा, भूखण्ड पट्टे पर लेने अथवा क्रय करने पर पंजीकरण शुल्क से पूर्णतया छूट दी जायेगी। जो पर्वतीय क्षेत्र में निजी औद्योगिक संस्थाओं की स्थापना के लिए भूमि की न्यूनतम सीमा 2 एकड़ रखी गई है।

- लघु इकाईयों द्वारा लिये गये ऋण की ब्याज दर में श्रेणी 'ए' के क्षेत्र में कुल ब्याज दर पर 6 प्रतिशत अधिकतम 5 लाख रूपये प्रतिवर्ष तथा श्रेणी 'बी' के क्षेत्र में सामान्य ब्याज की दर पर 5 प्रतिशत अधिकतम 3 लाख रूपये प्रतिवर्ष ब्याज प्रोत्साहन सहायता के रूप में प्रदान की जायेगी।
- नीति के तहत चिन्हित औद्योगिक गतिविधियों के लिए उद्योग स्थापना की तिथि से 10 वर्ष तक विद्युत बिलों में 100 प्रतिशत छूट उपलब्ध कराया जायेगा। इसमें फल संरक्षण, जड़ी–बूटी आधारित उद्योगों व स्थानीय उत्पादों को विशेष महत्व दिया जायेगा।जहॉ विद्युत खपत अधिक है जैसे– होटल, मोटल, रिसॉर्ट, गेस्ट हाउस आदि वह इस छूट के पात्र नहीं होंगे।
- श्रेणी 'ए' के जनपदों में कुल कर देयता के 90 प्रतिशत तथा श्रेणी बी के जनपदों में 75 प्रतिशत तक की सीमा तक प्रतिपूर्ति राज्य सरकार द्वारा स्वयं की जायेगी।
- भारत सरकार की केन्द्रीय परिवहन अनुदान योजना 1972 के अन्तर्गत पर्वतीय क्षेत्र में स्थानीय संसाधनों पर आधारित उद्योगों को प्रोत्साहित करने, तथा उत्पादित कच्चे माल के आन्तरिक परिवहन में होने वाली लागत वृद्धि की क्षतिपूर्ति के लिए ऐसी इकाईयों को उनके कुल वार्षिक बिक्री के आधार पर श्रेणी 'ए' के क्षेत्रों में 5 प्रतिशत तथा श्रेणी 'बी' के क्षेत्रों में 3 प्रतिशत अनुदान सहायता दी जायेगी।
- नीति में मेगा प्रोजेक्ट्स जिनमें 50 करोड़ से अधिक का पूंजी निवेश हो, को विशेष सुविधाएं दी जायेगी। पर्वतीय क्षेत्र के लिए मेगा प्रोजेक्ट्स हेतु अंचल पूंजी निवेश की न्यूनतम सीमा 5 करोड़ रूपये निर्धारित की गई है।
- पर्वतीय क्षेत्रों के युवाओं को स्वतः उद्यम की ओर प्रेरित करने के लिए उद्यमिता विकास कार्यक्रमों के संचालन पर विशेष वित्तीय तथा शैक्षिक मार्ग दर्शन की व्यवस्था की गई। इसमें आवश्यकतानुसार शोध, अध्ययन एवं सर्वेक्षण कार्य को प्रोत्साहित किये जाने का प्रावधान किया गया। आई0टी0आई0, पालिटेक्निक, इंजीनियरिंग कॉलेजों / विश्व विद्यालयों में उद्योगों की आवश्यकता के अनुरूप प्रशिक्षण की व्यवस्था की जायेगी।
- पर्वतीय क्षेत्रों में आवश्यकतानुसार सामान्य सुविधाओं की स्थापना को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से चुने हुए स्थानों पर औद्योगिक कार्यशाला को सामान्य सुविधा केन्द्र के रूप में संचालित किया जायेगा। केन्द्र द्वारा स्थानीय कच्चे माल पर आधारित जैसे– चीड़ की पत्ती, रामबांस व अन्य रेशों, फल व सब्जी, जड़ी–बूटी आदि के शोधन, प्रसंस्करण तथा भण्डारण के लिए शोध व विकास करने पर सहायता प्रदान की जायेगी। इसके साथ ही आई0एस0ओ0 प्रमाणीकरण पर किए गये व्यय का 75 प्रतिशत अधिकतम् 2 लाख रूपये प्रतिपूर्ति अनुदान सहायता प्रदान की जायेगी।
- उद्यमियों को उनके उत्पादन के विपणन संवर्द्धन हेतु प्रदेशीय तथा जिला स्तर पर आयोजित होने वाले प्रमुख मेलों/प्रदर्शनियों में भाग लेने हेतु निःशुल्क अथवा रियायती दरों पर स्टॉल उपलब्ध कराई जायेगी। साथ ही मेलों व प्रर्दशनीय में भाग लेने हेतु जनपद से बाहर यात्रा करने पर यात्री किराये की प्रतिपूर्ति तथा माल परिवहन में वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई जायेगी।
- इस नीति में दी गई रियायतों को समयानुसार लागू करने से जहां उद्यमों को लाभ होगा वही प्रदेश में तीव्र औद्योगिक विकास को गति मिलेगी जो राज्य का औद्योगिक भविष्य निर्धारित करेगी।

अभ्यास प्रश्न 1

लघुउत्तरीय प्रश्न

1. औद्योगिक नीति से आप क्या समझते है?

.....

.....

.....

.....

2. उत्तराखण्ड की औद्योगिक नीति 2001 प्रमुख विशेषताओं पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए ?

.....

.....

.....

.....

3. उत्तराखण्ड की नवीन औद्योगिक नीति 2003 प्रमुख पर संक्षिप्त नोट लिखिए ?

.....

.....

.....

.....

4. उत्तराखण्ड सरकार की औद्योगिक प्रोत्साहन नीति 2008 से आप क्या समझतें है?

.....

.....

.....

.....

15.7 औद्योगिक संरचना

किसी भी देश या राज्य की औद्योगिकी संरचना से उस क्षेत्र में स्थापित और कार्यरत, विभिन्न प्रकार के उद्योगों की स्थिति तथा विविधता की जानकारी द्वारा प्राप्त होती है। वास्तव में औद्योगिक संरचना से अर्थ उद्योगों के ढाँचे या स्वरूप से लगाया जाता है जो एक देश या राज्य में एक समय विद्यमान हो, क्योंकि आर्थिक विकास एक नियमित एवं निरन्तर प्रक्रिया है। इसलिए उद्योगों का स्वरूप और ढाँचा स्थिर नहीं होता, इसमें समय–समय पर परिवर्तन होते रहते है। जैसे–जैसे किसी देश या राज्य की शक्ति के साधन, श्रम की कार्यकुशलता तथा उत्पादन तकनीकी का विकास होता जाता है, वैसे–वैसे ही उस देश या राज्य की उद्योगों की संरचना भी बदलती रहती है। जिसे औद्योगिक संरचना में परिवर्तन कहते है।

उत्तराखण्ड भारत का 27वां राज्य है। जिसका जन्म 9 नवम्बर 2000 को हुआ, राज्य स्थापना के समय इसकी औद्योगिक संरचना एकदम पिछड़ी स्थित में थी जबकि वर्तमान समय में एकदम परिवर्तित दशा में है। उस समय राज्य के आर्थिक पिछड़ेपन के कारण, युवा व श्रमिक पलायन को मजबूर थे, इसलिए यहाँ की अर्थव्यवस्था को 'मनी आर्डर अर्थव्यवस्था' कहा जाने लगा। राज्य में कुछ लघु उद्यम, खादी ग्रामोद्योग, हस्तकला, कृषि तथा वन और औषधि आधारित उद्योग ही स्थापित थे।

देहरादून, हरिद्वार, नैनीताल व उधम सिंह नगर में ही कुछ बडे एवं मध्यम उद्योग थे, अन्य जिलों में उद्योग लगभग अनुउपलब्ध थे। उत्तराखण्ड की औद्योगिक संरचना को जाने के लिए उसे दो भागों में बांटा जा सकता है।

- उत्तराखण्ड स्थापना से पूर्व की औद्योगिक संरचना।
- उत्तराखण्ड स्थापना के पश्चात् से अब तक की औद्योगिक संरचना।

15.8 उत्तराखण्ड स्थापना से पूर्व की औद्योगिक संरचना

उत्तराखण्ड की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान रही है, जिससे उद्योगों में ग्रामीण व कुटीर उद्योगों जैसे खादी, ऊन, काष्ठकला, चमड़ा, चूना पत्थर, स्लेट आदि की प्रधानता रही है, जो स्थानीय कच्चेमाल पर आधारित तथा निर्मित रहे है। यातायात सुविधाओं के अभाव के कारण निकटवर्ती क्षेत्रों के लिए भोटिया हॉकरो तथा मैदानी जुलाहों द्वारा गांवों में ही जरूरी वस्तुओं की आपूर्ति की जाती थी। वास्तव में पर्वतीय क्षेत्र में विकास कार्य का प्रारम्भ पर्वतीय ऊन योजना से प्रारम्भ हुआ था। जो बागेश्वर चरखा ऊन उद्योग आन्दोलन के रूप में अमर है। समय और आवश्यकतानुसार धीरे–धीरे रेशम, खादी, हथकरघा, मधुमक्खी पालन, काष्ठकला उद्योग, हस्तशिल्प व अन्य वन आधारित उद्योगों का विकास हुआ।भारत सरकार द्वारा समय–समय पर घोषित औद्योगिक नीति का अनुसरण करते हुए पर्वतीय क्षेत्र में तृतीय योजना काल से कुमाऊं गढ़वाल मण्डलों में कुछ औद्योगिक क्षेत्रों की स्थापना के रूप में शुरूवात हुई। जिसमें इंजीनियरिंग, रासायनिक व कागज उद्योग की कुछ इकाईयाँ स्थापित की गई। जैसे भीमताल में एचएमटी आदि। उत्तराखण्ड स्थापना से पूर्व की औद्योगिक संरचना को निम्न रूप में व्यक्त किया जा सकता है –

इंजीनियरिंग उद्योग :–राज्य की आधारशिला को मजबूत करने में इंजीनियरिंग उद्योग की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। उद्योग निदेशालय द्वारा छोटे–छोटे कृषि औजार, उद्यान संबंधी संयंत्र व औजार, ऑटो मोबाइल रिपेरिंग मशीनरी रिपेरिंग वर्कशॉप, कील, स्क्रू बनाने की इकाईयाँ आदि को इंजीनियरिंग उद्योग में सम्मिलित किया गया है।

तालिका (15.1) पर्वतीय क्षेत्रों में कार्यरत इंजीनियरिंग इकाईयों की प्रगति

क्र0सं0	जनपद	1988–99	1994–95	2000 तक
1.	उत्तरकाशी	161	207	257
2.	चमोली	67	107	159
3.	टिहरी	13	86	123
4.	पौड़ी	47	598	688
5.	छेहरादून	08	48	102
6.	**गढ़वाल मण्डल**	**296**	**1036**	**1319**
7.	अल्मोड़ा	109	468	503
8.	पिथौरागढ़	13	02	01
9.	नैनीताल	606	1248	1348
10.	**कुमाऊं मण्डल**	**728**	**1717**	**1851**
	पर्वतीय क्षेत्र	**1024**	**2753**	**3171**

स्रोत– सांख्यिकीय डायरी पर्वतीय प्रभाग, राज्य नियोजन संस्थान, नियोजन विभाग उत्तर प्रदेश शासन (1991) संख्यिकीय डायरी, उत्तरांचल (2000) उत्तरांचल प्रभाग

उत्तराखण्ड में यद्यपि इनकी सीमित संख्या थी, जिनका विवरण तालिका (15.1) में दिया गया है। तालिका का विश्लेषण करने पर पता चलता है, कि सर्वाधिक इकाईया नैनीताल जनपद के मैदानी क्षेत्रों में थी जो वर्तमान में उधम सिंह नगर जिले में है। जबकि 1988–89 से 1994–95 के दौरान सर्वाधिक प्रगति पौड़ी जिले में रही वहां इस दौरान इनकी संख्या 47 से बढकर 598 हो गई अर्थात

551 नई इकाईयाँ स्थापित हुई। जो वर्ष 2000 में बढकर 688 हो गई। जबकि पिथौरागढ़ की स्थिति इसके विपरीत रही वहाँ इस दौरान अधिकांश इकाइयाँ बन्द हो गई थी और 1988–89 की 13 इकाइयाँ से संख्या घटकर 2000 में एक रह गई थी। यद्यपि पूरे पर्वतीय क्षेत्र की स्थिति पर नजर डाले तो 1988–89 से 2000 के दौरान इन इकाईयों की वृद्धि दर 30प्रतिशत रही, जो प्रगति की सूचक थी।

रासायनिक उद्योग :–यद्यपि पर्वतीय क्षेत्रों में अनेक रासायनिक उद्योग स्थापना हेतु पर्याप्त कच्चामाल उपलब्ध था फिर भी इन इकाईयों की संख्या सीमित ही थी, क्योंकि लीसा, कत्था, लाख, जड़ी बूटियाँ, फल–फूल वनस्पतियां की पर्याप्त मात्रा होते हुए भी रासायनिक उद्योगों का विकास नहीं हो सका।

तालिका (15.2) में रासायनिक इकाईयों की प्रगति

क्र0सं0	जनपद	1988–99	1994–95	2000 तक
1.	उत्तरकाशी	13	13	13
2.	चमोली	06	17	18
3.	टिहरी	10	10	10
4.	पौड़ी	20	47	49
5.	छेहरादून	10	01	01
6.	**गढ़वाल मण्डल**	**59**	**88**	**91**
7.	अल्मोड़ा	80	177	187
8.	पिथौरागढ़	11	00	00
9.	नैनीताल	259	458	462
10.	**कुमाऊं मण्डल**	**350**	**635**	**649**
	उत्तराखण्ड	**409**	**723**	**740**

स्रोत– सांख्यिकीय डायरी पर्वतीय प्रभाग, राज्य नियोजन संस्थान, नियोजन विभाग उत्तर प्रदेश शासन (1991) संख्यिकीय डायरी, उत्तरांचल (2000) उत्तरांचल प्रभाग पाया।

यद्यपि कुछ क्षेत्रों व जनपदों में इस उद्योग का विकास हुआ, परन्तु पर्यावरण सुरक्षा के लागू होने से ये प्रभावित हुए और अनेक इकाईयाँ बन्द कर दी गई 1988–89 से 2000 के दौरान इन उद्योगों की स्थिति को तालिका (15.2) में प्रदर्शित किया गया है। जिससे पता चलता है कि 1988–89 से 2000 के दौरान यद्यपि पर्वतीय क्षेत्र में इन उद्योगो की इकाईयों की संख्या में वृद्धि हुई और यह 409 से बढ़ कर 740 हो गई परन्तु देहरादून व पिथौरागढ़ की अनेक इकाईयां इस दौरान किन्हीं कारणों से बन्द हो गई और इनमें ऋणात्मक वृद्धि दर देखी गई। जबकि चमोली में इस दौरान इकाईयों में वृद्धि देखी गई। कुल मिलाकर गढ़वाल क्षेत्र की तुलना में कुमाऊं मण्डल में यह प्रगति सन्तोष जनक रही।

औद्योगिक अस्थान :–उत्तर प्रदेश के पर्वतीय क्षेत्रों के औद्योगिक विकास हेतु तत्कालीन उत्तराखण्ड प्रभाग में उत्तरकाशी, चमोली तथा पिथौरागढ़ में एक–एक औद्योगिक अस्थान स्थापित करने की स्वीकृति दी गई, लेकिन बाद में इसे निरस्त कर दिया गया। पर्वतीय क्षेत्र में बड़े औद्योगिक क्षेत्रों की स्थापना का कार्य 1961 से आरम्भ हुआ। वर्ष 2000 तक पौडी, देहरादून, अल्मोड़ा, नैनीताल में अनेक औद्योगिक अस्थान बनाये गये जिनका विवरण तालिका में दिया गया है।

तालिका (15.3) जनपदवार बड़े औद्योगिक संस्थान

क्र0 सं0	जनपद	औ0 क्षेत्र की संख्या	कार्यरत शेड की संख्या	कार्यरत प्लांट की संख्या	औसत कार्यरत व्यक्तियों की संख्या
1.	पौड़ी	3	7	17	115
2.	छेहरादून	2	22	18	500
3.	गढ़वाल मण्डल	5	29	35	615
4.	अल्मोड़ा	2	–	2	15
5.	नैनीताल	3	18	46	968
6.	कुमाऊ मण्डल	5	18	48	983
7.	पर्वतीय क्षेत्र	10	47	83	1598

स्रोत : सांख्यिकी पत्रिका, अर्थ एवं संख्या विभाग, गढवाल तथा कुमाऊं (1995)

तालिका (15.3) के विश्लेषण से पता चलता है कि प्लांट स्थापना में नैनीताल जनपद सबसे आगे रहा जहां औसत कार्यरत व्यक्तियों की संख्या भी सर्वाधिक रही दूसरा स्थान देहरादून का रहा जहा 22 शेड तथा 18 प्लांट स्थापित हुए तीसरा स्थान पौड़ी का रहा।

तालिका (15.4) में औद्योगिक क्षेत्रों की स्थापना तथा उपयोगिता की स्थिति को दर्शानें का प्रयास किया गया है। जिससे पता चला है वास्तव में कुल स्थापित औद्योगिक अस्थान में से 50 प्रकाशित ही पूर्ण विकसित है। जबकि सरकार ने बड़ी मात्रा में पूंजी निवेश कर इनकी स्थापना की थी। पौड़ी के गंगनाली श्रीकोट, पिथौरागढ़ के विण, बागेश्वर का गरूढ़, बैजनाथ तथा ऊधम सिंह नगर का काशीपुर बंजर पड़े थे। उत्तर प्रदेश औद्योगिक विकास निगम को प्रदेश में छोटे आस्थानों और औद्योगिक क्षेत्रों के विकास हेतु पर्वतीय विकास विभाग द्वारा कार्य सौंपा गया। जिसके फलस्वरूपनिगम ने इन क्षेत्रों में

तालिका (15.4) जनपदवार बड़े औद्योगिक आस्थानों की स्थिति (मार्च 2000)

क्र0 सं0	ज्नपद	औद्योगिक आस्थानों का नाम व स्थान	स्थापना वर्ष	क्षेत्रफल (एकड़)	लागत (लाख रू0)	उपयोग की स्थिति
1.	पौड़ी गढ़वाल	सिबातपुर, कोटद्वार	1965	7.00	8.17	विकसित
		गंगनाली श्रीकोट, श्रीनगर	1980	11.63	6.29	अविकसित
2.	छेहरादून	पटेलनगर	1964	10.00	14.77	विकसित
		विकासनगर	1964	4.00	1.38	विकसित
3.	अल्मोड़ा	पाताल देवी	1961	3.30	8.83	अर्द्धविकसित
4.	बागेश्वर	गरूड़, बैजनाथ	1885	0.50	16.67	अविकसित
5.	पिथौरागढ़	विण	1985	7.00	35.95	अविकसित
6.	नैनीताल	भीमताल	1962	7.00	3.10	विकसित
7.	उधमसिंह नगर	रूद्रपुर	1976	12.43	4.35	विकसित
		काशीपुर	1975	20.00	7.24	विकसित
	पर्वतीय क्षेत्र	10	–	82.86	106.75	

स्रोत– विकास आयुक्त कार्यालय, श्रीकोट (श्रीनगर गढ़वाल)।

तालिका (15.5) राज्य औद्योगिक विकास निगम द्वारा स्थापित औद्योगिक क्षेत्र

क्र0 सं0	जनपद	स्थान का नाम	स्थापना वर्ष	क्षेत्रफल (एकड़)	उपयोग की स्थिति
1.	चमोली	सिमली	–	28.58	अर्द्धविकसित
2.	टिहरी–गढ़वाल	ढालवाल	–	31.75	विकसित
3.	पौड़ी–गढ़वाल	बलभद्रपुर, कोटद्वार	1984	27.25	विकसित
		जसोधरपुर, कोटद्वार	1989	81.90	अर्द्धविकसित
4.	छेहरादून	महोबेवाला	–	59.00	विकसित
		सेलाकुई	–	237.00	विकसित
		लांघा रोड	–	78.85	अर्द्धविकसित
		रानी पोखरी	–	41.25	अर्द्धविकसित
		लाल तप्पड़	–	39.60	विकसित
		श्यामपुर	–	97.00	अर्द्धविकसित
5.	अल्मोड़ा	मोहान	–	49.00	अर्द्धविकसित
6.	नैनीताल	भीमताल	–	102.85	विकसित
		कानिया	–	10.00	अर्द्धविकसित
7.	ऊधमसिंहनगर	पीपलसाना	–	30.00	विकसित
		बाजपुर, साइड – 1	–	33.97	विकसित
		बाजपुर, साइड – 2	–	43.19	विकसित
		खटीमा	–	25.00	अर्द्धविकसित
		काशीपुर	–	97.25	विकसित
	पर्वतीय क्षेत्र	**18**		**1112.84**	

स्रोत : विकास आयुक्त, श्रीकोट (श्रीनगर – गढवाल)(मार्च 2000)

औद्योगिक संस्थानों की स्थापना का कार्य किया, जिसका विवरण तालिका (15.5) में दिया गया है निगम द्वारा कुल 18 औद्योगिक क्षेत्रों की स्थापना की गई, जिसमें से देहरादून में 6, ऊधमसिंहनगर में 5, नैनीताल और पौड़ी में 2–2 तथा चमोली, टिहरी तथा अल्मोड़ा में 1–1 क्षेत्र स्थापित किये गये, जिनका कुलक्षेत्रफल 1112.84 एकड़ था। लेकिन इनमें से मात्र 10 ही विकसित हुए जबकि शेष 8 अर्द्धविकसित ही रहे।

15.9 उत्तराखण्ड स्थापना के पश्चात् से अब तक की औद्योगिक संरचना

अलग राज्य बनने के बाद प्राकृतिक और मानव संसाधनों के बेहतर प्रयोग द्वारा उत्तराखण्ड ने औद्योगिक विकास की दिशा में कदम बढ़ाने की शुरूआत की है। प्रमुख जिले एवं उनमें स्थापित उद्योग का विवरण तालिका 15.6 में व्यक्त किया गया है।

तालिका 15.6 प्रमुख उद्योगो का जिलावार विवरण

जिला	प्रमुख उद्योग
देहरादून	हैवी मशीनरी, खाद्य प्रस्संकरण, इलेक्ट्रानिक्स, औषधि निर्माण।
हरिद्धार	आटोमोबाइल निर्माण, आटोमोबाइल पार्ट निर्माण, एफएमसीजी, हैवी मशीनरी, औषधि निर्माण, पैकिंग सामान, टेक्सटाइल, स्टील, ग्लासबेयर, प्लास्टिक।
उधम सिंह नगर	आटोमोबाइल निर्माण, आटोमोबाइल पार्ट निर्माण, एफएमसीजी, हैवी मशीनरी, औषधि निर्माण, पैकिंग सामान, टेक्सटाइल, स्टील, इलेक्ट्रानिक्स, कारपेट, कनटेनर।

पौडी गढवाल	इलेक्ट्रानिक्स,स्टील बार निर्माण।
नैनीताल	इलेक्ट्रानिक्स, पेपर, एलपीजी बाट लिंग प्लांट।

पिछले 16 वर्षों की निवेश की स्थिति पर नजर डालें, तो उत्तराखण्ड निवेशकों के लिए पंसदीदा स्थान बनकर सामने आया है।भारतीय रिजर्व बैंक के आंकड़ों के अनुसार अप्रैल 2000 से अक्टूबर 2016 तक राज्य में लगभग 8.3 करोड़ डालर से अधिक का प्रत्यक्ष विदेशी निवेश हो चुका था। जिसमें सबसे ज्यादा निवेश बिजली उत्पादन तथा सेवा क्षेत्र में हुआ। नये राज्य के निर्माण के बाद उत्तराखण्ड में निवेश व उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए केन्द्र सरकार द्वारा उत्तराखण्ड को 1 अप्रैल 2001 में विशेष राज्य का दर्जा प्रदान किया गया। वर्ष 2002 में सिडकुल, उत्तराखण्ड इंफ्रास्ट्रक्चर विकास कम्पनी लिमिटेड तथा उत्तराखण्ड उद्योग संघ की स्थापना की गई और 2003 में कर छूट जैसी नीतियों के कारण राज्य में औद्योगिक विकास की रफ्तार में तेजी आई। पंतनगर, रूद्रपुर, हरिद्वार, कोटद्वार, सितारगंज आदि क्षेत्र नये औद्योगिक केन्द्रों के रूप में विकसित हुए जिनका विवरण तालिका (15.7) में दिया गया है। राज्य में सर्वाधिक औद्योगिक क्षेत्र की संख्या हरिद्वार में स्थित है,जहाँ कृषि व खाद्य प्रसंस्करण, आटोमोबाइल निर्माण, आटोमोबाइल पार्ट निर्माण, एफएमसीजी, हैवी मशीनरी, औषधि निर्माण, पैकिंग सामान, टेक्सटाइल, स्टील, ग्लासबेयर, प्लास्टिक तथा इंजीनियरिंग आदि उद्योगों की तेजी से स्थापना हुई। इसके बाद उधम सिंह नगर है, जहाँ आटोमोबाइल निर्माण, आटोमोबाइल पार्ट निर्माण, एफएमसीजी, हैवी मशीनरी, औषधि निर्माण, पैकिंग सामान, टेक्सटाइल, स्टील, इलेक्ट्रानिक्स, कारपेट, कनटेनरआदि उद्योगों की तेजी से स्थापना हुई।देहरादून जिले में स्थापित प्रमुख उद्योग हैवी मशीनरी, खाद्य प्रस्संकरण, इलेक्ट्रानिक्स, औषधि निर्माण। पौडी गढवाल जिले में स्थापित प्रमुख उद्योग इलेक्ट्रानिक्स,स्टील बार निर्माण है। नैनीताल जिले में स्थापित प्रमुख उद्योग इलेक्ट्रानिक्स, पेपर, एलपीजी बाट लिंग प्लांट।

तालिका (15.7) उत्तराखण्ड के औद्योगिक एस्टेट का विवरण

क्र0 सं0	औद्योगिक एस्टेट का नाम	स्थिति	क्षेत्रफल (एकड़)
1.	एकीकृत औद्योगिक एस्टेट, हरिद्वार	दिल्ली हरिद्वार राष्ट्रीय राजमार्ग से 3 किमी0 तथा देहरादून से 52 किमी0	2034
2.	एकीकृत औद्योगिक एस्टेट, पन्तनगर	राष्ट्रीय राजमार्ग 87 पर तथा देहरादून से 300 किमी0	3339
3.	फार्मा सिटी, सेलाकुई औद्योगिक क्षेत्र, देहरादून	देहरादून से 25 किमी0	50
4.	सिगादी विकास केन्द्र, पौड़ी	देहरादून से 120 किमी0 तथा दिल्ली से 200 किमी0	100
5.	एकीकृत औद्योगिक एस्टेट, सितारगंज, ऊधम सिंह नगर	दिल्ली से 300 किमी0	1200
6.	आईटी पार्क, देहरादून	सहस्त्रधारा रोड, देहरादून	60

Sourse: www.sidcul.com

एकीकृत औद्योगिक एस्टेट में उद्योग स्थापना हेतु केन्द्र और राज्य सरकार द्वारा अनेक रियायतें दी जाती है, जैसे– 10 वर्ष तक के लिए 100 प्रतिशत केन्द्रीय उत्पादन कर में छूट, 5 वर्ष के लिए 100प्रतिशत आयकर छूट और अगले 5 वर्षों के लिए 30 प्रतिशत छूट, 5 वर्ष के लिए 1 प्रतिशत की दर से केन्द्रीय बिक्री कर (CST) तथ पूंजी निवेश पर 15 प्रतिशत अनुदान (अधिकतम 30

लाख रूपये तक) की व्यवस्था की गई।आईटी पार्क देहरादून के भीतर ही 22 अगस्त 2006 को दून साइबर टावर की स्थापना की गई है। जो 3 लाख वर्ग फीट क्षेत्र में फैला हुआ है जहाँ आईटी सुविधाओं के लिए निवेशकों के अनुकूल वातावरण तैयार किया जा रहा है। जिस पर 87 करोड़ रूपये का खर्च आने की सम्भावना है। फार्मा सिटी, सेलाकुई, देहरादून में फार्मा कम्पनियों की स्थापना प्रमुखता से हुई। जबकि हरिद्वार, पन्तनगर तथा सितारंगज (ऊधमसिंहनगर) के एकीकृत औद्योगिक एस्टेट में अनेक राष्ट्रीय और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने अपने औद्योगिक संस्थान स्थापित किये है।

तालिका (15.8) जनपदवार कार्यरत मध्यम एवं वृहद् उद्योगों की स्थिति

क्र0 सं0	जनपद	वर्ष 2000 में कार्यरत इकाइयां			वर्ष 2015 में कार्यरत इकाइयां		
		संख्या	पूंजी निवेश (करोड़ रू0)	रोजगार	संख्या	रोजगार	औद्योगिक क्षेत्र की संख्या
1.	नैनीताल	4	1233.84	3166	17	4092	06
2.	उधमसिंहनगर	22	1555.83	9103	137	31390	21
3.	छेहरादून	6	153.38	2886	64	4686	16
4.	पौड़ी	2	66.94	763	3	859	02
5.	हरिद्वार	5	1824.27	12461	170	57409	38
6.	बागेश्वर	1	10.15	460	1	460	05
7.	अल्मोडा				8	659	07

स्रोत– उत्तराखण्ड औद्योगिक विकास, प्रगति रिपोर्ट फरवरी 2011,उद्योग निदेशालय, देहरादून।http://www.ibef.org/download/uttarakhand-14oct-08.pdf

उत्तराखण्ड गठन के समय राज्य में कार्यरत वृहद् उद्योगों की संख्या मात्र 40 थी जो फरवरी 2015 में बढ़कर 400 हो गई है, जिसमें लगभग 4000 करोड़ रूपये से अधिक का पूंजी निवेश हो चुका है तथा 99555 लोगों को रोजगार प्राप्त हुआ है। राज्य स्थापना के समय तथा 2015 की स्थिति को तालिका (15.8) में प्रदर्शित किया गया है। तालिका (15.8) से पता चलता है, कि राज्य स्थापना के समय मात्र 40 वृहद् उद्योग ही स्थापित थे जिसमें 4844 रूपये पूंजी निवेश था जबकि राज्य स्थापना के बाद इनकी संख्या में तेजी में वृद्धि हुई और यह दस गुना से भी अधिक बढ़ कर 400 हो गई।

इकाई स्थापना की दृष्टि से ऊधमसिंह नगर का स्थान प्रमुख रहा, जबकि पूंजी निवेश तथा रोजगार उपलब्ध कराने में हरिद्वार प्रमुख रहा। राज्य स्थापना के पश्चात् अनेक राष्ट्रीय और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की इकाइयाँ उत्तराखण्ड में स्थापित हुई जिनका विवरण तालिका (15.9) में दिया गया है।

तालिका (15.9)उत्तराखण्ड में स्थापित औद्योगिक इकाईयों का विवरण

क्र0 सं0	उद्योग	संस्थान का नाम	स्थापना वर्ष	स्थान	अनुमानित लागत
1.	कृषि एवं खाद्य प्रसंस्करण उद्योग	ब्रिटानिया इंडस्ट्रीज लिमिटेड	2005	IIE पन्तनगर	
		नेस्ले इण्डया लिमिटेड	2006	IIE पन्तनगर	
		पेप्सीको	1997	बाजपुर, उधमसिंहनगर	
		केएलए इण्डिया पब्लिक लि0	1977	रूद्रपुर, उधमसिंहनगर	

2.	एफएमसीजी उद्योग	आईटीसी लि0	2007	IIE हरिद्वार	
		केविन केयर प्रा0लि0	2006	IIE हरिद्वार	
		हिन्दुस्तान यूनी लिवर लि0	2004	IIE हरिद्वार	
		डाबर इण्डिया लि0	2001	IIE पन्तनगर	
3.	सूचना एव संचार उद्योग	एच0सी0एल0 एंफोसिस्टम	–	रूद्रपुर	–
		विप्रो इंफोटेक	–	कोटद्वार	–
		हिल्ट्रॉन	–	छेहरादून	–
		सिमकॉम सॉल्यूशन्स	2000	छेहरादून	–
4.	इंजीनियरिंग उद्योग	भेल	1962	हरिद्वार	–
		सूर्या	1984	काशीपुर नैनीताल	
		एल एण्ड टी	–	हरिद्वार	
		हैवल्स इण्या लि0	–	IIE हरिद्वार	
		पोलर इंडस्ट्रीज लि0	–	IIE हरिद्वार	
5.	वाहन निर्माण उद्योग	हीरो होडा,	2008	हरिद्वार	
		टाटा मोटर्स	2007	IIE पन्तनगर	
		अशोक लीलैण्ड	2010	पन्तनगर	
		महिन्द्रा एण्ड महिन्द्रा	2006	IIE हरिद्वार	
6.	अन्य उद्योग	एटलस साईकिल लि0	–	हरिद्वार	
		एल0जी0 इलैक्ट्रोनिक्स		सेलाकुई, देहरादून	
		सेंचूरी टैक्सटाइल एण्ड इंडस्ट्रीज	1984	लालकुआं नैनीताल	
		यूरेका फॉबर्स	1982	भीमताल, नैनीताल	

स्रोत–http://www.ibef.org/download/uttarakhand_14oct_08.pdf.

इस प्रकार हम देखते है कि एकीकृत औद्योगिक क्षेत्र हरिद्वार तथा उधमसिंहनगर जिला का पंतनगर औद्योगिक क्षेत्र निवेशकों का प्रमुख स्थान बनता जा रहा है। राज्य सरकार द्वारा आईटी पार्क, एग्रो पार्क व खाद्य पार्क बनाने के लिए सहायता प्रदान की जा रही है। राज्य सरकार ने प्रदेश में सूचना एवं संचार तकनीक को बढ़ावा देने के लिए इसे उद्योग का दर्जा प्रदान कर दिया है। भीमताल में एक आईटी इक्यूवेशन सेंटर विकसित किया जा रहा है।देहरादून, पंतनगर और रूड़की में भी आईटी पार्क विकसित किए जाने की योजना है। देहरादून में विश्व में पहले माईक्रोसॉफ्ट आईटी अकादमी की स्थापना की गई है।

इस प्रकार राज्य का औद्योगिक ढाँचा तीव्र गति से बदलाव के दौर से गुजर रहा है। राज्य में समुचित औद्योगिक वातावरण का विकास हो रहा है, साथ ही अन्य सुविधाओं जैसे, सस्ती बिजली, करो में छूट, सस्ते श्रम आदि के कारण अन्य निवेशक भी उत्तराखण्ड में निवेश हेतु प्रयास कर रहे है। जो प्रदेश की औद्योगिक संरचना के निर्माण में निर्णायक भूमिका अदा करेगें।

अभ्यास प्रश्न 2

लघुउत्तरीय प्रश्न–

1. उत्तराखण्ड की स्थापना में पूर्व में कार्यरत उद्योगों का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

.....

.....

.....

.....
.....

2. उत्तराखण्ड गठन के बाद की औद्योगिक संरचना की संक्षिप्त व्याख्या कीजिए।

.....
.....
.....
.....
.....

3. उत्तराखण्ड के औद्योगिक एस्टेट की संक्षिप्त विवरण दीजिए।

.....
.....
.....
.....
.....

15.10 सारांश

इस इकाई को पढने के बाद आप यह जान चुके है कि उत्तराखण्ड के निर्माण के पश्चात प्रदेश सरकार ने आर्थिक एवं सामाजिक विकास के लिए नियोजन की स्थापना की। नियोजन के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए पहली औद्योगिक नीति 8 जुलाई 2001 को घोषित की गई।जिसका मुख्य उद्देश्य पर्यावरण संरक्षण सहित तीव्र औद्योगिक विकास के लिए उचित वातावरण तैयार करना था। इसके लिए नीति में आधारभूत संरचना के विकास, रोजगार सृजन, संतुलित विकास, विदेश निवेश प्रोत्साहन की बात कही गयी। जिससे प्रति व्यक्ति आय व जीवन स्तर में वृद्धि हो। राज्य की वास्तविक औद्योगिक नीति 2003 में घोषित की गई। जिसका मुख्य उद्देश्य उद्यमियों को विकास हेतु समन्वित कार्यक्रम उपलब्ध कराना था। जिससे राज्य घरेलू उत्पाद में वृद्धि हो और रोजगार को बढ़ावा मिलें। इस नीति में औद्योगिक विकास हेतु एकल खिड़की व्यवस्था, श्रम कानून सरलीकरण, उचित ऊर्जा व्यवस्था, भूमि व्यवस्था, लघु हस्तशिल्प तथा ग्रामोद्योग विकास व्यवस्था, पर्वतीय दूरस्थ क्षेत्र विकास व्यवस्था, कृषि तथा वन आधारित उद्योग विकास, पर्यटन बढ़ावा, सूचना प्रौद्योगिकी विकास सहित मानव संसाधन विकास द्वारा रोजगार वृद्धि की बात कही गई। राज्य के पर्वतीय क्षेत्रों के विकास हेतु 1 अप्रैल 2008 को एक विशेष एकीकृत औद्योगिक प्रोत्साहन नीति 2008 की घोषणा की गई। जिसका मुख्य उद्देश्य पर्वतीय क्षेत्रों में उद्योग स्थापना एवं रोजगार को बढ़ावा देना है। इसके लिए पर्वतीय क्षेत्रों को 'ए' तथा 'बी' श्रेणी तथा उद्योगों को हरित तथा नांरगी श्रेणी में बाटा गया। राज्य में पूंजी निवेश तथा विशेष राज्य परिवहन अनुदान में 'ए' तथा 'बी' श्रेणी के लिये विशेष रियायतों की व्यवस्था की गई। विद्युत बिलों में छूट, बिक्री कर की प्रतिपूर्ति, मेगा प्रोजेक्ट स्थापना हेतु वित्तीय सहायता तथा स्थानीय कच्चे माल पर आधारित उद्योगों की स्थापना की बात कही गयी। साथ ही नीति में विपणन सहायता, उद्यमिता विकास व प्रशिक्षण व्यवस्था तथा भूमि संसाधन विकास प्रोत्साहन हेतु अनेक रियायतों की व्यवस्था की गई। यह नीति 31 मार्च, 2008 तक लागू रहेगी।नई औद्योगिक नीति में उदारीकरण, निजीकरण, वैश्वीकरण को अपनाकर अर्थव्यवस्था को खुली अर्थव्यवस्था बनाया गया।

इस इकाई के दूसरे भाग में राज्य कीऔद्योगिक संरचना की जानकारी दी गई है।औद्योगिक संरचना से अभिप्राय उद्योगों के स्वरूप और ढाँचे से लगाया जाता है जो किसी समय एक देश या राज्य में विद्यमान है। उत्तराखण्ड के अुस्तित्व में आने से पूर्व इसके औद्योगिक स्वरूप में परम्परागत,

लघु व मध्यम उद्योगों की प्रमुखता थी और राज्य में कुछ मैदानी क्षेत्रों में ही कुछ वृहद् उद्योग कार्यरत थे। उत्तराखण्ड स्थापना से पूर्व की औद्योगिक संरचना में मुख्य रूप से कृषि, वन तथा स्थानीय कच्चेमाल पर आधारित उद्योगों जैसे– घराट उद्योग, चमड़ा व जूता उद्योग, काष्ठकला उद्योग, हस्त निर्मित कागज उद्योग, रेशा उद्योग, रिंगाल बर्तन उद्योग, मधुमक्खी पालन, जड़ी–बूटी आधारित उद्योग, लौहारगिर, लीसा उद्योग, स्वर्णकारी उद्योग तथा मध्यम उद्योगों की ही प्रमुखता थी। पर्वतीय क्षेत्रों में यद्यपि अनेक औद्योगिक आस्थानों व क्षेत्रों की स्थापना की गई, लेकिन इसमें से अधिकांश अर्द्धविकसित, अविकसित तथा अनुपयोगी ही रहे, जिससे विकास की गति धीमी हो रही।

उत्तराखण्ड स्थापना के पश्चात् राज्य में सिडकुल, उत्तराखण्ड उद्योग संघ, तथा टैक्स हॉलीडे की नीतियों के कारण तेजी से नये–नये औद्योगिक संस्थानों की स्थापना हुई। एकीकृत औद्योगिक एस्टेट पन्तनगर, हरिद्वार, सितारगंज में बड़ी संख्या में राष्ट्रीय तथा बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने अपनी इकाईयां स्थापित की और स्थापना के समय वृहद् उद्योगों की कुल संख्या मात्र 40 थी, जो फरवरी 2011 में बढ़कर 211 हो गई। राज्य स्थापना के बाद ब्रिटानिया, नेस्ले, आईटीसी, हिन्दुस्तान यूनीलीवर, डाबर इण्डिया, हीरो हांडा, टाटा मोटर्स, महिन्द्रा एण्ड महिन्द्रा, अशोक लीलैण्ड, एटलस साइकिल्स, एलजी इलैक्ट्रानिक्स, एससीएल, विप्रो इंफोटेक, हिल्ट्रान तथा केविन केयर जैसी अनेक कम्पनियों ने अपने संस्थान उत्तराखण्ड में स्थापित किये। जिससे राज्य का औद्योगिक स्वरूप ही परिवर्तित होता जा रहा है। अब राज्य तीव्र गति से विकास के पथ पर बढ़ रहा है।

15.11 शब्दावली

पूँजीवाद –पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में संसाधनों पर निजी व्यक्ति का स्वामित्व होता है और यह बाजार पर आधारित होती है। इसका उद्देश्य लाभ अर्जित करना होता है।

समाजवाद– समाजवादी अर्थव्यवस्था में संसाधनों पर समाज का अधिकार होता है। केन्द्रीय नियोजन इसकी प्रमुख शर्त होती है।

मिश्रित अर्थव्यवस्था – मिश्रित अर्थव्यवस्था में निजी क्षेत्रों और सार्वजनिक क्षेत्र नियोजन के अनुरुप सामाजिक प्राथमिकताओं और निजी क्षेत्रों की क्षमताओं को ध्यान में रखते हुए कार्य करते हैं।

साम्यवाद – साम्यवाद का प्रमुख सिद्धान्त है– 'प्रत्येक को क्षमतानुसार कार्य करना चाहिए एवं आवश्यकता के अनुरुप उपभोग करना चाहिए।'

आधारभूत उद्योग – आधारभूत उद्योग अन्य उद्योगों की स्थापना में मदद करते हैं।

सामाजिक संरचना – सामाजिक संरचना के अन्तर्गत शिक्षा, स्वास्थ्य एवं आवास आदि शामिल हैं।

संवृद्धि –संवृद्धि प्रति व्यक्ति आय से सम्बन्ध रखती है।

सतत् विकास – स्थाई या निरन्तर चलने वाला विकास, ऐसा विकास जो पर्यावरण को कम से कम हानि पहुँचायें।

अनुदान/रियायत–सरकार द्वारा दी जाने वाली आर्थिक सहायता का रूप जो किसी वस्तु या सेवा के उपयोग पर प्राप्त हो।

पुर्नजीवित–बन्द होने की कगार पर पहुँच चुकी औद्योगिक इकाई में पुनः उत्पादन कार्य प्रारम्भ करना।

आधुनिकीकरण–आधुनिक तकनीक का प्रयोग करना और बढ़ावा देना।

खाद्य प्रसंस्करण –ऐसी व्यवस्था जिससे खाद्य पदार्थ लम्बे समय तक प्रयोग किये जा सकें।

विपणन –बाजार व्यवस्था जिससे माल को बेचा जा सकें।

वरीयता –प्राथमिकता या प्रमुखता देना।

श्रेणीकरण –वस्तु को गुणवत्ता व विशेषता के अनुसार विभिन्न वर्गों और श्रेणीयों में बांटना।

उद्यमिता –जोखिम उठाते हुए उत्पादन कार्य करना।

हरित श्रेणी –ऐसे उद्योग जो प्रदूषण विभाग की सहमति के बिना लगाये जा सकते है।

नारंगी श्रेणी –ऐसे उद्योग जो प्रदूषण विभाग की सहमति के बाद लगाये जा सकते है।
श्रेणी 'ए' –उत्तराखण्ड के सीमान्त व सुदूरवर्ती जनपद – चमोली, पिथौरागढ़, उत्तरकाशी, चम्पावत व रूद्रप्रयाग का सम्पूर्ण भाग।
श्रेणी 'बी' –जनपद पौड़ी गढ़वाल, टिहरी, अल्मोड़ा एवं बागेश्वर का सम्पूर्ण भाग तथा देहरादून के विकासनगर, डोईवाला, सहसपुर तथा रायपुर विकास खण्ड को छोड़कर तथा नैनीताल के हल्द्वानी व
ऋणात्मक वृद्धि दर– ऐसी वृद्धि दर जो कमी को दर्शाती है।
औद्योगिक अस्थान – ऐसे स्थान या क्षेत्र जो औद्योगिक विकास तथा संस्थान की स्थापना हेतु सभी सुविधायें उपलब्ध कराते हो।
टैक्स हॉलीडे –टैक्स अर्थात कर में कुछ समय के लिए रियायत प्रदान करना।
आर्थिक संवृद्धि विकास –इसका आशय एक ऐसी प्रक्रिया से है जिसके अन्तर्गत प्रति व्यक्ति आय से लम्बी अवधि तक वृद्धि होती है । इसमें उत्पादन वृद्धि के साथ साथ तकनीकी व संरचनात्मक परिवर्तनों का होना आवश्यक है ।
उपभोक्ता वस्तु उद्योग –वह औद्योगिक इकाईयाँ, जो उन सभी वस्तुओं का उत्पादन करती है जिनसे उपभोक्ताओं की प्रत्यक्ष संतुष्टि होती है ।
पूँजीगत वस्तु उद्योग –वे औद्योगिक इकाइयाँ जो ऐसी वस्तुओं का उत्पादन करती हैं जिनकी सहायता से किसी अन्य वस्तु का उत्पादन किया जा सकता है।
उदारीकरण–उदारीकरण से अभिप्रायः उद्योग तथा व्यापार को अनावश्यक प्रतिबन्धों से मुक्त करके अधिक उपयोगी बनाना है ।
आधारभूत उद्योग –ऐसे उद्योगों से हैं जो एक देष के विकास हेतु परम आवश्यक है। जैसे लौह व इस्पात, खान उद्योग, रसायन उद्योग आदि ।

15.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1
लघुउत्तरीय प्रश्न 1. देखिए 15.3, **2.**देखिए 15.4, **3.** देखिए 15.5,**4.** देखिए 15.6,।
अभ्यास प्रश्न 2
लघुउत्तरीय प्रश्न 1. देखिए 15.8, **2.**देखिए 15.9, **3.** देखिए 15.9।

15.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Aggarwal, S.P. (ed.) (1995), *Uttarakhand: Past, Present and Future,* Concept Publishing Company, New Delhi.
2. Dewan, M.L. & Jagdish Bahadur (eds.) (2005), *Uttaranchal: Vision and Action Programme*, Concept Publishing Company, New Delhi.
3. Mehta, G.S. (1999), *Development of Uttarakhand: Issues and Perspectives*, APH Publishing Corporation, New Delhi.
4. Pangtey, Yatendra Singh and others (2011), *Uttarakhand at a Glance 2010-11*, Directorate of Economics and Statistics, Dehradun.
5. Planning Commission, Government of India (2009), *Uttarakhand Development Report*, Academic Foundation, New Delhi.
6. Sati, V.P. & Kamlesh Kumar (2004), *Uttaranchal: Dilemma of Plenties and Scarcities*, Mittal Publications, New Delhi.
7. Mittal Surabhi, Gaurav Tripati and Deepti Sethi; (July 2008) *Development Strategy for the Hill District Uttarakhand*. Working paper no. 217 ICRER, New Delhi.
8. Bisht Major D.S.;(2008); '*Uttarakhand Today'*; Trishul Publication, Dehradun.

9. The Entrepreneurs Guide to Investment in Uttaranchal;(2004) IIA Uttaranchal and Directorate of Industries Govt. of Uttarachal published by Arora Sudhir K. Green Fields Publishers Dehradun.
10. मामोरिया, डॉ0 चतुर्भुज एवं डॉ0 एस0सी0 जैन, (1995), *'भारतीय अर्थशास्त्र '*, साहित्य भवन प्रकाशक, आगरा।
11. बिष्ट, डॉ0 नारायण सिंह; (2003),*'उत्तरांचल हिमालयी राज्यः पर्वतीय क्षेत्र में औद्योगिकरण '*, डॉ0 नारायण संस्थान, शोध नियोजन एवं विकास, गोपेश्वर, चमोली।
12. उत्तराखण्ड उदय, उत्तराखण्ड दशक 2000–2010 (नवम्बर 2010) अमर उजाला पब्लिकेशनस लिमिटेड, नोएडा।

15.14 सहायक / उपयोग पाठ्य सामग्री

- उत्तराखण्ड का औद्योगिक विकास, प्रगति रिपोर्ट 2015, उद्योग निदेशालय, देहरादून।
- आर्थिक सर्वेक्षण(विभिन्न अंक),वित मंत्रालय भारत सरकार, नई दिल्ली।
- कुरूक्षेत्र (विभिन्न अंक), ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
- योजना (विभिन्न अंक) योजना आयोग, नई दिल्ली।
- उत्तराखण्ड इयर बुक 2016 विनसर पब्लिशिंग कम्पनी, देहरादून।
- ठाकुर, सुदीप व अन्य (सम्पादक) (2010), *उत्तराखंड उदयः एक दशक की यात्रा (2000 से 2010),* अमर उजाला पब्लिकेशन्स लिमिटेड, नोएडा।
- बलूनी, विद्या दत्त, *उत्तराखण्डः एक सम्पूर्ण अध्ययन,* अरिहन्त पब्लिकेशन्स (इ) प्रा लि, मेरठ।
- पाण्डेय, अशोक कुमार, *उत्तरांचलः सम्पूर्ण अध्ययन,* उपकार प्रकाशन, आगरा।
- सविता मोहन (2017), *उत्तराखण्डः समग्र अध्ययन,* तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली।
- http://www.duiuk.org/pdfs/heavy directory.pdf.
- http://www.ibef.org/Uttarakhand_190111.pdf.
- http://www.uttaranchalbiz.com/why_uttarakhand/key-investors.
- http://www.Uttaranchal biz.com/industrial-estates.
- http://www.ibef.org/download/Uttarakhand_14oct_08.pdf.

15.15 निबन्धात्मक प्रश्न

1. औद्योगिक नीति से आप क्या समझते है ? उत्तराखण्ड राज्य की विभिन्न नीतियों की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।
2. औद्योगिक नीति से आप क्या समझते है? उत्तराखण्ड के गठन के पश्चात् स्वकृित औद्योगिक नीतियो का विस्तृत विश्लेषण कीजिए।
3. औद्योगिक संरचना से आप क्या समझते हैं ? उत्तराखण्ड की वर्तमान औद्योगिक संरचना पर प्रकाश डालिए ?
4. उत्तराखण्ड की औद्योगिक प्रगति और उपलब्धियों की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।